ऐतिहासिक पुरातत्वीय नई शोध का ग्रंथ-

विदिशा-वैभव

: लेखक : शोधकर्ता : प्रकाशक :

श्री राजमल जैन मड़वैया, पुरातत्वान्वेषक

[भूतपूर्व मार्गदर्शक-शासकीय जिला पुरातत्व संग्रहालय]

विदिशा (म० प्र०)

प्रतियां १००० | दीपावली सन् १९६९ | मूल्य बारह रुपया

[जैनेन्द्र प्रेस, ललितपुर (झाँसी) उ० प्र० में मुद्रित]

विदिशा-वैभव

॥ प्रशस्तिः ॥

जम्बूद्वीप, भरतक्षेत्र, आर्यखण्ड, मालवदेश स्थित विदिशा नगर, मध्यप्रदेश, भारतीय गणतन्त्र राज्यावसर में पांच वर्ष के राज्यकाल में अभिमानी दलबदलू नेताओं के हिंसक प्रवृत्तिमय भावनाओं को जीवित बनाने वालों के समय राज्यों के विलीन हो जाने पर सभी वर्गों में खान-पानादि का विचार न रखने वाले मानव के धार्मिक छह कर्तव्यों को तिलांजलि देने वाले सुधार का ढिंढोरा पीटने वाले काल समय में कार्तिक कृ० १५ सोमवार वीर निर्वाण संवत् २४९५ विक्रम संवत २०२६ में दिगम्बर जैनाचार्य कुन्दकुन्दानुयायी, सरस्वती गच्छ, मूल संघ, बलात्कारगण, परवार जाति, भारूमूर भारिल्ल गोत्री विदिशा निवासी ने 'विदिशा वैभव' लेखक राजमल मड़वैया पुत्र श्री धर्मचन्द्र जी, काका जी श्री भगवानदास जी पूर्वनिवासी बानपुर जिला झांसी उ० प्र० ने अपने पूर्वजों की स्मृति में लोकोपकारार्थ जीवन में घटने वाली अनुभवी घटनाओं को मानव-जीवन में तुलनात्मक ज्ञानवर्द्धनार्थ लिखी। जनता, राजा प्रजा धर्मप्रेमी आत्मज्ञानी सभी को मंगलकारी हो।

'विदिशा वैभव' ग्रन्थ श्री दादे बंशीधर जी पिता श्री धर्मचन्द्र जी काका जी श्री भगवानदास जी माता जी श्रीमती पार्वतीबाई विदिशा को पुण्यस्मृति में श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, सार्वजनिक लायब्रेरी, विश्वविद्याल स्थान............ग्राम .... जिला .....प्रांत......... को

सादर सप्रेम भेंट।

भोज और भोपाल

पुरातत्व अन्वेषक श्री राजमलजी मड़वैया द्वारा लिखित खोजपूर्ण ग्रंथ—भोज और भोपाल अभी अप्रकाशित है। जिन्हें भी इसमें रुचि हो वे मड़वैया पुरातत्व संग्रहालय विदिशा में पधार कर देख सकते हैं। और उसके प्रकाशन की व्यवस्था कर सकते हैं।

इस ग्रन्थ का लागत—मूल्य

विदिशा वैभव ग्रन्थ के प्रकाशन आदि में करीब १२०००) बारह हजार रुपया व्यय हुये हैं। अतः प्रचार हेतु इसका लागत मूल्य १२) बारह रुपया ही रखा गया है।

विदिशा वैभव

प्रारम्भिक विषय सूची

❀ विदिशावैभव—विषय सूची ❀

— चित्र सूची —

विदिशा वैभव ग्रन्थ लिखने का उद्देश्य

(१) भारत के पूर्व पुरातत्व के विद्वानों ने बड़ी लम्बी शोध की है, किन्तु वह हमारी मातृ-भाषा हिन्दी में नहीं है। और वह भी जो की है उसमें मूर्ति के प्रत्येक अंगों का मानव जीवन से क्या संबंध है जिन्हें पूर्व जैनाचार्यों ने सांकेतिक चिन्हों से अलंकृत किया हैं, भाव स्पष्ट नहीं किये, जिससे हमारे विश्वविद्यालयों के छात्र और विद्वानों को अन्धकार ही रहा है। इस कमी की पूर्ति के लिये अपनी सेवा प्रस्तुत करना आवश्यक प्रतीत हुआ।

(२) यह विषय अछूता रहा है। इसी में सरस्वती का निवास है।

(३) भावी सन्तति के लिये ज्ञानवर्द्धन तथा धार्मिक शिक्षा मिले।

(४) विश्वविद्यालयों में विद्याविलासियों को ज्ञानवर्द्धन; धर्मप्रचार, सांस्कृतिक निधियों के महत्व और उनकी सुरक्षा के लिये आवश्यक्ता प्रतीत हो।

(५) पुरातत्वीय शोधकार्य के विद्यार्थियों, पर्यटकों, लेखकों, तीर्थयात्रियों, को सहायक हो सके।

(६) पूर्व भारतीय महापुरुषों का उज्वल भविष्य; अनुपम कला; संस्कृति की सुरक्षा के लिये शासकीय अधिकारियों को गौरव प्रदान हो और वह इन कलाकृतियों के महत्व को समझें अपनी स्वार्थ बर्बरता को त्याग करें; तथा व्यापार को बन्द कर भारतीय संग्रहालयों में परमार्थ की भावना रखकर अपने इष्टदेव को धर्म और कर्तव्यों को मानकर ज्ञान का प्रचार करें।

(७) इन भारतीय कलामय मूर्तियों में जो जलचर, थलचर, नभचर पशु, पक्षी आदि के जो सांकेतिक चिन्ह दिये हैं उनका मानव जीवन से क्या संबंध है, गुण और दोष क्या हैं, उनसे किस प्रकार से लाभ लिया जा सकता है।

(८) इन प्राचीन कलाकृतियों के चोर, विनाशकर्ता, सत्तारूढ़ राज्याधिकारी हैं; जिनका सप्रमाण उल्लेख इस पुस्तक में दिया है। वे उत्तरदायी हैं।

(९) इन्हीं कारणों से प्रेरणा मिलने से पुस्तक लिखने का सौभाग्यावसर मिला है। वे धन्यवाद के पात्र हैं, क्यों कि उन्होंने अपने कर्तव्यों को राज्याधिकार प्राप्त होते हुए भी अपने पुरुषार्थ में कृपणता की है। क्या ऐसे व्यक्तियों से देश का हित हो सकता है?

लेखक-परिचय :—

परम लोकोपकारी दिगम्बर जैनाचार्योपदेशित अगाध विद्यासागर के मध्य पूर्व महापुरुषों की अक्षुण्णनिधियों को विनाश के मार्ग पर न देख सकने के तदुपरांत भ्रष्टाचारी शासकों के सताये जाने पर सद् विवेकी विद्वानों की अति प्रेरणा से तथा परोपकारी स्व० श्री विहारीलाल जी सुवर्णकार जौहरी, पं० बलराम जी शास्त्री नगर जीवन रक्षक वैद्य के जीवनदान मिलने पर मानव के जीवनोपयोगी आध्यात्मिक-मनोविज्ञान, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक आदि को देशी और विदेशी जनता के लाभार्थ मानव मात्र एक है और विचार अनेक हैं। कालान्तर में घटने वाली मूक और सांकेतिक पुरातत्वीय साहित्य जन-जन के शिक्षा के उपयोग में आवे। इसलिये कि :—

जो इतिहासिक ग्रन्थ शोधपूर्ण लिखे गये हैं वह पाश्चात्य भाषा अंग्रेजी में ही हैं जिसे हिन्दी भाषी नहीं समझ सकते हैं इस कमी की पूर्ति के लिये राजमल जैन मड़वैया ने शोध कर लिखा है। त्रुटि रहना आवश्यक है चूंकि विशेष शिक्षा प्राप्त नहीं; किन्तु अनुभव के आधार पर मानव जीवन में घटने वाली घटनाओं को समाज और राजकीय विभागाधीन वरिष्ट अधिकारियों के अनधिकृत मूर्तियों की चोरियों, भ्रष्टाचार, और विनाश के षड़यन्त्रों से त्रषित होकर सुरक्षा की दृष्टि और मूर्तिनिर्माण कि उद्देश्यों को जनता के समक्ष लाना आवश्यक समझकर आत्मीयता के साथ लिखागया है। और यह भी ध्यान आया कि लक्ष्मी चंचल है; मरने के बाद यहीं पड़ी रहती है, केवल मानव की अचल संपत्ति देदीप्यमान सत्कीर्ति है।

स्थानीय जिले के अधिकारी वर्ग

जिलाध्यक्ष जिला विदिशा (म. प्र.) श्री व्ही० पी० सिंह महोदय हैं। आपने प्राचीन काल की गणधरों की ३ मूर्तियाँ गोतम सुधर्माचार्य, जम्बू स्वामी जिनपर ब्राह्मी लिपि में प्रशस्ती खुदी हुई है जिन मूर्तियों पर रामगुप्त महाराजा का उल्लेख है। इस लिपि को श्री कृष्णदत्त जी बाजपेई महोदय अध्यक्ष प्राचीन इतिहास विभाग विश्वविद्यालय सागर द्वारा पढ़ा गया है। इसका उल्लेख हितवाद भोपाल दिनांक १०-२-६९ में प्रकाशित हुआ है। यह आपकी ही महती कृपा से बच सकी है। देखो- साप्ताहिक हिन्दुस्तान दिल्ली ३० मार्च ६९।

आप राजवंश के क्षत्रिय कुल के न्यायप्रिय प्रशासक हैं। आपका गरीब जनता के साथ उत्तम व्यवहार है। किन्तु दल बदल नेताओं के राज्यपरिवर्तनों और पक्षपातों से परेशान हैं। ऐसे प्रशासक बिरले ही होते हैं। आप सात्विक वृत्तिके देव पूजक हैं। प्रातः काल ८ बजे से रात्रि को १० बजे तक पूर्णरूप से स्वयं कार्य करते हैं और दूसरों को भी मार्गदर्शन देते हैं। ऐसे प्रशासकों से ही भारतीय कला की रक्षा और न्याय मिलना संभव है।

श्रीमान् के० डी० वाजपेई विश्वविद्यालय सागर की सम्मति।

PROF. K. D. BAJPAI
Rabindranath Tagore Professor &
Head of the Department of Ancient
Indian History, Culture & Archaeology

University of Sagar
SAGAR (India)
7 February 1964

Sri Rajmal Jain Madvaiya has been personally known to me for the last several years. I have always found him keenly interested in the collection of ancient coins, inscriptions and sculptures. He, has by his careful search, saved many relics of the past from destruction. He was responsible for salvaging quite a large number of valauble remains from the bed of the river Betwa near Vidisha. Some of these, including the colossal Yaksha and Yakshi figures, are now preserved in the local Government Museum at Vidisha.

In the collection of coins made by Sri Madvaiya I could find various local coins of Vidisha, of the Nagas and of king Ramagupta. The scholarly world should feel grateful to him for saving from oblivion the important coins of Ramagupta alongwith others. He has also discovered some valuable inscriptions of the Gupta and early Medieval periods, which have thrown welcome light on the history of India.

Sri Madvaiya is genuinely interested in the ancient history of Vidisha and the region around. He has himself written a good account of the ancient sites visited by him. He is at present busy with the compilation of a history of Vidisha. I have no doubt that he will continue the useful work of not only collecting antiquites but also of interpreting them.

I wish him success in life.

—K. D. Bajpai.

कृष्णदत्त वाजपेयी
टैगोर प्रोफेसर तथा अध्यक्ष
प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति
तथा पुरातत्त्व विभाग

सागर विश्वविद्यालय
सागर (म० प्र०)
दिनांक ७-२-१९६९

श्री राजमल मड़वैया द्वारा लिखित 'विदिशा वैभव' पुस्तक के प्रारम्भिक छपे फर्मे देखे। लेखक ने विदिशा के इतिहास की पृष्ठभूमि में भारतीय धर्म और समाज का व्यापक पर्यवेक्षण किया है। विभिन्न कथाओं, जनश्रुतियों तथा प्रचलित--अप्रचलित काव्य के उद्धरण स्थान--स्थान पर देकर रोचकता उत्पन्न की गई है। अनेक प्राचीन मूर्तियों की व्याख्या लेखक ने अपने ढंग से करने का प्रयास किया है। इसमें उसे कहां तक सफलता मिली है; यह विचारणीय है।

विदिशा प्राचीनकाल में एक समृद्ध नगरी थी। यह पूर्वी मालवा प्रदेश की राजधानी एक दीर्घकाल तक रही। मौर्य, शुंग, सातवाहन, नाग तथा गुप्त वंश के राजाओं ने इसे अपने-अपने काल में सजाया-संवारा। उनकी परम्परा को कालांतर में परमार राजवंश में जारी रखा। विदिशा तथा उसके आसपास के क्षेत्र में किये गये उत्खननों तथा अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि विदिशा का न केवल राजनीतिक महत्व था अपितु धर्म, साहित्य, स्थापत्य और मूर्तिकला के विकास की दृष्टि से यह नगर भारत में शताब्दियों तक प्रसिद्ध रहा। बौद्ध तथा जैन धर्म एवं वैष्णव, शैव और शाक्त धर्म यहाँ साथ-साथ विकसित होते रहे। सहिष्णुता तथा समन्वय की भावना यहां एक दीर्घकाल तक विद्यमान रही।

श्री मड़वैया ने विदिशा तथा उसके आस-पास के क्षेत्र का विस्तृत सर्वेक्षण किया है। उनकी इस पुस्तक से विदिशा की प्राचीन कलाकृतियों पर प्रकाश पड़ सकेगा।

—कृष्णदत्त वाजपेयी।

Ramagupta Inscriptions Identified

(By A Staff Reporter)

BHOPAL, Feb. 9 Two inscription of Ramagupta till now regarded as the "Mysterious ruler" of the Imperial Gupta Dynasty, have been identified by Prof. K. D. Bajpai, Head Department of Archaeology. University of Sagar These inscriptions have recently been discovered at Besnagar near Vidisha town (Madhya Pradesh).

Prof. Bajpai told 'The Hitavada' today that the three inscribed 'Jaina Tirthankara' images bearing Gupta inscriptions were unearthed from a mound on the bank of river Bes (ancient Vidisha), while levelling of the mound was is progress. The timely action of Shri Rajmal Madvaiya, a local enthusiast, and of Shri V. P. Singh, Collector of Vidisha rescued these rare images from going into oblivion. Two of these clear inscriptions of Gupta Brahmi script and refer to the installation of Tirthankara images during the reign of Maharajadhiraja Ram Gupta, he said.

Prof. Bajpai feels that this is an outstanding archaelogical discovery of the decade and has finally proved the historicity of Ramagupta. Four types of coins of this ruler, he said obtained from Vidisha and Eran (dist. Sagar) have recently been published by him, who has pointed out that these coins are issued in Eastern Malwa by Ramagupta, the elder brother of Chandragupta Vikramidya of the Imperial Gupta dynastry.

The new inscriptions bear the name of Ramagupta, whith full inperial title of maharajadhiraja. This has proved that he belonged to the royal family of the Guptas, Prof. Bajpai said.

✕

GOVERNMENT OF MADHYA PRADESH
EDUCATION DEPARTMENT.

Memo No. 2244/2043/xx/cc Dated Bhopal, the 7th July, 1960

From,

Shri V. B. Billore, Under Secretary.

To,

Shri R. N. Bajpai,
Chief Resident Officer,
Birla Bros. (Private) Ltd.
Madhya Pradesh, Bhopal.

Subject—Construction of a temple at Bhopal by Hindustan charity Trust and attaching a maseum-request for collection of antiquities.

Sir,

I am directed to refer to your letter dated the 8th June, 1960 on the above subject and to say that the antiquities can be collected on the following conditions :—

(1) That images lying in open, and not from any area under the Central or the Provincial Archaeological Department may be collected, only from around Bhopal.

(2) That there should be no religious background for collecting these cultrral relics.

(3) That there should be provision for well looking after them.

(4) They should be open for inspection by officers of the Archeological department and also for taking photographs of them.

(5) That they should be handed over the State Department of Archaeology, if and when required and a demand for them is made.

(6) And finally, a regular record to be kept and information to be sent to the State Department of Archaeology.

Yours faithfully,
Sd/- V. B Billore,
UNDER SECRETARY
To
Government of Madhya Pradesh
Education Department.

लेखक का जीवन-चरित्र

वंश-परिचय

लेखक का नाम—राजमल, राशि नाम—मोहनलाल; जन्म संवत विक्रमी १९६८, आश्विन कृ० १४-११ बजे दिन पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र, द्वितिय चरण, ग्राम खेरुआ, जिला भेलसा, ग्वालियर राज्यान्तर्गत हुआ। यह ग्राम दक्षिण से पश्चिम की ओर सहोदरा नदी के किनारे बहने वाली पर बसा हुआ है। यह नदी आगे १ मील पर बेतवा नदी में मिल जाती है। पूर्व और उत्तर दिशा में दो बगीचे हैं। यहां मंगलवार को हाट भरती थी। यहां के मुख्य जमीदार का नाम मर्दनसिंह जी रघुवंशी था। इनके वंशजों की अविवेकता के कारण हाट भरना बन्द हो गया।

यह लेखक की ननिहाल है। यहीं पर जन्म हुआ था। नाना का नाम प्रानचन्द। यह दो भाई थे। छोटे भाई का नाम गनेशराम जी था। इनको दो पुत्रियां थीं। बड़ी का नाम प्यारीबाई और छोटी का नाम पार्वतीबाई था। माता श्री पार्वतीबाई का एक भाई मोतीलाल है। इनमें उदारवृत्ति, जाति स्नेह, वंश परम्परा का गौरव नाम का कोई अंश भी नहीं है। यह कृपणवृत्ति के मानव तो हैं ही। वर्तमान में विदिशा में रहते हैं। त्रिवेणी के घाट पर इनकी सत्तियां हैं। यह परवार छोवरमूर फागुन गोत्री जैन हैं।

गनेशराम जी के तीन पुत्र क्रमशः दुलीचन्द्र जी, छोटेराम जी और सोमतराय। यह वर्तमान में मंडी गुलाबगंज में व्यापार करते हैं। बड़े और मझले भाई का उत्तम स्वभाव है। गनेशराम जी का लेखक पर बड़ा स्नेह था, बड़ी उदारवृत्ति थी।

लेखक के आजे (दादे) श्री बंशीधर जी मड़वैया के दो पुत्र बड़े धर्मचन्द्र जी पिता थे और अनुज भ्राता श्री भगवानदास जी। यह बाल ब्रह्मचारी रहे।

यह बुन्देलखण्ड के बानपुर नामक ग्राम तहसील महरौनी जिला झाँसी में हैं। यहां के राजा महाराजा मर्दनसिंह बड़े बहादुर थे। इनको इनके वंशजों द्वारा राज्य का प्रलोभन देकर गिरफ्तार कराया और वह वहीं पर मार दिये गये। इनका एक किला बानपुर में आज भी बना है। और इनके गगनचुंबी महल चन्देरी में आज भी बने हुये हैं।

विक्रमी संवत १८०० के लगभग आर्थिक और पारिवारिक विपत्तियों के कारण बंशीधर जी अपने दो पुत्र और पत्नी तथा दो पुत्री माया और कंचन को साथ लेकर दुखित अवस्था में आये और सर्वप्रथम खुरई में श्रीमंत सा० के यहां ३ गजरथ एक साथ निकले थे। श्री जिनेन्द्र पंच--कल्याणक प्रतिष्ठा बड़े धूमधाम से हो रही थी।

भाग्यवशात रतनचन्द्र जी बड़कुर के लघुभ्राता का सम्बन्ध होना था। यह श्री बंशीधर जी को सपरिवार रायसेन लिवा लाये और पाणिग्रहण संस्कार हुआ। इनके वंश में दीपक जलाने वाला भी नहीं है।

द्वितीय पुत्री कंचनबाई गुलगांव में परिणाई गई। यह वंश भी समाप्त हो चुका है। यह ताराचन्द्र मन्नूलाल के नाम से प्रसिद्ध थे। (गुलगांव परिचय) यह स्थान सम्राट अशोक को जैन

श्रेष्ठि ने पुष्पहार भेंट में प्रथम मिलन में सगाई के वक्त प्रदान किया था। इस कारण से इसका नाम गुलगांव रखा गया था। लड़की को एरन देने से ग्राम एरन और सिर पर टीका देने से सिरचम्पा और रत्न संचयपुर (सांची) पर भगवान नेमिनाथ का समवशरण आने से उस स्मृति में राज्याश्रय द्वारा आचार्य परम्परा के अनुसार जो दरबाजों पर मूर्तियां चारों ओर उत्कीरित हैं वह भगवान नेमिनाथ के जीवन की चरित्रावलि है।

भगवान नेमिनाथ का वंश परिचय, यहां आने का कारण, सम्राट अशोक की ससुराल में पढ़िये।

रायसेन का संक्षिप्त इतिहास—

यह रायसेन विदिशा से दक्षिण दिशा में है। यह भोपाल राजधानी का एक जिला है। यहाँ से चारों दिशाओं में मोटरों के लिये पक्की सड़कें बनी हैं—(१) सागर (२) बरेली (३) विदिशा सांची (४) भोपाल को मार्ग हैं।

रायसेन में १ किला हैं। इसके पश्चिमी पहाड़ी पर भगवान राम के चरण एक चट्टान में उत्कीरित हैं। किंवदन्ती है कि भगवान राम बनवास के समय यहां आये और शयन किया था। इस कारण से इस नगर का नाम रामशयन से रायसेन हुआ।

इस किले में प्राचीन खंडहर हैं। दर्शनीय स्थान बारह दरी, इत्रदान, बाहर महल डोहला और एक मस्जिद है जोकि पूर्व में जैन मन्दिर था जिसे मुगल राज्य में मस्जिद बना लिया गया, उसमें जैन मन्दिर के प्रमाणस्वरूप बेदी बनी है। और शिलालेख भी साक्षी दे रहे हैं।

इस किले से उत्तर की ओर पहाड़ी है जिसपर एक बड़ी भारी गुफा है। किंवदन्ती है कि यहां बालमीकि ऋषि रहते थे। उन्हें उनके गुरु का आदेश था कि सीता के पुत्र तुम्हारी कुटी में जन्म लेंगे और तुम उन्हें अपनी धनुर्विद्या सिखाना।

कालांतर में सीता का राम के द्वारा वनवास हुआ और सीता जी बराई खास नामक स्थान पर कृतान्तवक्र सेनापति के द्वारा छोड़ी गई। इसी के निकट राजा नल ने दमयंती को सोता छोड़ा था। यह स्थान आज भी राजा नल की पहाड़ी के नाम से विख्यात है।

इन पहाड़ियों के बीच में लोहे की कीट के बड़े बड़े ढेर लगे हैं। इससे यह भी जान पड़ता हैं कि पूर्वकाल में यहां लोहे का उत्पादन भी रहा है। रायसेन से पूर्व की ओर रामगढ़-जामगढ़ आदि स्थान भी हैं। रामगढ़ में देवों ने अयोध्या नगरी बसाई थी। और उस नगरी में राम, लक्ष्मण, सीता ने वनवास के समय कुछ समय निवास किया था। (पश्चात्)

वीरपुर वनछोड़ में बाँस भिडे हैं जहां शंबुक खरदूषण का पुत्र चन्द्रहास खड्ग सिद्ध कर रहा था। लक्ष्मण वहां गये और वहाँ देवोपनीत चन्द्रहास खड्ग लटकती देखी, लक्ष्मण ने हाथ बढ़ाया। वह हाथ में आते ही उन्होंने अनजाने में वह खड्ग उसी बांसभिड़े पर मार दी, बाँसभिड़ा कट गया और उसमें बैठा शंबुक भी मारा गया।

सूर्पनखा रावण की बहिन ने जब आकर देखा कि मेरे पुत्र का सिर कटा पड़ा है, तो विलाप करने लगी और धैर्य के साथ कर्णपिशाची विद्या से पूछा कि मेरे पुत्र का मारने वाला कौन है ? विद्या ने सब बातें कह सुनाई। पश्चात्

सूर्पनखा एक विद्याधर की पुत्री थी। उसने अपना स्वरूप बदला और उन प्रतापी शूरवीर बालकों को देखने चल पड़ी।

मार्ग में लक्ष्मण जी के रूप और सौन्दर्य को देखकर बिह्वल हो उठी और काम पीड़ा उसे जाग्रत हो गई।

उसने अपना स्त्री चरित्र दिखाने के लिए कुमारी का रूप बनाया और अपने साथ पाणिग्रहण के लिये कहा किन्तु लक्ष्मण जी ने कहा कि मेरे से सुन्दर तो मेरे बड़े भाई श्री रामचन्द्र जी हैं। यह सुनते ही उसके मुंह में पानी आ गया और तत्काल ही राम के पास पहुंच गई किन्तु राम ने कहा कि मेरे साथ तो एक नारी है लक्ष्मण जी से ही विनती करो। हताश होकर लक्ष्मण जी से आग्रह करने लगी किन्तु मर्यादापुरुषोत्तम ने अपने शील की रक्षा करते हुये अति होने पर उसकी नाक काटदी।

दौड़ी भागी अपने पति खरदूषण के पास गई और उसने अपना स्त्री चरित्र फैलाया। इधर तो पति को लड़ाया और भागी दौड़ी गई भाई रावण के पास। वहाँ से भाई को ले आई। भाई ने कर्णपिशाची विद्या से पूंछा कि यह कौन हैं और क्या है ? इनका पूरा परिचय कर्णपिशाची विद्या ने दिया।

बीच में यह बात और रह गई है कि जब खरदूषण लड़ने को आया तो राम जब युद्ध क्षेत्रमें आने लगे तो लक्ष्मण ने कहा कि मैं अकेला ही बहुत हूँ, जरूरत पड़ेगी तो सिंहनाद करूंगा तभी आना।

वह बात कर्ण पिशाची की ने सुनकर उसने झूठा सिंहनाद किया और राम जब युद्धक्षेत्र में पहुंचे तो लक्ष्मण ने कहा कि तुम क्यों आये ? जाओ धोखा है।

इधर रावण ने सीता का हरण किया और सीता बिलाप करती जा रही थीं। जटायु को मार डाला था सीता अपने आभूषणों को यत्र तत्र बिखेरती जा रही थीं जिससे पति को संकेत हरण का मिल सके किन्तु एक विद्याधर सुग्रीव की स्त्री सुतारा को दूसरे विद्याधर ने हरण करना चाहा उस पर लक्ष्मण जी ने विजय पाई और सुतारा के शील को बचाया इसकारण से सुग्रीव से मित्रता हुई और इसी कारण से पवनंजय और हनुमान से। कुछ शोध करने के पश्चात सीता का पता लगा और युद्ध की तैयारी हुई। इसी बीच में जामवन्त जी से मुलाकात हुई। यह वही जाम गढ़ है जो पूर्व में बता चुके हैं। पाताल लंका यह पचमढ़ी है। यह सम्पूर्ण शोधकार्य हमने (लेखक ने) किया है। जो ग्रन्थों और घटनाओं को प्रमाणित करती है।

पश्चात् नारद जी के द्वारा जब कि सीता लंका से वापिस आगई और राम ने अपनी मर्यादा तथा न्यायपरंपरा को जीवित रखने की जिज्ञासा से सीता का परित्याग किया था। अन्त में सीता ने कृतान्तवक्र सेनापति को यही सन्देश भेजा था कि जैसा तुमने मुझे त्यागा है धर्म को नहीं त्यागना।

विद्वज्जन ! यह क्षेत्र ऐसे अनुपम साहित्य से भरा पड़ा है। यदि मुझे शासन या समाज, अथवा किसी संस्था का सहयोग मिले तो लेखक :—

नई खूबी नई आदत, नये अरमान पैदा कर।
तू अपनी खाक से, इक दूसरा इन्सान पैदा कर ॥

इस नाशवान शरीर से ऐसी अनुभूतियां हमारे देश के लिये मिलतीं। प्रान्त का तथा राजधानी और संस्कृति का दुर्भाग्य है कि कोई भी संबंधित शिक्षासंस्थायें और उनके संचालकों का ध्यान इस ओर नहीं है। यदि है तो केवल लक्ष्मी जी की ओर सरस्वती की महती कृपा का अनुचित ढंग से काम विकारादि में उपयोग किया जा रहा है। आत्मज्ञान के साधन अध्यात्म की ओर नहीं हैं। वैसे हमने इसमें यह विवेचन किया है कि राम कौन है और रावण कौन है। आध्यात्मिक रामायण देखें पृष्ठ १६ पर। ऐसी पुण्य भूमि :—

तेरी खूबी तेरी इज्जत, तेरा इकबाल दूना हो।
तू औरों के लिये, नेकी का नमूना हो ॥

इसी भावना को लेकर विधाता ने मुझे जन्म दिया और इस कर्तव्य को पूरा करने की जिज्ञासा रखता हूँ।

मर्द मैदां देखते हैं, मर्द मैदां कौन है।
पर जनाने झाँकते हैं, मेरी गुइयाँ कौन है ॥

धन्य है उन वीतरागी पुरुषों को जिन्होंने :—

माया ठगनी ने ठगा, यह सारा संसार।
पर माया जिनने ठगी, उनको बहु बलिहार ॥

यदि सरस्वती है तो उसकी बहिन लक्ष्मी दासी बनकर प्रतिक्षण चरणों में लोटेगी। यदि सरस्वती का साथ नहीं, कुमता से नेह लगा तो गाँठ की भी चली जावेगी।

पाठकगण यह भी ध्यान रखें कि :—

जितने भी तीर्थंकर हुए हैं क्षत्रियों में से ही हुये। इन्हीं की मान और मर्यादा को जो आज जैन कहलाते हैं कुबेर की तरह रक्षा कर रहे हैं। धर्म कोई ऐसी वस्तु नहीं जो दूसरों (मूर्खों) की निन्दा से अपवित्र हो जावे। यह भी ध्यान रखें कि श्रीमान आई०जी सा० पुलिस विभाग श्री रुस्तम जी ने लेखक का पुरातत्वीय निजी संग्रहालय देखा और दिनांक २–७–५९ को अपनी सम्मति भी प्रदान की है। जोकि दर्शक पुस्तिका पृ० ५ पर है।

पुलिस के वरिष्ठाधिकारी और अन्यान्य अधिकारी वर्ग किसी भी उत्तम कार्य में हाथ इसलिये नहीं बटाते कि उसमें स्वार्थसिद्धि नहीं हो पाती।

वीर पुरुष अपनी अपने देश की राष्ट्रीय निधियों की रक्षा में जीवन की आहुती देता है। और नंगा भूखा, कामी पुरुष काम वासनाओं की पूर्ति के लिये श्वान के चरित्र से भी पतित हो जाता है। इन कारणों से इस पुस्तक को लिखने का अवसर प्राप्त हुआ।

आभार एवं अन्य ज्ञातव्य

(१) में अपने श्री वि० श्री० वांकणकर आचार्य भारतीय कला भवन माधव नगर उज्जैन का आभारी इसलिये हूँ कि आपने दिनांक १ मार्च सन् ६० को निजी पुरातत्व संग्रहालय का अवलोकन किया और उसकी दर्शक पुस्तिका में अपने विचार दिये हैं। इससे मुझे विदिशावैभव ग्रन्थ लिखने का अवसर मिला। मैं आपका आभार मानता हूँ। प्रतिलिपि निम्न है।

उदयगिरि विदिशा गुफा नं० ५ की बाराह मूर्ति के संबंध में मड़बैया जी की कल्पनायें कुछ नाविन्य हैं। उन्होने विभिन्न तात्विक गुत्थियों को सुलझाने की नई प्रणाली अपनाई है। यह अध्ययन करने योग है।

मैं स्वयं इस विषय में अधिकृत वाणी से कुछ कहने में असमर्थ हूँ। क्यों कि मेरा अभ्यास कम है। पर संभवत: नवीन दृष्टिकोणों के अभ्यास से अगम्य मूर्ति-चित्रों का कुछ अर्थ अवश्य निकल सकता है।

राजमल जी से मेरी हार्दिक विनती है कि उन्हों को अपनी सब बातें लेखबद्ध कर प्रकाशित करना चाहिए। अन्यथा यह ज्ञान अपने तक सीमित रहेगा। ज्ञान परलोक हिताय के लिये लेखनी विधायक मार्ग पर चलना चाहिये।

वि०श्री वाकणकर
आचार्य भारती कला भवन
माधव नगर उज्जैन (मालवा)

(२) यह अवैधानिक अनधिकृत चेष्टा नहीं है तो क्या है ?

जब कि पुरातत्व विभाग शासन ने नियुक्त किया है तो पुलिस के अधिकारियों को क्या अधिकार है जो अपने बंगलों पर जैन और अन्य प्राचीन प्रतिमाओं को लाकर रखते हैं ? क्यों कि वर्तमान में जो भी विध्वंस कार्य हो रहे हैं उसमें स्वार्थ निहित है। यही कारण है कि लेखक को पुलिस रिपोर्टों पर मूर्तिचोरों से रुपया लिया गया है और अपराधियों को बिना जमानत छोड़ा गया है। देखिये पुलिस रिपोर्ट क्रमांक ४३९ दि० ६-३-६८। दर्शक पुस्तिका पृष्ठ ६। हमने लिया तुम भी लेना, देने वाले को जाने देना। जिस देश में इस प्रकार का व्योपार चल रहा हो वहां की जनता क्या सुखी रह सकती है ? कदापि नहीं। यही घटना लेखक के साथ प्राचीन सांस्कृतिक निधियों के संबंध में हुई है।

(३) एक नमूना केन्द्रीय पुरातत्व विभाग के डिप्टी डायरेक्टर जनरल दिल्ली का अवलोकन कीजिये।

श्री राजमल जी मड़वैया ने आज अपना पुरातत्व संबंधी संग्रह अपने घर पर तथा विदिशा विश्राम गृह में दिखलाया। उन्होंने बहुतही सुन्दर मूर्तियां एकत्रित की हैं। तथा शिलालेख भी महत्वपूर्ण हैं। उनके द्वारा संग्रहीत प्राचीन सिक्के अध्ययनीय हैं।

मैं उनके उत्साह एवं जिज्ञासा की प्रशंसा करता हूं।

१३-१-५९ ब्रजवासीलाल

डिप्टी डायरेक्टर जनरल

भारतीय पुरातत्व विभाग दिल्ली।

खेद क्यों ?

श्री ब्रजवासी लाल जी डिप्टी डायरेक्टर जनरल महोदय का शुभागमन दिल्ली से विदिशा हुआ। विश्रामगृह पर कमरा नं० ३ दि० २७ दिसम्बर ६८ को सायंकाल मिलने से मना कर दिया।

चपरासी ने पूछा किसलिये मिलना चाहते हो? तो जो चित्र मैंने ड्राइंग पेपर पर बनाये वे बताये उसने कहा कि यह एक नया पैसा देवाल नहीं मैं लाखों रुपया दिल्ली के मूर्ति खरीददार व्यापारियों से दिला दूंगा उसमें मुझे भी मिलजायगा। चपरासी ने कई दुकानदारों के नाम भी बताये। मुझे यह जानकर दुख हुआ कि जब ऐसे केन्द्रीय शासन में जो विभाग से पुरातत्वीय वस्तुओं की चोरियां हुई हैं इस बड़े पैमाने के लोगों की ही सहायता और विना भेद के नहीं होतीं।

अतएव मैंने उन मूर्तियों के बारे में मिलना आवश्यक समझा कि जो वेतवा नदी पर तीन गणधरों की मूर्तियां हजारी लाल सुनार की भूमि से निकली थीं जिनपर ब्राह्मी भाषा में लेख हैं। पढ़ने की चर्चा करना थी इसलिये मुझे कुछ अपनी युक्ति से ५ मिनिट का समय मिला और मैंने चपरासी का पूरा वयान समक्ष में किया। किन्तु श्रीमान ने एक शब्द भी नहीं कहा। चुपचाप सुनते रहे।

खेद है जो आज भारत में मूर्तियों का विध्वंस हो रहा हैं किस पर इसका उत्तरदायित्व है? पाठक समझ लेंगे। क्या यह प्रामाणिक नहीं माना जा सकेगा?

मुश्किल है मिलना चोर का, जब घर के ही सब चोर हैं।
कैसे चलेगा राज जब, सारे ही रिश्वतखोर हैं॥

श्री ब्रजवासीलाल जी का चुप रहना कोई रहस्य अवश्य रखता है।

केन्द्रीय आर्ट पर्चेज कमेटी का नमूना भी देखिये।

आर्ट पर्चेज कमेटी नेशनल म्यूजियम जनपथ नई दिल्ली के सचिव श्रीमान् बेनर्जी महोदय की सेवा में पत्रांक दिनांक ५ जनवरी १९६८ को दिया था उसके उत्तर में पत्र नं० १८-१६-६७ र० स० दि० ११ मार्च १९६८ में लिखते हैं :—

(१) भविष्य में सहयोग देने का आश्वासन। जब तक यह पूर्णरूप से शायद कुछ भी न बच सके।

(२) विभाग के मन्त्री महोदय श्री शेरसिंह सा० जो राज्य मन्त्री हैं जब वे दि० २२-१-६८ को विदिशा पधारे थे। और विदिशा का जिला पुरातत्व संग्रहालय देख रहे थे मार्ग प्रदर्शन करते समय मूर्तियां शासन को भेट करने, संग्रहालय के लिये, संग्रह करने, और चोरों से बचाने के लिये आवेदनपत्र दिया और उनकी सेवा में यह प्रस्ताव रखा कि श्रीमान जी यदि सुरक्षा चाहते हैं तो १ वर्ष की अवधि के लिये सेवक को अवसर प्रदान करें तो कार्य किस तरह किया जाता है ? सुरक्षा किस तरह की जा सकती है ? पात्रता क्या है ? अनुभव और ज्ञान कितना है ? बता सकूंगा और हजारों की संख्या में मूर्तियों का संग्रह शासन को पर्यटकों और शोधकार्य करने वाले छात्रों को ज्ञानार्जन के लिये मिल सकेगा। जिसका उत्तर आज तक नहीं है।

(३) अब आपका ध्यान मध्य प्रदेश सरकार के शिक्षा विभाग भोपाल की ओर भी आकर्षित करते हैं।

मध्य प्रदेश सरकार के शिक्षा सचिवालय पत्रांक २२४४।२०४३ । १० १० सी सी दिनांक ७ जौलाई सन् १९६० को :—श्री व्ही० वी० बिल्लोरे अवर सचिव ने एक आदेश श्री आर० एन० बाजपेई चीफ रेजीडेन्ट आफीसर बिरला ब्रदर्स (प्रायव्हेट) लिमिटेड भोपाल को दिया। जिसका विषय है।

विषय—हिन्दुस्तान चेरेटरी ट्रस्ट द्वारा भोपाल में एक मन्दिर व उसके सम्बन्धित संग्रहालय के लिये प्राचीन कलाकृतियां एकत्रित करने के सम्बन्ध में । प्रतिलिपि अंग्रेजी में संलग्न है।

प्रिय महोदय,

(१) प्रांतीय पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षित क्षेत्र के अतिरिक्त भोपाल के आस पास के खुले मैदान में पड़ी हुई अरक्षित मूर्तियां एकत्रित की जा सकती हैं।

(२) इन पुरातत्वीय संस्कृतियों के संग्रह में धार्मिक भेदभाव नहीं होना चाहिये ।

(३) इनकी देखभाल का उत्तम प्रबन्ध होना चाहिये।

(४) पुरातत्व विभाग के अधिकारी इन्हें जब चाहें देख सकेंगे व इनके चित्र वगैरह भी ले सकेंगे।

(५) यदि पुरातत्व विभाग को आवश्यकता हुई तो उनके मांगने पर यह मूर्तियां विभाग को दे देनी होंगी।

(६) इन कलाकृतियों का नियमित अभिलेख रखा जाना चाहिये और इनकी सूचना प्रादेशिक पुरातत्व विभाग को दी जाना चाहिये।

अंग्रेजी ट्रांस्लेशन—

हस्ताक्षर
व्ही० वी० बिल्लोरे
अवर सचिव मध्य प्रदेश सरकार
शिक्षा विभाग

वी० ४-७-६०

ध्यान रहे कि—

श्री आर० एन० बाजपेई महोदय ने मड़वैया कुटीर पर कई चक्कर लगाये इसलिये कि वह मड़वैया को बिड़ला मन्दिर पर पुरातत्वीय संग्रहालय निर्माण करना था। तीन मास तक मड़वैया ने उपरोक्त कथित आदेशानुसार नौकरी की। भोपाल के आस पास के क्षेत्र में कोई ऐसी स्मृति नहीं मिली। और कोरस्वाई में मामा करनसिंह सा० के यहां ३ मूर्तियां रखी थीं मांगी गई और वह लाई गईं। श्री आर० एन० बाजपेई महोदय ने उन मूर्तियों को कलकत्ता के लिये ले गये। जब वह मूर्तियां वहां न रखी गईं तो हृदय में बेचेनी हुई। और पूछ ताछ की तो उन्होंने अश्लील-वाणी का उपयोग किया। लेखक ने इस कांड की रिपोर्ट पुलिस विभाग व पुरातत्व विभाग और इनके बिड़ला जी आदि को दी, किन्तु खेद है कि किसी ने भी कोई अपराध की जांच के लिये कदम नहीं उठाया, क्योंकि :—

भ्रष्टाचारी राज में शासकगण को चैन।
रिश्वत के व्योपार की सीधी खुल गई लैन ॥

की पुष्टि करता है।

इस सम्बन्ध में एक पत्र :—

संस्कृति विहार—

श्री राजमल जी मड़वैया, पुरातत्व अन्वेषक विदिशा।

प्रिय महोदय,

आपका कृपा पत्र मिला, जो श्री बिड़ला जी तक पहुँचा दिया गया है। हमें इस बात का खेद है कि भोपाल में आपके साथ सज्जनोचित व्यवहार नहीं किया गया। इस विषय में उक्त व्यक्ति से जवाब मांगा गया है। श्री चिरंजीलाल जी, शर्मा जी से भी मैंने आपके विषय में बात चीत की थी। उन्हीं के सुझाव पर हम आपको संस्कृति विहार रांची में आपकी योग्यता के अनुकूल काम देने पर विचार कर रहे हैं।

संस्कृति विहार रांची एक शुद्ध संस्था है। जो भारतीय संस्कृति के अध्ययन; शोध प्रचार के हेतु बिड़ला जन कल्याण ट्रस्ट द्वारा स्थापित की गई है। आशा है कि इस संस्था में आपको अपनी योग्यता एवं रुचि के अनुकूल वातावरण मिलेगा। संस्कृति विहार की ओर से एक अच्छा सांस्कृतिक संग्रहालय बनाया जा रहा है। क्यों कि यह आपकी रुचि का विषय है।

इसलिये हम आपको उक्त संग्रहालय के अधिकारी के पद पर रखने के लिये तैयार हैं। यदि आप इस कार्य को निःस्वार्थ संस्कृति सेवा का कार्य मान कर मात्र निर्वाह के लिये दोसौ रुपये मासिक पारिश्रम स्वीकार करने के लिए तैयार हों आपसे यह आशा की जाती है कि आप इस कार्य को संस्कृति सेवा का पुनीत कार्य मानकर अपने निजी मूर्ति संग्रह तथा अन्य साधनों से मूर्तियां उपलब्ध कर संग्रहालय को अपनी योग्यता के अनुरूप एक अनुपम संग्रहालय बनाने में अपना पूरा योगे दान देंगे।

रांची एक आदिवासी क्षेत्र है। जहाँ दिन प्रतिदिन ईसाइयत का प्रकोप बढ़ रहा है। इस प्रकोप से अपनी पुनीत संस्कृति को बचाने के उद्देश्य से संस्कृति विहार के अन्तर्गत आप जो भी संस्कृति सेवा करेंगे, उसका देश के भवितव्य निर्माण की दृष्टि से बहुत ऊंचा मूल्य होगा।

संस्कृति विहार के प्रशिक्षणार्थियों तथा अन्य जन समाज के लिये भारतीय संस्कृति एवं जैन धर्म पर आपके व्याख्या भी करवाना चाहते हैं। मूर्ति संग्रह तथा प्रचार के निमित्त जाने पर मार्गव्यय संस्कृति विहार की ओर से मिला करेगा। हमारे विहार के माननीय राज्यपाल चार बार हमारे कार्यक्रमों में पधार चुके हैं। संस्कृति विहार, रांची में आ जाने पर आपकी कला प्रेम की भावना माननीय राज्यपाल जी तथा माननीय बिड़ला जी के ध्यान में शीघ्र ही आजायेगी तथा आपके कला विकास का भावी मार्ग खुल जाने की आशा है। कृपया लौटती डाक हे पत्रोत्तर देवें।

संस्कृति सेवा में आपका ही
हरवंशलाल ओबराय
हांनी डायरेक्टर
एकाडेमी आफ इंडियन कलचर, रांची।

इस पत्र से भी साफ स्पष्ट होता है कि केवल दो सौ रुपया में अपना ईमान बेचदें और अपना निजी संग्रह इनहें देदें। यह नहीं लिखा कि आप एकबार आकर अपनी कला, विद्याविलासिता, अनुभव का मार्ग दर्शन करावें। क्या यह भी एक विचित्र बात नहीं है ?

ध्यान देने की बात यह भी हैं कि :—

गतवर्षों में श्री बाजपेई ने आज तक कितना संग्रह कहाँ कहाँ से किया क्या इसकी सूचना पुरातत्व विभाग को दी है ? क्या पुरातत्व विभाग ने माहिती ली है ? और जैन धर्म या हिन्दू धर्म की मूर्तियां जो बिड़ला मन्दिर पर थीं वह कहां गई ? आशापुरी, कागपुर आदि से जो मूर्तियाँ लाई गई हैं वह कहां हैं ? क्या शासन के अधिकारी वर्ग इस बात का प्रत्युत्तर देने की कृपा करेंगे ? यह एक नमूना समक्ष में हैं।

लेखक का एक अनूठा सांस्कृतिक प्रेम का नमूना यह है कि :—

(७) विदिशानगर में कोई संग्रहालय नहीं था। लेखक के सतत् प्रयत्नों से खुलवाया गया नेशनल म्यूजियम भारत सरकार जनपथ नई दिल्ली से दि० २२ जून १९६० को एक मेमोरेन्डम निकला था जो जिलाधीश महोदय मंडल विदिशा के द्वारा संग्रहालय की जानकारी चाही गई थी। उसमें लेखक ने सभी सत्य बातें स्पष्ट की थीं और जो डायरेक्टरी भारत सरकार की ओर से प्रकाशित हुई है उसके पृष्ट ५१ पर जो उल्लेख है संलग्न हैं कृपया पढ़िये।

मड़वैया पुरातत्व संग्रहालय मड़वैया कुटीर विदिशा द्वारा भेजे गये पत्र की प्रति लिपि :—

पत्र क्र० ०८ दि० २६-६-६०

श्रीमान् असि० डायरेक्टर महोदय,
नेशनल म्यूजियम भारत सरकार नई दिल्ली।

विषय—सरक्युलर परिभाषा सांस्कृतिक संपत्ति पत्र दि० २२ जून ६०

महोदय,

उपरोक्त कथित सरक्यूलर वैज्ञानकि गवेषणा और सांस्कृतिक कार्य मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली ने एक सलाहकार समिति दि० १७ म '६० को बुलाई थी उसका जो सरक्यूलर भेजा गया है। उस संबंध में अनुरोध है कि जो संपत्ति जिसे तीन श्रेणियों में विभक्त किया है। प्रमुख मात्रा में अरक्षित और अव्यवस्थित दशा में पड़ी नष्ट हो रही है।

विदिशा—भोपाल एवं निकटवर्ती क्षेत्रों में बिखरी हुई असीम पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री के संबंध में हार्दिक रुचि तीक्ष्ण दृष्टि व गहन जानकारी रखने वाले एक व्यक्ति यहां है सर्व विदित है।

शासन यदि चाहे तो उनके बारे में सूचनायें आपको सेवा में प्रस्तुत करदी जावेंगी। पदाधिकारियों की अकर्मण्यता के कारण विदिशा म्यूजियम आज प्रायः नहीं के बराबर ही अवशिष्ट है। किन्तु स्वार्थ पूर्ति न करने और अनैतिक रूप से जो मुद्रायें ली गई और ४० मूर्तियाँ दी गई उनकी रसीद मांगी गई। नौटिस दिये गये। इस कारण से लेखक को २१ मास की सेवा काल के पश्चात् सेवा मुक्त किया गया।

विनाश कार्य प्रचुर मात्रा में हो रहा था। शासक वर्ग का ध्यान नहीं था। इस कारण वस्तुओं के विनाश से जो भी वस्तु अर्थाभाव होते हुए बचाई जा सकी संग्रह की गई हैं। जिसका लाभ सभी पुरातत्व प्रेमी अनुसंधानकों के लिये उपलब्ध है।

(१) संग्रहालय मड़वैया कुटीर ऐसे सुलभ मार्ग पर है जिसका लाभ प्रत्येक व्यक्ति ले रहा है। और शुभ सम्मतियां प्राप्त हो रही हैं। यह संग्रहालय स्वयं के स्वावलंवन पर निर्भर है।

(२) विदिशा के दर्शनीय स्थल उदयगिरि की गुफायें, विजय मन्दिर खामबाबा, लुहांगी, हिल, दिगम्बर जैन परवार बड़ा मन्दिर, चौवेजी का मन्दिर, बालाजी का मन्दिर, जयेश्वर महादेव के निकट बावड़ी में शिलालेख पर सुरक्षा चिन्ह आवश्यक है तथा दर्शनीय नदी वेत्रवती के घाट।

(३) मड़वैया संग्रहालय के लिये शासन भूमि देवे या विजय मन्दिर को ही संग्रहालय के लिये दिया जाकर शासन के आधिपत्य में मिला लिया जावे।

(४) पाषाण की भग्न मूर्तियां शिलालेखों के अवशेषों की सूची शासन में दी जा चुकी है।

(५) ताम्र मुद्रायें लगभग ५ हजार के हैं।

(६) यह विदिशा नगर की शोभा है। विदिशा नगर में ही रहेगी।

(७) हमारे नगर का पुरातत्वीय संग्रह बाहर जाना अपराध घोषित किया जावे।

(८) विदिशा के या भोपाल अथवा रायसेन के संग्रहालयों को सम्पन्न करने के आदेश प्रदान किये जावें।

विनीत—

राजमल जैन मड़वैया

संग्रहालयाध्यक्ष मड़वैया कुटीर, विदिशा।

भ्रष्टाचार विभाग (शिकायत मंडल) मध्य प्रदेश भोपाल

क्र० १०२६ / २०६ / ५६ दि० ६ फरवरी ५६

श्रीयुत राजमल जैन मडवैया विदिशा (भेलसा)

विषय—पुरातत्व विभाग के अधिकारियों के विरुद्ध भ्राष्टाचार की शिकायत।

आपका दिनांक १ फरवरी १९५७ का आवेदन पत्र प्राप्त हुआ।

यह पत्र मंडल के समक्ष उचित कार्यवाही के लिए प्रस्तुत किया जा रहा है। आगे जो कार्यवाही होगी, उसकी सूचना आपको भेज दी जावेगी।

—मि० ला० शर्मा।

शिकायत मंडल मध्य प्रदेश

क्र० १३६६ / २०६ / ५७-२ भोपाल दिनांक १ फरवरी ५८ / १४ माघ १८७९

प्रति श्री राजमल जैन मडवैया
विदिशा (भेलसा)

विषय—पुरातत्व विभाग ग्वालियर गूजरी महल दुर्ग ग्वालियर के हेड क्लर्क जगमोहन के विरुद्ध रिश्वत मांगने के सम्बन्ध में शिकायत।

निर्देश—आपका आवेदन पत्र दि० १--२--५७।

उपरोक्त शिकायत की जांच की गई परन्तु उसमें आपके द्वारा लगाये गये आरोप सिद्ध नहीं पाये गये। अतः खेद है कि मंडल द्वारा तत्सम्बन्ध में आगे कार्यवाही सम्भव नहीं है।

रा० ग०

निवंधक शिकायत मंडल, मध्य प्रदेश

यह कार्यवाही में न तो रिकार्ड देखा गया और न शिकायत करने वाले से पूछा ही गया जिसने अपराध किया, क्या वह सत्य कह सकता है ? कोई साक्ष्य भी नहीं लिये गये। पक्षपातपूर्ण एवं अपराधों को प्रोत्साहन देने के लिये यह जवाब दिया गया। आज तक कोई ध्यान नहीं दिया गया।

क्रमांक २३३८ / २०६ / ५७-१ भोपाल दिनांक २३ मार्च १९५७।

प्रति, श्री राजमल जैन मडवैया
विदिशा (भेलसा)

विषय—पुरातत्व विभाग ग्वालियर गूजरी महल दुर्ग ग्वालियर के हेड क्लर्क जगमोहन जी के विरुद्ध रिश्वत मांगने के सम्बन्ध में शिकायत।

निर्देश—आपका दिनांक २५-२--५७ का आवेदन पत्र।

विषयांतर्गत शिकायत पर जांच जारी है। जिसके परिणाम की सूचना आपको यथा समय दी जावेगी।

—मि० ला० शर्मा

निबंधक शिकायत मंडल, मध्य प्रदेश

क्रमांक २३३९ / २०६ / ५७-७ भोपाल २३ मार्च १९५७। प्रति पुलिस महानिरीक्षक मध्य प्रदेश भोपाल को मंडल के ज्ञाप क्र० ११९३ / २०६ / ५७-१ दिनांक १३-२-५७ को अनुवृति में अग्रेषित। इस सम्बन्ध में की गई कार्यवाही की सूचना को देने की कृपा करें।

मि० ला० शर्मा
निबंधक शिकायत मंडल, मध्य प्रदेश।

सामान्य प्रशासन विभाग

(राज्य सतर्कता आयोग)

क्र० ५६९८ / २६५७ / ६४ / १-५-६४ भोपाल दिनांक २१-११-१९६४

प्रति, श्री राजमल मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक विदिशा।

विषय—भ्रष्टाचार।

संदर्भ—आपका आवेदन पत्र दि० ११-८-६४।

आपका उपरोक्त आवेदन पत्र इस कार्यालय में प्राप्त हुआ। राज्य सतर्कता आयोग के निर्णय के अनुसार आपका आवेदन पत्र महानिरीक्षक पुलिस भोपाल को आवश्यक कार्यवाही के लिए भेजा गया है। आप कृपया इनसे संपर्क स्थापित करें।

रा० ना० मुले १२-११
मुख्य कार्यपालन अधिकारी के लिये
राज्य सतकर्तता आयोग (म० प्र०) भोपाल

खेद है कि अनेकों रिमाइण्डर किये और बारम्बार मिले किन्तु भ्रष्टाचार और पक्षपात का ही बोलबाला है।

बागड ही खेत खाने लगे तो उसकी रक्षा कौन करे!

कहना कुछ और, करना कुछ और, लिखना कुछ और

(दोहा)

कह कर करना कठिन है, कह जानत सब कोय।
बिना कहे जो करत है, चतुर जानिये सोय ॥

श्री हरिहर त्रिवेदी साहब इन्दौर संग्रहालय के संग्रहाध्यक्ष थे। उस समय पर दिया गया

पत्र, जिसकी प्रतिलिपि—

भेलसा निवासी श्री राजमल जी मडवैया से परिचय करके अत्यन्त आनन्द हुआ। आप पुरातत्व के प्रेमी हैं। और भेलसा के आस पास के प्राचीन स्थान, मूर्तियां, लेख आदि की आपको सविस्तार जानकारी है। आपने पुरातत्व का जो काम आज तक किया है उसकी जानकारी से

मैं स्वयं को लाभान्वित मानता हूँ। प्राचीन विदिशा में आज भी अमूल्य सामग्री दिखाई देती हैं। और इसका संग्रह एवं प्रकाशन उपयुक्त है।

श्री राजमल जी की कीर्तिस्तंभ की योजना सराहनीय है। और स्वतंत्र भारत में आशा है यह योजना सत्वर ही कार्यरूप में परिणित होगी। मैं राजमल जी की इस योजना को शीघ्र कार्यरूप में देखने का उत्सुक हूँ।

—हरिहर त्रिवेदी
सहायक संचालक म० भा० पुरातत्व विभाग
एवं संग्रहाध्यक्ष इन्दौर (म० प्र०)

दि० २२--१२-१९५३

न्याय और सिद्धांत की रक्षा सदैव करो

श्री उपसंचालक महोदय प्रधान कार्यालय पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग गूजरी महल दुर्ग ग्वालियर म० प्र० शासन।

सुविधायें देने तथा बिल पेमेन्ट करने सम्बन्धी।

(१) उपरोक्त प्रकरण के संदर्भ में निवेदन है कि श्रीमान् के समक्ष पत्र क्र० ५३/२ दिनांक २३--५--५८ प्रेषित कर विनय की थी कि पत्र के अनुसार सुविधायें दिये जाने की अनुमति दी जावे तो बड़ी कृपा होगी।

(२) हमारे एक भी बिल के द्रव्य का भुगतान नहीं हुआ है।

(३) हमारे निगेटिव फोटो के बिल जो कि पुरातत्व विभाग की संरक्षित संपत्ति थी जिस में मूर्तियां तोड़ी जा रहीं थी उन बिलों के द्रव्य का भुगतान नहीं हुआ, न वह वापिस ही लौटाये गये।

सबसे श्रेष्ठ मनुष्य वह है जो अपनी, अपने समाज; राष्ट्र, बिभाग, और संस्कृति की उन्नति के लिये सब से अधिक परिश्रम करता है।

मेरा जीवन भारतीय संस्कृति की निधियों के लिये संरक्षणार्थ अर्पित है। संभव है यदि सुविधायें उपलब्ध न हुई और प्रोत्साहन नहीं दिया गया तो त्यागपत्र दे दूं।

अतएव पूर्ण आशा है कि श्रीमान सुविधायें प्रदान करते हुए बिलों के द्रव्य का भी भुगतान शीघ्र कराकर अनुग्रहीत करें।

विनीत—
राजमल मड़वैया मार्गदर्शक
जिला पुरातत्व संग्रहालय, विदिशा।

जा० नं० ९४७
२३-६

मूलतः वापिस कर लिख जाता है कि इस प्रकार के सिद्धान्त के वाक्य एवं आत्मश्लाघा के प्रवचन का उपयोग शासकीय पत्रों में न किया जावे। अन्यथा उन पत्रों पर कोई विचार नहीं किया जावेगा तथा सर्विस टिकिट के द्रव्य का आकार आपके वेतन से काटा जावेगा।

हस्ताक्षर अंग्रेजी

हस्ताक्षर अंग्रेजी
एच० व्ही त्रिवेदी २०-६-५८
उप संचालक पुरा० एवं संग्रहालय म. प्र. ग्वालियर

✠

कार्यालय मार्गदर्शक जिला पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग म० प्र० शासन विदिशा

क्र० ३ दिनांक १ जनवरी १९५८

नोटिस

नोटिस अज तरफ राजमल पुत्र धर्मचन्द्र जी जैन मड़वैया निवासी विदिशा म० प्र० मार्गदर्शक जिला पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग विदिशा।

बनाम

श्री हरिहर विट्ठल जी त्रिवेदी महोदय, उपसंचालक पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग मध्य प्रदेश शासन; सदर मंजिल भोपाल।

इस नोटिस द्वारा आपको सूचित किया जाता है कि मैंने आपको दिनांक १८ अप्रेल १९५४ को बमुकाम डाकबंगला विदिशा पर आपके मौखिक आश्वासन पर १९३ ताम्र मुद्रायें तथा १२ रजत मुद्रायें ऐसी १७५ प्राचीन अप्राप्त मुद्रायें एवं ४० खंडित पाषाण प्रतिमायें विदिशा जिला पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग को सम्पन्न बनाने हेतु दी हैं।

वह अपने अध्ययन हेतु तीन मास की अवधि के लिये वापिस करने का वायदा करके ले गये थे। जिन्हें इस समय तक आपने पत्र क्र०

८	३६	६२	६८
१-८-५७	८-५-५७	२६-९-५७	७-१०-५७

१०३	१३५	६५	१०६	११० व रजि०	५३४
१५-११-५७	६-१२-५७	२५-६-५८	१०-९-५८	२९-९-५८	११-९-५८

तथा श्री नायबअली खाँ अन्डर सेक्रेट्री महो० शिक्षा विभाग भोपाल की सेवा में देने के उपरांत भी वापिस नहीं की और न मेरे किसी भी पत्र का अथवा नोटिस का जवाब देने का कष्ट किया। इससे स्पष्ट है कि उपरोक्त वस्तुयें हड़प जाने की आपकी नियत है।

अतएव आपको सूचित किया जाता है कि यह नोटिस मिलने के आठ दिन बाद तक यदि उपरोक्त वस्तुयें वापिस न कीं अथवा उनकी वैधानिक रसीद न भेजी तो मजबूरन मुझे आपके अवैधानिक कार्यवाही के कारण कानूनी कार्यवाही करना अवश्यंभावी होगा व उसके बावत होने

वाले समस्त खर्च की भी जिम्मेदारी आप पर होगी। व मेरे हर्जे खर्चे के तथा नुकसान के भी आप जिम्मेदार होंगे। इति।

प्रतिलिपि सूचनार्थ एवं उचित कार्यवाही हेतु सेवा में प्रस्तुत है।

विनीत—

राजमल जैन मड़वैया मार्गदर्शक

जिला पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग

म० प्र० शासन विदिशा

रजिस्टर्ड-पोस्टल रजिस्ट्री क्र० व दिनांक

६२९ दि० १२-१-५९ चीफ सेक्रेट्री महोदय म० प्र० शासन भोपाल

६३० दि० १२-१-५९ श्री मुख्य मन्त्री महोदय म० प्र० शासन भोपाल

६३१ दि० १२-१-५९ श्री डायरेक्टर पुरातत्व एवं शिक्षा विभाग म० प्र० शासन भोपाल

६३२ दि० १२-१-५९ श्री हरिहर विट्ठल त्रिवेदी उपसंचालक पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग म० प्र० शासन भोपाल

७३२ दि० १६-२-५९ श्री एल० सी० गुप्ता शिक्षा सचिव म० प्र० शासन भोपाल

७३३ दि० १६—१५९ श्री एच० एस० कामथ मुख्य सचिव म० प्र० शासन भोपाल

७३४ दि० १६-२-५९ श्री पं० कैलाशनाथ जी काटजू मुख्य मंत्री महोदय म. प्र. शासन भोपाल

पुलिस रिपोर्ट

श्री स्टेशन आफीसर महोदय, पुलिस स्टेशन विदिशा।

जावक पत्र क्र० दि० १०-६-५९ रपट क्र० ६०३ दि० १०-६-५९ व वक्त ९ बजे रात दी गई। श्री महीलाल जी सबइन्स्पेक्टर पुलिस कोतवाली विदिशा।

सूचनार्थ प्रतिलिपि—

जावक क्र० १८ दिनांक १०-६-५९ श्री डी० आई० जी० पुलिस भोपाल

जावक क्र० २० दिनांक १९ ६-५९ श्री सुप्रि० सा० पुलिस विदिशा।

अमानत में खयानत पुलिस रिपोर्ट

पुलिस कोतवाली थाना शाहजहानाबाद भोपाल धारा ४०६ के अपराध में।

दि० ३०-७-५९

क्रमांक ६३ दि० १६-१०-५९ जांच कुनिन्दा।

श्री दीनदयाल हेड कानिस्टबिल चौकी बड़ा बाजार विदिशा।

सिक्के प्राप्त करने का पोष्ट कार्ड—

९९ रामबाग इन्दौर सिटी दिनांक १२-९-५५

६८/२१ टी० टी० नगर भोपाल दि० ३१-१-५९।

हस्ताक्षर हरिहर त्रिवेदी साक्ष्य स्वरूप हैं।

क्रमांक ३०९४

डिपार्टमेंट आफ आर्केआलाजी
सेन्टर सकिल भोपाल
दिनांक १०-९-५४

श्री राजमल जैन मड़वैया
विदिशा (म. प्र.)

महोदय,

आपके दो पत्र प्राप्त हुए। मध्य भारत सरकार भेलसा में संग्रहालय निर्माण का निश्चय कर चुकी है। इसलिए हमारे विभाग द्वारा भेलसा में दूसरा संग्रहालय करना उचित नहीं होगा।

यदि आप अपना संग्रह सांची के संग्रहालय में रखना चाहें तो हम उसका प्रबन्ध कर सकते हैं। और इसमें कोई आपत्ति नहीं दीखती क्यों कि प्राचीन कला में सांची का विदिशा (भेलसा) से घनिष्ठ संबंध रहा था।

हस्ताक्षर अंग्रेजी
८-९-५४

भवदीय—
कृष्णदेव सुपरन्टेन्डेन्ट
डिपार्टमेन्ट आफ आर्केआलाजी।
सेन्टर सर्किल भोपाल

कलेक्टर कार्यालय डिस्ट्रिक्ट भेलसा

क्रमांक ९३५९

२
५४-।-२४
दिनांक २-८-५५

श्री राजमल मड़वैया
पुरातत्व अन्वेषक भेलसा

विदिशा नगरी में संग्रहालय निर्माण बाबत

वि० वि० उपरोक्त विषय में आपके पत्र तारीख ८-७-५५ के उत्तर में लिखा जाता है कि आर्केआलाजिकल विभाग सेन्ट्रल गवर्नमेंट के अधीन हो जाने से यह प्रश्न यहाँ हल नहीं हो सकता है।

सेन्ट्रल गवर्नमेंट के पुरातत्व अधिकारी भोपाल से यहां आते हैं उनसे मिल कर आप कारवाई कर सकते हैं। इति।

फाटक २–८

हस्ताक्षर अंग्रेजी
कलेक्टर डिस्ट्रिक्ट भेलसा।

प्राय मिनिस्टर सेक्रेट्रीएट, इण्डिया।

पत्र सं० ८-२-६० हि०

न्यू दिल्ली दि० २ नवम्बर १९६०, ११ कार्तिक १८८२ शक

प्रिय महोदय,

आपका पत्र दिनांक १८ अक्टूबर १९६० प्राप्त हुआ।

(२) प्रधानमंत्री जी के भोपाल दौरे का कार्यक्रम प्रदेशीय अधिकारियों के हाथ में है। विदित होता है कि आपने मुख्यमंत्री महोदय मध्य प्रदेश सरकार को पत्र लिखा है। आप अपनी उल्लिखित प्रार्थना के बारे में उन्हीं से सम्पर्क करें।

(३) जहां तक भोपाल में संग्रहालय स्थापित करने का आपके सुझाव का संबंध है। मामला मिनिस्ट्री आफ साइंटिफिक रिसर्च एण्ड कल्चरल आफेयर्स नई दिल्ली के ध्यान में लाया जा रहा है।

भवदीय—
प्राणनाथ साही
प्रधान मंत्री जी के निजी सचिव

श्री राजमल जैन मड़वैया
पुरातत्व अन्वेषक विदिशा

संयोजक, विदिशा संग्रहालय समिति विदिशा।

शील मध्य प्रदेश शासन

मु० म० स १०७३–६०
मुख्यमंत्री जी के निज सचिव
मध्य-प्रदेश भोपाल
दिनांक १५-१२-६०

महोदय,

भोपाल नगर में संग्रहालय स्थापित किये जाने के विषय में मुख्यमंत्री जी को संबोधित आपका पत्र क्रमांक २३१ दिनांक १२ दिसम्बर १९६० प्राप्त हुआ। मुझे आपको सूचित करने का आदेश हुआ है कि आप संचालक पुरातत्व विभाग से मिलिये। वे इस संबंध में उचित कार्यवाही करेंगे।

भवदीय—
सराफ
१४–१२–६०
मुख्यमंत्री जी के निजी सचिव
(म० प्र०)

श्री राजमल जैन मड़वैया
पुरातत्व अन्वेषक, मार्ग प्रदर्शक
व्यवस्थापक संग्रहालय समिति विदिशा

प्रतिलिपि क्रमांक पत्र ३४७४। २३४५—२० सी० सी० दिनांक २७ जोलाई १९६२ । अन्डर सेक्रेट्री (म० प्र०) शासन शिक्षा विभाग भोपाल संबोधित कलेक्टर जिला विदिशा ।

राजमल मड़वैया

उपरोक्त विषय में कृपया आप अपने अर्द्ध शासकीय पत्र क्रमांक २५३९·—जनरल दिनांक १—२·:६२ संबोधित श्री देवी सहाय डिप्टी सेक्रेट्री शिक्षा विभाग का अवलोकन करने का कष्ट करें इस सिलसिले में निवेदन है, कि आर्केआलाजिकल वस्तुओं, जो श्री मड़वैया के कथित आधिपत्य में हैं, की सूची उनसे प्राप्त की जा कर इस विभाग को भेजी जावे ताकि इस विभाग द्वारा उनका मूल्यांकन किया जा सके। सूची में प्रत्येक ऐसी वस्तु का प्रथक २ संबंधित विस्तृत विवरण, प्रकार, इतिहास तथा दिनांक आदि २ अंकित किया जाना आवश्यक हैं। ताकि उनके पूर्व इतिहास की खोज में और अधिक सहायता मिल सके।

हस्ताक्षर
अन्डर सेक्रेट्री म० प्र० शासन

कार्यालय कलेक्टर, जिला विदिशा मध्य प्रदेश

क्रमांक २०९५६ । जन० ६२ विदिशा दिनांक १७-८-६२

प्रतिलिपि श्री राजमल मड़वैया विदिशा की और भेजी जाकर शासनादेशानुसार सूची शीघ्र मंगाई जावे। इति।

हस्ताक्षर अंग्रेजी
वास्ते कलेक्टर, जिला विदिशा (म. प्र.)

प्रत्युत्तर पत्र क्र० ५९० दिनांक १८ अगस्त १९६२ को कार्यालय कलेक्टर जिला विदिशा के आवक क्र० ६२९४ दिनांक २०-८-६२ रिसीव्ड कराया गया संलग्न १—

प्रार्थी का पत्रांक ५९१ दिनांक १८-८-६२ जो कि पुरातत्व विभाग (म. प्र.) शासन का क्षेत्र है विध्वंस किया जा रहा है क्या संरक्षा के आदेश दिये गये। देखिये कार्यालय कलेक्ट्रेट विदिशा आवक क्र० ६३४३ दिनांक २०-८-६२ आजतक जो शासन सुरक्षा के आदेश प्रसारित नहीं कर सकता है वह मड़वैया के पुरातत्वीय वस्तुओं को शासन में लेकर क्या करेगा ?

जिलाध्यक्ष जिला विदिशा मध्य प्रदेश

क्रमांक २४१३५/जन० दिनांक २१ सितम्बर १९६२

श्री राजमल मड़वैया विदिशा

विषय—पुरातत्वीय संग्रह को शासन को सुपुर्द करना।

सन्दर्भ—आपका पत्र क्रमांक ५९० दिनांक १८-८-६२।

उक्त विषय में आपको सूचित किया जाता है कि शासन से कोई भी आपके पास सूची तैयारी करने को नहीं भेजा जा सकता है। यदि आप अपने पास की पुरातत्वीय वस्तुओं को

शासन को देना चाहते हैं तो आपका कर्तव्य हो जाता है कि आप स्वयं सूची तैयार कर प्रस्तुत करें। इति

शर्मा २६-९

हस्ताक्षर अंग्रेजी
जिलाध्यक्ष विदिशा

कार्यालय जिलाध्यक्ष (जिला विदिशा) म० प्र०

क्र० २२७३७ जन० ६२ दिनांक ११ सितं० १९६२

श्री राजमल मड़वैया विदिशा

विषय :—पुरातत्वीय वस्तुएं, स्थल आदि के संरक्षण के लिये कमीशन नियुक्त होने के संबंध में।

प्रसंग :—आपका पत्र कर्मांक ५९३ दिनांक १५-८-६२।

उत्तर में सूचित किया जाता है कि इस संबंध में आप डायरेक्टर महोदय से परस्पर पत्र व्यवहार करें। इति।

शर्मा ८—९

हस्ताक्षर अंग्रेजी
वास्ते जिलाध्यक्ष, जिला विदिशा (म. प्र.)

उत्तर पत्र क्र० ५९७ दिनांक १२-६-१९६२ अबलोकन करेंगे।

कार्यालय उप मंत्राणी शिक्षा विभाग मध्य प्रदेश

क्रमांक ५९२ भोपाल दिनांक २-७-६३

श्री राजमल मड़वैया
पुरातत्व अन्वेषक विदिशा। (म० प्र)

विषक :– मध्य प्रदेश की राजधानी में पुरातत्वीय सामग्री का भोपाल नगर में संग्रहालय निर्माण के लिए। उपरोक्त विषयक आपका प्रार्थना पत्र मा० उप मंत्राणी शिक्षा विभाग को संबोधित प्राप्त हुआ। आदेशानुसार आपसे निवेदन है कि आप इस विषय में श्री सचिव, शिक्षा विभाग से आकर मिलें।

मिले-अवकाश नहीं उत्तर मिला दि० ७-९-६३
समय—२ बजकर १० मिनिट पर

द शं० शुक्ला
निजी सहायक

पोष्टकार्ड नं० १

मुख्य मंत्री सचिव मध्य प्रदेश भोपाल

क्र० २६७० आ. दिनांक ११-५-५९ प्रार्थी का पत्रांक १२-१४-२-५९

पोष्टकार्ड नं० २

क्र० ८७९४ आ. दिनांक २५-९-५९ प्रार्थी का पत्रांक ५८ व दि० २६-८-५९

पोष्टकार्ड नं० ३

क्र० ९०३८ दि० २६-१०-६० प्रार्थी का पत्रांक १५-१०-६० है।

महोदय,

आपका पत्र दिनांक (उपरोक्त) मुख्य मंत्री म० प्र० को प्राप्त हुआ उसे आवश्यक कार्यवाही के लिये शिक्षा सचिव (म० प्र०) भोपाल को भेज दिया गया है।

इस संबंध में आप कृपया उनसे पत्रव्यवहार करें।

रूपसिंह

मुख्य मंत्री के निज सचिव मध्य प्रदेश के लिये

संबंधित प्रकरण में रजिस्ट्री पोष्टल क्र० १८८ दिनांक २३-१०-६३ भेजी गई।

राजमल मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक विदिशा में श्री राजपाल महोदय मध्य-प्रदेश शासन भोपाल से मिलने के लिये प्रार्थना की गई और दिनांक २८-११-६१ को मिलने की स्वीकृति प्राप्त हुई। भेंट में प्रार्थना पत्र क्र० ४७२ दि० २८ नव० ६१ प्रस्तुत किया जिसका उत्तर क्र० ३७०८। रा. स. राज भवन भोपाल २९ नव० १९६१.

प्रति–

राजमल जैन मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक विदिशा

महोदय,

आपका पत्र संख्या ४७२ दि० २८ नव० १९६१ श्री राजपाल महोदय को भेजा हुआ प्राप्त हुआ। यह पत्र शिक्षा मंत्री महोदय के विचार के लिये भेज दिया गया है।

खं० वो० रांगोले

राज्यपाल सचिव (म० प्र०)

क्या यह देश का दुर्भाग्य नहीं है कि प्रार्थी ने एड़ी से चोटी तक के अधिकारी वर्गों का ध्यान आकर्षित किया किन्तु किसी भी शासक ने प्रार्थी की बात नहीं सुनी और न परीक्षा ही की और न भोपाल में संग्रहालय निर्माण के लिए और न संरक्षण के लिये ही ध्यान दिया। यही कारण है कि देश, राष्ट्र, प्रान्त आदि की पुरातत्वीय सामग्री का विध्वंस हो रहा है।

राजमल जैन मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक विदिशा मध्य प्रदेश

क्रमांक ५४२ दिनांक १० मई १९६२

सेवा में श्रीमती चन्द्रकला सहाय जी महोदया,
उप शिक्षा मंत्राणी, म. प्र. शासन, भोपाल

द्वारा श्रीमान् सुप्रिन्टेण्डेन्ट महोदय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग भारत सरकार सेन्टर सर्किल भोपाल मध्य प्रदेश।

विषय—विनाशकार्य रोकने, संग्रह करने, तृतीय पंचवर्षीय योजनान्तर्गत पुरातत्वीय

नूतन संग्रहालयों के विकास के लिये शुल्क मय या निःशुल्क नियुक्ति के संबंध में

संदर्भ :— वैज्ञानिक गवेषणा तथा सांस्कृतिक कार्य मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली के पत्र संस्था डी० १०५८ । ५९ सी. ९ दिनांक ४ जुलाई ५९

(२) एफ ३ – १४५ । ५९ सी ९ दिनांक ११ नवम्बर ५९

(३) प्रधान मंत्री जी भारत सरकार नई दिल्ली के पत्र संस्था ८-२-६० हि० दिनांक २ नवम्बर १९६० ।

(४) श्री मुख्य मंत्री जी के निज सचिव मध्य प्रदेश शासन भोपाल मु. मं. स. १०७३-६० दिनांक १५-१२--६० ।

(५) श्री अंडर सेक्रेट्री महोदय शिक्षा विभाग मध्य प्रदेश शासन भोपाल के पत्र संख्या २४७८ । १९०१ ॥

एक्स एक्स सी सी भोपाल दिनांक २९ जून ६१ के संबंध में ।

महोदय, उपरोक्त विषय में निवेदन है कि मैं अपनी चतुर्मुखी अनेकों कलामय ज्ञान अनुभव संग्रह द्वारा शुल्क मय या निःशुल्क सेवायें देने के लिये तैयार हूँ ।

राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा एवं नैतिक स्तर की उन्नति में योग दे सकूं अतएव अनुरोध है कि संबंधित विभाग के पदाधिकारियों द्वारा अनुमति प्रदान करावेंगे ।

विनीत प्रार्थी—
राजमल मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक
विदिशा मध्य प्रदेश ।

True Copy :— 1058/59-59-C-1

GOVERNMENT OF INDIA,
MINISTRY OF SCIENTIFIC RESEARCH & CULTURAL AFFAIRS

New Delhi the 4 July, 1959.
the Asadha, 1881.

From,
Shri D. L. Sondhi,
Under Secretary to the
Government of India.

To,
Shri Rajmal Jain Madvaiya Guide,
Distt. Archaeological Museum,
Vidisha Madhya Pradesh.

Subject—Offer of archaeological material to the Department of Archaeology etc.

Sir,

I am directed to refer to your letter dated 7 2-:9 addressed to Shri Humanyan Kabir on the subject mentioned above and to say that it is not clear what sort of authority you desire to be vested with for the presevation of art objects. The Government of India have already approached all the State Government in India to take action to preserve unprotected loose sculptures.

As regards the utillzation of the protected achaeologial places at Vidisha by the Chairman and members of she Municipal Committee, it is presumed that you are refering to the State Protected monuments, because there has not been any such encroachment of property in so far as centrally protected monuments are concerned. If, so, you may approech the State Government in the matter.

The question of construction etc, of the Distt. Archaeological Museum is the concern of the State Government who may be approached in the matter.

The theft of antiquities from Budhi Chanderi is already under investigation by the Central Government.

In regard to your offer to donate your archaeological and historical collection to the Department of Archaeology, I am to request you to let this Ministry know the terms and conditions on which you are prepared to do so.

Regarding the setting up of a museum at Bhopal, you may please approach the State Government in the first instance.

Yours faithfully,
(D. L. SONDHI)
Under Secretary.

DIRECTORY OF MUSEUMS ON INDIA

By—C. Sivaramamurti Keeper,
National Museum of India
New Delhi.

Published By—Ministry of Scientific Research & Cultural Affairs New Delhi. 1959

Bhilsa (Vidisha) P. 19, 184, Madhya Pradesh
F. 1940 VIDISHA MUSEUM

HIST.—Beautiful images were found at Bhilsa when a local Jagirdar was quarrying for stones in 1940. As these were of artistic merit and valuable for presenting a vivid picture of the ancient town of Vidisha, it was felt that such antiquities should be collected and a museum established. From time to time; several antiquities were brought together and the most remarkable of these is a hugs monilithic Yaksha of the 2nd centrry B. C. All these are now housed in the dak bungalow pending the completion of the new building which is being constructed.

SCOPE & COLL.—The material consists of antiquites recovered from the town of Vidisha, from the ruined fort, the bed of the river and other places. There are about 150 seulptures and lithic inscriptions.

Bd. Act. Nil.

Pub. Nil.

WORKING HRS. Open on all days except Mondays from 7 A. M. to 1 P. M. and from 3 to 6 P. M.

Adm. Free.

GOV. BODY—The museum is under the Director of Archaeology, Madhya Pradesh.

STAFF—Guide and Caretaker-Shri Rajmal Jain Madwaia.

FIN.—Not known.

REM.—The Museum is in the formative stage and valuable material to form tthe museum has been collected together to be arranged when the building is got ready. Shri Rajmal Jain who is incharge of this Museum under the Director of Museums and Archaeology, Madhya Pradesh, is locally collecting some sculptures, coins and other antiquities. He is also trying to bring the collection together, enrich this museum and make it worthy of this ancient locality.

पत्र सं० ८-२-६० हि०   नई दिल्ली २ नवम्बर १९६०
प्रिय महोदय,   ११ कार्तिक १८८२ शक०

आपका पत्र दिनांक १८ अक्टूबर, १९६० प्राप्त हुआ। प्रधान मन्त्री जी के भोपाल दौरे का कार्यक्रम प्रदेशीय अधिकारियों के हाथ में है। विदित होता है कि आपने मुख्य मन्त्री महोदय, मध्य प्रदेश सरकार को पत्र लिखा है। आप अपनी उल्लिखित प्रार्थना के बारे में उन्हीं से सम्पर्क करें।

जहां तक भोपाल में संग्रहालय स्थापित करने का आपकेसुझाव का सम्बन्ध है; यह मामला मिनिस्ट्री आफ साइंटेफिक रिसर्च एण्ड कल्चरल अफेयर्ज; नई दिल्ली के ध्यान में लाया जा रहा है।

भवदीय—
—प्राणनाथ राही
प्रधान मन्त्री जी के निजसचिव

डिप्टी चीफ इंजीनियर
पी० डब्लू० डी० वी० एण्ड आर० ब्रांच म० प्र०

श्री राजमल मड़वैया जी विदिशा वाले (भेलसा) का निजी संग्रह पुरातन मुद्रा, मूर्ति व कीर्ति दर्शन करने का सौभाग्य दिनांक ३१-३-६२ को प्राप्त हुआ। शासकीय संग्रहालयों से कहीं अधिक विशेषतापूर्ण अनोखी चीजें व बातें देखने सुनने को मिली।

यह सम्पति देश को क्या वरन विश्व की है जिससे ज्ञान व गौरव प्राप्त कर मनुष्य मात्र अपनी समझ को बढ़ावे और दूसरों के जीवन प्रयास को भी जाने और जीवन के शिश्नोदर की निरन्तर खटपट के सिवा भी चरम लक्ष्य क्या है उसे सुने और सुनकर उस ओर अग्रसर हो।

तो यद्यपि श्री मड़वैया जी कच्चे छोटे मकान में गन्दी नालियों से घिरे रहते हैं परन्तु उस अद्वितीय पंकज प्रेरणा से उसी तरह कीचड़ व जल से ऊपर विकसित हो रहे हैं; जैसे कमल खिलकर देखने वालों की ही न केवल नयनानन्द देता हैं। वरण अपने को भी भगवान् के चरण कमलों की ओर अर्पन करने को तैयार कर रहा हैं।

देह धरे को फल यही है रे भाई।
देख सुखी हों दूसरे आनंद भरे भलाई ॥

उनके संग्रह अनेक हैं और अनेक से अधिक कविताओं के प्रमाण हैं। इस अजित आत्मा ने अब फोटो के बदले पुरातन काल की मूर्तियों के चित्र बनाना चालू कर दिया हैं। और ज्ञान जैसे उबला पड़ रहा हैं। इसको संकलित करना व व्यवस्था से छांट कर अपने स्थान पर रखना देश का काम है। और श्री मड़वैया जी के प्रशंसित प्रयास को श्रेय देना इसलिये सब का काम है। वैसे मनुष्य अपूर्ण है, केवल भगवान ही पूर्ण है। श्री मडवैया जी ने एक चित्र बनाया श्री बालाजी मन्दिर के गरुढ़ जी का और उसे शिव समझ कर उसपर टिप्पणी लिखी, बतलाने पर उन्होंने गलती एक दम समझ ली। सो भ्रांति व भ्रमपूर्ण बातें और उनपर उद्धृत श्लोक जो केवल अज्ञान के कारण आ गये हों उसके लिये वे नम्रतापूर्ण सविनय अपने आपको सुधारने के लिये लालायित भी हैं।

यही है वह सनातन स्रोत शक्ति का, जिससे संसार चल रहा है। और उसका किंचित बोध होता है श्री मड़वैया जी के दर्शन, उनके सतत् प्रयास और संग्रह से।

हस्ता० गोविन्ददास अग्रवाल
डिप्टी चोफ इंजीनियर
पी० डब्लू० डी०, बी० एण्ड आर० ब्रांच, रोडस्
मध्य प्रदेश, भोपाल।

२-४-६२

श्री शीतलनाथ पूजा

(कविवर पं० मनरङ्गलाल कृत)

स्थापना (गीता छन्द)

है नगर भद्दिल भूप दृढ़रथ, सुष्टु नंदा ता त्रिया,
तजि अचुत दिवि अभिराम शीतलनाथ सुत ताके भिया ।
इक्ष्वाकुवंशी अंक श्रीतरु, हेमवरण शरीर है,
धनु नवे उन्नत पूर्व लख इक, आयु सुभग धरी रहे ।

सोरठा

सो शीतल सुखकंद, तजि परिग्रह शिवलोक गे,
छूट गयो जगधंद, करियत तो आह्वान अब ।

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र अत्रावतरावतर संवौषट् (इत्याह्वाननम्) अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (इति स्थापनम्) अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (इति सन्निधीकरणं)

अष्टक

(गीता छन्द)

नित तृषा पीड़ा करत अधिकी, दाव अबके पाइयो,
शुभ कुम्भ कंचन जड़ित गंगा, नीर भरि ले आइयो ।
तुम नाथ शीतल करो शीतल, मोहि भव की तापसों,
मैं जजों युगपद जोरि करि मो; काज सरसी आपसों ।

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युरोगविनाशनाय जलम् ।

जाकी महक सों नीम आदिक, होत चन्दन जानिये,
सो सूक्ष्म घसि के मिला केशर, भरि कटोरा आनिये ।।तुम०

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनम् ।

मैं जीव संसारी भयो अरु, मरयो ताको पार ना,
प्रभु पास अक्षत ल्याय धारे, अक्षय पदके कारना ।।तुम०

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतम् नि० ।

इन महन मोरी सकति थोरी, रह्यो सब जग छाय के,
ता नाश कारन सुमन ल्यायो, महा शुद्ध चुनाय के ।।तुम०

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविनाशनाय पुष्पम् ।

क्षुध रोग मेरे पिंड लागो, बेत मांगे ना घरी,
ताके नसावन काज स्वामी, ले चरू आगे धरी ।।तुम०

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् ।

अज्ञान तिमिर महान अन्धा-कार करि राखो सबै,
निज पर सुभेद पिछान कारण, दीप ल्यायो हूं अबै ।।तुम०

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपम् ।

जे अष्टकर्म महान अतिबल, घेरि मो चेरा कियो,
तिन केर नाश विचारिके ले, धूप प्रभु ढिग क्षेपियो ।।तुम०

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपम् ।

शुभ मोक्ष मिलन अभिलाष मेरे, रहत कब की नाथ जू,
फल मिष्ट नाना भांति सुथरे, ल्याइयो निज हाथ जू ।।तुम०

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलम् ।

जल गन्ध अक्षत फूल चरु, दीपक सुधूप कही महा,
फल ल्याय सुन्दर अरघ कीन्हों, दोष सों वर्जित कहा ।।तुम०

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यम् ।

पंचकल्याणक

(गाथा छन्द)

चैत वदी दिन आठें, गर्भावतार लेत भये स्वामी ।
सुर नर असुरन जानो, जजहूं शीतल प्रभू नामी ।।

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णाष्टम्यां गर्भकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यम् ।

माघवदी द्वादशि को, जन्मे भगवान सकल सुखकारी ।
मति श्रुत अवधि विराजे, पूजों जिनचरण हितकारी ।।

ओं ह्रीं माघ[illegible]ष्णद्वादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यम् ।

द्वादशि माघ वदी में, परिग्रह तजि वन बसे जाई ।
पूजत तहां सुरासुर, हम पूजत यहां गुण गाई ॥
ओं ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यम् ।

चौदशि पौष वदी में, जगगुरु केवल पाय भये ज्ञानी ।
सो मूरति मनमानी, मैं पूजों जिनचरण सुखदानी ॥
ओं ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यम् ।

आश्विनसुदि अष्टमि दिन, मुक्ति पधारे समेदगिरि सेती ।
पूजा करत तिहारी, नशत उपाधि जगत की जेती ॥
ओं ह्रीं आश्विनशुक्लाष्टम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यम् ।

卐

❀ जयमाला ❀

(त्रिभंगी छन्द)

जय शीतल जिनवर, परम धरमधर, छविके मंदिर शिव-भरता ।
जय पुत्र सुनन्दा के गुणवृन्दा, सुखके कंदा, दुख-हरता ॥
जय नासादृष्टी हो परमेष्ठी, तुम पदनेष्ठी, अलख भये ।
जय तपो चरनमा, रहत चरनमा, सुआचरणमा, कलुष गये ॥

(सृग्विणी छन्द)

जय सुनन्दा के नन्दा तिहारी कथा, भाषि को पार पावे कहावे यथा ।
नाथ तेरे कभी होत भव-रोग ना, इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग ना ॥
अग्नि के कुण्ड में बल्लभा राम की, नाम तेरे बची सो सती काम की ।
नाथ तेरे कभी होत भवरोग ना, इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग ना ॥
द्रोपदी चीर बाढ़ो तिहारी सही, देव जानी सबों में सुलज्जा रही ॥नाथ०
कुष्ट राखो न श्रीपाल को जो महा, अब्धि तें काढ़लीनों सिताबी तहां ॥नाथ०
अंजना काटि फांसी गिरो जो हतो, औ सहाई तहां तो बिना को हतो ॥नाथ०
शैल फूटो गिरो अञ्जनीपूत के, चोट ताके लगी ना तिहारे तके ॥नाथ०
कूदियो शीघ्रही नाम तो गायके, कृष्ण काली नथो कुण्ड में जायके ॥नाथ०
पांडवा जे घिरे थे लखागार में, राह दीन्ही तिन्हें ते महाप्यार में ॥नाथ०

सेठ को शूलिका पै धरो देख के, कीन्ह सिंहासनं आपनो लेखके । नाथ०
जो गिनाये इन्हें आदि देके सबै. पाद-परसादतें भे सुखारी सबै ।।नाथ०
वार मेरी प्रभू देर कीन्हीं कहा, कीजिये दृष्टि दाया की मोपे अहा ।।नाथ०
धन्य तू धन्य तू धन्य तू मैं नहा, जो महा पञ्चमो ज्ञान नीके लहा ।।नाथ०
कोटि तीरथ हैं तेरे पदों के तले, रोज ध्यावैं मुनी सो बतावैं भले ।।नाथ०
जानि के यों भली भांति ध्याऊँ तुझे, भक्ति पाऊँ यही देव दीजे मुझे ।।नाथ०

गाथा

आपद सब दीजे भार झोंकि, दह पढ़त सुनत जयमाल ।
होत पुनीत करण अरु जिह्वा, वरते तिन आनंद जाल ।।
पहुँचे जहँ कबहूँ पहुंच नहीं, नहिं पाई पावे हाल ।
नहीं भयो सो होय सबेरे, सु भाषत 'मनरङ्गलाल' ।।

सोरठा

भो शीतल भगवान, तो पद—पक्षी जगत में ।
हैं जेते परवान, पक्ष रहे तिन पर बनी ।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

卐

उपदेशी लावनी

[हस्तलिखित ग्रन्थ श्री धर्मचन्द्र जी मडवैया बानपुर वालों ने गुलगांव स्टेट भोपाल में सावन सुदी ३ संवत् १९६१ में लिखी थी, उससे प्राप्त ।]

जगमणि नरभव पाय सयाने, निज स्वरूप ध्याना चहिये ।
जब तक शिव ना तब तलक नित, जिन गुणको गाना चहिये ।।१।।
आर्य क्षेत्ररु श्रावक कुल लहि, वृथा न ढड़काना चहिये ।
जप तप संयम नियम विना नहिं, काल न जाना चहिये ।।२।।
भ्रमे दीर्घ संसार अंत नहिं पाया, पार चित्त लाना चहिये ।
पुरुषारथ को क्यों नहिं करते, क्या कायर बन जाना चहिये ।।३।।
बार बार फिर मिलै न अवसर, यह शिक्षा अब माना चहिये ।
जब तक शिव न तब तलक नित, जिनगुण गाना चहिये ।।४।।
आप करो परिणाम शुद्ध, औरों के करवाना चहिये ।
सदा धर्म लवलीन रहौ तुम, धरम न विसराना चहिये ।।५।।

धर्म समान मित्र नहिं जग में, यह उर में लाना चहिये ।
अघ सम रिपु ना ताहु निज, अंग न परसाना चहिये ।।६।।
परदुख देख हंसो मति मन में, दया भाव लाना चहिये ।
जब तक शिव न तब को तलक, जिनगुण गाना चहिये ।।७।।
साधर्मी लखि हर्ष करो तुम, उर मलिन भाव हनना चहिये ।
अंगहीन को देख कभी तुम, भूल कर न खिजाना चहिये ।।८।।
निज पर की पहिचान करो तुम, कभी नहीं डरना चहिये ।
मूर्ख ज्ञान विन भ्रमैं निरंतर, अब निज पर को पहिचाना चहिये ।।९।।
दुखी दरिद्री को दुःख देय कर, कभी न कलपाना चहिये ।
जब तक शिव न तब तलक, जिन गुण गाना चहिये ।।१०।।
गुणी बृद्ध की विनय करो, नित, मान विटप ठाना चहिये ।
पर विभूति को देख कभी मन, कभी न ललचाना चहिये ।।११।।
मिथ्या वचन कहो मत छल से, सुकृत का खाना चहिये ।
भक्ष अभक्ष तजो चित, नित, शील में निज साना चहिये ।।१२।।
'नाथूराम' निज शक्ति प्रगट कर, बनना शिवराना चहिये ।
जब तक शिव ना तब तलक, बिन गुण को गाना चहिये ।।१३।।

※ भजन ※

नाथ ! तोरी पूजा को फल पायो, मेरे यों निश्चय अब आयो ।।टेक।।
मेंढक कमल पाँखड़ी मुख ले वीर जिनेश्वर धायो ।
श्रेणिक गज के पगतल मूवो, तुरत स्वर्गपद पायो ।। नाथ ।।
मैनासुन्दरि शुभ मन सेती सिद्धचक्र गुण गायो ।
अपने पति को कोढ़ गमायो, गंधोदक फल पायो ।। नाथ ।।
अष्टापद में भरत नरेश्वर, आदिनाथ मन लायो ।
अष्ट द्रव्य से पूजों प्रभु जी, अवधिज्ञान दरशायो ।। नाथ ।।
अंजन से सब पापी तारे, मेरो मन हुलशायो ।
महिमा भारी नाथ तुमारो, मुक्तिपुरी सुख पायो ।। नाथ ।।
थकी थकी हारे सुर नरपति, आगम सीख जितायो ।
देवेंद्रकीर्ति गुरू ज्ञान मनोहर, पूजा ज्ञान बतायो ।। नाथ ।।

मड़वैया वंश की पुण्य स्मृतियां

श्री दिगम्बर जैन धर्मानुरागी परमार वंश क्षत्रिय कुल भूषण शुभचन्द्राचार्य पथानुगामी परवार जात्युत्पन्न भारूमूर भारिल्ल गोत्री मड़वैया वंश कुल दीपक श्री खुमान तेजसिंह के पूर्वज विक्रम संवत १६९६ में कई भागों में कालदोष के कारण बानपुर से बट गये। जिनका प्रभुत्व आज भी जबलपुर, ललितपुर, नरवर, चन्देरी, गुना, जखौरा, विदिशा, भोपाल आदि में पाया जाता है।

दो शाखा के मड़वैया वंश ललितपुर में खुमान तेजसिंह के आज भी मौजूद हैं। जिन्होंने अपने द्रव्य को धर्मप्रभावना में व्यय किया है। यह है उनकी दानपरम्परा। जो आज सिंघई और श्रीमन्त के पदों से प्रख्यात हैं।

एक मड़वैया वंश नरवर से प्रारम्भ होकर चन्देरी और गुना में है। एक वंश टीकमगढ़ और सुजानपुरा में है। एक वंश बानपुर में और उसी वंश के विदिशा में हैं तथा भोपाल में हैं।

खुमान, तेजसिंह जी ने अपने जीवनकाल में करकमलों द्वारा उपार्जित कमलनयनी लक्ष्मी का सदुपयोग करने हेतु ललितपुर में मोहल्ला सरदारपुरा में बड़े मन्दिर जी में एक बेदी का निर्माण कराकर और वेदीप्रतिष्ठा कराकर सं० १६९६ में श्री जी विराजमान किये। मेरु पर लेख सं० १६९६ वर्षे भादों वदी ७ शनीवासरे भट्टारक पदमकीर्ति तत् शिष्य उपाध्यते मिदं शुभं भवतु समस्तसुखं।

ललितपुर नगर में मोहल्ला कटरा में भूमि खरीद कर विक्रम सं० १८५५ के लगभग नये मन्दिर का शिलान्यास (नींव भरवाई) किया और विक्रम सं० १८६१ में वेदी-प्रतिष्ठा, श्री १००८ भगवान पार्श्वनाथ की बिम्बप्रतिष्ठा एवं पंचकल्याणक महोत्सव नगरवासी एवं गजरथ में आने वाले समाज को आहार दान देकर महोत्सव बड़ी धूम धाम से मनाया गया।

✷

ललितपुर नगर में १८९४ में पुनः श्री जिनेन्द्र बिम्ब पंचकल्याणक महोत्सव एवं गजरथ मड़वैया वंश के कुल दीपक श्री रामचन्द्र-लल्लन के द्वारा सम्पन्न हुआ।

ललितपुर नगर में सं० १९५५ में तीन गजरथ एक साथ मड़वैया वंश की ही प्रेरणा से चलाये गये थे। जिनके नाम श्री नोने साव बुद्धूलाल परवार गोत्र बाझल वीवी कुटृम मूर उपनाम सिंघई दौलतराम मगनलाल, श्री मथुरादास जी पन्नालाल जी परवार उपनाम टड़ैया छोडा मूर वासल्ल गोत्र।

श्री ब्रजलाल जी बहोरन नायक कोछल्ल गोत्र बहुरिया मूर ने एक साथ गजरथ चलाकर ललिता नगरी की शोभा में चार चांद लगा दिये।

मड़वैया वंश कुलदीपक उदारचरित्र श्री सेठ पंचमलाल जी को कुछ लोगों ने बढ़ते हुये वैभवपूर्ण गौरव से ईर्षावश कलंकित करने के लिये एक षड़यन्त्र रच डाला।

इस समय इनकी आयु ५३ वर्ष की हो चुकी थी। इनकी पत्नी का स्वर्गवास हो चुका था और इन्हें विवाह करने के लिये वाध्य किया गया। तथा १४ वर्षीय एक कन्या जिनका नाम नौनी बाई था इनके पिता मूलचन्द जी गरीब थे उन्हें ४००० रुपया दिला कर इन नौनी बाई के साथ विवाह करा दिया। छ: माह बाद अषाढ़ सुदी १४ सं० १९७६ को स्वर्गवास हो गया। श्री पंचमलाल जी ने अपने वंशज मोजीलाल जी के सुपुत्र बच्चूलाल जी को दत्तक पुत्र बना लिया। वह इनके कार्यभार को सुचारु रूप से चला रहे थे कि अचानक ही एक श्वान जोकि काम से पीड़ित था उसे भगाने के लिये पैर को आगे बढ़ाया ही था कि पैर में एक ऐसा रोग उपस्थित हो गया जिससे वह स्वर्गवासी हो गये।

अब नौनी बऊ को इस घर की मालकिन देखकर अनेक प्रकार से विभिन्न लोगों द्वारा भड़काया और उकसाया जाकर कलंकित और बर्बाद करना चाहा किन्तु जिसका भविष्य उज्वल होता है उसे सद्विचार वाले भी मिल ही जाते हैं। अतएव अब भाग्य ने पलटा खाया और वह शुभ दिन जिनेन्द्र भगवान के पंचकल्याणक महोत्सव का समय आ गया। वह संवत है १९७९। माघ सुदी ५ को रथयात्रा की फेरी थी।

श्रीमन्त सेठ बच्चूलाल जी घर के मुखिया थे। इन्होंने अपनी मातेश्वरी नौनी बऊ के नाम, यश और कीर्ति को सार्थक बनाने के लिये ६२००० रुपया की गजरथ महोत्सव के लिये दान की घोषणा कर दी। बस क्या था, नगर में इसकी चर्चा सूर्य किरण के प्रकाश के समान देदीप्यमान हो गई। अब देर ही क्या थी ! अपनी शेष आयु अल्प जानकर गजरथ चलाने के भाव प्रकट कर दिये। श्रीमान चुन्नीलाल जी ने नये मन्दिर में एक बरंडा में वेदी बनवाई। कुछ समय बाद स्वर्गवासी हुये। इनके पुत्र बच्चूलाल जी सराफ डाडिम मूर बाझल्ल गोत्र ललितपुर निवासी व श्री खेतसिंह जी हरदास जी घी वाले गोलालारे जैन पंचरतन गोत्री ने गजरथ महोत्सव में एक एक रथ इन दोनों महाशयों ने भी चलाने की घोषणा कर दी और संवत १९७९ माघ सुदी ५ सोमवार के दिन गजरथ बड़ी धूम धाम से चलाये गये। इसमें ३ वेदियां बाहर से आये हुये विमानों के लिये बनवाई गई थी जिन विमानों की संख्या लगभग १७५ के होगी। इन विमानों की विदाई में ८००० रु० और सामान अलहदा से लगा था।

जैन समाज के देश देशांतर के १७५००० दर्शक अन्य समाज सहित थे।

९ हाथी थे, तथा बैल और घोड़ों की संख्या का कोई लेखा नहीं।

इस महोत्सव को सम्पन्न करने में जिलाधीश अंग्रेज व डिप्टी कलेक्टर पेगम्बर बक्स थे जिनने अपनी कार्यकुशलता और राज्य व्यवस्था में एक अनोखा आदर्श उपस्थित किया था।

समाज के श्रीमान सेठ पन्नालाल जी सुखलाल जी टड़ैया चतुर और बुद्धिमान पुरुष थे। इन्होंने पूरा पूरा सहयोग दिया।

ललिता नगरी की जनता जनार्दन जमीदार काश्तकार तथा अन्य सभी समाज के लोगों ने भेदभाव रहित होकर जैन धर्म प्रभावना के इन कार्यों में पूरा पूरा सहयोग प्रदान किया। यह थी एकता, जिस काल में ऐसी धर्मप्रभावना हो सकी।

सामाजिक प्रीतिभोज की एक रूपरेखा-मड़वैया वंश के कुलदीपक श्रीमन्त सेठ बच्चूलाल जी से विद्वेष की भावना रखने वालों द्वारा नीचा दिखाने और बर्बाद करने व बात बिगाड़ने के लिये पुनः षड़यन्त्र रचा गया।

इनके द्वारा ३ लाख जनता का भोज देने के लिये अल्प समय में कहा गया किन्तु श्रीमन्त सेठ बच्चूलाल जी ने श्री जिनेन्द्रदेव पर विश्वास रखकर के स्वीकृति दे दी। मिष्टान्नादि भी तैयार करने के लिये जिम्मेदार कमेटियां बनाई, मुखिया लोगों को काम सुपुर्द किया गया, किन्तु ठीक समय पर कुछ गड़बड़ी मचा दी। इस समस्या को समाज के सम्मुख रखा गया। विरोधियों को लज्जित होना पड़ा, किन्तु द्वेषबुद्धि धारकों ने पीछा नहीं छोड़ा। समाज के भोज निमन्त्रण में इनकी ओर से जो निमन्त्रण देना था वह दूसरों के नाम का उल्लेख कर दिया गया ताकि श्रीमंत सेठ बच्चूलाल जी की कीर्ति पर कालिमा लग जावे। इन्हें कुछ मित्रों से ज्ञात हुआ कि इन्होंने अपनी व्यवस्था का कार्यभार चतुर प्रबन्धकों के हाथ में दे दिया जिससे विरोधियों को नीचा देखना पड़ा।

इस धार्मिक कार्यक्षेत्र में श्रीमन्त सेठ बच्चूलाल जी मड़वैया का १००००० रुपया खर्च उस समय हुआ था जबकि अनाज के भाव निम्नांकित थे:—

गेहूँ १६ सेर, चना २० सेर, उड़द २।।) मन, ज्वार २) मन, बाजरा मक्का १।।) मन; कुदई ८) रु० मानी, कुटकी ८) मानी, फिकार ५) मानी, समा ५) मानी, महुआ १।) मन, चावल ५) मन, तेल १५) मन, गुड़ १०) मन, घी १।) सेर, शक्कर १०) मन, दूध ५) मन, सोना २०) तोला, चांदी ।।) तोला, तांवा ३०) मन, पीतल ३०) मन आदि, के भाव यह थे।

लोगों में भ्रातृत्व था, एक दूसरे का सम्मान करते थे। मजदूरों को ।) प्रति दिन, मजदूरनी को =) कारीगरों को १) प्रति दिन मिलता था। एक कमाता था समस्त परिवार सुख और शांति के साथ अपनी जीवनयात्रा चलाते थे। आज वर्तमान सं० २०१६ में वस्तुओं के भाव निम्न प्रकार हैं:—

गेहूँ ४०) मन, चना ४६) मन, उड़द ४२) मन, ज्वार ३२) मन, कुदई ५०) मन, कुटकी २४) मन, फिकार २१) मन, समा २०) मन, महुआ २२) मन, चावल ८०) मन, तेल २२०) मन, गुड़ ५०) मन, घी १३।।) किलो, शकर २)४० किलो, दूध २) किलो में भी पानी, सोना २१४) तोला, चांदी ५॥) तोला, तांवा १५) किलो, पीतल ८) किलो, कांसा ३२) किलो।

आज वर्तमान शिक्षा का माध्यम विपरीत हो जाने, आहार विहार बिगड़ जाने से मानसिक वृत्तियां बिगड़ जाने के कारण स्वार्थलिप्सा बढ़ी। विकारता चरम सीमा पर चढ़ चुकी हैं। जनता ऐसी संकटकालीन स्थितियों से घबड़ा गई है। इसका मूल कारण आपस की फूट राज्यों का समाप्त होना निरंकुशता का आना। जनता और प्रत्येक परिवार में फूट का होना अनेकानेक राज्यों का विलीनीकरण होने से इतर देशों के परिवारों ने राज्यसत्ता हथिया कर अपना घर बनाया और गरीब भोली भाली जनता को विभिन्न प्रकार के कानूनों और टेक्सों से इस प्रकार

जकड़ दिया है जिससे गरीब जनता एक शब्द भी उच्चारण नहीं कर सकती है, क्योंकि आपने देखा होगा कि भगवान शंकर के समस्त शरीर पर सर्पों के आभूषण हैं व अनन्त कहलाते हैं। अनन्त के अनेक अर्थ हैं। काल अनन्त है और यही कालचक्र अनन्तकाल से घूमता आ रहा है। ऐसी संकटकालीन स्थितियों की ओर दृष्टिपात करने के पश्चात यह निर्णय मान्य होना असम्भव नहीं कि जिस काल विक्रम सम्वत् १९६९ में जो महान् कार्य हमारे मड़वैया वंश के कुलदीपक श्रीमन्त सेठ बच्चूलाल जी मड़वैया ने ललितपुर की जैन समाज के समक्ष आदर्शपूर्ण ऐसा महान कार्य किया जो न अब तक विक्रम संवत १९६९ के पश्चात् हुआ और न हो ही सकता है। क्योंकि—

खेत में उपजे सब कोई खाय, घर में आये घर बह जाय ।

वह है आपसी फूट। इसी फूट ने हमारे देश का सर्वनाश किया है। मड़वैया वंश के उज्जवल रत्न ने क्षेत्रपाल जी में भी एक वेदीप्रतिष्ठा कराकर श्रीजी विराजमान किये हैं और आज भी निरन्तर दानशीलता इस मड़वैया वंश की प्रसिद्ध है। मड़वैया वंश का एक मन्दिर बानपुर में, एक पपौरा जी में और एक चैत्यालय तथा पुरातत्व संग्रहालय विदिशा में विद्यमान है।

(मड़वैया वंश-वृक्ष पीछे के पृष्ठ पर देखिये)

इस ग्रंथ के लेखक

श्री राजमल जी मड़वैया

पुरातत्व-अन्वेषक

[जन्म: आश्विन कृ० १४ सं० १९६८]

卐

卐

लेखक की सहधर्मिणी

श्रीमती काशीबाई मड़वैया

ग्रंथलेखन में सजीव प्रेरणा

[जन्म: पौष, वि० सं० १९७३]

लेखक के पूज्य पिता जी

श्री धर्मचन्द जी मड़वैया

जन्म सं० १९३० [स्व० सं० श्रावण शु० ६ वि० संवत् २०१५]

लेखक के पूज्य काका जी

श्री भगवानदास जी मड़वैया

जन्म सं० १९३९ [स्व० फाल्गुन शु० २ वि० सं० २०१४]

लेखक के सुपुत्र

चि० जीवन प्रकाश मड़वैया
बी० कॉम, एल-एल० बी०

लेखक की पुत्रवधू तथा पुत्री

सौ० पद्मश्री (पुत्रवधू)
सौ० पूर्णिमा देवी (पुत्री)

लेखक की लघु पुत्री

सौ० प्रेमबाई जैन
(सिरोंज)

श्री सुधर्माचार्य गणधर प्रतिमा–प्रशस्ति

श्री जम्बूस्वामी गणधर प्रतिमा–प्रशस्ति

भ० महावीर के मुख्य ३ गणधर

(पृष्ठ सं० ३२०)

सम्राट् अशोक और सहधर्मिणी जैन श्रेष्ठिपुत्री असंधिमित्रा। वर (बंजारा), वधू (बंजारी)

विवाहोपलक्ष में दहेज के रूप में गुलगांव (पुष्पहार) सिरचंपाग्राम (बेंदा) एवं ऐरन ग्राम (कर्णाभूषण) के रूप में जैन श्रेष्ठि द्वारा प्रदत्त किये गये। तोरण के उपलक्ष में सांची के तोरण द्वार में भगवान नेमिनाथ के समवशरण की रचना उत्कीर्ण है, जिसे बुद्ध-जीवनी कहते हैं। यह सम्राट् अशोक द्वारा स्मृति के रूप में निर्माण कराई गई।

ग्राम रावण में स्थित

काल भैरव
ग्राम - रावण

मडवैया फोटो विदिशा
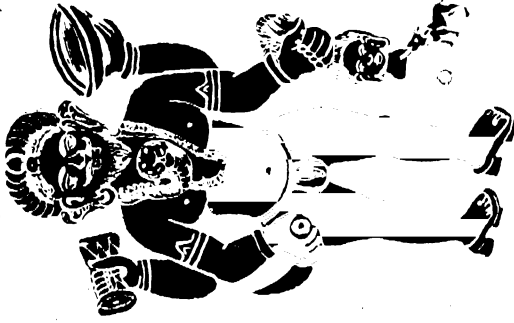
काल-भैरव (नग्न रागी)
[पृष्ठ १२१, २८६, २८९]

卐

श्री अतिशयक्षेत्र देवगढ़ संग्रहालय में स्थित
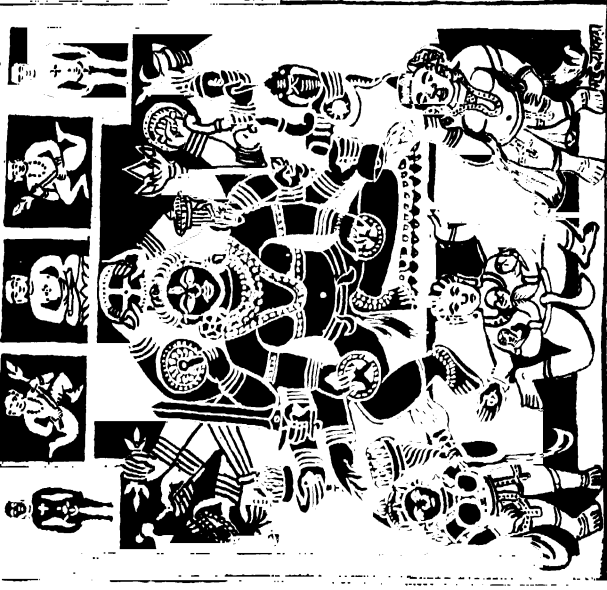
२० भुजो जिनशासनदेवी
(पृष्ठ २९६)

❋ ग्यारसपुर की अद्भुत कला-कृतियां ❋
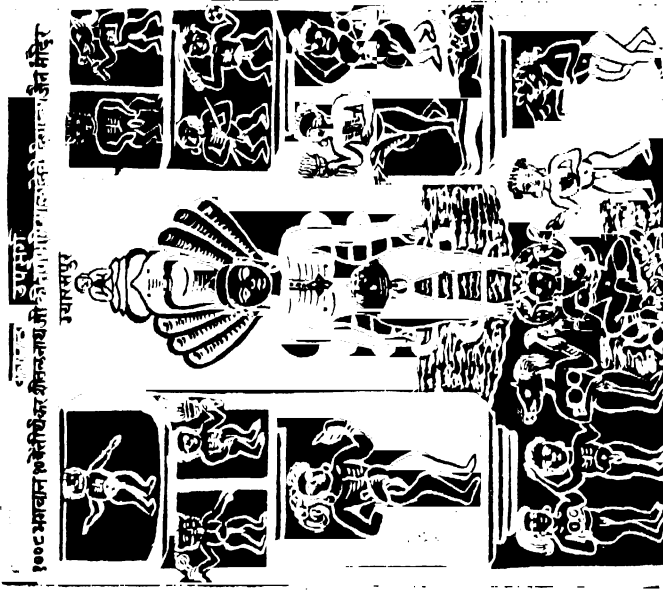
कमठ-उपसर्ग
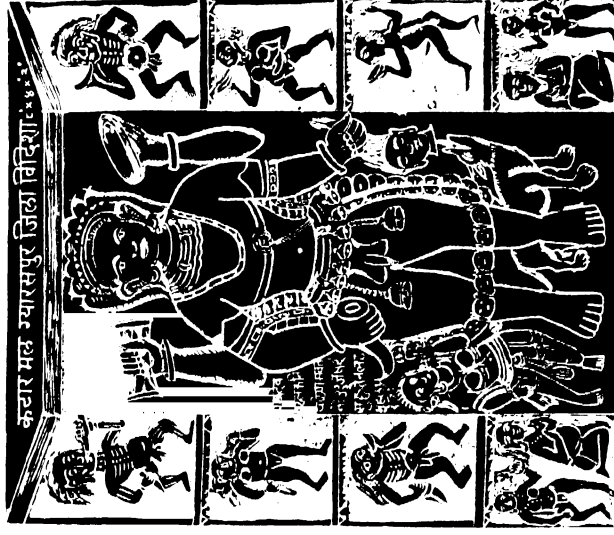
(पृष्ठ २८६)

कटार मल ग्यारसपुर जिला विदिशा

कटारमल-काल भैरव

(पृष्ठ १२१-२८६)

झांई पौर के ४ शहतीर
(पृष्ठ १०९)

रावण
(पृष्ठ २८९)

❀ आदि ब्रह्मा ❀

"विदिशा वैभव"

सम्यक दृष्टि शिव
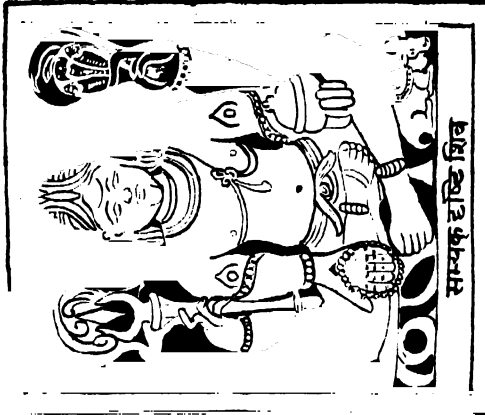
मड़वैया कुटीर पुरातत्व संग्रहालय विदिशा म.प्र.

नागासन = काल आसन। वृष = धर्मारूढ। पात्र = ज्ञानामृत। काम = सर्प। त्रिशूल = दर्शन, ज्ञान, चारित्र, ब्रह्मसूत्र = संयम की गांठ।

सम्यग्दृष्टि शिव

(पृष्ठ २१, ३१, ३६)

❀ गरुड़ ❀

विष्णु का वाहन गरुड़
"ज्ञान"

यौवनं धन संपत्तिः प्रभुत्व मविवेकता।
एकैकमप्यनर्थाय किमुयत्र चतुष्टयम्॥
काम नाग विषधाम नाश को गरुड़ कहे हो।
ज्ञान समान न आन जगत में, सुख को कारण।
इह परमामृत जन्म जरा मृत, रोग निवारण॥
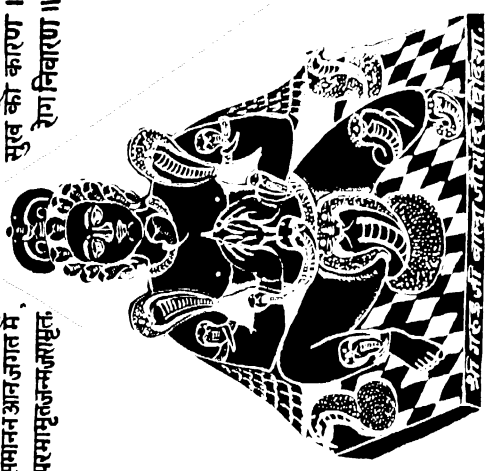
मड़वैया कला

श्री गरुड़ जी बालाजी मंदिर विदिशा.

विष-रत्न

(पृष्ठ ४६)

❁ महिष-मर्दिनी ❁
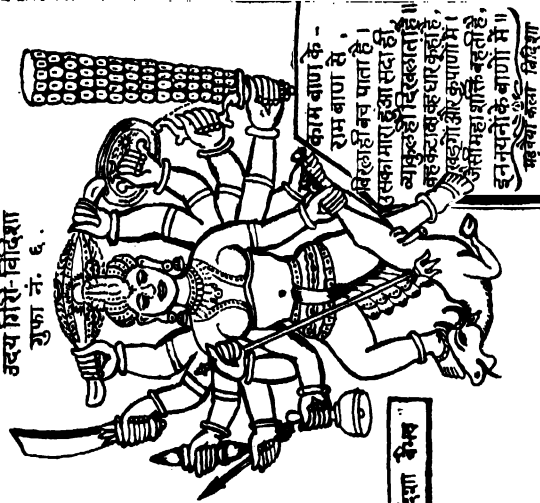
उदयगिरि गुफा नं० ६
(पृष्ठ १६८)

❁ शिव-परिवार ❁

उदयगिरी विदिशा गुफा नं. १९

"विदिशा-वैभव"

शंकर के वैराग्य का कारण सवैया

आपको बाहन बैल बली, बनिताहू को बाहन सिंहहि पेखके।
मूषक है सुत वाहन एक को, दूजो मयूर को पच्छ विशेखके॥
भूषण है कवि चैन फणीन्द्र के, बैर परे सबते सब लेरव के।
तीनहु लोक के ईश गिरीश, सु जोगी भये घर की गति देखके॥

मढ़ैया कला

उदयगिरि गुफा नं० १९
(पृष्ठ ५८, ११७)
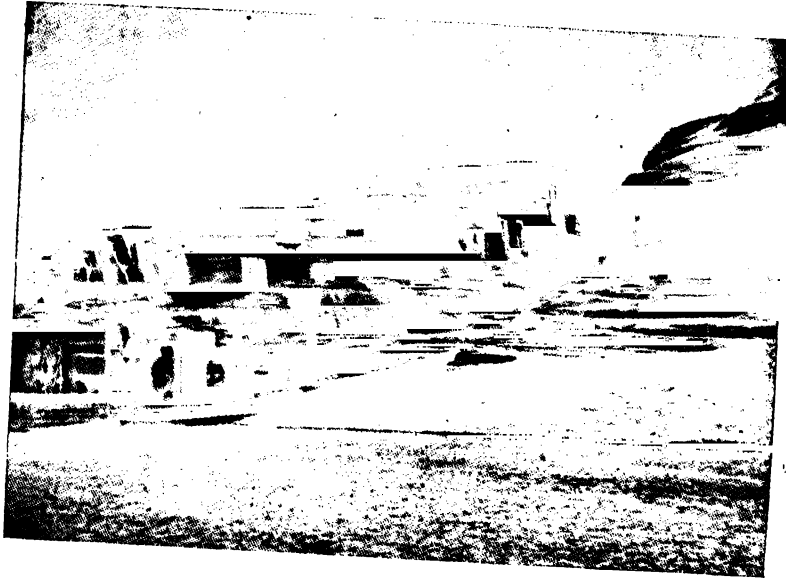
उदयगिरि गुफा नं० ७ से १२

पृष्ठ ५३

उदयगिरि गुफा नं० १३
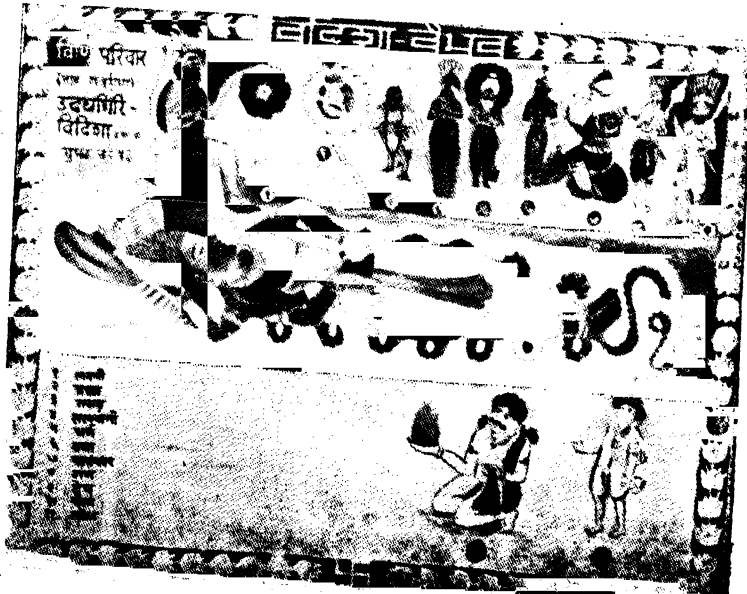
पृष्ठ ७९
तथा २९९

शेषशायी विष्णु-परिवार

उदयगिरि गुफा नं० ५

बाराह-अवतार
(पृष्ठ ५३, ६५, ६६)

❀ ग्यारसपुर की अद्भुत कला-कृतियां ❀

भगवान शीतलनाथ की तपोभूमि
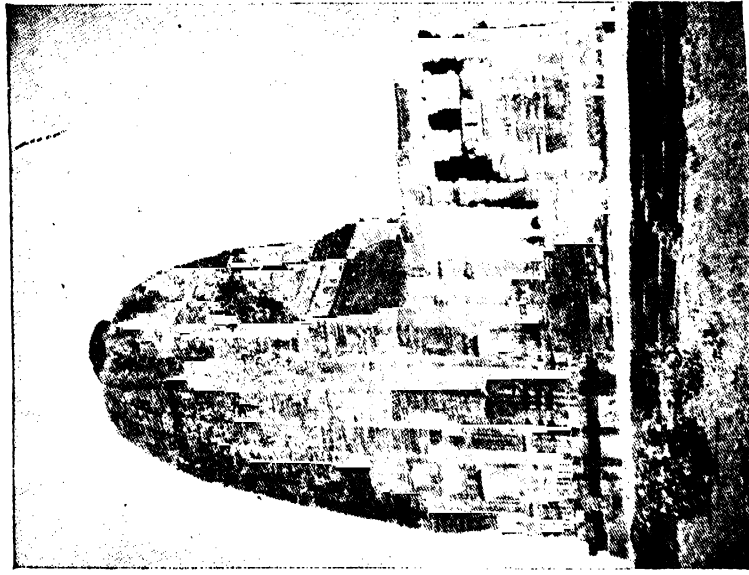
बाजरा मठ—जैन मन्दिर
(पृष्ठ २८३-२८६)

卐
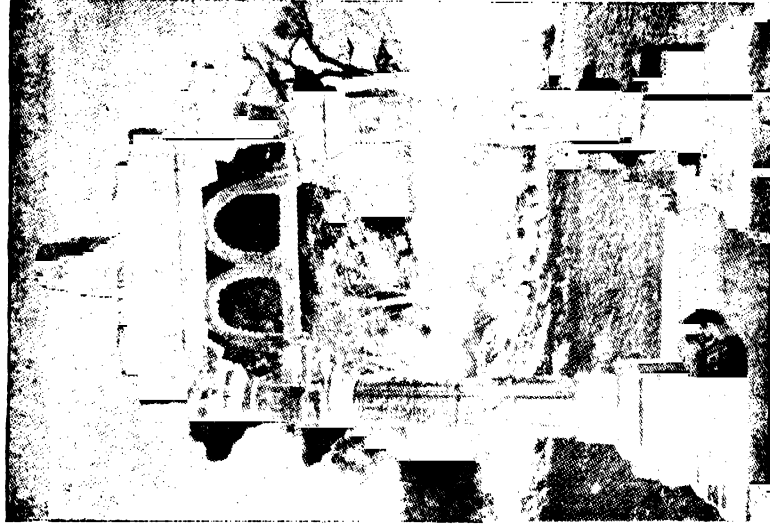
झूला—शीतलनाथ भगवान
(१०वें जैन तीर्थंकर) का जन्मोत्सव
(पृष्ठ २८१)

[महाराजा कर्ण की दानमुद्रा]

कुबेर--यक्ष

(पृष्ठ २४० तथा २५५)

दशभुजी दुर्गा

[देखिये पृष्ठ १५८–अष्टभुजी दुर्गा]

योगिनी चामुण्डा–भैरवी
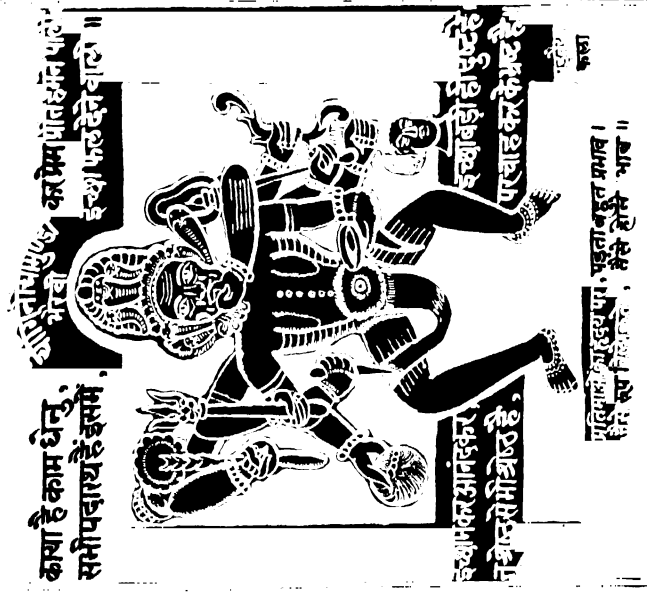
(शैव धर्म, पृष्ठ १३४, १३६, १४८)

❁ श्री अतिशय क्षेत्र देवगढ़ की जैन कला-कृतियां ❁

भरतेश वैभव

श्रीअति.क्षेत्र देवगढ़(ललितपुर) भगवान भरत चक्रवर्ती का वैराग्य

१४ रत्न

गृहपति

सेनापति

पुरोहित

मंत्री

८४ लाख

१८ कोटि

नवनिधि

सेवक

परिवार

छोड़े चौदह रत्न नवो निधि अरु छोड़े संग साथी।
कोड़ि अठारह घोड़े छोड़े लख चौरासी हाथी॥ इत्यादिक संपति बहुतेरी।
जीरण तृण सम त्यागी। नीति विचार नियोगी सुत कौं राज दियो बड़ भागी॥

(देखिये पृष्ठ २९६)

卐

भूतकालीन-चौबीसी
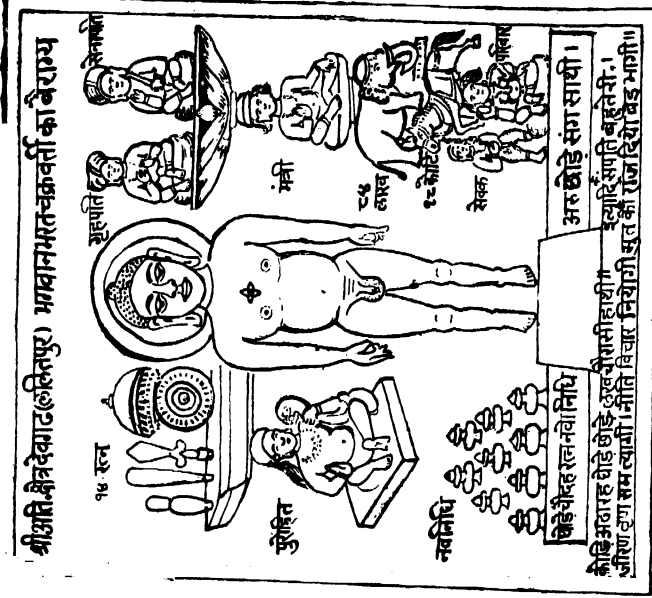
भूतकाल-चौबीसी अतिशयक्षेत्र देवगढ़ ललितपुर उ.प्र.

पट नं. १ — पट नं. २

निर्वाण	सागर	महासाधु	शिवगण	उत्साह	ज्ञानेश्वर
विमलप्रभ	श्रीधर	सुदत्त	परमेश्वर	विमलेश्वर	यशोधर
अमलप्रभ	उद्धर	अङ्गिर	कृष्ण	ज्ञानमति	शुद्धमति
सन्मति	सिन्धु	कुसुमांजलि	श्रीभद्र	अति	आन्त

(दानवीर साहू शांतिप्रसाद जी जैन द्वारा निर्मित
जैन पुरातत्व संग्रहालय देवगढ़ में स्थित २ चित्रपट)
[पृष्ठ २९६]

सम्राट सिकन्दर

सम्राट सिकन्दर ने पश्चिमदिशा से जब भारत पर आक्रमण किया तब यह कल्याण मुनि जिनकी दिशायें ही अम्बर हैं अर्थात् दिगम्बर अवस्था में अपनी शान्तिप्रिय निस्पृहता निःस्वार्थ और वीरता से तपोवल द्वारा जैन धर्म का प्रचार कर रहे थे। यह था प्राचीन जैन मुनियों का आदर्श।

कल्याण मुनि से सम्राट सिकन्दर की भेंट

भारत पर आक्रमण करते समय सिकन्दर ने दिगम्बर जैन साधुओं के उच्चादर्श, चारित्र और कठोर तपस्या के विषय में बहुत प्रशंसा सुनी थी। इससे उसके हृदय में जैन साधुओं के दर्शन करने की प्रवल उत्कंठा हो गई थी।

ईस्वी सन् पूर्व ३२३ में सिकन्दर अटक के निकट सिन्धु नदी को पार कर तक्षशिला में आकर ठहरा। उस समय उसे ज्ञात हुआ कि यहाँ पर अनेक नग्न जैन साधु एकान्त स्थान में तपस्या कर रहे हैं।

सिकन्दर ने अपना एक चतुर गुप्तचर जिसका नाम अंशक्रतस था जैन साधु को आदर के साथ पास लाने का आदेश देकर भेजा। अंशक्रतस ने जैन मुनि के निकट जाकर सम्राट के वीरत्व की प्रशंसा करते हुये कहा— मुनिराज सम्राट ने आपको आमन्त्रित किया है। आपको वह बहुत सा पारितोषिक भी देना चाहते हैं, निमन्त्रण स्वीकार कीजिये।

मुनिराज ने पारितोषिक यह कहकर ठुकरा दिया कि हमारे पास उसके संरक्षण का साधन नहीं, और हमें ऐसा पारितोषक नहीं चाहिये जो लूटकर लाया गया हो, कहकर ठुकरा दिया। अन्त में अस्वीकार करने की दशा में उस चतुर ने शिर काटने का भी भय दिखाया। यह बात श्रमण साधु संघ के आचार्य दौलामस जो कि सूखी घास पर लेटे हुये वार्तालाप सुन रहे थे। उनने उदासीनवृत्ति से उत्तर दिया।

(१) सबसे श्रेष्ठ राजा जो ईश्वर कहलाने का अधिकार रखता है वह कभी वलात् नहीं करता। वह ईश्वर नहीं लुटेरा है। और प्राणघातक--हिंसक है।

(२) उत्तम शासक प्रजा को हानि नहीं पहुंचाता, प्रजापालक होता है। उसने आत्म-विजय नहीं की। और दूसरों के दुखों का अनुभव नहां किया।

(३) वह प्रकाश--अन्धकार--जीवन--जल--मानवीय शरीर तथा आत्मा का बनाने वाला भी नहीं है। वह तो राक्षसी वृत्ति का एक हिंसक व्यक्ति है।

(४) सिकन्दर देवता नहीं है, उसकी एक दिन मृत्यु अवश्य होगी।

यह चार बातें कहीं और कहा कि जो पारितोषिक देना चाहता है वह सभी पदार्थ मेरे लिए निरर्थक हैं। इसलिये कि मैं घास पर सोता हूँ। चिन्तित वस्तु पास नहीं रखता जिससे मेरी त्याग तपस्या में वाधा पड़े। स्वर्ण धन धान्य जो कि घातक और दुखदायी हैं, मिट्टी के समान हैं। यह वसुन्धरा इस प्रकार से पालन करती है जिस प्रकार से माता अपने बच्चे का। यदि सिकन्दर मेरा सिर काट लेगा तो मेरी आत्मा को नष्ट नहीं कर सकता। सिकन्दर का भय दिखाना, धमकी देना और यह अभिमान करना मेरे लिये मिथ्या और शक्तिहीन है।

ज़र--जोरू--जमीन:—यह तो झगड़े की मूल हैं। ऐसी वस्तु नहीं चाहिये जिस से मृत्यु का भय उत्पन्न हो जावे।

मृत्योर्विभेषि किं मूढ़: भीतं मृत्युर्न मुंचति।

इसलिये हेनर जाओ और सिकन्दर से कहदो कि दौलामस को तुम्हारी किसी भी वस्तु की आवश्यकता नहीं, अतः वह (दौलामस) तुम्हारे पास नहीं आवेगा। यदि सिकन्दर कोई वस्तु मुझसे चाहता है तो वह हमारे समान बन जावे।

सिकन्दर के दूत अन्शक्रतस ने आचार्य दौलामस की सब बातें ध्यानपूर्वक सुनी, फिर उसने सम्राट सिकन्दर के पास जाकर दुभाषिये के द्वारा आचार्य दौलामस की कही हुई सब बातें कह सुनाईं। बस, इसी बात पर सिकन्दर को आचार्य दौलामस का निर्भीक और निःस्वार्थ उत्तर अमृत तुल्य लगा और वह दर्शन करने की प्रवल इच्छा कर वहाँ पर गया और विचारने लगा कि मैंने अनेक देशों पर विजय पाई, किन्तु इस बृद्ध नग्न साधु द्वारा परास्त हो रहा हूं।

सिकन्दर ने आचार्य दौलामस की मुक्तकंठ से प्रशंसा की और मुनि को अपनी इच्छानुसार कार्य करने से नहीं रोका। किन्तु आचार्य दौलामस की भेंट सिकन्दर से नहीं हुई।

सिकन्दर ने जैनाचार्य एवं मुनियों के उच्चविचार व कठोर तपस्या पर प्रभावित होकर यूनान देश में जैन धर्म के प्रचार के लिये ले जाना हितकारी समझ कालानस जिनका नाम कल्याण नामक मुनि था (यह दौलामस आचार्य के शिष्य थे) से विनय पूर्वक सिकन्दर आकर मिला।

सिकन्दर की प्रार्थना धर्मप्रचार के लिये सुनकर यूनान जाना स्वीकार कर लिया, परन्तु कल्याण मुनि का यूनान जाना आचार्य दोलामस को उत्तम न लगा। जब तक्षशिला से सिकन्दर अपनी सेना के साथ यूनान को लौटा तब कल्याण मुनि ने भी साथ में विहार किया। कौन कौन श्रावक मुनिके साथ गये उल्लेख नहीं मिला। —वीर वर्ष ७ पृ० १७७ से

सिकन्दर की मृत्यु

यूनान को जाते हुये मार्ग में बार्बालिन नामक स्थान पर जून ३२६ ई० पूर्व दिन के तीसरे पहर ३२ वर्ष ८ मास की आयु में महान विजेता सम्राट सिकन्दर मृत्यु की गोद में सदैव को सो गया। उसकी इस आयु की भविष्य वाणी कल्याण मुनि ने पहिले ही करदी थी। अन्तिम समय सिकन्दर ने कल्याण मुनि के दर्शन करने को इच्छा प्रकट की और कल्याण मुनि ने उसे दर्शन देकर धर्मोपदेश दिया।

सिकन्दर ने अपनी मृत्यु के पूर्व संसार को शिक्षा देने के लिये यह फरमान निकाला था कि मेरे मरने के समय अर्थी से बाहर मेरे दोनों हाथ खाली रखे जावें और मेरे जनाजे के साथ अनेक देशों की लूटी हुई समस्त सामग्री मर्घट तक ले जाई जावे, जिससे प्रजा अनुभव कर सके कि:—

दारा रहा न सिकन्दर सा बादशाह, इस तख्ते जमीन पै सैकड़ों आये चले गये ।

और यह संसार को दिखा दिया जावे कि अन्त में साथ सिवाय पुण्य और पाप के कुछ नहीं जाता । आत्मा अलग है, पुद्गल परमाणु अलग हैं ।

सिकन्दर के फरमान के अनुसार वैसा ही किया गया, जिसकी कहावत आज भी चल रही है ।

सिकन्दर की अर्थी को चार राजवैद्यों ने इसलिये पहिले कन्धों पर रखा कि महान वैद्य भी मौत की चिकित्सा नहीं कर सकते । इसलिये सिकन्दर की शव--यात्रा की कहावत आज भी प्रसिद्ध है कि:—

सिकन्दर शहन्शाह जाता, सभी हाली वहाली थे ।
सभी थी संग में दौलत, मगर दो हाथ खाली थे ।।

यह थी कल्याण मुनि की धर्मप्रचार पद्धति और आदर्श त्याग का नमूना । सिकन्दर ने अनेक देशों को जीता । संसार की समस्त सामग्री सुखों को एकत्रित की परन्तु अंत में साथ कुछ भी न लेजा सका । परलोक जाते समय दोनों हाथ खाली रहे अपने जीवन में भलाई से उपार्जित किया गया द्रव्य, पुण्य और पाप ही उसके साथ गया ।

वर्तमान भारतीय शासकों से अनुरोध है कि सिकन्दर जब कुछ भी साथ नहीं लेगया तो क्या तुम अपने साथ लेजाने की कामना करते हो ? क्या यह ध्यान में रखने योग्य बात नहीं है ?

सिकन्दर की मृत्यु के बाद कल्याण मुनि ने आयु के अन्त में शान्तिमयी समाधि के साथ स्वर्ग प्राप्त किया । उनका शव बड़े सम्मान के साथ चिता पर रख कर जलाया गया । एथेन्स नगर में कल्याण मुनि के चरणचिन्ह मुख्य स्थान पर आज भी विद्यमान हैं । यह है जीवन के आदर्श का प्रतीक जो मरने के बाद सैकड़ों वर्ष बीत जाने पर आज भी जीवित है ।

मर गये जग में मनुज, जो मर गये अपने लिये ।
पर वे अमर जग में हुये, जो मर गये जग के लिये ।।

अन्शाक्रतस कहते हैं कि मैं पुन: स्वयं इन ऋषियों के साथ बात चीत करने के लिये भेजा गया था । क्योंकि सिकन्दर ने सुन रखा था कि ये जैन साधु नग्न ही विहार करते रहते हैं, सर्दी, गर्मी, वर्षात की कठिनाइयां को शान्ति से ही सहते हैं विकारभाव नहीं होता, हितमित उपदेश कल्याणकारी ही देते हैं, बहुत बड़ी श्रद्धा के पात्र हैं और निमन्त्रित किये जाने पर दूसरों के पास नहीं जाते । (प्लुटार्च ए० एल० पी० ७१ देखिये)

अन्शक्रतस सिकन्दर द्वारा इनके पास भेजा गया था और उसका कथन है कि उसने तक्षशिला शहर के बीस स्टेंडिस की दूरी पर १५ मुनियों को विभिन्न मुद्राओं में बैठे ध्यान करते ही देखा है। यह आसनों से नहीं हिले और शाम के समय शहर में आ जाते थे। सूर्य की गर्मी आदि सहन करना अत्यन्त मुश्किल कार्य था, जो शान्तिपूर्वक सहते थे।

कालानस ने उससे कहा-- यदि वह उसके किसी भी सिद्धान्त को सुनना चाहता है तो स्वयं को उसके अनुकूल बनावे।

दिगम्बर शब्द की ग्रीक भाषा में मेगस्थानीज के द्वारा उपयुक्त शब्द (जिम्नोसोफिस्ट) का अर्थ दिगम्बर जैन मुनियों से है। जो कि दिगम्बर जैनियों के (निगन्ठ) निर्ग्रन्थ के लिये लागू है।

आचार्य भद्रवाहु और मौर्यवंशी सम्राट चन्द्रगुप्त

भगवान् महावीर के निर्वाण के पश्चात् श्री नन्दी, नन्दिमित्र, अपराजित, गोवर्धन, और भद्रवाहु यह पाँच द्वादशांग श्रुतज्ञान वेत्ता श्रुतकेवली हुये। कोटिपुर (बंगाल) के निवासी थे। वाल्यकाल से ही गोवर्धनाचार्य के निकट रहकर शिक्षा प्राप्त की थी।

श्री आचार्य भद्रवाहु के समय भारत के बहुभाग पर मौर्यवंशी सम्राट चन्द्रगुप्त का शासन था। जो कि पूर्व से पश्चिम तक फैला हुआ था। अंग वंग, मगध, काशी, कौशल, पाँचाल, मालवा, गुजरात, काठियावाड़ आदि पर चन्द्रगुप्त का राज्य था।

सिकन्दर के सेबापति सेल्यूकस को युद्ध में पराजय दी और उसकी पुत्री हेलना से चन्द्र-गुप्त ने शादी की, जिसका सिर मड़वैया संग्रहालय विदिशा में मौजूद है। मूर्ति के सिर पर केशों में कलाकार ने जो आभूषण निर्माण किये हैं वे बड़े सुन्दर और मन-मोहक हैं। पश्चात् चन्द्रगुप्त ने अफगानिस्तान यानी काबुल कन्धारादि को भी अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया था।

सम्राट चन्द्रगुप्त, आचार्य भद्रवाहु के परम पट्ट शिष्य थे। उन्होंने इस विदिशा में उदयगिरी पर ही अणुव्रत धारण कर जिनमार्ग स्वीकार किया जिसके प्रमाणस्वरूप उदयगिरी के शिलालेख स्मृतिरूप विद्यमान हैं।

सूरत से कीरति बड़ी, बिना पंख उड़जाय।
सूरत तो जाती रहे, कीरति कभी न जाय॥

आज उनका वैभव और कीर्ति, सूर्य के समान चमक रही है। जिस समय आचार्य भद्रवाहु जी से पंचाणुव्रत धारण किये थे उसका मार्ग प्रदर्शन आचार्य श्री ने शेषशायी विष्णु की नाभि से ब्रह्मा की उत्पत्ति, शेषनाग पर शयन और वाहन गरुड़ विरोधी को एक सूत्र में किस प्रकार बाँधा। पुत्र कामदेव, स्त्री सरस्वती और लक्ष्मी के द्वारा संबोधन किया है। अर्थात् :—एक घर में दो मते।

हरि भक्ता होवे पती, सूत पूजनी जोय।
घर में होवें दो मते, कुशल कहां से होय॥

इनके द्वारा समुद्रमंथन जिसमें मूलभूत स्त्री के शरीर को समुद्र किस प्रकार बताकर विषयों से परागङ्‌ख किया है। उसका चित्रण गुफा नं० १९ के अमृत गुफा में बताया है कि देव कौन है, वह है हमारी पुण्य प्रकृति और दानव हमारी पाप प्रकृति। इन दोनों के द्वारा जो समुद्र-रूप स्त्री का मंथन हुआ और उसमें जो कन्यारूप रत्न प्राप्त हुआ उसमें ही १४ रत्न हैं जो समुद्र के मथने पर प्राप्त हुये हैं। पश्चात् यह बताया है कि संसार का संचालन किस प्रकार से होता है। और मानव अपने सुखों के लिये तीन वस्तुयें दाँतों से पकड़ता है वह हैं तीनों चीजें झगड़े की मूलः—ज़र, जोरू, जमीन; जिस पर सारे संसार के झगड़े हैं। यह गुफा नं० ५ में बताया गया है विरक्तता धारण कराई। इसी गुफा नं० ५ में राजा बलि के द्वारा ७०० सौ ऋषियों पर जो विपत्ति आई थी उसका निवारण भगवान् विश्णु या विश्णुकुमार मुनि ने रक्षा किस प्रकार की उसके लिये विक्रिया ऋद्धि द्वारा बलि को पराजित कर नरमेध यज्ञ विध्वंस किया इस प्रकार रक्षा की, जिस कारण रक्षावंधन पर्व प्रचलित हुआ इसमें किस प्रकार से क्या भाग छुपा है संबोधित किया है, वह भी इस पुस्तिका में बताया गया है।

गुफा नं० १ यह सूर्य गुफा है क्योंकि आचार्य भद्रवाहु स्वामी ने अपनी सूर्य के समान दैदी प्यमान विद्या, बुद्धि, पराक्रम एवं तपोबल द्वारा वरद्‌वाणी का विकास वाणी रूप गंगा से पवित्र करते हुये विवेक रूप अश्वारोही होकर, ज्ञान की चादर बिछाकर पाषाण हृदयी चन्द्रगुप्त को अज्ञानान्ध भार से निकालकर निर्मल दर्शन, ज्ञान, चारित्र धारण कराया और गुफा नं० २० में भगवान् पार्श्वनाथ जिनश्रेष्ठ की विस्तृत सर्पफणों से युक्त प्रतिमा पर्वत की दीवाल में निर्माण कराकर प्रतिष्ठा कराई जो सबसे ऊंची गुफा है। जिस प्रकार मानव के शरीर का ऊर्ध्वभाग मस्तक जहाँ ब्रह्म (आत्मा) का निवास है। ठीक उसी प्रकार से तीनों लोकों में श्रेष्ठ सिद्धों का स्थान है। जिसमें समस्त संसार की विजय लक्ष्मी सुख एवं समृद्धिशाली चैतन्य स्वरूप सुख तथा शान्ति मिलती है। अपने कर्मों के क्षयार्थ पुण्य संपादन किया था। अणुव्रत धारण उसी उपलक्ष में कर जिनधर्म स्वीकार कर अपनी कीर्ति को दिगंत व्यापनी बनाया था। जिसे देखकर संसार के प्राणियों ने उत्कृष्ट अहिंसा धर्म हृदयंगत किया था। यह थी आचार्य श्री की परम तपस्या, आदर्श और धर्म प्रभावना।

विदिशा से गमन के पश्चात आचार्य भद्रवाहु और सम्राट चन्द्रगुप्त राजधानी उज्जैन में पहुंचे। जाते समय देर न हुई थी कि आचार्य श्री एक श्रावक के गृह पर आहार के निमित्त गये हुये थे कि एक दुध मुंहा बालक पलने में पड़ा कहता है जाओ जाओ! और पूछा कहाँ जावें तो उत्तर मिला दक्षिण। तत्क्षण आचार्य ने उपवास रख कर सब को एकत्रित कर अवधिज्ञान द्वारा या निमित्त ज्ञान द्वारा यह प्रकट किया कि यहाँ पर १२ वर्ष का अकाल पड़ने वाला है यह हेतु चन्द्रगुप्त को सूचित करने जाने लगे। उस समय चन्द्रगुप्त को सूचित कर जाने लगे तब उस समय चन्द्रगुप्त भी साथ गये। मैसूर राज्य में जो कि श्रवणवेलगोला की पहाड़ी प्रसिद्ध है वहाँ पर जहाँ भगवान् बाहुबलि की ५२ गज ऊंची आश्चर्य जनक विश्व की विभूति मूर्ति है उसके ऊपर की ओर चन्द्रगिरी पहाड़ी पर समाधिमरण पूर्वक स्वर्ग प्राप्त किया। उसी समय से इस पहाड़ी का नाम चन्द्रगिरी प्रसिद्ध हुआ। इस इतिहास के सूचक अनेक शिलालेख उस पहाड़ी पर विद्यमान हैं। इतिहासवेत्ताओं ने इसकी पुष्टि की है।

मेगस्थानीज के लिखित प्रमाण भी इसी बात की पुष्टि करते हुये मिलते हैं। सम्राट चन्द्रगुप्त ब्राह्मणों के प्रचारित वा ममार्गी सिद्धान्तों को न मान कर श्रमणों (जैन मुनियों) की भक्तिपूर्ण शिक्षाओं को मानता था।

डा० लक्ष्मीनारायण साहू एम० एम० एल० एल० डी० अध्यक्ष उडीसा साहित्य आकादी भुवनेश्वर उडीसा में जैन धर्म पुस्तक के पृष्ठ २३ पर लिखते हैं :—

जैन धर्म की प्राचीनता के बारे में ऐसा भी कहा जाता है कि दक्षिण भारत में श्रुतकेवली भद्रबाहु अपने पट्टशिष्य चन्द्रगुप्त मौर्य को और उनके जैन साधुओं को साथ लेकर सबसे पहले ई० पूर्व २९८ में पहुंचे थे।

सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ मि० विंशेन्ट ए० स्मिथ 'भारत का प्राचीन इतिहास' तृतियावृत्ति पृष्ठ १४६ में लिखते हैं कि जैन कथाओं में उल्लेख है कि :—

"चन्द्रगुप्त मौर्य जैन था। जब भारत वर्ष का दुष्काल पड़ा तब चन्द्रगुप्त अन्तिम श्रुतकेवली आचार्य भद्रवाहु के साथ दक्षिण की ओर चला गया" आदि। —मि० ई० थामस

"महाराज चन्द्रगुप्त जैन धर्म के नेता थे। चन्द्रगुप्त के जैन होने में शंकोपशंका करना व्यर्थ है। क्योंकि इस बात का साक्ष्य कई प्राचीन प्रमाण पत्रों में मिलता है। वे प्रमाणपत्र शिलालेख निस्संशय अत्यंत प्राचीन है" आदि।

चरण—पादुका

"जिनशासनायानवरत—भद्रबाहु--चन्द्रगुप्त--मुनिपतिचरणमुद्राङ्कित विशालशी" १६२।

यानी, इस शिलालेख में लिखा है कि चन्द्रगिरि पहाड़ी पर मुनिपति, भद्रबाहु और चन्द्रगुप्त के चरणचिन्ह अंकित किये गये हैं।

" मउड घरेसु चरिमो, जिर्णदिक्खं धरदि चन्द्रगुप्ताए "—१४८। यतिवृषभाचार्य कृत तिलौयपण्णत्ति,

यानी—मुकुटधरों के अन्तिम जैन राजा सम्राट चन्द्रगुप्त ने जैन मुनि की दीक्षा धारण की थी। ईसा की ७ वीं शताब्दी में आचार्य हरिषेण रचित कथाकोष में निम्नलिखित उल्लेख है :—

भद्रबाहुवचः श्रुत्वा चन्द्रगुप्तो नरेश्वरः। अस्यैव यौगिनः पार्श्वे दर्धो जैनेश्वरं तपः॥३८॥

चन्द्रगुप्तमुनिः शीघ्रं प्रथमो दश पूर्विणाम्। सर्वसंघाधिपो जातो विशाखाचार्यसंज्ञकः॥३९॥

अनेन सह संघोपि समस्तो गुरुवाक्यतः। दक्षिणापथदेशस्थ पुन्नाटविषयं ययौ॥४०॥

अर्थ :—श्री आचार्य भद्रबाहु के वचन सुनकर सम्राट चन्द्रगुप्त ने भद्रबाहु के साथ जैनेन्द्री दीक्षा लेकर तप किया। चन्द्रगुप्त शीघ्र दशपूर्व पाठियों का अग्रेसर विशाखाचार्य नाम पाकर

मुनिसंघ का नायक बन गया। विशाखाचार्य का समस्त संघ गुरु आदेश से (भद्राबाहु आचार्य की आज्ञा से) —दक्षिणापथ देशवर्ती पुन्नाट जनपदों को गया।

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार सम्पादक कल्याण मासिक पत्र, (गोरखपुर) के पृष्ठ ८६४। १९५० पर :—

भारत सीमान्त से विदेशी सत्ता को सर्वथा पराजित करके भारतीयता की रक्षा करने वाले सम्राट चन्द्रगुप्त ने जैनाचार्य श्री भद्रबाहु स्वामी से दीक्षा ग्रहण की थी। उनके पुत्र विम्बसार थे। सम्राट अशोक उनके प्रपौत्र थे। कुछ दिन जैन रहकर अशोक पीछे बौद्ध हो गये थे।

नोट :—यह बात विचारणीय है कि क्या शेरों की माँद में लड़ैये पैदा होते हैं ? या शेरों का कुल, परम्परा आदि बदल जाती है ? इसलिये यह बात कहाँ तक न्यायसंगत है। यह तो अपनी बात मनाने के लिये तथा भ्रम पैदा करने और पुस्तक को रोचक बनाने की दृष्टि से लिखी गई सी प्रतीत होती है। सत्य मानने योग्य नहीं।

"अशोक ने काश्मीर तक जैन धर्म का प्रचार किया था।"

बिवलिउटिया इन्डिका आइने अकवरी वालुअम २ प्रथम काल एच०एस० जरीत०

द्वितीय प्रकाशन कारेक्ट जदुनाथ सरकार रायल एसियाटिक सोसायटी १९४९ पृष्ठ ३७७

अशोक ने काश्मीर में जैन धर्म का प्रचार किया व ब्राह्मण धर्म जो कि वाममार्गी था और हिंसक था वहाँ से उच्छेद किया। अब्दुलफजल ने आइने अकबरी में लिखा है

साइन्स आफ कम्प्रेटिव रिलीजन्स वाई मेजर जनरल जे०एस०आर० फारलाँग :१८९७: पृष्ठ २० पर जैन और बौद्ध धर्म के मध्य में राजा अशोक का इतना कम भेद दीखता है कि उसने सर्व साधारण में अपना बौद्ध होना बताया हो। इसलिए उसके कई शिलालेख वास्तव में जैन सम्राट के रूप में है।

श्री पं० विजयमूर्ति एम० ए० शास्त्राचार्य दिल्ली शिलालेख ई० पूर्व २४२ अपने शिलालेख संग्रह (निर्णय सागर प्रेस बंबई में छपा) भाग २ पृष्ठ ३ में लिखते हैं।

इसमें बताया है कि सम्राट अशोक ने अपने राज्याभिषेक के २७ वें वर्ष में यह धर्म शासन लेख लिखवाया था। इसमें उसने अपने द्वारा नियोजित धर्ममाहात्म्य का उल्लेख किया है। ये माहात्म्य संघ आजीवक ब्राह्मण और निर्ग्रन्थों की देखरेख के लिये नियुक्त किये गये थे। यहाँ निर्ग्रन्थ शब्द से जैनों का तात्पर्य है। इस पर से मालूम पड़ता है कि उस समय के अनेक अग्रेसर धर्मों में जैन धर्म भी एक ही था।

श्रीमान पं० इन्द्रलाल जी शास्त्री जयपुर लिखते हैं-- अशोक सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य का पौत्र था। पूर्व में चन्द्रगुप्त जैन नहीं था किन्तु उसने जिन दीक्षा आचार्य भद्रवाहु से (इस विदिशा नगरी में) धारण की थी। जिसे ऐतिहासिक विद्वान निःसंकोच मानते हैं कि चन्द्रगुप्त मौर्य जैन

था—तो उसका पोता अर्थात् नाती भी जैन ही होने में सन्देह नहीं रखता। जैन धर्म शेरों का धर्म है और शेरों का अर्थ हिंसक पशुओं से नहीं किन्तु उनके सद्‌गुणों से है। इसे वीर पुरुष ही धारण कर सकता है, कायर नहीं।

किन्तु कुछ भ्रम पैदा करने वाले जिन्होंने जैन धर्म के ग्रन्थों को समझा ही नहीं, पढ़ा नहीं और इतिहास लिख दिया कि ऐतिहासिक लोगों का मत है कि अशोक पहले जैन अवश्य था परन्तु पीछे बौद्ध हो गया। यह सत्य पर कुठाराघात है।

देखिये—"निगण्ठेसु पिभेकटे वि या पटा हो हुंति"

—दिल्ली फीरोजशाह कोटला पाली वाक्य अशोक स्तम्भ से।

सम्राट चन्द्रगुप्त के पौत्र सम्राट अशोक ने समस्त भारत को अपने आधीन करके निष्कण्टक एकछत्र राज्य किया। सम्राट अशोक २९ वर्ष तक जैन धर्मानुयायी रहा ऐतिहासिक पुस्तक आइने अकवरी में इस बात की पुष्टि की गई है। (पश्चात् अशोक ने बौद्ध धर्म ग्रहण किया इस विषय का समर्थन अन्य अनेक ऐतिहासिक उल्लेखों से जो मिलता है वह ऐसा है जैसा कि बकरी के गले में थन, जो कि निरर्थक हैं। कतई मानने योग्य नहीं)थोड़ा ध्यान दीजिये—

शम दम अहिंसा सत्य भाषण, चाहता नहिं सर्वका।
सच्चा यही है तप कहीं, तप सुखाना देह का॥
है गर्व विद्या का जिसे, कुल का जिसे अभिमान है।
जग में प्रतिष्ठा मान हो, जिस मूर्ख को यह ध्यान है॥
सुन निज प्रशंसा हर्षता, धनके नशे में चूर है।
उसको परम पद सैकड़ों, लाखों कोसों दूर है॥
हिंसक प्रकृति मिथ्या वचन, चोरी करें व्यभिचार भी।
कपटी कभी करते नहीं, वर्णाश्रमी आचार भी॥
नहिं लोक से भय खावते, नहिं पास जावें लाज के।
होंगे नरक का कीट ये, ग्राहक गिनों यमराज के॥
गोपाल भूखी मारते, सौगंध झूठी खावते।
कीड़े मकोड़े को नहीं, परिवार को ही सतावते॥
जानो भिखारी कल्लके, हैं भूप केवल आज के।
होंगे नरक के कीट ये, ग्राहक गिनों यमराज के॥

औंधे लटकना नरक में, रोते हुये फिर जन्मना ।
पग पीटते जीना यहां, फिर अन्त में मर जावना ।।
क्या लाभ ऐसे जन्म से, जंह दुक्ख बारम्बार हो ।
निःसार यह संसार है, ईश्वर--भजन हो सार है ।।
पिटना पिटाना रात दिन, कहना उसी का मानना ।
सहना सभी की घुड़कियां, भय हर किसी से खावना ।।
माता पिता धमकावते, आचार्य देता मार है ।
इस बात को धिक्कार है, ईश्वर--भजन ही सार है ।

※

समय का फेर

(वर्तमान और पूर्वकाल की खाद्य सामग्री का अन्तर्प्रदर्शन)

सुना करें थे राम राज्य में हम छब्बे कहलायेंगे ।
किन्तु न था मालूम कि चौबे से दुब्बे रहिजायेंगे ।।
अन्न वस्त्र घृत दुग्ध मिले नहिं, तरस गये सब भारत में ।
चोरी ब्लैक घूंसखोरी से हैं, सबके मन आरत में ।।१।।

शासक ही हो गये विनाशक, फिर क्या पार बसायेगी ।
नये नये कानून बने, जनता कैसे सुख पायेगी ।।
चढ़ा भूत कन्ट्रौल शीस पर, क्या क्या नाच नचायेगा ।
चार छटाँक अन्न राशन में, कौन पेट भर खायेगा ।।२।।

छै सौ वर्ष पूर्व के सपने, जैसी बात बताता हूँ ।
स्वर्णधरा इस बसुन्धरा के, वस्तुभाव बतलाता हूँ ।।
पौने दो आने मन गेहूँ, जौ मन भर एक आने में ।
ज्वार बाजरा मक्की मिलती थी, मन भर पौनाने में ।।३।।

चने उड़द और मूंग पाँच पैसे के मन भर मिलते थे ।
तेल सवा रुपये मन, चावल तीनाने मन लाते थे ।।
सवा तीन आने मन गुड़, मन खाँड़ पन्दरे आने में ।
तीसाने मन घी बिकता था, फीरोजशाह जमाने में ।।४।।

और भाव तुम सुनो समय थे, बादशाह जो अकबर के।
उतर रहे हैं भाग्य दिनों दिन भारत के नर नारी के ॥
आठाने मन चावल गेहूँ, पांचाने अरु नौ पाई।
साताने मन दाल उर्द की, घी ढाई अरु छै पाई ॥५॥

ज्वार बाजरा ढूंठाने मन, जौ तीनाने अरु दो पाई।
डेढ़ रुपये मन तेल खाँड़, मन बाईस आने छै पाई ॥
हल्दी धनियाँ नमक मिर्च सब, पाँचाने मन लाते थे।
एक कमाता था घर में, सब बैठि कुटुम्बी खाते थे ॥६॥

सत्तर साठ बरस की बातें, हमें तुम्हें मालूम सभी।
उससे पहली बातें पूर्वज, कहा करें थे कभी कभी ॥
एक रुपये का चार सेर घी, पिता हमारे खाते थे।
हम भी बचपन में रुपये का, दोय सेर घी लाते थे ॥७॥

एक रुपये मन बेझड़, गेहूँ डेढ़ रुपये मन मिलते थे।
ज्वार बाजरा मक्की जौ, सब सवा रुपये मन तुलते थे ॥
दो ढाई रुपये मन दालें, चावल तीन रुपये मन में।
बढ़िया गुड़ ढाई रुपये मन, खाँड़ आठ रुपये मन में ॥८॥

वर्तमान के भाव देख कर, सब का दिल थर्राया है।
सभी लोग कहते हैं ऐसा, कठिन समय नहिं आया है ॥
सत्तर रुपये के मन चावल, मन गेहूँ के रुपये तीस।
उड़द मूंग बाजरा मक्की, मन के लगते रुपये चौबीस ॥९॥

डेढ़ रुपये की सेर खांड़, गुड़ सेर मिले एक रुपये में।
आठ रुपये का एक सेर घी, भी नहिं अच्छा खाने में ॥
एक रुपये में सेर दूध, उसमें चौथाई पानी है।
"मक्खन" राम राज्य में, कपड़े की बन गई कहानी है ॥१०॥

(पं० मक्खनलाल जी देहलीकृत)

राशन

राशन पर कन्ट्रोल है, शासन पर कन्ट्रोल।
शासन पर कन्ट्रोल पूत बुढ़ऊतें उरझै ॥
रहै रार दिन रात, मामलौ नाहीं सुरझै।
कहत चन्द्र सु बनाय, डोलि गये सबके राशन ॥
बिना राशनिंग कार्ड न ढूंढ़े पइहौ राशन ॥

(चन्द्र कवि)

कांग्रेसी राज्य में उन्नति के आंकड़े वर्तमान में अमर्यादित

रेल किराया	२ गुना	नागरिक अधिकारों पर हमला	५० गुना
पढ़ाई का खर्चा	३ "	पुलिस की ज्यादतियां	७० "
मकानों की तंग	४ "	रिश्वत खोरी	८० "
बेकारी	८ "	चोर बाजारी	९० "
अन्याय	१६ "	जनता की मुसीबत	१०० "
टैक्स	३२ "		

अक्षयपुर नगर

कायापुर	पट्टन	कामदार	सुकर्म
आज्ञाकारी सेवक	चेतन्यचन्द्र, मनसाचन्द्र	मुद्दे मुसाहिब	मस्तिष्क
मित्र	संग -- कुसंग	हाकिम	हिम्मत
अधिकारी	आलस्य -- प्रमाद	दरोगा	दान
प्रसंग से	स्मृतिपट्ट	भौमियाँ	विक्रमसिंह
प्रायव्हेट सेक्रेट्री	विवेकचन्द्र	छड़ीदार	षट्कर्म
दीवान (प्रायमिनिस्टर)	सम्यग्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक् चारित्र,	अंर्द्धांगिनी	सुमत, कुमत
		प्रिंसआफवेल्स (युवराज)	महाव्रत -- अणुव्रत
कोतवाल	सद्विचार	पटरानी की निजी सखियाँ	५ समिति ३ गुप्ति (अष्टसखी)
उप-प्रधान	प्रीतिराज		
चौकीदार	चितदास	नौकर -- चाकार	कर्तव्य समुदाय
फौज वक्षी	बुद्धिराय		

नोट—सोलह आना अनुकरण किया। कुए में भाँग पड़ने का कारण, वे-दरकारी, और लापरवाही से अंर्द्धांगिनी कुमता रानी ने विरोधी दल-अत्याचार, स्वेच्छाचार द्वारा चौरासी के चक्कर में डाल दिया। यह भुक्तभोगी ही अनुभव कर सकता है।

विरोधी दल का सेनापति	मोह राजा	कपटसिंह	सिपह पोश
मिथ्या-दर्शन	प्रायमिनिस्टर-- प्रधान सचिव	दुराचार	प्रायव्हेट सेक्रेट्री
		कामदेव	ए० डी० सी०
कोतवाल	अविवेक	मोह राजा के प्रवीण पुत्र	राग--द्वेष
सहायक कोतवाल	क्रोधसिंह	अमीर उमराव	सप्त अज्ञान
रोकड़िया	निर्दयचन्द्र		

[१] मान [२] मत्सर [३] खुदगर्जी [४] छलराम [५] चोरीचन्द्र [६] ईर्षाचन्द्र [७] तीन गर्व
[१] वजीर [२] फौजदार [३] पोद्दार [४] छड़ीदार [५] चोपदार [६] सिपाही [७] पहरेदार

तीन शल्य	सी० आई० डी०	महतर	मानियाँ
पटवारी	पापिया	भिस्ती	भयदास

यह पुरुष कर्मचारी हैं।

अतिरक्त उच्च पद पर नारियाँ सेठानी तृष्णा
कुमति गुप्त कार्य के लिये कुमति पटरानी विकथा ४ दासियाँ जहाँ छूत छात का भेद नहीं— [१] निन्दा महतरानी [२] पैशून (चाण्डालनी) [३] रसना--झाडू जो महतरानी के पास रहती है [४] कुलटा--गूढ़ माया इन्होंने काया नगरी में पूर्णरूप से अधिकार का बड़ा भारी सिलसिला शुरू कर दिया है। इसके शस्त्र दार, अस्त्र टर्र।

[१] किलेदार, फौजदार, पोद्दार, छड़ीदार, चोपदार, पहरेदार यह दार हैं।

टर्रः—डाह प्रसाद--डाक्टर, कामराय–कलेक्टर, बदी भरोसे–बैरिस्टर, सुस्तीलाल–सोलीसीटर, अकड़ाई सिंह–एक्टर, इकतरफीलाल–इंस्पेक्टर, एक पुरा ऊजड़ चेचक में एक आँख जाती रही। मदनलाल–मास्टर, ऐब नारायण–एडीटर, ईर्षाचन्द्र इंस्ट्रक्टर। इनके अस्त्रों के प्रहार से कायापुर पट्टन की दीवारें छिन्न भिन्न होगयीं तथा होने वाली हैं।

मोहराजाः—दारों और टर्रों से कायापुर पट्टन पर बार बार हमला करता है।

मोह राजा का दूतः—श्वेत बाल (जरासिन्धु) ने कायापुर पट्टन में घुस कर वेदना प्राप्त करदी। शक्तिक्षीण से मित्र भी शत्रु बन गये। हिम्मतगढ़ खोखला पड़ गया। नगरी के दसों दर्वाजे खुलने लगे, नौ सड़कें टूटने लग गईं।

घोड़ा छूटा महल से, चहुँदिस लगी पुकार।
दस दरवाजे खोल कर, निकल गया असवार॥

दशावतारी-मानव

भगवत् जिनसेनाचार्य ने दशावतार का संबोधन कर जिन-शासन का मार्ग बताया और अश्वमेध यज्ञ का अर्थ वास्तविक क्या है इसका निरूपण मानव के दश अवतार जिन्हें विष्णु के दश अवतार बताते हैं निम्नांकित उल्लेख किया है :—

दो जलचर, दो वनचर, दो द्विज दो भूपाल ।

इक मौनी अरु अश्व पुनि, तुम पर सदा दयाल ।।

अब आप अपने शरीर पर ज्ञानदृष्टि डालिये:—

यह मानव-शरीर पाँच तत्वों से बना है । इसमें पहिला जल है । मानव का मन संकल्प और विकल्पों के तूफानों से घिरा हुआ है । मानव शरीर से रोग शोक जामन, मरण लगा हुआ है । जो नाशवान है, संकल्प और विकल्पों के तूफानों को सहन करता है । इसमें मगर मच्छ, काम, क्रोध, मान, माया, लोभ हैं । यह पहला मच्छावतार मन है । जिस प्रकार से मन की चंचल गति है उसी प्रकार से मीन (मछली) की । शरीर की उतनी तीव्र गति नहीं जिस प्रकार से कच्छप की । जब यह विषयों के जाल में पकड़ा जाता है अंग संकोच कर रह जाता है । अर्थात् इन्द्रियां संकुचित कर वहीं रह जाती हैं । इसलिये दूसरा कच्छप अवतार है । नं० ३ बाराह अवतार:—

जिस प्रकार से कामी जन विषयों में आनन्द मानते हैं उसी प्रकार से बाराह की दृष्टि अपवित्र वस्तु पर रहती है, त्यागी पुरुष हेय मानते हैं । वह है माया :—

धरा कनक अरु कामनी, ये हैं कड़ुवी बेल ।

बैरी मारे दाव दे, यह मारें हंस खेल ।।

जर जोरू जमीन झगड़े की जड़ तीन। यह बात बाराह अवतार में निरूपण की है। विषयी विषयों में, शूकर मैला खाने में आनन्द मानता है। नं० ४ नरसिंह अवतार:— चौथा है। सिंह-पुरुष वही है जो कि संसार के समस्त भोगों को भोगकर उन्हें मैले के समान निःकृष्ट जानकर त्याग देता है। नाशवान वस्तुओं से ममत्व नहीं रखता। जीवों पर दया रखता है। वह सिंह-पुरुष पराक्रमी और शूरवीर है। ऐसे तो :—

भर लेते हैं पेट सभी, है जिनके काया।
पुरुष--सिंह हैं वही, भरे जो पेट पराया॥

स्वयं के अनुभव को सामने रख कर दूसरों को सन्मार्ग बताने वाला भुक्तभोगी ही सिंह-पुरुष (नरसिंह है)।

नं० ५, पांचवां अवतार बामन अवतार है:— आप बामन अवतार का अर्थ ब्राह्मण वर्ण से न लगावें, किन्तु बामन का अर्थ लघु यानी छोटे याचकों से है, जो कि विषय भोगों की पुतली कामिनी की याचना करने वाले हैं। कामिनी माया है। कामी पुरुष अपना विवाह करने के लिये दूसरे से स्त्री की याचना करता है और उस स्त्री की इच्छापूर्ति के लिये द्रव्य संग्रह करता है और जमीन चाहता है जिस पर यह शासन कर सके। आप यहाँ देखिये। आप अपने लिये जब दूसरों के यहां अपनी वंशपरम्परा को चलाने के लिये अपरिचित ग्राम के किसी सजातीय या जिसके यहां आप लड़की पसन्द कर आये हों उससे आपने एक कन्या की याचना की। आपका हाथ कन्यादान लेने के लिये नीचा रहा और कन्यादान देने वाले का ऊंचा रहा। आपने दान लिया और उसने दान दिया। यह बामनत्व की ओर संकेत करता है।

अब लड़की के शरीर की ओर दृष्टि डालिये। यह शरीर तीन लोक की रचना का है। मध्य भाग टुन्डी का इसे मध्य लोक ही समझिये, और इसके ऊपर का भाग ऊर्ध्वलोक है। नीचे का भाग अधोलोक है, आपका निवास मध्यलोक में है। आप केवल पेट-पालन की ओर लक्ष देते हैं। किन्तु कभी आपने अपने को देखा और विचार किया कि यह नारी-संसार एक शक्ति है, यह स्वर्ग और नरक दोनों के नापने का यन्त्र है। जितने भी महान् पुरुष हुये इन्हीं के उपदेश से महर्षि बने हैं। जैसे महात्मा तुलसीदास। इसी नारी के पीछे, भर्तृहरि योगिराज बने, नहीं तो क्या उन के राजभवन में किसी बात की कमी थी? नहीं। इसे माया क्यों कहा? इसलिये कि इसके दर्शन से काम पैदा होता है और काम से दुख और दुख दुर्गति का कारण बन जाता है। व्यवस्था बड़ी है, यह संक्षेप में वर्णन की, और नीचे की ओर दृष्टि नहीं डाली जहां से मूत्र रक्त बहता रहता है। नारी कभी भी शुद्ध नहीं रहती। जो व्यक्ति कामी पुरुष है और सांसारिक भोगोपभोग वस्तुओं की याचना करता है वह लघु है।

(६) छठवां परसराम वह हैं जो ज्ञान के फरसा से अज्ञान का नाश कर मार्गदर्शन कराते हैं। ब्रह्मज्ञानी पुरुष ही परसराम हैं।

(७) सातवें कृष्ण का अर्थ काले से है। कहीं आप भगवान कृष्ण को न समझ लेवें, वे तो परम योगी थे। भगवान कृष्ण का अवतार लीलामय था। उन्होंने गोपियों के साथ रासलीला

रची थी। आप भी तो यहां अपने जीवन की रासलीला रचते हैं। आप नाचते हैं, आप गाते हैं, आप वंशी बजाते हैं, किन्तु क्या आप संसार के भोग भोगते हैं, क्या आप बुराइयों का दमन करते हैं? ज्ञानी जन अपने में स्वयं भगवान देखना चाहते हैं। जहां तक हमारे में छल कपट और बेईमानी भरी हुई है हमारा हृदय काला है।

(८) कृष्ण जी का जन्म कंस के भय से जेल में हुआ था। वहां पर कोई जन्म के गीत नहीं हुये थे, माता यशोदा के यहां हुये थे। जहां इनका पालन पोषण रक्षण हुआ था। इसका प्रमाण आप जानते ही हैं:—

जन्मे तब गाया नहीं, मरे न रोया कोय।
बीच दशा सुख भोगते, नारायण पद होय॥

हमारी भारतीय परम्परा में महांपुरुषों के नाम पर नाम रखने की प्रथा क्यों चली आ रही है? अन्य देशों में क्यों नहीं है? जैसे नारायण, कृष्ण, बल्देव, शिवशंकर, महादेव, राम--चन्द्र कुमार, लक्ष्मण प्रसाद आदि। इसी प्रकार से स्त्रियों के नाम भी सूर्यकुमारी, चन्द्रकुमारी, देवकुमारी, अन्जना, रंजना आदि।

हमारी भरतीय परम्परा के अनुसार यहां पर उसी प्रकार से मोक्ष–गमन करने वाले पुरुषों ने अवतार (जन्म) लिया है और वैसे ही कर्तव्य किये हैं इसी से उन्हों की मूर्तियों का निर्माण इसलिये हुआ था कि वह कौन थे, उनके आचरण क्या थे, और हमारे आचरण क्या हैं। शिक्षा प्रचार का यह माध्यम था। जिन्हें हमने भगवान की प्रतिमा मानकर पूजना प्रारम्भ किया है हम उनके अंग व प्रत्यंग से उन कलाकृति में छुपे हुये भावों को समझ ही नहीं पाये हैं। और हमें केवल पेटपालन, कुटम्ब परिवार के झगड़े और समस्याओं से फुरसत नहीं है। इस प्रकार से हमारा चरित्र, व्यवहार, कला, उद्देश्य में उज्वलता न होने से अर्थात् कलंकित (कालिमा सहित) कार्य जो छल और बल सहित हैं भावों में परिवर्तन है।

(८) आठवां रामावतार:—आप प्रायः भगवान राम के गुण गाया करते हैं और नाम भी रामचन्द्र रख लेते हैं, किन्तु विचारिये कि आपके कर्तव्य–कर्म क्या उन महापुरुषों के समान हैं? नहीं हैं। भगवान राम ने जो आदर्श संसार में रखा उसका क्या हम पालन करते हैं? उन्होंने एक नीच रजक के द्वारा किये गये दोष को उदाहरणरूप मान कर सीता माता के चरित्र पर दोष माना था। किन्तु ऐसी परम पवित्र सती देवी को परित्याग किये जाने पर कष्ट उठाने पड़े। उन्हें त्याग कर दिया। क्या आप उन्हों के समान विषय–वासनाओं का त्याग कर सकते हैं? कदापि नहीं।

रामायण से क्या सीखा? कविवर बनारसीदास जी ने एक रामायण कितनी सुन्दर लिखी है, जरा आप पढ़िये और समझिये:—

(अध्यात्मिक रामायण)

विराजे रामायण घट माँहिं ।
मरमी होय मरम सो जाने, मूरख जाने नाहिं ।।
आतम राम, ज्ञानगुण लक्ष्मण, सीता सुमति समेत ।
शुभोपयोग बानर दल मंडित, वर विवेक रण खेत ।।
ध्यान धनुषटंकार सोर सुनि, गई विषयादित भाग ।
भई भस्म मिथ्या मति लंका, उठी धारणा आग ।।
जरें अज्ञान भाव राक्षस कुल, लरें निःशंकित सूर ।
जूझें राग द्वेष सेनापति, संशय गढ़ चकचूर ।।
विलखत कुम्भकरण भव विभ्रम, पुलकित मन दरयाव ।
थकित उदार वीर महिरावण, सेतबन्धु समभाव ।।
मूर्छित मन्दोदरी दुराशा, सजग चरन हनुमान ।
घटी चतुर्गति परणति सेना, छुटे छपक गुणवान ।।
निरख शक्ति गुण चक्र सुदर्शन, उदय विभीषण दीन ।
फिरे कबन्ध महिरावण की, प्राणभाव सिरहीन ।।
इहि बिधि सकल साधु घट अन्तर, होय सहज संग्राम ।
यह व्यवहार दृष्टि रामायण, केवल निश्चय राम ।।

आत्मस्वभाव

आतम में ही राम रमा है, आतम में जब रमता है ।
आतम श्रद्धा से ही प्राणी, पा जाता सुख समता है ।।
आतम ही मेरा वैभव है, आतम विश्व-विभूती है ।
आतम का हित आतम से है, आतम हित अनुभूती है ।।
कहाँ खोजता है अपना हित, अन्तर में कर उसकी शोध ।
मोक्षमार्ग पर तभी बढ़ेगा, जब होगा आतम का बोध ।।
वस्तुतत्व के निर्णय बिन जब, होता नहीं आत्मकल्याण ।
अन्तर में शान्ति पाये विना, होता नहीं दुखों से त्राण ।।

पुनः एक और भी अन्तर प्रदर्शन बताते हैं

शिक्षा दे रही है हमको रामायण अति भारी ।
एक समय में एक पुरुष ने ब्याही ज्यादा नारी ।
बृद्ध अवस्था में दशरथ के, इसने बात बिगारी ।।

अर्थ—आप जब विषय वासनाओं में अपने ब्रह्मचर्य को नष्ट कर देते हैं और आपकी जब चतुर्थावस्था (बृद्धावस्था) आती है तो दशों इन्द्रियां अपना उत्तर दे देती हैं। जब तक शरीर में खून है सभी सेवकाई में रहते हैं, जब प्रभुत्व जाता रहता है कोई आज्ञा का पालन नहीं करता, बात विगड़ जाती है । यह है इंद्रिय और बृद्ध—अवस्था की आपस में फूट और दुष्परिणाम ।

पूर्व—पुत्र

राज छोड़ बन गये राम ने, पितु आज्ञा सिर धारी ।

वर्तमान—पुत्र

अब तो पिता के लिये पुत्रगण चाहत हैं गिरफतारी ।।

पूर्व—नारी

राजमहल के सभी सुखोंपर, एकदम ठोकर मारी ।
वन में गई पती के संग में, सतवंती सिय नारी ।।

राम जी ने सीता से जाकर अपने पिता की आज्ञा सुनादी, कि हमें वनवास दिया है, हम जा रहे हैं, तुम आनन्द से यहां राजमहलों में सास-स्वसुर की सेवा में रहना । तो सीता क्या उत्तर देतीं हैं ? हे नाथ !

जिय विन देह नदी विन वारी, तैसेहि नाथ पुरुष विन नारी ।।

आज कोई ऐसी महिला है जो पति को कष्ट आने पर वनवास के कष्टों को सहन करने के लिये तैयार हों ? (विरली ही मिलेंगी) हमें सीता और राम का आदर्श गृहण करना ही योग्य है ।

पूर्व भ्राता गण कैसे थे ?

विपति समय में संग राम के, की लक्ष्मण तैयारी ।

वर्तमान भ्रातागण कैसे हैं ?

अब तो खून पीते हैं भाई का, रहें मुकदमा जारी ।

पूर्व भाइयों का आदर्श

राजतिलक की गेंद बनाकर खेलन लगे खिलाड़ी ।
इधर राम उस तरफ भरत, दोनों ने ठोकर मारी ।।

पश्चात् क्या हुआ ?

चरण पादुका धरी तखत पर, यह ही बात विचारी ।
साधू बन कर रहे भरत, नहि बने राज्य अधिकारी ।।

पूर्व—ब्रह्मचारी

लक्ष्मण राम ने सूर्पनखा को, क्या कह कर ललकारी ।

वर्तमान—ब्रह्मचारी

अब यहाँ देखें चिकनी माटी, फिसल जाय ब्रह्मचारी ।।

इसलिये क्या करना चाहिये ? संयमी जीवन बनाना चाहिये ।

शिक्षा

फिसलो मत भूल कर भी, ऊपर की सफाई पर ।
वर्क सोने का लगा, गोबर की मिठाई पर ।।

पूर्व देवर और भावज

लक्ष्मण शीश झुकाते थे, कह सीता को महतारी ।

वर्तमान देवर भावज

हाय आज कल तो भावज को, पूर्ण बनाते नारी ।।

यह दोष वर्तमान शिक्षा का है । चूंकि उन विद्यार्थियों को धार्मिक संयमी जीवन की शिक्षा नहीं दी जाती, भेदभाव मिटाया जा रहा है । भले ही भेदभाव मिटावें किन्तु धार्मिक शिक्षा होना अनिवार्य है । और शिक्षक भी ऐसे हैं कि जिन्हें धर्म से रुचि नहीं, जब एक सद्गृहस्थ के ६ कर्म की जानकारी होना चाहिये ।

नन्दन वन्दन थुतिकरन, श्रवण चिन्तवन जाप । पठन पठावन उपदिशन बहुविधि क्रियाकलाप ।।"

वह भी नहीं है । पूर्व आचार्यों ने चार वर्णों की स्थापना की थी । वह है—

शूद्र जन्म से सब लखों, संस्कार द्विज गाय ।
श्रुताभ्यास से शास्त्री, ब्राह्मण ब्रह्म रमाय ।।

नरक के चार दरवाजे

प्रथम द्वार निशि असन अरु, द्वितिय संग पर नार ।
तीजा संधाना, तुरिय कंद नर्क चउद्वार ।।

अतएव शीलवान नारी एक रत्न है । योग धारण करने वाली महिला रत्नों का खजाना है ।

लज्जा ही नारी की शोभा है, लज्जा ही नारी का जीवन ।
लज्जाहीना जो नारी है, उसको समझो उजड़ा उपवन ।।

शील--परीक्षा

दोषी रावण ने सीता को, कष्ट दिये अति भारी ।
फिर भी पतिव्रत धर्म बचाकर आगई जनकदुलारी ।।
लालच और तलबार के भय से, सिया न हिम्मत हारी ।

वर्तमान नारी कैसी हैं ?

थोड़े भय से धर्म गमावें, हाय आज कल नारी ।।

रावण राक्षस क्यों ? (रावण के लेख और चित्र को देखिये)

था पंडित विद्वान वह रावण, देखो नयन उघाड़ी ।
मदिरा मांस पर नारि हरन से, राक्षस बना अनाड़ी ।।

पूर्व सेवक

तन मन से रहा सेवा करता, हनूमान बलधारी ।

वर्तमान सेवक

अब तो मुंह पै करें खुशामद, पीछे देवें गारी ।

सुसंगति से स्वर्ग और कुसंगति से नरक मिलता है । अतएव हमें विभीषण की नीति को अपनाना चाहिये और रावण की दुर्बुद्धि को त्याग देना चाहिये ।

भक्त विभीषण ने भाई की, संगति बुरी विसारी ।
अच्छी संगति में तुम जाओ, कहते चन्द्र पुकारी ।।

इस प्रकार से जो शिक्षा हमें चन्द्र कवि ने वताई, रामायण से सीखना चाहिये ।

आठ बात फेरते रहो

विद्या रोटी पान है, खेती ऋण धन वार ।
इते आठ फेरत रहो, कहै नीति निरधार ।।

(९) नवम अवतार बुद्ध का है । मानव प्रतीकात्मक रूप से बुद्ध अवतारी किस प्रकार है ?

समाधान :—हम आठ अवतारों का वर्णन ऊपर कर ही चुके हैं । आप अपने में स्वयं विचार कर देखें कि जो काम हम पूर्णरूप से अपनी विवेक बुद्धि से विचारपूर्वक करते हैं, वस्तु के स्वभाव—गुण को समझते हैं, मनन करते हैं, लोकोपकार में लगाते हैं, स्व और पर के गुण दोषों को पाप और पुण्यरूप मानते हैं, आत्मकल्याण के लिये चिन्तन कर अनुसरण करते हैं, यह सब हमारी बुद्धि की ही विशेषता होने से हम बुद्धि के अवतार कहलाते हैं ।

(१०) दशवां कल्की कलंकी अवतार--हम किस प्रकार से हैं ? हम कलंकी अवतार इसलिये हैं कि हमारी प्रवृत्ति विषयों की ओर आग्रसर है । हमारी विषयासक्ति श्वान से भी निम्न स्तर पर पहुंच चुकी है । इसलिये आचार्यों ने कहा है :—

जो विषया संतन तजी, मूर्ख ताह लपटात ।

ज्यों नर डारत वमन सो, श्वान स्वाद सों खात ।।

कूकर तो समय पर ही रतिक्रिया करता है किन्तु मानव को जो रतिक्रिया के लिये समय निर्धारित है उसका उल्लंघन किये है । यही कारण है कि इस देश में जहां महांपुरुषों का जन्म होता था, सुकाल रहता था, वहां आज संकटकालीन स्थिति पैदा हो गई । आप स्वयं तुलना

करके देखिये । कि हमारे जितने कार्य हो रहे हैं उनमें सिवाय कलंक के यश नहीं मिलता है । हमारी प्रतिभा, सूर्य के समान दैदीप्यमान कीर्ति में प्राय: हमारी अविवेकता के ही कारण से कलंक लगता ही जा रहा है क्यों कि :—

नर तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान ।

इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावें घीमान ॥

भावार्थ :—हमारा शरीर एक रथ है, आत्मा सारथी है, इन्द्रियां घोड़े हैं । और इन पर कन्ट्रोल करने वाला संयमी वीर पुरुष धीमान् जो कि जितेन्द्रिय है जिसे वीतरागी पुरुष कहते हैं वही केवल कलंक से बच सका है ।

मानवजीवन में १४ रत्न

(प्रथम रूप)

मानव विज्ञान : १४ रत्न मानवजीवन में निम्न प्रकार से हैं:—

पूर्व आचार्य कहते हैं कि यह मानव-शरीर भव-समुद्र है । जितने भी जैन आचार्य हुये और अन्य धर्मों के ऋषि महर्षियों ने भी भवसमुद्र का ही वर्णन किया है । आध्यात्मिक दृष्टिकोण से सभी ने एक ही माना है और उसी आधार और कल्पनाओं को लेकर प्रतीकात्मक रूप से 'यथा नाम तथा--गुण' के अनुरूप मूर्तियां कलाकारों से निर्माण कराई थीं जो आज हमारे भारत के अलावा भी देश विदेशों में अपनी प्राचीनता का मार्गदर्शन कराती हुई प्राप्त होती हैं।

हमें एक चित्र कलमी कच्छावतार का श्री नेमीचन्द्र जी हुकमचन्द्र जी जैन भण्डारी जो श्वेताम्बर जैन किले के अन्दर रहते हैं, विदिशा नगर के पुराने निवासी हैं उन्हीं की बैठक में अचानक ही मुझे देखने में आया । उसका मैंने पूर्णरूप से अध्ययन किया। तो उसमें जो विशेषतायें पाईं उनका उल्लेख यहाँ करते हैं ।

पूर्व में नारी के ऊपर तो हम वर्णन कर ही चुके हैं। अब मनुष्य में किस प्रकार से वर्णन मिलता है उसे ध्यान देकर मनन कीजिये ।

समुद्र

संसार समुद्र का वर्णन हम पूर्व में कर ही चुके हैं । तथा मन भी जिस प्रकार से समुद्र है वह भी आप समझ चुके हैं । चंचल मन मछली के समान है । यही मच्छावतार है।

समुद्र में कछुवा

मानवशरीर जिस प्रकार से नाशवान है उसी प्रकार से सांसारिक भोगोपभोग समग्र-सामग्री भी क्षणभंगुर हैं । किन्तु चैतन्यस्वरूप अजर अमर आत्मा का कभी नाश नहीं होता । हमारे इन देखने वाले नेत्रों का ही केवल दोष है।

इन नयनन का यही विशेख, मैं तोय देखूं तू मोय देख ।

देखत देखत इतना देख, मिटजाय द्विविधा रहिजाय एक ॥

जिस प्रकार से कछुवा अपने अंग में अपने हाथ, पैर और सिर छिपा लेता है और भाग नहीं सकता, उसी प्रकार से विषयी मानव को विषय पकड़े हुए है, वह उन्हें नहीं छोड़ता और विषयों के लोभ के वशीभूत संसारवृक्ष में बताये गये मधु—विन्दु के रसास्वादन की भांति अपनी जीवन—यात्रा को समाप्त कर देता है ।

समुद्र--मंथन

यह आप भली प्रकार से जानते ही हैं कि शरीर व्याधियों अर्थात् रोगों का घर है । काम, क्रोध, लोभादि विकारभाव जिनसे आत्मीयता का पतन होता है वह दानवरूप हैं। इनके सिर पर सदैव काल (समय), काल (मृत्यु), काल (सर्प), सात बार (रविवार आदि) सर्प के समान सिर पर छाये हुये हैं । चित्र में दिखाये गये हैं ।

दूसरी ओर हमारी आत्मा (ब्रह्म) चतुर्मुखी प्रतिभायुक्त है । आकृति मानव की है । ब्रह्मा को विधि भी कहा है ।

विधि को कियो कुम्हार जिन, हरि को दश अवतार ।

भीख मंगावत ईश को, ऐसो हि कर्म उदार ॥

यहाँ ब्रह्मा को कुह्मारवत् क्यों बताया है ? क्यों कि ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना की है। उसी प्रकार से आपका बाल्यकाल शिक्षा दीक्षा का है। पाणिग्रहण के पश्चात् जब संतान उत्पत्ति हो जाती है वही आपकी सृष्टि वन जाती है । इसलिये वह आपका समय कुम्हार रूप माना जाने में कोई शंका नहीं रहती । अतएव आप ही ब्रह्मा के रूप में हैं । जो चार मुख ब्रह्मा के बताये हैं वह क्रमश: व्यापार, कला, संगीत, और वैद्यक हैं। यही चार मुख प्रतिभारूप मानव को जीवनदान देते हैं ।

विष्णु--यह शरीर वषयों के अणुओं का पिंड है । सिर पर पंचेन्द्रियजनित विषय कषायादि काल रूप सर्प समान छाये हैं ।

अलि, पतंग, मृग, मीन, गज, जरत एक ही आंच ।

रहिमन तिन की कौन गति, जाको लागे पांच ॥

जो कि हमारे सिर पर छाये हुए हैं । जो सर्प के रूप में प्रतीक दिखाये गये हैं। यह मानव मथानी का फूल बन कर कामरूप सर्प की डोरी लपेट कर घटसिन्धु में विषयों के आकृतिरूप सर्प की पूछ पकड़े हुए दिखाया है । दश अवतार किस प्रकार धारण किये इनका भी उल्लेख अध्ययनीय है ।

महेश--इस मानवशरीर में सिर पर कालरूप सर्प बैठा है । ज्ञानरूप गंगा की धारा शंकर जी की जटाओं से, १ मतिज्ञान, २ श्रुतज्ञान, ३ अवधिज्ञान, ४ मन:पर्ययज्ञान ५ और केवल-

ज्ञानरूप वह रही है । चक्र-पुरुष इनका सदुपयोग और शंख-पुरुष इनका दुरुपयोग करता है। इन भावों की रौद्ररूप परिणति से विषय वासनाओं के सर्प धारण कर भवसमुद्र में मंथन करते दिखाये हैं। वह अनन्तानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभरूप सर्प है । सर्प का नाम भी अनन्त इसीलिये कहा है—

स्वयं सुरेशः स्वसुरो नगेशः, सखा धनेशस्तनया गणेशः ।
तथापि भिक्षां कुरुते महेशः, ललाटवन्हिरयमेव शेषः ॥

जब भगवान त्रिदेव, ब्रह्मा; विष्णु, महेश भाग्य के लिखे हुए लेख को नहीं मिटा सके तो आपकी और हमारी क्या गति ?

भगवत् शुभचन्द्राचार्य ने अपने ज्ञानार्णव पृष्ठ संख्या ३७८ श्लोक संख्या १७५ में भर्तृहरि जी को वैराग्य के उपदेश में नारी और पुरुष दोनों ही में १० प्रकार के कल्पबृक्षों का वर्णन किया है । तथा कविबर पंडित बनारसीदास जी ने भगवत् कुन्दकुन्द के समयसार नाटक की टीका करते हुए साध्यासाध्य अधिकार में पृष्ठ १४० दोहा संख्या २८ से ३२ तक समुद्रमंथन से निकले १४ रत्नों के घट को सिन्धु बताते हुए वर्णन किया है । जब तक गुरु का ज्ञान व्याप्त, नहीं होता भ्रमात्मक भावनायें नहीं त्यागी जाती, काम, क्रोध, लोभादि विकारों का त्याग नहीं किया जाता उस समय तक जीव संसार से मुक्त नहीं होता। और भोगोपभोग के लिये मथानी की तरह काम की सर्परूप डोरी से मनरूप सुमेरु को मंथन करता है । शुभ परिणाम देव और अशुभ परिणाम दानरूप है । संसार समुद्र है । विपत्तियों और रोगों आदि का घर है । विषेंयी रोगों को आमंत्रित कर ज्वार-भाटों की तरह तूफान-लहरों में दुखी रहता है। और सुखों की आशा से उसमें १४ रत्न प्राप्ति के लिये मंथन करता है :—

मन दीवान सुरत है राजा, बुध मंत्री अति भारी ।
राम नाम की वसत नगरिया, तुलसी पंच मझारी ॥
तुलसी काया खेत है, मनसा भयो किसान ।
पाप पुण्य दोउ बीज हैं, बुवे सो लुने निदान ॥

चक्र क्या है ? (कवित्त)

रागरु द्वेष मोह की परिणति, लगी अनादि जीव कंह दोय ।
तिनको निमित पाय परमाणू, वन्ध होय वसु भेदहि सोय ॥
तिनतें होय देह अरु इन्द्रिय, तहां विषैरस भुंजत लोय ।
तिन में राग द्वेष जो उपजत, तिंह संसारचक्र फिर सोय ॥

"ब्रह्म विलास"

लक्ष्मी प्रथम रत्न है:—

लक्ष्मी क्षमस्व वचनीयमिदं दुरात्म ।
अन्धी भवन्ति पुरुषास्त्वदुपासनेन ॥
नो--चेत्कथं कमलपत्रविशालनेत्रो ।
नारायणः स्वपति पन्नगभोगतल्पे ॥

आप यह भली प्रकार से जानते हैं कि उल्लू को दिनकर के प्रकाश में नहीं दिखता अर्थात् जिसके पास ज्ञानरूप दिनकर (सूर्य) नहीं वह लक्ष्मी प्राप्त कर अंधे बन जाते हैं ।

चार प्रकार के अंधे—

जन्म अन्ध कामान्ध नर, और महा मद धार ।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार ॥

मूर्ख के ५ चिन्ह—

मूर्खस्य पंच चिन्हानि, गर्वो दुर्वचनं तथा ।
क्रोधश्च, हठवादश्च, परवाक्येश्वनादरः ॥

जिसके पास लक्ष्मी है वह:—

खाय न खरचै सूम धन, चोर सबै लै जाय ।
पीछे ज्यों मधु मक्षिका, हाथ मलै पछिताय ॥

कमल लक्ष्मी का द्योतक है ! विष्णु के हाथ में गदा विपरीत को अनुकूल बनाने के लिये भय भंजन राम हैं । इस संसार समुद्र में मुखों की आशा से लक्ष्मी और बुद्धि की नितान्त आवश्यकता है । विना धन लक्ष्मी के कोई काम संसार का नहीं चल सकता । इसलिये मानव:—

सेव्या धनमिच्छद्भिः सेवकं पश्य यत्कृतम् ।
स्वातंत्र्यं यत्शरीरस्य, मूढैः तदपि हारितम् ॥

किन्तु यह लक्ष्मी किसी के साथ नहीं जाती । आंख मुंच जाने पर कुछ भी नहीं ।

चेतोहरा युवतयः सुहृदोनुकूला, सद्बान्धवाः प्रणयगर्वगिरास्य भृत्यः ।
गर्जन्ति दंतिनिवहः तरलास्तुरंगाः, सम्मीलिते नयनयोर्नहि किंचिदस्ति ॥

भावार्थ:—मनको हरण करने वाली युवतियां, अनुकूल मित्र, सज्जन भाई--बन्धु, प्रीति और मान रखने वाले, मधुर भाषी नौकर, गजने वाले हाथियों का समुदाय, और तेज घोड़े दोनों आंख मुन्च जाने पर कुछ भी नहीं है ।

शील द्वितीय रत्न है:—

(किसकी शोभा किससे ?)

क्षमया शोभते विद्या, कुलं शीलेन शोभते ।
गुणेन शोभते रूपं, धनं त्यागेन शोभते ।।
सौम्येन शोभते लक्ष्मी, सुखं पुण्येन शोभते ।
नीत्यैव शोभते राज्यं, पाणिर्दानेन शोभते ।।

भावार्थ:—विद्यारत्न क्षमावान पुरुषों को ही शोभा देता है। और कुल की शोभा शील से है । रूप गुणवान को शोभता है । धनकी शोभा दान करने से है । लक्ष्मी शान्तस्वभावी को शोभा देती है । सुख की शोभा पुण्य से है । राज्य की शोभा नीति से है । और हाथों की शोभा दान करने से है । अतएव शील मानवों का भूषण है । और शील ही रत्न (मणि) है। इसलिये :—

शील रत्न सबतें बड़ो, सब रतनन की खान ।
शीलहीन नर नारि के, सब गुण धूल समान ।।

तीसरा रत्न सरस्वती है:—

संगीत, सरस्वती विद्या, कला कौशल विना पुण्य के प्राप्त नहीं होती । संगीत से भगवत् भक्ति के दो नाम उच्चारण कर परिणामों में निर्मलता लाने के लिये है । सरस्वती का वाहन मोर है, मोर सर्प को भक्षण करता है तो विद्या (सरस्वती) से ज्ञान प्राप्त कर काम, क्रोध रूप सर्पों को भक्षण किया जाता है। माला पापों के प्रायश्चित और भगवत् नाम स्मरण के लिये है। कला-कौशल, आजीविका--साधन के लिये है ।

चौथा रत्न वारुणी है:—

वारुणी एक मदिरा है। वह ८ प्रकार की है।

मदिरा--पायी की दशा, माता ही जब देख ।
ग्लानि करे तब अन्य का, क्या करना उल्लेख ।।

छहढाला में निम्नांकित ८ मद बताये हैं। जो कि विद्वानों को त्यागने योग्य हैं। जो वास्तविक रूप से पढ़े लिखों में भी विद्यमान हैं। जो मूर्ख के पांच चिन्हों में वर्णित हैं।

(आठ--मद)

पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तो मद ठानैं ।
मद न रूप को मद न ज्ञान को, धन बल को मद भानैं ।।
तप को मद न मद जो प्रभुता को, करै न, सो निज आनैं ।
मद धारे तो यही दोष वसु, समकित को मल ठानैं ।।

एक कवि कहता है:—

न कर अभिमान ये जहाँ इक रोज फानी है।
तेरे से आलियो गुजरे, न कुछ बाकी निशानी है॥

अत: किसी भी प्रकार का मद नहीं करना चाहिये।

अमिय (अमृत) पाँचवां रत्न है।

आचार्य कहते हैं:—

ज्ञान समान न आन जगत में, सुख को कारण।
इह परमामृत, जन्म--जरा--मृत रोग निवारण॥

सत्ज्ञानामृत का पान करिये और अज्ञानरूप मदिरा का त्याग।

छठवां रत्न शंख है:—

जहाँ दोषयुक्त वातावरण हो वहां मूर्खता काम में लाना चाहिये।

कछु कह नीच न छेड़िये, भलो न वाको संग।
पत्थर डारै कीच में, उछल विगाड़ै अंग॥
शिक्षित होकर दक्ष हो, हो गुरुपद आरूढ़।
फिर भी इन्द्रिय--लंपटी, उस सम और न मूढ़॥
खोटे अनुचित कृत्य में, फंसना विना विवेक।
प्रथम कोटि की मूर्खता, समझो यह भी एक॥

सातवां रत्न गजराज है:—

मन--मतंग मानैं नहीं, मन के मत अनेक।
जे मन पै असवार हैं, ते हजार में एक॥

वीर पुरुष ही मनरूप हाथी पर सवारी कर सकता है।

आठवां रत्न कल्पबृक्ष है:—

(१) मद्य--स्त्री का नाश। मनुष्य की दो स्त्रियाँ हैं पहली पुरुषार्थ कर प्राप्त की गई लक्ष्मी; दूसरी सरस्वती : (विद्या) कला, कौशलादि। (२) वादित्र--बाजों के बजाने और बनाने की कला। (३) गृहिणी--लक्ष्मी और सरस्वती है। (४) ज्योति--घर की शोभा पुत्र कामदेव से है। (५) भूषण--शील--अहिंसात्मक परोपकारादि। (६) भोजन--समय पर आहार। ज्ञानप्राप्ति के लिये सत्संग; धमश्रवण, शास्त्रलेखन, साहित्यसंकलन। पर--भव के लिये। (७) माला--मोक्षप्राप्ति के लिये।

संयम सेवा साधना, सत्पुरुषों का संग ।
ये चारों करते रहो, मोह निशा हो भंग ।।

सामायिक, स्वाध्याय, संयम और तप भगवत्भक्ति के लिये माला वैराग्य भाव दिलाने वाली है । (८) दीपक–कुल दीपक पुत्र—

बुद्धिविभूषित जन्म ले, कुल में यदि संतान ।
उस समान हम मानते, अन्य नहीं वरदान ।।
नर की सच्ची सम्पदा, उसकी ही सन्तान ।
पुण्य उदय से प्राप्त हो, ऐसा सुखद निधान ।।

भावार्थः—बुद्धिमान सन्तति पैदा होने से बढ़कर संसार में दूसरा सुख नहीं । सन्तान ही मनुष्य की सच्ची सम्पत्ति है, क्योंकि वह अपने संचित पुण्य को अपने कृत्यों द्वारा उसमें पहुंचाता है । (९) पात्र–विषय—

जो विषया संतन तजी, मूर्ख ताह लपटात ।
ज्यों नर डारत वमन सो, स्वान स्वाद सों खात ।।

भावार्थः—यह मानव--शरीर विषयों का पात्र है । विषय संयम के साथ सन्तान उत्पत्ति कुलपरम्परा के लिये है, किन्तु कामीजनों ने काग और कूकर से भी शिक्षा ग्रहण नहीं की । जिस प्रकार से मनुष्य वमन करता है और कुत्ता बड़े स्वाद से खाता है, वही गति कामी जन की है । (१०) यह मानव शरीर विषयों का वस्त्र है । इस पर ज्ञान की चादर ही ओढ़ी जा सकती है । इसमें यह दश प्रकार के कल्पवृक्ष बताये हैं । जो इसमें विद्यमान हैं ।

नौवाँ रत्न शशि (चन्द्रमा) है। कवि दौलतराम जी ने अपने छहढाल में कहा है:—

आतम को हित है सुख, सो सुख, आकुलता विन कहिये ।
आकुलता शिवमांहि न, तातें, शिवमग लाग्यो चहिये ।।

यह नौवां रत्न आपके ही मस्तक में विद्यमान है । जब आप कोई बात सोचते हैं और उसे पूरा करना चाहते हैं तो ठंडे दिमाग से सोचिये, बिगड़े काम बन जावेंगे । इसीलिये भगवान् शंकर जी के मस्तक पर चन्द्रमा का संकेत किया है। जहां पर निराकुलता है वहीं मोक्ष है। इस लिये मोक्षमार्ग का अनुकरण करो ।

दसवां रत्न धेनु इसलिये है कि कामाग्नि के शीतल होने के बाद नारी जब गर्भवती होकर पुत्रप्रसव करती है और वह पुत्र को दूध पिलाती है तो माता कही जाती हैं। उस समय वह गाय के समान है । यानी उस नारी से जिस प्रकार इच्छित वस्तुयें प्राप्त होती हैं ठीक उसी प्रकार से गाय का प्रतीक आपके समक्ष उदाहरणार्थ सामने रखा है । विना किसी स्वार्थ–वासनाओं के परोपकारादि में अपना जीवन संकट में डाल कर भी अर्थात् भूख, प्यास, मारन, तड़न बंधन, वशी-

करणादि की विपत्तियों को झेलती है और आपको उत्तम फल देती है। इसी प्रकार से वस्तु का स्वभाव धर्म है। यह बात समझने की है कि गाय में दया, धर्म, दान, तपस्या, भावों की निर्मलता पवित्रता और परोपकार विद्यमान है। इसी प्रकार से इस मानव शरीर में भी भावों की निर्मलता के साधन कामधेनु की भाँति भगवत्भक्ति है। कहते हैं कि भोले प्राणी! भगवान दूर नहीं; किन्तु क्यों दिखाई नहीं देते? इसलिये कि:—

मैं जानूं हरि दूर है, हरि है हिरदे मांहि।
आड़ी टाठी कपट की, यातें दीखत नांहि॥

अपनी कपट मायाजाल की जो आड़ लगा रखी है उसे दूर करदे, भगवान के दर्शन हो जायेंगे। आत्मज्ञान पाना दुर्लभ है।

विद्या, बल, धन, रूप, यश, कुल, सुत, वनिता, मान।
सभी सुलभ संसार में, दुर्लभ आतम--ज्ञान॥

इसलिये:—

धर्मात्मा का निर्धन जीवन, विज्ञों ने उत्तम सदा कहा।
पर पापी धनी पुरुष का जीवन, भला किसी ने नहीं कहा॥

अत एव आपकी कामधेनु धर्म है:—

धर्महि एक सुमित्र है, जो छांड़त नहिं साथ।
मरन समय या काय संग, छोड़ देत सब हाथ॥

— मत भूलो —

(१) ऐश्वर्य पाकर–दीन और बन्धुओं को। (२) स्त्री पाकर–माता पिता को। (३) आपत्ति पाकर–धैर्य को। (४) अधिकार पाकर–न्याय को। (५) अनीति करने में–ईश्वर को। (६) क्रोध में–अपने आप को। (७) समय निकलने पर उपकार को। (८) शरणागत आने पर–सहायता को। (९) दीन होने पर--धर्म को। (१०) स्वार्थ वश--नीति को। (११) हिंसा करते समय--पाप को।

ज्ञानी से ज्ञानी मिलै, जब कछु जानी जाय।
दियौ बैल को जायफल, वो क्या जानें खाय॥

हे भव्य जीव! तेरे पास अमूल्य निधि, अमृतमयी वाणी है:—

शब्द बराबर धन नहीं, जो कोई जानें बोल।
हीरा तौ दामों बिके, शब्द का मोल न तोल॥

शुद्धभाव हों, दृढ़ता मनमें, जीवन में निश्चल व्यवहार ।
उसके घर पर सभी सिद्धियां, चरण चूमतीं शत--शत वार ।।

इसलिये आप को उषाकाल (प्रातः काल) चेतावनी देता है:—

जरा जाग जाओ ऊषा कह रही है, उषा का सबेरा कहीं मिट न जाये ।
खिला प्रात में जो बगीचा तुम्हारा, बहारों में देखो कहीं लुट न जाये ।।

यह आपकी कामधेनु का वर्णन किया गया। अब आप धनु जो ११ वाँ रत्न है देखिये, धनु जिसे धनुष कहते हैं । धनुष आपका संयमरत्न है ।

संयम की रक्षा करो, निधि सम ही धीमान् ।
कारण जीवन में नहीं, वढ़कर और निधान ।।
कूर्म अंग--सम इन्द्रियां, वश में पूर्ण प्रकार ।
तो समझो परलोक को, जोड़ा निधि भण्डार ।।

भावार्थः—आत्म-संयम की रक्षा अपने खजाने के समान ही करो, कारण उससे बढ़कर इस जीवन में और कोई निधि नहीं है । जो मनुष्य अपनी इंन्द्रियों को उसी तरह अपने में खींच कर रखता है, जिस तरह कछुवा अपने हाथ पाँव को खींचकर भीतर छुपा लेता है, उसने अपने समस्त आगामी जन्मों के लिये खजाना जमा कर रखा है । संयमरूप धनुष ग्यारहवाँ रत्न है।

बारहवाँ रत्न धन्वतरि है । हमारा बारहवाँ रत्न धन्वतरि वैद्य सदाचार है:—

धन यदि गया, गया नहिं कुछ भी, स्वास्थ गये कुछ जाता है ।
सदाचार जो गया मनुज का, सर्वस्व ही लुट जाता है ।।
लोकमान्य होता मनुज, यदि आचार पवित्र ।
इससे रक्षित राखिये, प्राणाधिक चारित्र ।।

भावार्थ—जिस मनुष्य का आचरण पवित्र है, सभी उनकी वन्दना करते हैं। इसलिये सदाचार को प्राणों से भी बढ़कर समझना चाहिये । यह मानव--शरीर जिस प्रकार से रोगों का घर है उसी प्रकार से रोग की औषधि भी है।

देह धरे को दण्ड है, सब काहू को होय ।
ज्ञानी भुगते ज्ञान से, मूरख भुगते रोय ।।

भावार्थः—शरीर धारण कर विषयादि रोग, शोक, भय का कारण हैं, उनका दण्ड ज्ञानी ज्ञान से भोगता है और मूर्ख रो--रो करके भोगता है ।

कैसा रोगी रोग क्या, क्या ऋतु का व्यवहार ।
सोचैं पहिले वैद्य फिर, करे चिकित्सा सार ।।

भावार्थ:—वैद्य को चाहिये कि वह रोगी, रोग और ऋतु का पूर्ण विचार करले, तब उसके पश्चात् औषधि प्रारम्भ करे ।

अब यहाँ यह देखना है कि रोग क्या है ? वह है विषय । विषय रोग के त्याग के लिये जो लोग पुनर्जन्म के चक्र को बन्द करना चाहते हैं, उनके लिये यह शरीर भी अनावश्यक है। फिर भला अन्य बन्धन कितने अनावश्यक न होंगे ?

जब मुमुक्षु की दृष्टि में, निज--तनु भी है हेय ।
तब उसको क्यों चाहिये, बन्धन भरे विधेय ।।

इसलिये:—

विषय त्याग बैराग्य, समता कहिये ज्ञान ।
सुखदाई सब जीव को, यही भक्ति परमान ।।

आचार्यों ने जीव की दो ही वस्तु शोध की हैं जो सुख की देने वाली है एक तो भक्ति दूसरी ज्ञान रूप विवेक के साथ समता आवश्यक है और विषयों का त्याग करना वैराग्य है।

भोग व्यसन सुख ख्याल में, दई मानुष गति खोय ।
ज्यों कपूत खा तात धन, विपता भोगे सोय ।।

जिसने मनुष्यपर्याय पाकर भोग और व्यसनों के ख्याल में सुख माना है उस कपूत पुत्र ने अपने पिता का धन खाकर विपत्ति ही भोगी है।

विषय कसाय बराबरी, बैरी जियके नांहि ।
ज्ञान विराग विवेक से, हितू नांहि जग मांहि ।।

विषय कषाय रोग है और ज्ञान, विराग, विवेक, यही धन्वन्तरि वैद्य हैं। यह तेरहवां रत्न विष है ।

यह मानव शरीर माता के रज और पिता के वीर्य से उत्पन्न अनेक रोगों का घर विषयों का केन्द्र काम, क्रोध, मान, माया, लोभ यह पांच चोर इस नगर के मुखिया हैं जो इस पर शासन करते हैं । जो इन पांच चोरों से अपनी आत्मा और पुद्गल को भिन्न मानता, समझता है, आत्मा के गुण को पहिचानता है वही सच्चा विष--रत्न का पारखी है अर्थात् विषय ही विष है ।

चौदहवां बाजि अर्थात् घोड़ा भी रत्न है ।

आप यह जानते हैं कि सूर्य का बाहन घोड़ा है। सूर्य-हमारे नेत्र हैं । सूर्य के बाहन घोड़े के सात मुख हैं, वह सप्तभंग वाणी रूप हैं । नेत्रों की चंचलता में (किरणों के प्रकाश में) इन्द्रियां

रूप घोड़े स्वच्छन्द होकर विचरण करते हैं जो विना लगाम के हैं। यह चौदह रत्न आपके शरीर में विद्यमान हैं, जो ज्ञानरूप नेत्र से देखिये। समुद्रमंथन कच्छप-अवतार में आचार्यों ने चित्ररूप में दर्शाये हैं। यह मनुष्य में विद्यमान हैं। इन्द्रियां घोड़े हैं, जिन पर यह आतमा बैठी है।

मानव--जीवन में १४ रत्न

(द्वितीय रूप)

नं० १ श्रीरत्न

आपको यह मालूम है ही कि हम प्रायः एक दूसरों को व्यवहार में श्रीमान् लिखा करते हैं। यह पद्धति इसलिये है कि एक दूसरे में कोई न कोई विशेषता अवश्य होती है।

श्री का अर्थ लक्ष्मी से है, इसी लिये हम श्रीमान, या श्रीधर विशेषण लगाते हैं। जिसके पास लक्ष्मी होती है उसे अभिमान होता है, इसलिये हम उसे श्रीमान् कहते हैं। जिसके पास लक्ष्मी रखी हुई है अर्थात धरी हुई है उसे हम श्रीधर कहते हैं। लक्ष्मी–नारायण का तात्पर्य लक्ष्मी के पति नारायण हैं। इस मानव के पुरुषार्थ द्वारा उपार्जित द्रव्य लक्ष्मी कही जाती है, जिससे संसार के कार्य चलते हैं। इन हाथों से हम लिखते हैं तो सरस्वती का निवास है। दोनों हमारे जीवन में आवश्यक हैं। जीवन भर साथ रहती है, इसलिये हम श्रीमान् कहे जाते हैं। हमारा साहस, पराक्रम, बुद्धिमत्ता, परोपकारादि कार्य हमें श्रीमान् स्वयं कहलवाते हैं।

नं० २ मणि--रत्न

मानव की सच्चरित्रता ही मणि है, जिसे शीलरत्न कहते हैं। चरित्र एक ऐसा हीरा है जो घनों से भी नहीं फूटता।

देखा जो एक हीरा, परखा तो संग है।
वह फूल है तू जिसमें, बू है न रंग है॥

नं० ३ रम्भा--रत्न

हमारा सतत् प्रयत्न विद्याध्ययन, कला–कौशल, शस्त्रविद्या, शास्त्र--स्वाध्याय, रणकौशल, दान, धर्म, तप आदि में रम जाना, उसी को अच्छा मानना अर्थात् भा जाना रम्भा नाम है। इसीलिये कहा है:— "रमन्ते योगिनः" योगी पुरुष योग--साधन में रमजाते हैं, उन्हें वही भाता है। और वही उनकी रम्भा है।

नं० ४ वारुणी--रत्न

किसी भी कला में पारंगत भले ही न हों, थोड़ा बहुत जानने पर अभिमान करलेना वारुणी नाम की मदिरा है।

नं० ५ अमिय (अमृत) रत्न

विद्याध्ययन कर जो ज्ञान प्राप्त किया जाता है वही ज्ञान अमृत के समान है, जो हमें जीवन में साथ देता है ।

नं० ६ शंख--रत्न

शंख--रत्न हमें विपत्ति काल में तो साथ देता ही है, इसे प्रायः सभी जानते हैं । जैसे आपने मुझे किसी प्रकार से सताया और मैं कमजोर हूँ तो रोकर अपनी मूर्खता का परिचय दूंगा। और यदि सबल हूँ तो ललकार कर ससैन्य शंखध्वनि कर कमजोर पर बार करने के लिये अपनी मूर्खता का परिचय देते हैं। क्यों कि हम मूर्खता का कार्य यह कर रहे हैं कि जिस कार्य के लिये हम लड़ते हैं वह है स्वार्थ और वह है विनाशकारी । जिससे दूसरों का घात हो हिंसामय हो उस कार्य को यदि हम करते हैं तो हमारी मूर्खता का स्पष्टीकरण हो जाता है ।

नं० ७ गजराज (हाथी) रत्न है

मन उन्मत्त हाथी है जो कि विवेकपूर्ण ज्ञान को अवनति की ओर भी ले जाता है और उन्नति की ओर भी ।

ज्ञान महावत डार सुमत, संकल गहि खंडै ।
गुरु अंकुश नहि गिनै, ब्रह्मव्रत विरख विहंडै ।।

यह मन ही इस मानव शरीर का चालक है। जो बतौर उन्मत्त हाथी के है । इसलिये गणेश जी का शरीर मनुष्य का और सिर हाथी का बतलाया है । समस्त शरीर की इंद्रियां गण हैं। गण का अर्थ समुदाय से है । इन्हों का ईश अर्थात् भगवान का निवास जो ब्रह्म है वह इसी मस्तिष्क के अन्दर रहता है । सोचने, समझने, विचारने के लिये बड़े मस्तक का प्रतीक हाथी का मस्तक है । जिसके दो बड़े कान बताये हैं, वह हैं:—

कम कहना सुनना अधिक, ये है परम विवेक ।
याही तें विधि ने दये, कान दोय जिभ एक ।।

लंबी सूंड़ है । गुणों की सुगन्धी एकत्रित करो। स्वयं उपभोग करो और हाथ में रखे गुणों के मोदक को बाँट दो । और दूसरे हाथ में माला है अपनी आत्मा के वास्तविक चिन्तन के लिये है। तीसरे हाथ से कुल्हाड़ी है, उसका अर्थ है अज्ञानता को ज्ञान की कुल्हाड़ी से काटो । चौथे हाथ में कमल है, वह मोक्ष--लक्ष्मी का प्रतीक है। जहां अज्ञानता नष्ट होगी वहीं पर सुख और शान्ति का रसास्वादन हो सकेगा ।

लम्बोदर से हमें यह सीख मिलती है कि सांसारिक दोषों को अपने पेट में रखलो, प्रकाशित न करो, अपने अवगुण और दूसरों के गुण देखो।

ज्ञानगुण की विशेषताओं के धारण करने वाले ही गणधर कहलाते हैं ।

नं० ८ कल्पद्रुम--कल्पवृक्ष रत्न

प्राचीन काल में निर्मित विदिशा नगर में एक पत्थर पर १० प्रकार के कल्पवृक्ष बने हुये थे। जिसे पुरातत्व विभाग के अधिकारी कलकत्ते के म्यूजियम में लेगये हैं। वह इस नगर में क्यों पाया गया उसका एकमात्र कारण यह है कि इस प्राचीन इतिहासप्रसिद्ध नगरी में १० वें तीर्थंकर भगवान शीतलनाथ का जन्म हुआ था, उनके गर्भ, जन्म, तप, यह तीनों कल्याणक यहीं हुये थे। इनकी तपोभूमि ग्यारसपुर में थी।

शुभचन्द्राचार्य भर्तृहरि योगिराज के अग्रज भ्राता थे और भर्तृहरि जी से अनुज भ्राता महाराजा भोज परमार वंशी क्षत्रिय थे। कल्पवृक्षों का उल्लेख आचार्य शुभचन्द्र ने ज्ञानार्णव नामक जैन ग्रन्थ में पृष्ठ ३७८ श्लोक संख्या १७५ में निम्नांकित रूप में किया है—

मद्यतूर्यगृहज्योतिर्भूषाभोजनविग्रहाः।

सुदीपवस्त्रपात्रांगा दशधा कल्पपादपाः ॥१७५॥

भावार्थ—[१] मद्य--स्त्री, विद्या, कला, कौशल या अनन्य वस्तुओं की जानकारी का अभिमान करना मदिरा है।

[२] वादित्र--संगीतयुत गायन।
[३] गृह--शरीरं व्याधिमंदिरं। शरीर ही रोगों का घर हैं।
[४] ज्योति--इस घर की शोभा परोपकार, दानादि से है।
[५] भूषण--शील--ब्रह्मचर्य, सदाचार।
[६] भोजन--खाद्य पदार्थ, आहार समय पर।
[७] माला--वैराग्य पैदा करने वाली तथा भगवत्भक्ति में ले जाने का मार्ग बताने वाली।
[८] दीपक--कुलदीपक पुत्र पैदा करने वाली।
[९] वस्त्र--विषय वासनाओं संबंधी दोषों के ओढ़ने का वस्त्र।
[१०] पात्र--विषयों का पात्र।

इन दस प्रकार के भोगों को देने वाली मानव-देह कल्पवृक्ष है।

जीवन एक बगीचा है, श्वांस--नीर ने सींचा है।

भोंदू इसको काट रहा, पड़ा किये सिर नीचा है ॥

नं० ९ शशि (चन्द्रमा) रत्न

आपने शंकर जी के मस्तक पर चन्द्रमा प्रायः देखा होगा। चन्द्रमा शीतल होता है। आप जो बात भी अपने अनुकूल विचारते हैं सुख और शान्ति के लिये ही। मानवशरीर व्याधियों का घर है। भारत को चारों ओर से शत्रुओं ने घेर रखा है तथा घर के ही शत्रु आपस की फूट से बने हुये हैं। इसीलिये भारत का अर्थ विपत्ति से है। भारत का सबसे ऊंचा पर्वत हिमालय है। हिम का अर्थ शीतल है। आलय का अर्थ घर है। तो इस मानव-शरीर का मस्तक शीतल इसलिये

रखा जाता है कि हम जो भी कार्य करें सोच समझ कर करें। शीतल विचारों से सोचा हुआ कार्य शीघ्र सफलता को प्राप्त होता है। इसलिये शंकर जी के मस्तक पर चन्द्रमा प्रतीक बतलाया हैं।

सुख सुभाग्य सन्मति करण, अतुल शक्ति वर धाम ।
मंगल मूल गणेश को, बारम्बार प्रणाम ।।

गणेश जी का बाहन चूहा इस बात का प्रतीक है कि तुम्हारी आयु की डाल निश दिन दो चूहे काट रहे हैं। स्वामी कार्तिकेय गणेश के अग्रज भ्राता हैं। इनका बाहन गरुड़ है। जो आप में विद्यमान है वह है ज्ञान। जो काम, क्रोध, मान, माया, लोभादि सर्पों का भक्षण करते हैं। आपका शरीर विषधर है, क्योंकि यह मानव-शरीर विषयों को धारण किये है, इस विषय से ही तो मानव की बे-इज्जती होती है। और कहां तक कहें, मृत्यु भी हो जाती है।

शंकर का बाहन नन्दी है, तो मानव की इन्द्रियाँ गौ हैं। वस्तु का स्वभाव धर्म है। वृष धर्म को कहते हैं। वृषभ धर्म के धारण करने वालों को। वृषभ का अर्थ बैल यानी नन्दी से है।

सुमत (पार्वती) का बाहन सिंह है। यदि इन्द्रियों की एकाग्रता हो तो पुरुषार्थ होना संभव है। विना उद्योग किये लक्ष्मी अथवा बिना तपस्या किये मोक्षलक्ष्मी प्राप्त नहीं होती। इसलियेः—

आतम को हित है सुख, सो सुख आकुलता विन कहिये।
आकुलता शिव मांहि न तातें, शिव--मग लाग्यो चहिये ।।

नं० १० धेनु--रत्न

धेनु नाम गाय का है। जिस प्रकार से धेनु जन्म से मरण पर्यंत सेवा सुश्रूषा करती और जिसका स्वभाव प्राकृतिक रूप से परोपकार करने का है। ठीक उसी तरह से हमारे मानव जीवन में इंन्द्रियां भी मन के आधीन कार्य करके पूरे मानव शरीर में कर्त्तव्य निभाती हैं। यदि एक भी इंन्द्रिय शिथिल हो जाती है तो गाड़ी वहीं रुकने लग जाती है। इन्द्रियाँ भी मन-चालक के आज्ञा-नुसार कर्म करने पर उसका रस यानी प्रतिफल शुभ-रूप या अशुभ-रूप देती हैं।

नं० ११ धनु--रत्न

धनु का अर्थ धनुष से है। धनुष जिस प्रकार से शस्त्र है उसी प्रकार से संयम-नियम भी मानव के लिये धनु है, जो कि हमारे मन--चालक पर ब्रेक का काम करती है। विपरीत प्रति-क्रियाओं से बचाने में सहायक है। जो काम, क्रोधादि शत्रुओं पर विजय दिलाती है।

नं० १२ धन्वन्तरि--रत्न

मन की पवित्रता, विवेकमय ज्ञान, और परोपकार मानवजीवन के लिये धन्वन्तरि वैद्य हैं, जो संयम की बूटी पिला कर आरोग्य बनाते हैं।

रोगन की माया बढ़ी, रोगी भये अधीर ।
औषधि की शक्ती घटी, दवाघरों में भीर ।।
चहिये यदि आरोग्यता, ब्रत पालो करि नेम ।
मानवता का मूल है, सदाचार व्रत प्रेम ।।

है फंसा विषयों में जो, वह वीर है किस काम का ।
जंग जिस को लग चुका, शमशीर है किस काम का ।।
दान औषधि पुण्य यश कर, बचें वृष धन प्राण हैं ।
जग में शिरोमणि नर वही, जो देत जीवन दान हैं ।।

उपरोक्त पंक्तियाँ हमें यह स्पष्ट कर देती हैं कि जीवन--दान देने वाला यदि कोई है तो संयम । विवेकमय ज्ञान हमारे लिये धन्वन्तरि वैद्य है ।

नं० १३ विष--रत्न

विष एक ऐसा रत्न है जिसके बल पर संसार चल रहा है । केवल इस तरह कि:—

अजातमृतमूर्खाणां, वरमाद्यौ न चान्तिमः ।
एकदु:खकरावाद्या, -- वन्तिमस्तु पदे पदे ।।

बालक जन्म लेते हैं मर जाते हैं तो दुख का कारण, क्षणिक है। मूर्ख बालक से जन्म भर दुख ही होता है । ऊपर वाले से अधिक दुखकर है । जो पद--पद पर दुख ही देता है ।

इसी प्रकार से यह विषय रूप विष भी कामान्धता उत्पन्न करता है । जिस प्रकार से नदी और समुद्र में तूफान आया करते हैं, चतुर केवट ही उस नौका को सम्हाल सकता है। केवट मन पर काबू पाने वाला संयम है ।

मानव का संयमी जीवन वीर्य का संरक्षण, सदाचार पूर्वक उपयोग में लाया जाता है तो महापुरुष जन्म लेते हैं । वीर्य से (१) रस (२) रक्त (३) मांस (४) मेदा (५) अस्थि (६) मज्जा (७) शुक्र जिसे वीर्य कहते हैं, जो कि शरीर का राजा है, उत्पन्न होता है ।

नं० १४ बाजि--रत्न अर्थात् घोड़ा

नर तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान ।
इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावें धी मान् ।।

मानव-शरीर रथ है। आत्मा अर्थात् ब्रह्म इसका चालक (ड्रायव्हर) है जिसे सारथी कहते हैं । इंद्रियाँ घोड़े हैं । इन पर सवारी करने वाला विरला ही बुद्धिमान होता है ।

※

मानवजीवन में १४ रत्न

(तृतीय रूप)

प्राय: हमारे इतिहास-संशोधक विद्वानों ने इतिहास की जो पुस्तकें लिखीं वह प्राय: पाश्चात्य भाषा अंग्रेजी में ही हैं, अत: हिन्दीभाषियों को उस साहित्य से वंचित रहना पड़ा। जो मनमानी उन विद्वानों के विचारों में आई लिखा, वही सत्य आज माना जा रहा है।

इतिहास लेखक विद्वानों ने मूर्ति के नाम, सम्वत्, काल, चिन्ह आदि बताने की तो चेष्टा की, किन्तु इसका मानव जीवन से क्या संबंध है ! धर्म--संस्कृति--स्वर्ग--नरक--पुण्य--पाप--सुख--दुख आदि क्या वस्तु है। उनका स्वरूप क्या है। प्रतिमारूप कहीं भी वर्णन नहीं किया। और न देव-दानव द्वारा जो समुद्रमंथन हुआ। दश--अवतार जो पुराणों और दन्तकथाओं में वर्णित हैं तथा कही जाती हैं उनकी सार्थकता क्या है। जिसे हमने अपने अनुभवज्ञान द्वारा जो कुछ पाया मनन किया उसे हम एक पुष्प के रूप में आपके समक्ष में उस प्रमाण के साथ रख रहे हैं जिन्हें महा-पुरुष, आचार्य, कवि आदि ने दोहा, चौपाई, छन्द, सोरठा, कवित्त आदि में उल्लेख किया है।

चौदह रत्न

श्री, मणि, रम्भा, वारुणी, अमिय, शंख, गजराज।
कल्पद्रुम, शशि, धेनु, धनु, धन्वन्तरि, विष, वाज ।।१।।

ध्यान दीजिये। यह प्रतीकात्मक शब्द जिनमें अगम्य ज्ञान भरा हुआ है—

शब्दहि मारा मर गया, शब्दहि छोड़ा राज।
जिन जिन शब्द परखियां, तिनके सरगये काज ।।२।।

इन शब्दों को पूर्व आचार्यों ने गुण--दोष को अपने मनोवैज्ञानिक बुद्धिबल द्वारा प्रतीका-त्मक चिन्हों से परिपूरित सांकेतिक भाषा में कलाकारों के कर-कमलों द्वारा पाषाण को मोम की भाँति बना दिया, उसमें जो मानव, पशु, पक्षी, आसन वाहन, शस्त्र एवं आकृतियों से साकारता देकर गुणों का वर्णन किया है ऐसे स्थानों पर जहां पूर्व में बड़े--बड़े नगर थे वहां आज घने जंगल हैं, वन, उपवन, पहाड़ी इलाकों में, गुफाओं में, जो पाषाणों में मूर्तियां निर्माण कराई हैं जिनसे आज भारतीय संस्कृति जीवित है।

इन मूर्तियों से हमें कौनसी अलौकिक शिक्षा प्राप्त होती है। उसे आप पढ़िये, समझिये, मनन कीजिये। अपने व परके कल्याणमार्ग में लाइये।

दश-अवतार इसी मानव में हैं। समुद्र-मंथन जो देव दानवों ने किया वह समुद्र यही मानव-शरीर है। देव और दानव हमारी शुभा-शुभ मनोबृत्ति और क्रियायें हैं। अब हमें यह देखना अति आवश्यक है कि हम किसे त्याग देवें। इसी मानवीय जीवन में चौदह रत्न हैं, यही कारण है कि नर और नारी को रत्न कहा है।

दश अवतार

दो जलचर, दो वनचर, दो द्विज, दो भूपाल ।
इक मौनी, अरु अश्व पुनि, तुम पर सदा दयाल ॥३॥

हम यहाँ पर मच्छ, कच्छ, बाराह इन तीनों से सम्बन्धित अवतारों का वर्णन इन चौदह रत्नों में करते हैं। जिनका मन चंचल मछली के मानिन्द तीव्रगति से मन-समुद्र में विपत्तियों के तथा सुख समृद्धि काल में गमन करना है और शरीर की गति कछवे के मानिन्द अंग संकोच कर विषय वासनाओं के कारण संकुचित हो जाती है। और कामी पुरुष विषयों में आनन्द मान कर तीन चीजों को दाँतों से पकड़ता है, जो एक प्रकार से माया है। वह है:--

धरा, कनक, अरु कामिनी, ये हैं कडुवी बेल ।
बैरी मारै दाव दे, ये मारैं हँस खेल ॥४॥

जो प्राय: बाराह अवतार में चित्रांकित है। जिसका सम्बन्ध पुरुषार्थ से है। पुरुषार्थी व्यक्ति ही विष्णु है, जो प्रजापालक है, प्रजा--परिवार। का पुत्रवत् पालन करता है। जो:--

धर्मार्थकाममोक्षाणां, यस्यैकोऽपि न विद्यते ।
अजागलस्तनस्यैव, तस्य जन्म निरर्थकम् ॥५॥

इन चारों नीतियों को समयानुसार भोग कर भी विरक्त रहता है। वही ब्रह्मा है। जिसने वस्तु के स्वभाव और गुण को जाना, अपने हाथ में संचय किया वह ज्ञानामृत है। जिसमें ज्ञान है वही ध्यान कर सकता है। वही पराक्रमी अपने पराक्रम से सांसारिक भोगों को भोगता हुआ संसार से विरक्त होकर मोक्षलक्ष्मी प्राप्त कर सकता है।

हमें एक ब्रह्मा की मूर्ति विदिशा जिले के चौरासी खामखेड़ा के तालाब पर माता के चबूतरे पर अस्तव्यस्त दशा में एक पाषाण पर देखने में आई, जिसका चित्र हाथ से निकाल कर लाये हैं। उस मूर्ति के चार हाथ हैं, एक हाथ में ढाल, दूसरे हाथ में तलवार, तीसरे हाथ में अग्नि, चौथे हाथ में अमृत कलश है। चार मुख और हंस वाहन है। इस अमृत कलश का अर्थ ज्ञानामृत से है। जिसमें ज्ञान विवेक के साथ है वही शासन कर सकता है, जिसका सूचक तलवार है, और जिसके हाथ में ढाल भी है। वह है क्षमा की ढाल, जिसके हृदय में दया है। चौथे हाथ में अग्नि है वह अपनी कर्म निर्जरा कर ध्यानाग्नि के द्वारा मोक्ष प्राप्ति के लिये बतलाई है। वह आदि ब्रह्मा भी हैं। ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना की है तो आप भी अपना परिवार बनाते हैं। जो आपके बच्चे हैं, गार्हस्थ जीवन में उतार चढ़ाव आते ही रहते हैं। इसलिये कहा है—

विधि कों कियो कुम्हार जिन, हरि कों दश अवतार ।
भीख मंगावत ईश कों, ऐसो कर्म उदार ॥६॥

तो यह मानव सांसारिक भोगों की लालसा से भोगों को भोगता है और पुत्र व पुत्री रत्न को मंथन कर ही तो प्राप्त करता है। और इन्हीं में चौदह रत्न हैं। इन हाथों से जो द्रव्य कमाया जाता है उसी से मानव श्रीमान कहलाता है।

नं० १ श्री--रत्न

श्री लक्ष्मी का द्योतक है। यह प्रथम रत्न है। इसके बगैर सांसारिक व्यवहार नहीं चल सकता। इसके लिये विद्याध्ययन, कला, शूरता, वाणी की मधुरता, विवेकपूर्ण ज्ञान, साहस, धैर्य; पराक्रम, समता, राज्य संचालन आदि की योग्यता आदि प्राप्त करने के लिए (श्री) लक्ष्मी की नितांत आवश्यक्ता है। जो इस मानव में किसी भी रूप में विद्यमान है।

नं० २ मणि--रत्न

प्रायः यह देखने में आता है कि जिसके पास लक्ष्मी होती है वह कृपण भी होता है। क्यों कि लक्ष्मी का वाहन उल्लू इसलिये है कि वहः—

खाय न खरचै सूम धन, चोर सबै ले जाय।

पीछे ज्यों मधुमक्षिका, हाथ मलै पछिताय ॥७॥

—: तथा :—

यौवनं धन सम्पत्तिः प्रभुत्वमविवेकता।

एकैकमप्यनर्थाय, किमु यत्र चतुष्टयम् ॥८॥

इस दिशा में लक्ष्मीवान को चरित्रवान होना अति आवश्यक है। क्यों कि—

धन यदि गया गया नहिं कुछ भी, स्वास्थ्य गये कुछ जाता है।

सदाचार जो गया मनुज का, सर्वस्व ही लुट जाता है ॥९॥

शील ही मानवों का भूषण है। सच्चरित्र व्यक्ति तेजस्वी होता है। शील (ब्रह्मचर्य) ही एक मणि-रत्न है।

नं० ३ रम्भा--रत्न

ऐसा कौन व्यक्ति है जो विषयों में नहीं रमा और विषय भोग नहीं भाये ? रम जाने का अर्थ तल्लीन हो जाने से है और भा जाने का अर्थ अच्छे लगने से है। लक्ष्मी किसे अच्छी नहीं लगती ? वह केवल ही दिगम्बर जिनकी दिशायें ही वस्त्र हैं, जो जितेन्द्रिय और वीतरागी हैं। जिनके आगे रति और कामदेव भी परास्त होकर चले गये।

माया ठगनी ने ठगा, यह सारा संसार।

पर माया जिनने ठगी, तिनको बहु बलिहार ॥९॥

तपस्वी योगसाधना में रमते हैं और उन्हें वही भाता है, वही उनकी रम्भा है:—

नं० ४ वारुणी--रत्न

विद्या विवादाय, धनं मदाय, शक्तिः परेषां परिपीड़नाय ।
खलस्य साधो विपरीतमेतत्, ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय ॥१०॥

विवेकी विद्याविलासी सरस्वती का सम्मान करते हैं। उससे विवाद तो करते हैं, किन्तु कुविवाद नहीं करते।

ज्ञान का करें गलत उपयोग, खतरनाक हैं ऐसे लोग ॥११॥

धन मद के लिये नहीं है:—

जो है मंजूर धन रक्षा, तो धनवानो बनो दानी ।
कुए से जल न निकलेगा, तो सड़ जाएगा सब पानी ॥१२॥

शक्ति का उपयोग रक्षा के लिये है हिंसा के लिये नहीं—

देखा शास्त्र छान छान कर, सब वैभव किसके साथ गया ।
राव रंक सब ही को देखा, अन्त पसारे हाथ गया ॥१३॥

साधु अपने ज्ञान का सदुपयोग और दुर्जन दुरुपयोग करते हैं। किसी भी प्रकार का मद मदिरा के समान है, उसे वारुणी भी कहते हैं।

कनक कनक तें सौ गुनी, मादकता अधिकाय ।
वह खाये बौरात नर, यह खाये बौराय ॥१४॥

नं० ५ अमृत--रत्न

ज्ञान अमृत है, जो सभी प्रकार के सुखों का अनुभव कराता है। हमें आम का वृक्ष और महुए का बृक्ष दोनों से बड़ी भारी शिक्षा मिलती है।

आम फलै पत राख के, महुआ पत को खोय ।
जो जाकौ रस पियत है, वाकी क्या पत होय ॥ १५ ॥

संजीवन विद्या पढ़े, मति के कहिये हीन ।
विन विवेक करनी करै, सो वन में लुट गये तीन ॥ १६ ॥

अंधे को ज्ञान दिया, फेकता फिरा ।
नुगरे को ज्ञान दिया, कहता फिरा ॥ १७ ॥

ज्ञानामृत के पान को, जिसके बहिरे कान ।
उसे पेट का सत्य ही, जीवन मृत्यु समान ॥ १८ ॥

ज्ञान जीव को धर्म है, भर्म त्रास को मेट ।
सांच पंथ पावै परखि, तब तिस सतगुरु भेंट ॥ १९ ॥

परख सकती नहीं रतनों को, हर इंसान की आंखें ।
दिखाई ब्रह्म क्या देवे, जो ना हों ज्ञान की आंखें ॥ २० ॥

वक्ता ज्ञानी जगत में; पंडित कवी अनंत ।
सत्य पदारथ पारखी, विरला कोई संत ॥ २१ ॥

ज्ञानी जन हैं जौहरी, कर्मी सकल मजूर ।
देह भार का टोकरा, धरे शीश भरपूर ॥ २२ ॥

विवेकी ज्ञानामृत का सदुपयोग अपने आत्मचिंतन में करते हैं और विवेकशून्य पेटपालन व्यसन, आदि दोषो में । दुर्जन दूसरों को पीड़ा देने में, दानी दान में। ज्ञानी ज्ञान में, सज्जन दूसरों की भलाई में लाते हैं । करते हैं और दूसरों को मार्ग दर्शन कराते हैं । किन्तु वर्तमान शासक उपकारी निरपराध पशुओं का कारखाने खोल कर मशीनों के द्वारा बध करा रहे हैं । क्या यह विवेकी मानवों की शोभा की वस्तु है ? आज समस्त भारत में गोबध को रोकने के लिये साधु और संत पुरुष, निहत्थे निःशस्त्र बाल, युवा, बृद्ध, और अनशन करने वाले सत्याग्रहियों पर अश्रु गैस के बम, तथा गोलियाँ वर्षा कर कष्ट पहुंचाया जाता है । समस्त भारत में जहां घी, दूध, दही की नदियाँ बहतीं थीं वहाँ आज खून की नदियां बहतीं हैं । विदिशा की बेतवा नदी में मछली आदि की शिकार की मुमानियत सिंधिया राज्यवंश द्वारा थी, वहां आज ठेके दिये जाने लगे । क्या यह भारत के लिये कलंक नहीं है ? या यह ज्ञान का सदुपयोग कहा जावेगा ? यह स्पष्ट है कि :—

खान पान का चित्त पर, पड़ता अमित प्रभाव ।
जैसा शुद्ध अशुद्ध हो, वैसे बनते भाव ॥२३॥

नं० ६ शंख--रत्न

यथा नाम तथा गुणाः । आप जानते ही हैं कि शंख का पेट फटा हुआ है । नाम दरिद्री इस लिये है कि हम अपने स्वार्थ के लिये ज्ञानवान होकर भी तथा राज्यकोय सत्ता, अधिकार प्राप्त कर भी हिंसा को नहीं रोक सकते तो क्या यह हमारी मूर्खता नहीं है ? यही यथा नाम तथा गुण है ! शंख देवमंदिर में रहता है तो सत्ताधारी शासक राजमंदिर में । विवेकी और बुद्धिमानों के साथ रहते हैं । मानव शरीर समुद्र है, समुद्र में मगरमच्छों की भांति काम क्रोध लोभ मोहादि हैं । इसी शरीर से परिश्रम कर लक्ष्मी प्राप्त करते हैं और लक्ष्मी से विषयसुख होता है । सुख का अनुभव प्राप्त होता है । यही शनिवार है । इससे यह स्पष्ट हो गया कि समुद्र की पुत्री लक्ष्मी और उसका भाई चन्द्रमा है, जो सुख और शान्ति का प्रतीक है । एक साथ विषय वासनाओं के अणुओं से बना शरीर है, जिसका पुत्र कामदेव यौवनावस्था है । शैया विषय वासनाओं की जो काल (सर्प) (मृत्यु) (समय) कालरूप हाथी (कालरूप सिंह) (सात वार) कर कहे हैं ।

सात वार का अर्थ है हमें इस शरीर का इतवार नहीं, कब नष्ट हो जावे, तो सोम कहाँ ?

सोमवार हमारे सुख और शान्ति कलंक सहित हैं । जिस प्रकार से चन्द्रमा शीतल है किन्तु कलंक सहित है। मंगलवार जहाँ सुख और शान्ति नहीं वहाँ माँगलिक कार्य नहीं हो सकते । बुधवार । क्यों कि हमें जब विश्वास नहीं तो इतवार गया। सुख और शान्ति नहीं तो सोमवार गया । मांगलिक कार्यों में बाधा उपस्थित होगई । क्योंकि इनसे भय उत्पन्न हो गया इसलिये बुद्धि भ्रष्ट होगई । क्योंकि हमारे उपरोक्त कारणों से सद्गुरु नहीं मिले जो हमें सन्मार्ग–दर्शन कराते । इसलिये गुरुवार भी बार करने लगे । गुरु हमारे अनुकूल नहीं तो हमें सुख कहाँ रखा है ? इसलिये शुक्रवार भी हमारा शत्रु बन गया। क्यों कि हमें विषयों की चाट लगी है जो विनाशीक हैं, नाशवान हैं । हम जानते हैं कि गौ भारत जैसे कृषिप्रधान देश का मुख्य और परोपकारी पशु है, जीवित अवस्था के अलावा मरने के उपरांत भी हमारे चरणों की सेवा करता है । जब हम उसके नहीं हुये तो हम किसी के नहीं हो सकते । हम अपना सुख देखते हैं पर दूसरों का नहीं, इसलिये शंख हैं अर्थात् मूर्ख हैं, क्यों कि जिनकी दाढ़ों से खून लगा है निर्दयी हैं, मांसाहारी हैं, दया रहित हैं, कठोरता धारण किये हैं, कठोरता से कभी भी विजय नहीं मिलती । विजय ही शनी है; शनी का वाहन भैंसा है । कामराज ही भैंसा है । इन सातों वारों में इन जुल्म करने वालों की मृत्यु होना है। यह सात वार इन पर आक्रमण कर रहे हैं ।और जो विवेकी और बुद्धिमान हैं, राजा भोज के समान अपने विवेक की शंखध्वनि कर संसार में जीवित रहने की जिज्ञासा से गो--रक्षा में अपने जीवन की आहुति दे रहे हैं वही वीर--पुरुष हैं।

मर के भी रहता है जिन्दा, बाण का मारा हुआ ।
पर है जीते जी मरा, अपमान का मारा हुआ ॥२४॥

यह नं० ६ का शंखरत्न हमारी शठता का प्रतीक है। जहां हमें शुभ संगति में जाना चाहिये था वहाँ हम अपनी शठता का मार्गदर्शन करा रहे हैं । विषयों में विषयलंपटी सद्शिक्षा काउल्लंघन कर दुधारे पशुओं का भारत से सर्वनाश का बीड़ा उठाये हैं ।

नं० ७ गजराज (हाथी) रत्न

आप जानते ही हैं। कि मन मतंग (हाथी) है इसे संयम का अंकुश चाहिये। वह संयम का अंकुश योगी पुरुषों से प्राप्त होता है। उन्हें जेलखानों में ठूंस दिया। जहां कुछ गुण प्राप्त करना चाहिये था वहां हम अपने स्वतंत्रता की आड़ में स्वच्छन्द होकर निरंकुशता धारण कर मदोन्मत्त हाथी की तरह अर्थात् खूनी हाथी बन कर खून करने पर उतारू हैं। जो मानवता के नाते शोभा नहीं देता । खूनी हाथी का प्रतिकार महावत के अंकुश के द्वारा ही हो सकता है । "न धर्मो धार्मिकैर्बिना" ।

मनुज मनुज में हो यदि अन्तर, दनुज दनुज का क्या होगा ।
भाई भाई का बने विपक्षी, भावी उसका क्या होगा ॥२५॥

लगी है कुछ इस किस्म की आग, कि भाई जलता है आज भाई से ।
उम्र भर इत्तफाक से रहना, सीखे कोई दियासलाई से ॥२६॥

इन सत्ताधारी मानव कहलाने का दावा करने वाले गणतंत्र राज्याधिकारी गण त्रि-देव (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) जैसे होना चाहिये थे। वहां यह राक्षसरूप हैं अर्थात् इनकी दानवीय वृत्ति है। इनके वाहन देखिये, जिनके बल पर राज्य कर रहे हैं।

जानत था मैं देवी का बाहन, माता को बाहन बैठोहि पायो ।
शिव बाहन की सभा भरी, शनी के बाहन ने शीस हिलायो ॥२७॥
विष्णु को बाहन नजर न आयो, लक्ष्मी के बाहन ने शोर मचायो ।
दुर दुर तो बहुतेरो कियो पर, भैरौं के बाहन ने काटहि खायो ॥२८॥

इस कविता का भावार्थ यह है कि में जानता था कि इस भारत के साम्राज्य की बाग-डोर इन सिंह--पुरुषों के हाथ में होगी। सिंह दुर्गा का बाहन है। किन्तु वहां बैठे दिखाई दिये शीतला माता के वाहन। प्राय: हम उन बालकों को जो पढ़ने लिखने में मन नहीं लगाते या मूर्खता के कार्य करते हैं मूर्ख या गधे कहा करते हैं। शिव जी का वाहन नन्दी वह भी बूढ़ा बैल जो धर्म और दया का प्रतीक पात्र है। बोट लेकर राज्यसत्ता पाई है। और यह निर्दयता का कार्य कर रहे हैं जो हिंसक पशुओं के समान हैं। शनी महाराज का बाहन भैंसा रिश्वतें लेने हेतु दौड़ा, भत्ता बढ़ा चढ़ा वेतन पाकर, दिन दहाड़े सभ्यता के साथ डाका डालने में चतुराई के साथ धनसंचय कर कोठियां निर्माण कर अनेकों प्रकार के चढ़ा बढ़ा कर टैक्सों से प्रजा को दुखी कर चूंसने की क्रिया में सर्वगुण सम्पन्न विषयों में आसक्त, गौबध रोकने की प्रार्थना को हाथी जैसा सिर हिला कर अस्वीकार कर रहे हैं। यह गजराज रत्न है, किन्तु खोटा है।

विष्णु का बाहन गरुड़ अर्थात् ज्ञान है। इनमें कोई ज्ञानवान मनुष्य जिसके हृदय में दया हो और अपनी लेखनी का सदुपयोग करके अपनी वीरता का परिचय दे सके नहीं हैं। क्योंकि विष्णु की पत्नी लक्ष्मी जी, उनका वाहन उल्लू है। राज्यलक्ष्मी प्राप्त कर उल्लू बने बैठे हैं। स्वार्थत्याग नहीं करना चाहते।

वैशाख्ता बुल बुल चहक उठी, पूछा गुलिस्तां वालों से ।
बर्वाद गुलिस्तां करने को, बस एक ही उल्लू काफी है ।
हर शाख पै उल्लू बैठा है, अंजाम गुलिस्तां क्या होगा ॥२९॥

भावार्थ:—आज भारत की प्रत्येक आत्माएं अचानक ही ऐसी भीषण संकटकालीन स्थिति, निर्दय व्यवहार के आतंकित घटनाओं से त्रसित होकर एक दूसरी आत्मा जो कि चलते फिरते बगीचे हैं चर्चा करते हैं कि अब क्या करें ! इस बगीचे को बर्वाद करने को एक ही उल्लू काफी था अर्थात् एक ही व्यसन जब इस मानव देह को बर्वाद कर सकता है तो हर शाख पै उल्लू बैठा है यानी प्रत्येक अंग पर स्वार्थ वासनाओं के उल्लू बैठे, हैं तो इस बगीचे की क्या दशा होगी ? जो इस राज्यसिंहासन पर हल्ला मचा रहे हैं।

हम अपनी प्रार्थना को लेकर उन्हें समझाने जाते हैं तो वह खिसिया कर तिरस्कार करते हुए भैरों का बाहन कुत्ता के द्वारा कटवाते और मरवाते, अश्रु गैस के बम उड़वा कर निरपराधों की हत्याएं करते हैं। और कराते हैं यह मदोन्मत गजराज हैं। यह शठता का प्रदर्शन कर रहे हैं।

नं० ८ कल्पद्रुम (कल्पवृक्ष) रत्न

जीवन एक बगीचा है, श्वांस नीर ने सींचा है।
भोंदू इसको काट रहा, पड़ा किये सर नीचा है ॥३०॥

इस बगीचे में १० प्रकार के कल्पवृक्ष निम्नांकित हैं। जिनका उल्लेख श्री दिगम्बर जैनाचार्य शुभचन्द्र जिनका अपर नाम गोपीचन्द्र या मछन्दरनाथ है। जो भर्तृहरि योगिराज के अग्रज भ्राता थे और महाराजा भोज अनुज भ्राता थे। इनकी तपोभूमि भोपाल के निकट समसगढ़ में रही है।

भर्तृहरि की तपोभूमि आशापुरी, भोजपुर आदि जो भोपाल के निकट हैं। आचार्य शुभचन्द्र ने भर्तृहरि जी को दीक्षा के पश्चात् पढ़ाने के अर्थ एक ज्ञानार्णव नामक ग्रन्थ पृष्ठ सं० ३८७ श्लोक सं० १७५ में लिखा है। उक्त ग्रन्थ में यह श्लोक है:—

मद्य तूर्य गृहज्योतिर्भूषा भाजन विग्रहाः।
सुदीप वस्त्र पत्रांगा दशधा कल्पपादकाः ॥३१॥

भावार्थ:—मद्य-(१) स्त्री का नशा अर्थात् लक्ष्मी। (२) वादित्र संगीतयुत गायन। (३) गृह--गृहिणी। ज्योति (४) घर की शोभा। (५) भूषण--शील-सदाचार। भोजन (६) समय पर आहार। माला (७) वैराग्य पैदा करने वाली। और भगवत् भक्ति में लेजाने वाली मार्गदर्शक। दीपक (८) कुल दीपक पुत्र को जन्म देने वाली। वस्त्र (९) विषय वासनाओं के संवंधी ओढ़ने का वस्त्र। पात्र (१०) विषयों का पात्र। इस प्रकार से यह मानव जीवन एक बगीचा है। जो दश प्रकार के भोगों को स्वर्ग के देवों के समान भोगता है। इसे अपने स्वार्थ अर्थात् इंन्द्रियों के वशीभूत जो क्षणिक रसास्वादन करा कर नष्ट हो जाती हैं अभिमान कर रहा है और गो जैसे वंश के नाश करने के लिये अपनी लेखनी और मन को परोपकार में नहीं लगाता। इस उत्तम रत्न का दुरुपयोग कर अपनी राक्षसी वृत्ति अपना रहा है और राज्यसत्ता को कलंकित कर रहा है। विश्व के प्राणियो के समक्ष लज्जित होते शरम नहीं लाता। मूर्ख (भोंदू) इसे काट रहा, आयु व्यतीत कर रहा है।

श्वास श्वास पर हरि भजो, वृथा श्वास मत खोय।
ना जाने या श्वास को, आवन होय न होय ॥३२॥

नं० ९ शशि (चन्द्रमा) रत्न

आपने देखा होगा कि भगवान शंकर के ललाट पर चन्द्रमा चमक रहा है। यह क्या वस्तु है ?

इसे समझिये अपने ठंडे दिमाग से सोचिये, स्वभाव में शीतलता लाइये। क्रोधाग्नि मानव को जलाती है और ठंडे विचारों से सोचने मनन करने पर बिगड़े काम भी सुधर जाते हैं। यह वही चन्द्र है जो रत्न के रूप में शंकर जी के मस्तक पर दिखाया गया है।

बुरी बातों का सामना करो। ३ बातें मत भूलो (१) दूसरों के द्वारा किया गया उपकार (२) भगवत् भक्ति (३) अपने दोष। तीन बातों पर सदा चलो। (१) निपराध जीवों की हिंसा न करो। (२) सदा निष्ठापूर्वक सत्पथ पर चलो। (३) परोपकार करो। उदारता व्यर्थ नहीं जाती।

नं० १० धेनु--रत्न

नं० १० जिसका संकेत गौ से किया गया है। बन्धुगण! गो माता ही भारत का प्राण है। भगवान शंकर का बाहन नंदी क्यों है? और दुर्गा का बाहन सिंह क्यों है? इन सबका उत्तर आपको आगे देवेंगे। यहां केवल गो माता से ही संबंध है। ध्यान से पढ़िये।

अरे बावले सोच समझ तू, क्यों बनता नादान।
बिन विवेक तू करनी करता, पढ़ा लिखा अज्ञान ॥ ३३ ॥

गो माता का दूध पिया तुम, नन्दी गण से बोट लिया तुम।
नन्दी गण है शंकर बाहन, गो वंश मिटावन निर्दय क्यों तुम ॥ ३४ ॥

राज्यलक्ष्मी पा अभिमानी, खूनी नर तू सिंह बना।
दूध दही घी माखन मावा, खा पी कर बलवान बना ॥ ३५ ॥

दुःख सुख रोगावस्था तेरी, रोग गया आंखें फेरीं।
ज्ञानी होकर बना अयाना, माता से ये आंखें फेरीं ॥ ३६ ॥

भारत से गोवंश मिटाने, कुपथ पंथ तू चला अयाने।
समझ समझ ओ अरे विवेकी, हठग्राहिता छोड़ सयाने ॥ ३७ ॥

करुणा दया भाव सम लाकर, दुर्बुद्धि को दूर भगा कर।
कृषीप्रधान देश की शोभा, रक्षा सत्ताधारी कर ॥ ३८ ॥

गोधन गजधन बाजधन, रत्न खान बहु धान।
जिन धरयो संतोष धन, सब धन धूल समान ॥ ३९ ॥

जिस प्रकार से गो माता के संतोष होता है उसी प्रकार से जिन्हें संतोष है वही धेनु रत्न है।

सब की गठरी लाल है, बिना लाल कोई नहीं।
बना फिरै कंगाल, गाँठ खोल देखी नहीं ॥४०॥

कामधेनु है दया तुम्हारी, सुख संचय नित करती।
वृष है धर्म, धर्म वृषभ है, जो सुख साधन करती ॥४१॥

नं० ११ धनु--रत्न

काम क्रोध जठराग्नि, अग्नि चार परकार ।
ध्यान अग्नि चौथी कही, समझ लेहु करतार ॥४२॥

संयम धनु कर लेहु तुम, बचन बाण गहो हाथ ।
वाक बाण मारो नहीं, संयम तुमरे हाथ ॥४३॥

नं० १२ धन्वन्तरि रत्न

नरभव सुन्दर पाय, आतम में चित दीजिये ।
आतम शुद्ध स्वरूप, वाही को रस पीजिये ॥

रे रे आतम राम, विषयन की आशा तजौ ।
आशा रसरी बाँध, डूबे हो भव-कूप में ॥४५॥

ममता दुख को बीज, समता सुख की मूल है ।
विपदा होवे दूर, समता में चित लाइये ॥४६॥

लखत सुनत सूंघत फिरत, इन्द्री तृपत न होत ।
मन रोके इन्द्री रुके, ब्रह्म परापति होय ॥४७॥

कीजे यही उपाय, नर-भव तेरा सार है ।
फिर पछतावे भारी, नातर जन्म वृथा गया ॥४८॥

वही ध्यान वह जाप व्रत, वही ज्ञान सरधान ।
जिन मन अपना वश किया, तिन सब किया विधान ॥४९॥

भोग व्यसन सुख ख्याल में, दई मनुष्य गति खोय ।
ज्यों कपूत खा तात धन, विपदा भोगै सोय ॥५०॥

जंह संयोग तंह भोग है, जहां भोग तंह रोग ।
जहाँ रोग तंह काल है, कालहि मृत्यु वियोग ॥५१॥

सब विकार त्यागन किये, तजा क्रोध अभिमान ।
तजी भरम की भावना, व्याप गया गुरु ज्ञान ॥५२॥

जब लग लाल समुद्र में, तब लग लख्यो न जाय ।
निकसि लाल बाहर भयौ, मंहगे मोल विकाय ॥५३॥

उपरोक्त पद्यों में निम्नांकित भावार्थ है

सत्ताधारी राज्य शासक :— ज्ञान का दुरुपयोग करने वाले पढ़े लिखे भी मूर्ख होते या नहीं ?

(१) यह तेरे सांसारिक भोग (विषय) ही रोग हैं ।

(२) यह मानव शरीर भोगों का और रोगों का घर समुद्र ही भवकूप है। और इस में तू डूबा हुआ है ।

(३) इसमें से निकलने के लिये आशा की रस्सो में अहिंसा का काँटा बंधा है ।

(४) आत्मीयता, एवं सहानुभूति रत्न हैं। जो ब्रह्म (आत्मा) गो में है वही तेरे में, वही अनशन करने वाले साधु-सन्यासी बाल युवा बृद्ध में। किन्तु तू मांसभक्षण मत कर, जिहवा इंद्रिय का दमन कर। ब्रह्म प्राप्ति (यश पाने) का यही एक मात्र उपाय है। समता धारण कर ।

कांटा कांटे से निकलेगा, विष होगा विष से निर्मूल ।
दुष्टों पर करते अनुकंपा, यही मानवों की है भूल ॥५४॥

(५) सद्गुरु ज्ञान, उपदेश, अनशन, यह जड़ी बूटी हैं। जो कि तुम्हारे चंचल मन को जो कि काम, क्रोध, मान, माया, लोभ के वश विषयों में आसक्त है रोगों को आमंत्रित करता है ।

(६) राज्यसत्ता का उपभोग, और दुरुपयोग कर काल को क्यों आमंत्रित करता है ?

(७) संयम की घुटी औषधि जड़ी बूटियों से युक्त रासायनिक एवं ज्ञानामृत पेय से आरोग्य बन। यह तेरा मन और हाथ की लेखनी ही धन्वन्तरि बैद्य है ।

नं० १३ विष रत्न

हे विद्वान ! यह मानव शरीर विषधाम-विषयों का घर है । विषधर सर्प का सूचक है ।

विच्छू के पीछे बसै, मुख में बसत भुजंग ।
नाहर के नख में बसै, सो सब मानव--अंग ॥५५॥

गुणीजन, यह शरीर विषय-वासनाओं को धारण किये है, इसलिये दोहे की साकारता प्रमाणित होती है । यही विषधर है प्रतीक सर्प से लिया गया उदाहरणार्थ ।

इस मानव शरीर के प्रत्येक अंग में शंकर जी के सर्पों के आभूषण मानवाकृति गरुड़ के शरीर पर सर्पों के आभूपण, विष्णु की सेज शैया और सिर पर घटाटोप सर्पों की फणावली। यह सब कारण प्रतीकात्मक पूर्व जैनाचार्यों ने पाषाणोत्कीरित मूर्तिकला में निहित कर मूक भाषा में कथाएं आपके समक्ष रखी हैं, जिन्हें आज तक किसी भी विद्वान ने न समझा और न समझने की कोशिश की कि यही मानव शरीर विष-विषयों का घर है । और विष के समान विष है । अनंत सर्प को कहा है। इस मानव शरीर में अनंतानन्त काम, क्रोध, मान, माया, लोभ लिपटा हुआ है।

यदि इस विष का वास्तविक रूप से समय के अनुसार उपयोग में लाया जाय तो महा पुरुष जैसे रत्न उत्पन्न होते है। और नहीं तो इस मानव जीवन का जन्म लेना भैरों के वाहन (कुत्ते) के समान जन्म लेकर मरने के बराबर है ।

नं० १४ वाजि (घोड़ा) रत्न

नर तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान।
इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावें धीमान ॥

भव्य पुरुषः—यह मानव-शरीर रथ के समान है। ब्रह्म (आत्मा) इसका संचालक है, अर्थात् ड्रायव्हर है। इंद्रियां घोड़े हैं। और इन इंद्रियों पर काबू पालेने वाला अपने अधिकार में लेकर अपनी इच्छाओं को दमन करने वाला संयमी पुरुष विवेकवान ही धीमान् कहलाता है। लक्ष्मी तो वेश्याओं के पास भी इकट्ठी हो जाती है।

यह चौदह रत्न इस मानव--शरीर में जिस प्रकार से शोध किये गये आपके समक्ष मौजूद हैं आशा है, विवेकी पाठकगण विचारेंगे और मनन कर सदुपयोग करेंगे।
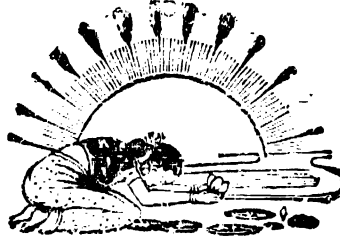
आचार्य भद्रबाहु का जीवन चरित्र

पुण्ड्रबर्द्धन देश में सतपुर नगर था। उस नगर का राजा पद्मरथ प्रकाण्ड विद्या एवं बुद्धि का भण्डार न्यायवान शासक था।

इसी नगर में सोमशर्मा नामक ब्राह्मण था, जिसकी भार्या का नाम श्रीदेवी था। इन्होंके एक विलक्षणबुद्धि वाला उत्तम गुण संयुक्त महान रूपवान भद्रबाहु नामक पुत्र हुआ। यह सरलस्वभावी बालक था। एक दिन यह अनेक बालकों के साथ बड़ी चातुर्यता से गोलियां खेल रहे थे। इन श्री भद्रबाहु जी ने १३ गोलियों से उन बालकों को पराजय दी। इस समय तक यह पढ़े लिखे नहीं थे। जहां पर श्री भद्रबाहु जी गोलियां खेल रहे थे उसी मार्ग से १४ पूर्व के ज्ञाता श्रुतकेवली गोवर्धनाचार्य निकले। आचार्यश्री को इन बालकों के समुदाय में भद्रबाहु की विशाल बुद्धि, विनय, चातुर्यता एवं पात्रता देख कर ही ठहरना पड़ा। और मनमें विचारने लगे कि यही पांचवाँ श्रुतकेवली होने वाला बालक है। यह बात निमित्त ज्ञान से जानी।

पश्चात् सोमशर्मा ब्राह्मण के घर जाकर उदारहृदय श्री गोवर्धनाचार्य ने कहा कि हे विद्वज्जन! क्या तुम अपने पुत्र भद्रबाहु को विद्याध्ययन के लिये दे सकोगे? हमारी इच्छा इस बालक को विद्या पढ़ाने की है।

आचार्यश्री ने इस बालक में क्या पात्रता देखी? अन्य बालकों की अपेक्षा (१) विनय (२) वाणी की माधुर्यता (३) कार्य की संलग्नता (४) साथियों के प्रति सहृदयता (५) चातुर्यता से विजय (६) दयामय परिणाम (७) शील (८) संयम से बोलना (९) व्यवहारकुशलता (१०) उदारता (११) त्याग (१२) और दूसरे को अपना किस तरह बनाना। यह (द्वादश अंग) बातें उनमें देखीं। यह आचार्य विद्यादान देने के पूर्व देखा करते थे। किन्तु आज की विद्या किस प्रकार की है—

बच्चों के खूं में माँ बाप की बू आये कहाँ से?
दूध तो डिब्बे का है, तालीम है सरकार की॥

ज्ञानी जन हैं जौहरी, करमी सकल मजूर।
देह--भार का टोकरा, धरे शीश भरपूर॥

योग्य शिष्य श्री भद्रबाहु जी को योग्य आचार्य श्री गोवर्धन जैसे गुरु मिले। यह भी एक पूर्व पुण्य का फल है। जो घर बैठे आचार्य का शुभागमन हुआ। और पं० सोमशर्मा ने आते देख बड़ी भक्ति से सम्मानपूर्वक आसन देकर विनम्र भावों से आगन्तुक अतिथि का स्वागत करते हुये बिठाया और कहा भगवन्! मेरे भाग्य का उदय हुआ जो आचार्यश्री के चरणों से यह घर पवित्र हो गया। इस प्रकार की माधुर्यभरी वाणी उस ब्राह्मण के मुख से निकलने के पश्चात् आचार्य ने

कहा—हे भद्र ! क्या तुम अपने इस बालक को विद्या पढ़ाने के लिये दे सकोगे ? इस बालक के कण्ठ में विद्या विराज रही है और यह बालक विश्व में आपके वंश को ही नहीं, अपितु विश्व को भव-सागर से पार उतारने का एक केवट है । यह बड़ा भारी विद्वान होगा । इसका भविष्य उज्वल है । इस प्रकार से कहने पर पं० सोमशर्मा ने प्रसन्नतापूर्वक उस बालक को सुपुर्द कर दिया और गुरु आशीर्वाद देकर बालक को अपने साथ ले आये ।

भद्रबाहु और पाठ्यशाला

गोवर्धनाचार्य गिरि-गुफाओं में जहाँ एकान्तवास था, विद्याध्ययन कराने लगे । कुछ काल व्यतीत होने पर भद्रवाहु विद्या में पारंगत बन गये । जब आचार्य ने देखा कि यह सभी बातों में पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर चुका है, किसी भी बात की कमी नहीं रही, उस समय उस बालक को आचार्य ने माता-पितादि के पास भेज दिया ।

यह था आचार्य जी का विद्यादान, निःस्वार्थ सेवा । वर्तमान में विद्या लोकहितार्थ नहीं अपितु विषय--सेवनादि के लिये बना रखी है । यह है पूर्व वर्तमान गुरुओं और विद्या का अन्तर प्रदर्शन ।

समय जाते देर न हुई थी कि बालक गुरु-आज्ञा से माता-पितादि के निकट जाने का आदेश प्राप्त कर घर पर पहुंचा और बड़ी विनय और भक्ति के साथ माता-पितादि के चरण-स्पर्श किये । तत्पश्चात् नगरवासियों से यथायोग्य विनय से मिल कर अपनी विद्वत्ता का परिचय दिया । जिससे नगरवासियों में सहृदयता उत्पन्न हुई और बड़ी प्रसन्नता की लहर दौड़ गई तथा वे पूज्य माने जाने लगे । यह था पूर्व विद्याध्यनन का आदर्श ।

समय जाते देर न हुई कि माता पिता पुत्रस्नेह से ओतप्रोत होकर उसके विवाह की तैयारी करने लगे । यह बात जब भद्रवाहु को ज्ञात हुई तो उन्होंने माता पिता से कहा—पूज्य ! स्त्री भवसागर है । इसके भंवर में जो फंस जाता है वह नाना प्रकार के जन्म--मरण, गर्भ वेदना और नरकों की यातनाओं को भोगता है । यदि कदाचित् उदर से बाहर निकला तो निकलते समय यह जीव कहता है—कहाँ !--कहां !! कुछ दिन बाद वह अपने मल--मूत्रादिक में लिपटने और नरक-यातनाओं को भूल जाता है । यह संसार दुःखों का घर है। इसलिये मैं पूर्ण बाल--ब्रह्मचारी रहूँगा और विश्व में आपके वंश की वृद्धि अजर अमर रखूंगा । वह सब सच ही हुआ ।

देखिये, आज हजारों वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी उनके नाम स्मरण करते हैं। यह है उनके जीवन का आदर्श । अन्त में उन आचार्य भद्रवाहु ने श्री गोवर्धनाचार्य से जिनदीक्षा ली और वे सच्चे सुख का अनुसरण करने लगे । आचार्य श्री गोवर्धनस्वामी ने अपनी आयु का अल्पकाल जान कर, देशकाल के अनुसार सभी उतार--चढ़ाव और भविष्य समझाकर भद्रवाहु को आचार्य-पद देकर और फिर स्वयं समाधि लेकर मोक्ष प्राप्त किया ।

कालगति के अनुसार आचार्य भद्रवाहु स्वामी समस्त शास्त्रों के ज्ञाता, कलाओं में निपुण, जिनका ज्ञान ही नेत्र है, जिनके मुखकमल से अमृतरूप वचनों की गंगा बहती है, ऐसी कल्लोल करती स्याद्वाद की तरंगों से युक्त सरस्वती ने मुनिगण एवं जन-समुदाय में भव्य भावनायें उत्पन्न करदीं । इसके पश्चात् ही मुनिगण का विहार होता हुआ इस विदिशा नगर के उद्यान उदयगिरि नामक पहाड़ी पर आया था । उसी समय चन्द्रगुप्त आचार्य के दर्शनार्थ पधारे और उपदेशामृत पान किया ।

सम्राट् चन्द्रगुप्त और आचार्य भद्रवाहु

(उदयगिरी : गुफा नं० ५, विदिशा)

बाराह--मूर्ति

जिस काल में इस बाराह–मूर्ति का निर्माण हुआ वह स्वर्णयुग कहा जाता था। इस काल में मनुष्यों के परिणाम कोमल, दयार्द्र, न्याय--युक्त, भव्य, दूरदर्शी, गुणज्ञ, विचारवान, पराक्रमी, सत्कल्याणी, सद्व्यवहारी और शास्त्रों के पारगामी होते थे।

ऐतिहासिक परम पुनीत विदिशा नगरी के उद्यान में सौभाग्य से विचरण करते हुये आचार्य भद्रवाहु स्वामी अपने शिष्यों सहित आर्यावर्त नामक पर्वत पर पधारे। और ये गुफा नं० १ जिसे सूर्यमन्दिर कहते हैं उसमें विराजमान हुये।

जिस प्रकार सूर्य अपने आताप (गर्मी) से शीतकाल में होने वाले भयंकर रोगों का नाश कर देता है, उसी प्रकार से भद्रवाहु स्वामी के उपदेशामृतरूपी तेज ने चन्द्रगुप्त के पाषाणी हृदय को जो बर्फ की तरह पाषाण बन रहा था, पिघला कर नम्रीभूत कर दिया। जिससे सम्राट चन्द्रगुप्त, मार्गदर्शक, ऐतिहासिक, दार्शनिक महापुरुष बने। जिनकी कीर्तिरूपी प्रभा आज भी विश्व में जीवित है। इस सम्बन्ध में इनके मन्त्री वीरसेन जो इनके साथ थे, उन्होंने एक शिलालेख गुफा नं० ६ के दरवाजे पर बाहर ही अंकित कराया है।

अनुवाद--शिलालेख गुफा नं० ६

"सिद्धम्"। सबसे प्रथम सिद्धों को नमस्कार किया है। संवत् ८०२ आषाढ़ शुक्ला ११ के दिन सम्राट चन्द्रगुप्त जब कि यह महाराज कहे जाते थे, जिन्हों की दृष्टि गुणावलोकी थी, अपने गुरु श्री महाराज छगलक के पौत्र श्री महाकवि नीतिज्ञ महापुरुष जो चाणक के नाम से प्रसिद्ध हैं, जिनका लिखा नीतिग्रन्थ हितोपदेश है। उसमें इनका नाम विष्णुदत्त चाणक है। यह स्वभाव के अति क्रोधी तो थे ही किन्तु एक सनक भी होने से सनकीनस्थ महाराज भी कहते हैं। उनका यह देहधर्म अर्थात् शरीर द्वारा की गई स्मृतिरूप क्रिया है। जो साकारता के रूप में विद्यमान है।

प्रतिलिपि शिलालेख गुफा नं० ६

१॥ सिद्धम्। संवत्सरे ८०२ आषाढ़ मासे शुक्लेकादश्यां परम भट्टारक महाराजाधिराज श्री चन्द्रगुप्त पादानुध्यातस्य ॥२॥ महाराज छगलक पौत्रस्य महाराज विष्णुदासपुत्रस्य सनकानीकस्य महाराज ढलस्यायं देयधर्मः।

गुफा नं० ६ पर खुदा हुआ है जो इसी गुफा नं० ५ से लगी हुई है।

प्रतिलिपि गुफा नं० ७

१।। सिद्धम् ।। यदन्तज्र्योतिरवर्कांभमुर्व्यामव्यापि चन्द्रगुप्ताख्यमद्भुतम् । विक्रमावक्रयक्रीता-दासन्यग्भूतपार्थिवामानसंरक्ता धर्मं तस्य राजाधिराजर्जेरचिन्त्यो (त्साहकर्म्मण) अन्वय प्राप्त साचिव्यो व्यापृतः । संधिविग्रहे कौत्सश्शाव इति ख्यातो वीरसेनः कुलाख्यया शब्दार्थ न्यायलोकज्ञः कविः पाट-लिपुत्रकः कृत्स्नपृथ्वीजयात्यर्थेन राज्ञैवेह सहागतः भक्त्याभगवतश्शंभोर्गुहामेतायकारयत् ।।

हिन्दी अनुवाद शिलालेख गुफा नं० ७

सबसे प्रथम सिद्धों को नमस्कार किया है । चन्द्रगुप्त एक वीर पुरुष व्यक्ति है । जिसकी अद्भुत कीर्ति विश्व में प्रसिद्ध है । सूर्य के समान हजारों वर्ष व्यतीत होने पर भी आज जिसकी कीर्ति दैदीप्यमान है । जिसका पराक्रम और धर्म पृथ्वीतल पर सम्माननीय था । इस कारण जनसमुदाय ने दासत्व ग्रहण कर लिया था । ऐसे राजाधिराज चन्द्रगुप्त जिन्हें विक्रमादित्य भी कहते हैं । जिनका आज संवत चल रहा है । जिनका उत्साह और कर्म अचिंत्य है । जिसका विचार करने में बुद्धि नहीं दौड़ती । उनके मंत्री जाति के ब्राह्मण पांडित्य में निपुण जिनका नाम वीरसेन था । पाटलीपुत्र निवासी कविकुलदीपक शब्द, अर्थ, न्याय, लोक के ज्ञाता, संधि-विग्रह के सचिव (मंत्री) कौत्स गोत्री थे । जिस सम्राट चन्द्रगुप्त ने पृथ्वी की विजय यात्रा के उपलक्ष में तथा आचार्य भद्रबाहु की भक्तिवश कल्याण को देने वाली मूककथाओं से परिपूर्ण शंभू अर्थात् जिन्होंने आत्मा और शरीर रूप पृथ्वी को समान बना दिया है । रागद्वेषादि को नाश करने वाली गुफाएं जो मुनियों, विद्वानों के ज्ञान ध्यान का स्थान हैं बनवाईं ।

गुफा नं० २० का शिलालेख

।। ओं नमः सिद्धेभ्यः ।। श्री संयुतानां गुणतोयधीनां, गुप्तान्वयानां नृपसत्तमानां । राज्ये कुल-स्याभिविवर्द्धमाने, षड्भियते वर्षशतेथमासे । सुकार्तिके बहुल दिनेथ बंचमे, गुहामुखे स्फटविकटो-त्कटामिमांजित । जिताद्विषा जिनवर पार्श्वसंज्ञिकां, जिनाकृतिं शमदम-वानचीकरत । आचार्य भद्रा-न्वयभूषणस्य, शिष्यो ह्येसावार्य्यं कुलोद्गतस्य । आचार्य गोशर्ममुनेस्सुतस्तु, पद्मावतावश्वपतेव पर्यं-टस्य । परैरजेयस्य रिपुघ्नमानिनस्स । संघिलस्येस्य भिविश्रुतो, भुविस्य संज्ञया शंकर नाम शब्दितो, विधानयुक्त यति मार्गमास्थितः । स उत्तराणां सदृशे कुरुणां उदग्दिशा देशवरे प्रसूतः । ज्ञापाय कर्म्मारि जपस्य धीमान् यदत्र पुण्यम् तदपाससर्ज्ज ।

गुफा नं० २० का हिंदी अनुवाद

सिद्धों को नमस्कार । प्रसिद्ध गुप्तवंशीय श्रीसंयुत एवं गुणसंपन्न राजाओं के समृद्धिमान राज्यकाल के १०६ वें वर्ष के कार्तिक कृष्ण ५ पंचमी के शुभ दिन शमदमयुक्त शंकर नामक व्यक्ति ने विस्तृत सर्पफणों से भयंकर दिखने वाली जिनश्रेष्ठ पार्श्वनाथ २३ वें तीर्थंकर की मूर्ति गुफा द्वार में बनवाई। ये शंकराचार्य भद्रकुल भूषण तथा आर्य कुलोत्पन्न गोशर्म्म मुनि के शिष्य हैं । ये माता पद्मावती और पिता संघिल के पुत्र नाम से विशेष विख्यात हैं। संघिल एक शूर अश्वपति थे और शत्रुओं से अजेय होने के कारण अपने को अजेय रिपुघ्न मानते थे । शंकर ने विधि-वत यतिमार्ग स्वीकृत किया है । उनका जन्म श्रेष्ठ उत्तर-प्रदेश में हुआ है । उन्होंने धर्मकार्यों के शत्रुओं के क्षयार्थ (इस प्रतिमा-निर्माण-रूप) शुभ कार्यों के पुण्य का उत्सर्ग किया है ।

गुफा नं० १ से २० आदि से अन्त तक गुफायें मनोवैज्ञानिक भावनाओं का इतिहास के अनुसन्धान का प्रचार, धर्म, संस्कृति और क्षेत्र का अद्वितीय जीता जागता उदाहरण हैं।

आचार्यों की परोपकारमय भावनाओं को पाषाण में मोम की भांति कलाकृतियों में उत्कीर्ण कराई हैं। जो मानव के जीवन को अपने नैतिक उत्थान की ओर अग्रसर कराती हैं। यह भले ही है कि हम उसका लाभ न लें, और विपरीत उपयोग करें। प्राय: कामांध और कुमार्गगामी ही जिनका भविष्य अंधकारमय है कुचेष्टायें कर स्वत: को और अन्य व्यक्तियों को पतन की ओर ले जाने की चेष्टा करते हैं। अज्ञानता और विद्वेष इसका प्रमुख कारण है।

हमारा लक्ष्य वास्तविक आध्यात्मिक ज्ञान है जो कि इन प्राचीन प्रतिमाओं में छुपा है स्वयं प्राप्त करें। अंधकार में रहने वाले सहधर्मी जिज्ञासुओं को भी उत्थान की ओर ले जाने में मार्ग-दर्शन करावें। ऐसा ही प्रयत्न है। नि:सन्देह शिलालेख अपनी-अपनी अनन्य भाषा लिपियों में पूर्व महापुरुषों की वैभवशाली कीर्ति की स्मृति दिला रहे हैं। आचार्य चाणक का कथन है:—

आयु: कर्म च वित्तं च, विद्या निधनमेव च।
पंचैतान्यपि सृज्यन्ते, गर्भस्थस्यैव देहिनां॥

भावार्थ:—देहधारियों के जन्म, मरण, आयु, कर्म, धन और विद्या के लिये विधाता जन्म लेने से पूर्व ही (गर्भ में) अंकित कर देता है। जिसकी कथा एक मनोवैज्ञानिक इतिहास बन जाता है।

समुद्र सात हैं। (१) संसार, (२) मन, (३) विद्या, (४) कला, (५) गुण, (६) विज्ञान, (७) समुद्र। प्रकृति दो प्रकार की है—एक शुभ और एक अशुभ। जिसे हम पुण्य और पाप के रूप में ही मानते हैं। पुण्य देव और पाप राक्षस माना है।

पुण्य पठाता स्वर्ग में, तथा नरक में पाप।
दोनों की सन्तान से, होता पश्चाताप॥

सप्त ऋषि—(१) मुख, (२) आंख, (३) नाक, (४) कान, (५) त्वचा, (६) मलद्वार, (७) मूत्रद्वार, वासनाओं के घर हैं।

पांच मंत्री—(१) प्रधान मंत्री--अहंकार, (२) गृह मन्त्री--काम, क्रोध, (३) अर्थ मंत्री--लोभ, (४) विदेश मन्त्री--मोह माया, (५) रक्षा मंत्री--दया क्षमा। इनकी साकारता आचार्यों ने उदयगिरी गुफा नं० ५ और १३ में बतलाई है। प्रथम गुफा नं० ५ का इतिहास प्रारम्भ करते हैं। विषया-शक्त संसारी मानव अपनी कामवासनाओं की साधना और उनकी तृप्ति के लिये अविवेकत्वपूर्ण

आचार्य श्रीरत्ननंदी विरचित (भद्रबाहु चरित्र) अनुवादक स्व० पं० उदयलाल जी काशलीवाल (बड़नगर)। प्रकाशक मूलचन्द किसनदास कापड़िया सूरत के पृष्ठ नं० १४--१५ पर विष्णु की उपासना के संबन्ध में 'भागवतामपाश्चा' श्लोक दिया है।

अधम से अधम क्या क्या क्रियायें नहीं करता ? सब कुछ करता ही है। जिसकी साकारता का वर्णन निम्न प्रकार है । सुधीजन त्रुटियों को सुधारने की कृपा करेंगे । लेखक अल्पबुद्धि है ।

बाराह--मूर्ति

अवतार १० हुये जिनमें बाराह को हम भगवान की कल्पना इसलिये करते हैं कि इनसे हमें अद्वितीय ज्ञान मिलता है । भगवान बाराह समुद्र में एक पराक्रमी पुरुष के रूप में खड़े हैं और मुख में स्त्री दबी है । बाराह मुख काम है । काम इसलिये है कि जो भी सांसारिक सुखों की कल्पना पैदा होती है सिर में ही । यहीं ब्रह्म निवास करता है । कामी पुरुष विषयों में आनन्द मानता और भोगता है । विषय-भोगों का स्थान (नारी) गुप्तांग में है जहां से अपवित्र वस्तु-मल-मूत्रादिक निकलता रहता है । जिसे बाराह आनन्द से खाता है । और स्त्री पुत्र विदेशमंत्री है । स्त्री कामवासना की पुतली है । इसके पीछे मानव अपने प्राणों की आहुती दे देता है । स्त्री तथा पुत्र परिवारादि के पालनार्थ प्रसन्न करने के लिये द्रव्य की आवश्यकता होती है । प्राप्ति के लिये देश विदेश भ्रमण करना पड़ता है । इसे दौलत कहते हैं । इसमें दो लत हैं। यह जब प्राप्त होती है तो ऐंठ दिखाती है, जाते समय कमर तोड़ देती है । इसे लक्ष्मी कहते है । इसका बाहन उल्लू है। जिसके पास यह जाती है उसे उल्लू बना देती है। और इसी प्रकार से पृथ्वी पर सम्राट बनने की इच्छा से कमजोरों को मारकर और बलवानों के समक्ष आधीनता स्वीकार करता है । यही झगड़े की मूल है:—"जर, जोरू--जमीन, झगड़े की जड़ तीन ।" किन्तु—

विद्या विभव उतंग कुल, और सुजस संसार ।
विन दीने नहिं पाइये, भली वस्तु ये चार ।।

चाणक और चन्द्रगुप्त भेंट

पूर्व पुण्य से विष्णुशर्मा चाणक कांस के खेत में कांस को जड़ से उन्मूलन करने के कार्य में संलग्न थे । होनहार कि भारतसम्राट चन्द्रगुप्त पदयात्रा करते आ निकले । गुरुजी को सविनय प्रणाम कर कांस उन्मूलन का कारण पूछा । क्रोधावेश में उत्तर दिया—इसे मैं समूल नष्ट कर के ही रहूँगा ।

चन्द्रगुप्त—गुरुजी ! मैं इसे कृषि-यन्त्रों से आसानी से नष्ट करने में सहायता कर सकता हूं । सेवा स्वीकार करेंगे ?

गुरुदेव चन्द्रगुप्त की चातुर्यता, उदारता और विवेकपूर्ण बात को सुनकर पूर्णरूप से देख कर, और इनके भविष्य को पूर्वा-पर विचार कर अपनी विद्वेषमय भावनाओं की पूर्ति के लिये अर्थात् नंदवंश के नाश करने हेतु सहायक मान उक्त भूमि की मिट्टी से तिलक कर दिया और कहा—तू इस भूमि का सम्राट है ।

चन्द्रगुप्त आश्चर्य भरी दृष्टि से विचार करते हुये गुरु के चरण पकड़ कर कहते हैं—मैं साधनहीन, अल्पबुद्धि कैसे सम्राट बन सकता हूं ?

उदारता और उद्योग कभी भी निष्फल नही जाते हैं। कह कर आशीर्वाद दिया। संसार में

चार अंधे हैं:—

जन्म अन्ध, कामान्ध नर, और महामद धार ।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार ॥

स्वार्थवश चन्द्रगुप्त आचार्य चाणक के राज्यप्रलोभन में प्रधान मंत्री अहंकार और ईर्षा-चन्द्र इन्स्ट्रक्टर बन कर नन्दवंश के घात में सहायक बने ।

कोपयुक्त मनुष्य अपने स्वाभाविक क्षमा गुण का नाश कर देता है । अपनी शक्ति द्वारा दूसरे के प्राणों का नाश कर दूसरे की हिंसा करता है । तथा धर्म को छोड़ पाप करने लग जाता है । योग्य कार्य को छोड़ बैठता है । बड़ों का निरादर और नाना प्रकार के भंड वचन बोलता है । संसार में निन्दा का पात्र बनता है । इस प्रकार वह अनेक अवक्तव्य कुकर्म कर डालता है । जिनका कि उल्लेख नहीं किया जा सकता ।

नन्दवंश के द्वारा गुरु श्री विष्णुशर्मा चाणक का अपमान किया गया था, इसी कारण क्रोधाग्नि प्रज्वलित हुई । और बदले की भावना लेकर प्रतापी वीर क्षत्री चन्द्रगुप्त को साथ लेकर नीतिज्ञ महापुरुष ने संग्राम छेड़ दिया ।

आचार्य कहते हैं:—

यौवनं धन संपत्तिः प्रभुत्वमविवेकता ।
एकैकमप्यनर्थाय, किमु यत्र चतुष्टयम् ॥

जब अकेली जवानी नाश का कारण बन जाती है तो धन, संपत्ति, अविवेकिता यदि चारों एकत्रित हो जांय तो वहां क्या अनर्थ नहीं हो सकता ?

जब यह सम्राट प्रारंम्भिक यौवनावस्था में देश-देशान्तरों में नन्दवंश का नाश कर दिग्विजय के लिये चल दिये, अनेक राजाओं को पराजित करते हुए बगैर जातिभेद के कामाग्नि और विषय की तृप्ति के लिये सुन्दर कन्याओं के साथ भोग भोगने के लिये डोले भी लिये गये । जब यह सम्राट दिग्विजय से अपनी सेना और मंत्रियों के साथ विदिशा आये तो मालूम हुआ कि आचार्य श्री भद्र-बाहु स्वामी गुफा नं० १ जहां सूर्य-मन्दिर है विराजमान हैं, दर्शनार्थ गये और नमस्कार कर उपदेशामृत पान करने लगे ।

आचार्य आशीर्वाद देते हुए पूछते हैं—कहां से आ रहे हो ?

सम्राट उत्तर देते हैं—दिग्विजय करके ।

आचार्य ने विचार किया, यह एक प्रतापी वीर पुरुष जिसका भविष्य उज्वल है, और वह सांसारिक चक्र में फंस कर अपने आत्मस्वरूप को भूला हुआ है, इसे सन्मार्ग पर कैसे लाया जाय । इस हेतु गुफा नं० ५ जिसमें बाराह की मूर्ति उत्कीर्ण है, चित्र निर्माण किया और राजन को सम्बोधनार्थ सामने रखा ।

आचार्य कहते हैं:—राजन् ! इसे समझा ?

राजन उत्तर देते हैं:— गुरु जी, समझाइये।

आचार्य कहते हैं—राजन् ! आप कहाँ खड़े हैं ? यह संसार अथाह समुद्र है। इस संसार में प्राणी इन्द्रियजनित विषयरूपी शत्रुओं के भोगने में आनंद मानता है।

असुरसुरनराणां यो न भोगेषु तृप्तः, कथमपि मनुजानां तस्य भोगेषु तृप्तिः।
जलनिधिजलपाने यो न जातो वितृष्ण--स्तृणशिखरगताम्भः पानतः किं स तृप्येत् ॥

(सुभाषित रत्न संदोह ॥६॥)

अर्थ:—इस जीव ने संसारसमुद्र में भ्रमण करते हुए सुर असुर आदि के उत्कृष्ट से उत्कृष्ट भी विषय सुखों को भोगा है। परन्तु जब उनसे भी इसकी तृप्ति न हुई तब मनुष्यों के सामान्य भोगों से कैसे इसकी तृप्ति हो सकती है ? कभी नहीं।

जो प्यास (तृषा) समुद्र के समस्त जल पीने पर भी नहीं बुझती वह भला घास के ऊपर लगी हुई ओस की बूंद से कैसे शान्त हो सकती है ? उसी प्रकार उत्कृष्ट विषय भोगों को भोग कर भी तृप्त न होने वाले इस जीव को सामान्य भोग तृप्तिदायक नहीं हो सकते।

तब आचार्य कहते हैं कि जिस प्रकार एक दिन में सूर्य की तीन अवस्थायें बदल जाती हैं उसी प्रकार मानव की भी बदलती हैं। मानव इन तीन वस्तुओं के न मिलने पर विकारभाव उत्पन्न करता है और रुचि अनुसार प्राप्ति पर स्वर्ग के सुख मानता है। जिसका उदयगिरि गुफा नं० ५ में जो वर्णन किया है उसके दो पहलू हैं। जिनमें भगवान विष्णु (विष्णुकुमार मुनि) जिनने ७०० मुनियों की बलि से रक्षा की थी, और दूसरा पहलू है सम्राट चन्द्रगुप्त को राजवैभव से विरागता दिलाने का। इस इतिहास में दोनों ही पहलू बताये जा रहे हैं। और उस अवस्था का वर्णन किया जा रहा है जो कि यौवनावस्था से सम्बन्ध रखता है। जिस यौवन काल में मानव मदांध होकर जो झगड़े की तीन वस्तुयें हैं (जर, जोरू, जमीन) उनकी ओर ध्यान दिलाया और फिर आचार्य भद्रवाहु स्वामी ने सम्राट चन्द्रगुप्त को विजय से लौटते समय विदिशा में अपनी अमृतमयी को सच्चरित्र बनाया। यह उनकी मनोवैज्ञानिक कला थी, वशीकरण मंत्र था, जो कलाकृतियों में उदयगिरि गुफा नं० ५ में स्थित है।

देखो गजेटियर ग्वालियर जिल्द १, सन् १९०८। वीर निर्वाण सं० १६२ विक्रम सं० ३०७ वर्ष पूर्व अर्थात् ३६४ बी० सी०।

नोट—जैन शासन के शास्त्रों के अनुसार समय (काल) नहीं मिलता है।

यह गुफायें चन्द्रगुप्त के मंत्री वीरसेन जो इनके साथ थे दिग्विजय के पश्चात् विदिशा नगर में आये थे उनने निर्माण कराई थीं।

आचार्य भद्रवाहु स्वामी जाति के ब्राह्मण और दिगम्बर जैनाचार्य थे। जिनके साथ सैंकड़ों मुनि, क्षुल्लक, आर्यिका, श्रावक, श्राविकायें और ब्रह्मचारीगण थे। और वह भी धुरन्धर विद्वान

थे, जो गुफा नं० १ पर विराजमान थे। जिसे सूर्यमंदिर या सूर्यगुफा कहते हैं। जिस प्रकार सूर्य अपनी दैदीप्यमान किरणों से प्रकाश करता है उसी प्रकार से सम्राट चन्द्रगुप्त के हृदयसमुद्र में प्रकाश कर अज्ञानान्धकार को दूर कर निर्मल स्वभाव होकर आत्मीय सुखानुभव प्राप्त कर सके। ऐसे उन त्यागी विरागी तपस्वी के दर्शन कर आज वह जीवित हैं। जहां अनेकों जिज्ञासु धर्म-श्रवणार्थ मुनि आचार्य के निकट बैठे थे, जा बैठे थे। इस बात की पुष्टि गुफा नं० ६-७--१९--२० के शिलालेख तथा मनोवैज्ञानिक कलाकृतियां में छुपे अद्भुत ज्ञान का भण्डार गुफा नं० ५-१३-१९ क्रमशः प्रतीक हैं। जिन्हें आज तक कपोलकल्पित कथायें सुना करते थे, किन्तु वह कहीं तक कुछ महत्व अवश्य रखती हैं। जिनके शिलालेखों की प्रतिलिपियां पूर्व में दी जा चुकी हैं।

नीच--गिरि

गुफा नं० २ लगायत १४ तक नीचगिरि कहलाता है, इसलिये कि वह दक्षिण और उत्तर की पहाड़ियों की अपेक्षा बीच का भाग नीचा है। यहाँ प्रतिवर्ष दो वार रामनवमी के अवसर पर वैश्यों का मेला भरता था, किन्तु वर्तमान में यह मेला वैस नदी के किनारे गुफा नं० २० के पश्चिम दिशा की ओर भरता है।

कामी पुरुष की गति

जिस प्रकार कामी पुरुष विषयों में आनन्द मानता है उसी प्रकार बराह अपवित्र वस्तु के खाने में आनन्द मानता है। दोनों की गति एक ही है। मानव जीवन से तुलना कीजिये।

नारीजघनरंध्रस्थ, विण्मयमूत्रचर्मणा।
बाराह इव विड्भक्षी, हन्त मूढ़ा सुखायते॥

(जीवंधर कुमार चरित्र)

सर्वजनैः कुलजो जनमान्यः, सर्वपदार्थविचारणदक्षः।
मन्मथबाणविभिन्नशरीरः, किं न नरः कुरुते जननिंद्यः॥५८३

(सु० र० सं०)

भावार्थः—जो लोग उत्तम कुल में जन्म लेते हैं, जिनका समस्त संसार सत्कार करता है, जो कि हित के और अहित के विचारने में कुशल हैं, वे लोग जिस समय कामदेव के बाणों से जर्जरित शरीर हो जाते हैं उस समय निंद्य से निंद्य भी कार्य कर डालते हैं। जिस प्रकारः—

अन्हि रविर्दहति त्वचि बृद्धः, पुष्पधनुर्दहति प्रबलोढं।
रात्रिदिनं पुनरंतरमंतः, संवृतिरस्तिरवेर्न तु कंतोः॥५८४॥

(सु० र० सं०)

अर्थः—ग्रीष्म ऋतु का तेजस्वी सूर्य अपने प्रताप द्वारा अधिक से अधिक शरीर को तपा सकता है। किंतु पर भी उसका कुछ न कुछ छत्री आदि से प्रतिबन्ध भी किया जा सकता है।

परन्तु कामदेव का प्रबल प्रताप रात दिन जलाता है। और वह आंतरंगिक दाह करता है, इसलिये कुछ भी प्रबन्ध नहीं हो सकता।

स्थावरजंगमभेदविभिन्नं, जीवगणं विनिहंति समस्तं।
निष्करुणं कृतपापकचेष्टः, कामवशः पुरुषोऽतिनिकृष्टः ॥५८५॥

अर्थः—कामदेव के वशीभूत हुआ पुरुष अति निकृष्ट हो जाता है। और दया रहित पापी हो स्थावर, जंगम दोनों प्रकार के असंख्य जीवों की हिंसा करने लग जाता है ॥५८५॥

दृष्टिचरित्रतपोगुणविद्या, शीलदयादमशौचशमाद्यान्।
कामशिखी दहति क्षण तेन, वन्हिरिवेंधनमूर्जितमत्र ॥५९१॥
किं बहुना कथितेन नरस्य, कामवशस्य न किंचिदकृत्यं।
एवमचिन्त्य सदा मतिमंतः, कामरिपुं क्षयमत्र नयंति ॥५९२॥

अर्थ—जिस प्रकार प्रज्वलित अग्नि ईंधन के समस्त समूह को जलाकर भस्म कर देती है उसी प्रकार कामरूपी अग्नि पुरुष के दर्शन, ज्ञान, चरित्र, तप, विद्या, शील, दया, शम, दम, शौच, आदि समस्त गुणों के समूह को क्षण भर में जला कर भस्म कर डालती है। इसलिये बहुत कहने से क्या? कामी पुरुष अकृत्य से अकृत्य भी समस्त कार्यों को कर डालते हैं। ऐसा विचार कर जो लोग काम को सदैव जीत कर विजय प्राप्त करते हैं वे लोग बड़े ही बुद्धिमान हैं ॥५९१--५९२॥

संयमधर्मविवृद्धशरीराः, साधुभटाः शरवैरिणमुग्रं।
शीलतपःशितशस्त्रनिपातैं,--दर्शनबोधबलाढ्धि धुनंति ॥५९५॥

अर्थः—जिनलोगों का संयम और धर्मरूपी शरीर बलवान है, वे प्रवल तपस्वी लोग शील और तपरूपी तीक्ष्ण खड्ग की धारा से सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान की सहायता पूर्वक काम रूपी वैरी को मार गिराते हैं और उसके जीतने से प्राप्त हुए अक्षय यश का लाभ लेते हैं। ॥५९५॥

माया ठगनी ने ठगा, यह सारा संसार।
पर माया जिनने ठगी, तिनको बहु बलिहार॥

राजन्! देखो, वराह के मुख में जो स्त्री दबी है वह भी माया की एक शक्ति है। यही झगड़े की मूल और विनाश का कारण है।

स्त्री का शरीर अपवित्रता का घर है।

(कवित्त)

मांस हाड़ लोहू सानि पूतरी बनाई काहु, चामसों लपेट तामें रोम केश लाये हैं।
तामें मल मूत भर कृमि केई कोटि धर, रोग संचै कर कर लोक में ले आये हैं॥

बोलै वह खाउं खाउं, खाये विना गिर जाऊं, आगे को न धरों पाउं ताही पै लुभाये हैं ।
ऐसे भ्रम--मोह ने अनादि के भ्रमाये जीव, देखै परतक्ष तोऊ चक्षु मानों छाये हैं ।।

(ब्रह्म विलास)

विद्वेषवैरिकलहा सुखघातभीति, निर्भर्त्सनाभिभवनासु विनाशनादीन् ।
दोषानुपैति निखिलान् मनजेऽतिमायी, बुद्‌ध्वेति चारु मतयो न भंजति मायाम् ।।६०।।

(सु० र० संदोह)

अर्थः—जो लोग मायाचारी हैं वे इस संसार में वैर बढ़ाते हैं, शत्रुओं के डर से चिन्तित हो दुख पाते हैं, रात दिन लड़ाई झगड़ों में फंसे रहते हैं, सुख से हाथ धो बैठते हैं, लोगों की फटकार सहते हैं, तिरस्कृत होते हैं, और कहां तक कहें ! मायाचारी अपने प्राण भी खो बैठते हैं । इसलिये चतुर श्रेष्ठ मनुष्य माया से सदा बचते ही रहते हैं ।।६०।।

प्रच्छादितोपि कपटेन जनेन दोषो, लोके प्रकाशमुपयातितरां क्षणेन ।
वर्चो यथा जलगतं विदधाति पुंसां, माया मनागपि न चेतसि संनिधेया ।।६२।।

(सु० र० सं०)

अर्थः—जिस प्रकार पानी में डुबोई गई विष्टा कुछ समय के बाद अवश्य ही ऊपर आकर प्रकट हो जाती है, उसी प्रकार कपटपूर्वक मनुष्य द्वारा छुपाया गया दोष भी संसार में किसी न किसी समय अवश्य ही प्रकट हो जाता है। अनेक प्रयत्नों के करने पर भी माया नहीं छिपती, वह अवश्य ही खुल जाती है । इसलिये मनुष्यों को चाहिये कि वे माया को सर्वथा छोड़ दें ।

(छप्पय)

जातिहीन कुलअंध, कुत्सित कुरूप नर, जराग्रसित कृशगात, गलितकुष्टी अरु पांडर ।
ऐसौ हू धनवान होय तो आदर बाको, अपनौ गात बिछाय, लेत रस सर्वस ताकौ ।।
गनिका विवेक की बेल कों, कदन करन वारी निरखि ।
वच रहे बड़े कुलवंत नर, रचत पचत मूरखि हरखि ।।८९।।

अर्थः—जो जन्मांध कुरूप बृद्धावस्था से शिथिल गंवार नीच जाति और कोढ़ी को भी अल्प द्रव्य की आशा से अपना सुन्दर शरीर समर्पण कर देती हैं, और जो विवेकरूपी कल्पलता के लिये छुरी के समान हैं, ऐसी वेश्याओं से रमण करने की कौन बुद्धिमान इच्छा करेगा ? ।।८९।।

(भर्तृ० शतक)

मत्तेभकुंभदलने भुवि संति सूरा। केचित् प्रचण्डमृगराजबधेऽपि दक्षाः ।।
किन्तु ब्रवीमि बलिना पुरतः प्रसह्य। कंदर्पदर्पदलने विरला मनुष्याः ।।५८।।

(भर्तृ० शतक)

(छप्पय)

हाथी मारनहार होत, ऐसे हू सूरे। मृगपति बध कर सकें, बकें नहिं नेकहु पूरे॥
बड़े--बड़े बलवन्त, वीर सब तिनके आगे। महाबली ये काम, जाहि देखत सब भागे॥

अभिमान भरे या मदन को, मान भार मेटे अवधि।
नर धरम--धुरंधर वीर वे, विरले या संसार मधि॥५८॥

अर्थः—मत्त हाथी के मस्तक को विदारने वाले शूर इस पृथ्वी पर अनेक हैं और प्रचण्ड सिंह को मारने वाले दक्ष योद्धा भी कितने ही हैं। परन्तु मैं बलवानों के आगे हठपूर्वक कहता हूँ कि कामदेव के मद का नाश करने वाला तो कोई विरला ही मनुष्य होता है। वे हैं वीतरागी दिगम्बर जैन साधु॥५८॥ (भर्तृ० शतक)

नारी में नवग्रह

गुरुणा स्तनभारेण, मुखचन्द्रेण भास्वता।
शनैश्चराभ्यां पादाभ्यां, रेजे ग्रहमयी वसा॥१६॥

(छप्पय)

केश राहु सम जान, चन्द्र सौ सोहत आनन। द्वादश में द्वै अर्क, नैन केतुहि अलकानन॥
मन्दहास है शुक्र, बुधै बानी कहि जानों। सुर गुर जान उरोज, कर्ण मंगलहि बखानों॥

अति मन्द चाल सोइ शनैश्चर, महा मनोहर युवति यह।
तेहि सब फलदायक देखियत, जाकों सेवत नवग्रह॥१६॥

(भर्तृ० शतक)

(दोहा)

नव युवती के भाल पर, लगी हुई सिन्दूर।
यारो खतरा है यहाँ, रहना इससे दूर॥

अर्थः—(१) केश–राहु (२) मुख--चन्द्रमा (३) भोंह–केतु (४) मधुर हास्य–शुक्र (५) वाणी--बुध (६) कान–मंगल (७) अति मन्द चाल–शनैश्चर (८) उरोज–गुरु (९) नेत्र–सूय। यह नव ग्रह नारी में हैं।

आचार्य शुभचन्द्र कहते हैं:—(ज्ञानार्णव पृ० सं० २०९ श्लोक नं ६७ देखो)—

बकवृत्ति [illegible], वंचकैर्वञ्चितं जगत्।
कौटिल्यकुशलैः पापैः, प्रसन्नं कश्मलाश[illegible]ः॥६७॥

अर्थ—कुटिलता में चतुर ऐसे मलिनचित्त पापी ठग बगले के ध्यान की सी वृत्ति (क्रिया) का आलम्बन कर इस जगत को ठगते रहते हैं। बगले की वृत्ति लोकप्रसिद्ध है। बगला जल में समस्त अंगों को संकोच कर एक पांव से खड़ा रह कर ध्यानमग्न हो जाता है। यदि मछलियां उसे कमलपुष्पवत् समझ उसके निकट आ जाती हैं तो वह तत्काल उन्हें उठाकर खा जाता है। इसी प्रकार मायावी की वृत्ति होती है। इस प्रकार माया कषाय का वर्णन किया ॥६७॥ (जो बाराह मुख में दबी है)

गले में रत्नहार क्यों ?

धैर्य-प्रशंसा—

ऐश्वर्यस्य विभूषणं सुजनता, शौर्यस्य वा संयमो ।
ज्ञानस्योपशमः श्रुतस्य विनयो, वित्तस्य पात्रे व्ययः ॥
अक्रोधस्तपसः क्षमा, प्रभवितुर्धर्मस्य निर्व्याजिता ।
सर्वेषामपि सर्वकारणमिदं, शीलं परं भूषणम् ॥८३॥
(भर्तृ० शतक)

(कुंडलियाँ)

मण्डन है ऐश्वर्य कौ, सज्जनता सन्मान। बाणी सज्जन शूरता, मण्डन धन कौ दान ॥
मण्डन धनकौ दान, ज्ञानमण्डन इन्द्री दम। तपमण्डन अक्रोध, विनयमण्डन सोहत सम ॥
प्रभुतामण्डन क्षमा, धर्ममण्डन छल खण्डन। सबहिन में सर्दार, शीलता सबको मण्डन ॥८३॥
(भर्तृ० शतक)

अर्थ—ऐश्वर्य का भूषण सज्जनता है। अपनी वाणी को वश में रखना शूर की शूरता की शोभा है। ज्ञान की शोभा शान्ति से है। शास्त्र का विनय भूषण है। धन की शोभा सत्पात्र को दान देना है। तप की शोभा क्रोध न करना है। प्रभुत्व की शोभा क्षमा करना है। धर्म का भूषण निष्कपटता है। और अन्य सब गुणों का श्रेष्ठ भूषण और कारण शील है ॥८३॥

(छप्पय)

नीतिनिपुण नर धीर, वीर कछु सुयश करौ किन ।
अथवा निन्दा कोटि कहौ, दुर्वचन छिनहिं छिन ॥
सम्पत्ति हू चलि जाउ, रहौ अथवा अगणित धन ।
अबहिं मृतक किन होउ, अथवा निश्चल तन ॥
पर न्यायपथ कौं तजत नहिं, बुधि विवेक गुणवान निधि ।
वे संग सहायक रहत नित, देत लोक परलोक निधि ॥८४॥

अर्थ—नीतिविशारद मनुष्य चाहे निन्दा करें चाहे प्रशंसा, लक्ष्मी चाहे आवे चाहे चली जाय, मृत्यु अभी आ जाये और चाहे युग के अन्त में हो, परन्तु धैर्यवान पुरुष न्याय के मार्ग से एक पग भी नहीं हटते ।।८४।।

दैव प्रशंसा—(दोहा)

फल हू पावत कर्म तें, बुद्धिहु कर्म अधीन ।
तद्यपि बुद्धि विचारिकें, कारज करौ प्रवीन ।।

अर्थ—यद्यपि मनुष्यों को उनके कर्मानुसार फल मिलता है और बुद्धि भी कर्म के ही अनुसार हो जाती है । तद्यपि बुद्धिमानों को उचित है कि कार्य को विचार के करें। (भर्तृ० शतक)

संसार में कोई सुखी नहीं है

या संसार में कोई सुखी नजर नहीं आया ।।
कोई दुखिया निर्धनी दीन बचन मुख बोले ।
भ्रमत फिरै परदेशन में, धन की चाह में डोलै ।।१।।
दौलत के कोठरा भरे हैं, तन में रोग समाया ।
निश दिन कडुवी खात दवाई, कही करत नहीं काया ।।२।।
तन निरोग अरु धन बहुतेरा, फिर भी सुख को रोता ।
पूजत फिरै कुदेव जगत के, तदपि पुत्र नहिं होता ।।३।।
तन निरोग धन पुत्र पाय के, फिर भी रहा दुखारी ।
पुत्र नहीं आज्ञा को मानें, घर में कर्कशा नारी ।।४।।
तन धन और सुलक्षण नारी, सुत है आज्ञाकारी ।
फिर भी दुखिया रहा जगत में, भयो न छत्राधारी ।।५।।
चक्रपती भये छत्रपती भये, फिर नारी संग मोहे ।
आशा तृष्णा घटी न जिसकी, फिर भी सुख को रोये ।।६।।
जगनलाल वही है सुखिया, जो इच्छा का त्यागी ।
राग द्वेष तज सकल परिग्रह, भये परम बैरागी ।।७।।

रक्षाबन्धन क्यों ?

हिन्दूधर्म ग्रन्थों में बताया है कि भगवान विष्णु ने बाराह रूप धारण कर पृथ्वी का उद्धार किया था । किन्तु हमें यहां पर जैन दृष्टिकोण से समझना है कि भगवान विष्णु कौन हैं ? वह हैं विष्णुकुमार मुनि, जिन्होंने ७०० मुनियों की रक्षा की थी और बलि को छला था। तीन पग भूमि दान में बामनरूप धारण कर ली थी । मुनियों की रक्षा हुई थी। इसके उपलक्ष में जैनों में रक्षा-बंधन का त्योहार मनाया जाता है। और अपवित्र यज्ञ का विध्वंस किया गया था, उसके उपलक्ष में भुंजरियाँ देकर वर्ष भर के अपराधों की क्षमा-याचना की जाती है । जो विष्णु भगवान के पैर

के नीचे सर्प पर बैठे हैं वह बलि (बलवान क्रोध) है और बलि के पीछे उसके अभिमान (अहंकार) की मूर्ति है और उसके पीछे वलि का लोभ है, जिस पर भगवान विष्णु ने बलिराज की समस्त बदले की भावना को धूल में मिलाया था।

बदले की नहिं आस रख, संत करें उपकार।
बादल का बदला भला, क्या देता संसार॥

विष्णुकुमार मुनि की परम्परा का परिचयः—

कुरुजांगल देश में हस्तिनागपुर के महाराजा महापद्म के दो पुत्र थे। बड़े पुत्र का नाम पद्म और छोटे का नाम विष्णुकुमार था। महापद्म संसार की असारता जान अपने बड़े पुत्र पद्म-राय को राज देकर वैरागी हो गये। साथ में विष्णुकुमार ने भी योग ले लिया। यह धरणीधर पर्वत पर तपस्या कर रहे थे। उस समय उन्हें विक्रिया ऋद्धि सिद्ध हुई थी, जिससे यह अपना शरीर छोटा और बड़ा बना सकते थे। किन्तु इन्हें इस बात का पता न था। क्योंकि इन्हें इस बात से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं करना था।

उज्जैन नगर के वनखण्ड में अकम्पनाचार्यादि ७०० ऋषि-मुनिगण का संघ आकर ठहरा। उन मुनियों के दर्शनार्थ प्रजा को बन की ओर जाते देख उनके राजा श्रीवर्मा ने अपने मंत्री बृहस्पति, प्रह्लाद, नमुचि और बलि से पूछा कि यह प्रजा कहां पर जा रही है?

मंत्रियों ने उत्तर दिया कि बन में कुछ ढोंगी साधु आयु हैं, उनके दर्शनों को जा रही है। राजा ने कहा कि मैं भी वहां जाऊंगा। तो उन मंत्रियों ने उन्हें वहां जाने से रोका, किन्तु राजा ने एक भी न सुनी और जाने को तैयार हो गये। बिवश होकर पीछे पीछे मंत्री भी जाने लगे।

मुनिगणों को यह बात अवधिज्ञान से मालूम हो गई कि मंत्रिगण धर्मद्वेषी, निर्दयी और घातक उपसर्गकारी हैं। इसलिये समस्त साधुओं को राजा के साथ मंत्रियों के आने की बात कह सुनाई और सब को मौन दे दिया। जब राजा दर्शनों को आया तो सब को ध्यानस्थ पाया। किसी भी मुनि ने बात नहीं की और न आशीर्वाद दिया।

सम्पूर्ण साधुसमाज को मौन सहित देख जब राजा वापिस जा रहे थे तो मंत्रियों ने अनेकों प्रकार की निन्दायें कीं, किन्तु राजा सुनता गया। जब यह मार्ग में जा रहे थे तो एक श्रुतसागर मुनि जिन्होंने गुरु-आज्ञा नहीं सुन पाई थी, जो भिक्षा के अर्थ नगर में आये थे, राजा और मन्त्री-गण को भिक्षा लेकर लौटते समय मुनि को बीच मार्ग में, मंत्रियों ने रोक कर बाद-विवाद छेड़ दिया। किन्तु मुनि ने अमृतमयी वाणी और स्याद्वाद के बल पर विजय पाई। मंत्रिगण का सिर नीचा हो गया। बलि की पराजय का बृत्तान्त गुरु से जा कर जब मुनि ने सुनाया तो आचार्य कहते हैं—होनहार कोई टाल नहीं सकता। कहा भी है—

कैसे कैसे बलि भूप भूपर विख्यात भये। बैरीकुल कांपें नेकु, भोंहों के विकार सों॥
लंघे गिरि सायर, दिवाकर से दिपें जनों। कायर किये हैं भट कोटिन हुंकार सों॥

ऐसे महा मानी मौत आये हू न हार मानी। त्यों ही उतरे न कभी मान के पहार सों ।।
देव सों न हारे, पुनि दाने सों न हारे। काहू सों न हारे, एक हारे होनहार सों ।।

अतएव विजयी श्रुतसागर मुनि को आचार्य ने आज्ञा दी कि तुम उसी स्थान पर जाकर भूरक्षक देव से तीन पग भूमि की याचना कर ध्यानस्थ हो जाना । जो उपसर्ग आये उसे शान्तिपूर्वक सहना । अन्यथा समस्त संघ पर भीषण संकट आवेगा । इस प्रकार आज्ञा दे श्रुतसागर मुनि को पुनः बादस्थल पर वापिस कर दिया । श्रुतसागर मुनि गुरु-आज्ञा स्वीकार कर उसी स्थान पर जाकर ध्यानस्थ हो गये ।

श्रुतसागर मुनि पर उपसर्ग

इधर सचिव गण अपनी पराजय की भावना लेकर मध्य अंधेरी रात्रि में उसी दिन विना सोचे समझे खड्ग लेकर मुनियों को मारने चल पड़े। और जहां पर उन्हें पराजय जिनके द्वारा मिली थी उन्हें देख चारों ओर से घेर कर प्रहार करने को उद्यत हुए ही थे कि वनरक्षक देव वहां से इनके उपसर्ग को देख कर रुका और समस्त कारण अपने अवधिज्ञान से जान कर प्रहार करते हुए मुद्रा में उन्हें वहीं कील दिया। रजनी समाप्त हुई और भानु का उदय हुआ। नगरवासियों ने मुनिके उपसर्ग को देखा। नगर में मंत्रियों के दुष्कृत्य की चर्चा, बात की बात में फैल गई। और जब राजा ने सुना तो राजा भी वहां तत्काल ही आया और वह सब देखा।

राजा को वहां उपस्थित देख वनरक्षक देव ने क्रोधित होकर उन की निन्दा की। इस पर राजा ने यक्ष से क्षमायाचना की और कहा कि मैं इन्हें कठोर दण्ड दूंगा । किन्तु वनदेवता इतना क्रुद्ध था कि उन्हें प्राणदण्ड दे रहा था । लेकिन दयासागर परम तपस्वी श्रुतसागर महाराज ने जीवन-दान देकर उन मंत्रियों को छुड़वा दिया ।

राजनीति के अनुसार राजा ने उन मंत्रियों का काला मुख करा कर गधे पर बिठा कर नगर में फिराया और उनका धन माल शासन के कोष में ले लिया। पश्चात् देशनिकाला दे दिया। अनुचित क्षमा की छत्रछाया में अपराध पनपते हैं ।

मंत्रीगण देशनिकाले के बाद मंत्री कैसे बने ?

यह मंत्रीगण उज्जैन नगर से देश निकाले के पश्चात् नगरों में भ्रमण करते हुए हस्तिनागपुर पहुंचे। वहां राजा को ब्राह्मण होने और विद्वान होने के नाते आशीर्वाद दिया। राजा ने इनकी विद्वत्ता को देख कर आश्रय दिया और अपनी सभा का सभासद बना लिया। एक दिन राजा चिन्तातुर बैठा था। इन मंत्रियों ने चिन्ता का कारण पूछा तो कहा कि हमारे अधीनस्थ रहने वाला राजा सिंहबल विपरीत हो गया है। यह सुनकर बलि ने कहा, यदि आप आज्ञा दें तो मैं उसे बात की बात में बांध कर ला सकता हूं । राजाज्ञा पाते ही मंत्रीगण छल कर सिंहबल को बांध कर ले आये और राजा के सन्मुख खड़ा कर दिया । एक राजा दूसरे राजा के साथ जो सद्व्यवहार करते हैं, उसी प्रकार से राजा सिंहबल का सन्मान किया, जिससे वह शत्रु न बनकर मित्र ही बना रहा ।

इस चातुर्य के कारण राजा ने इन्हें इच्छित वर मांगने के लिये कहा, तो इन चतुर

मंत्रियों ने तत्काल कह दिया कि वचन भंडार रखिये, जब आवश्यक्ता होगी ले लेंगे। पद्मराय ने 'तथास्तु' कह वचन भंडार में रखा।

कुछ दिन भ्रमण करते हुए मुनिराज अकंपनाचार्यादि का संघ हस्तनागपुर के उद्यान में पहुंचा। यह संवाद उन धूर्त मंत्रियों को ज्ञात होते ही उन्हें यह संदेह हो गया कि हमारी धूर्तता का समस्त भेद इन साधुओं से खुल जायगा इस कारण हम पर संकट आना कोई दुर्लभ न होगा। ऐसा विचार कर उन मंत्रियों ने अविवेकतापूर्ण निर्मम दया रहित नरमेध यज्ञ का विचार कर अपना जो वचन राजा के भंडार में था, मंत्रणा कर लेने का निश्चय किया।

बलि का नरमेध यज्ञ और मुनियों पर भारी विपत्ति

बलि ने मंत्रणा कर राजा पद्मराय से सात दिन के लिये राज्य की बागडोर अपने हाथ में लेने के लिये मांग की, किन्तु राजा को इस भेद का पता न लगा और न राजा ने कोई चिन्ता ही की। इसलिये कहा है:—

विना सोचे विना समझे, बशर जो काम करता है।
वह अपने हाथ से अपना, बुरा अंजाम करता है॥

राजा तो अपना वचन देकर वनवास में चला गया और मंत्रियों ने जहां कि ऋषि मुनियों का संघ था चारों ओर से कांटेदार बागड़ लगवा दी और राजा की अनुपस्थिति में निर्भय होकर नरमेध यज्ञ प्रारंभ कर दिया। जिसमें मृतकों के सड़े कलेवर, दुर्गन्धयुक्त वस्तुओं को तथा साधु उनके विरोध में आने वालों को उस यज्ञ में जबरन डालना प्रारंभ कर दिया। कहा है—

मेघहि बरसै तृन जरै, खेत बाढ़ को खाय।
भूप करै अन्याय तो, न्याय कौन पर जाय॥
गुलों का गुल लगे खाने, अरे सय्याद क्या करना।
जहां वे--दर्द हाकिम हो, वहां फरियाद क्या करना॥

क्रोधी मनुष्य आंखें होते हुए भी अन्धा होता है। यहां पर जैन साधुओं की परीक्षा का समय है। जो बलि ने उत्पात किये थे उन्हें उन धीर वीर ७०० मुनियों ने किस प्रकार सहन कर अपनी दया का परिचय दिया, आगे पढ़ेंगे।

यज्ञ के विषैले धुंआ से गगन-मंडल आच्छादित हो गया। मुनिगण ने सन्निकट मरण जान सभी मुनियों ने संकटकाल समाप्ति तक सन्यास ले लिया। इस हृदयविदारक घटना से पुरवासी अत्यंत दुखित और चिन्तित थे। जब राजा ही अन्याय करे और बागड़ ही खेत खाने लग जावे फिर कृषक क्या क्या उपाय करे! इस हेतु मुनियों की सहानुभूति में पुरवासियों ने भी अपने जीवन देने की ठान ली। इस प्रकार दिन तो समाप्त हुआ और निशा का आगमन हुआ। मुनियों की पुण्यवर्गणायें आकाश-मंडल में टकराने लगीं।

उसी समय उसी क्षण ध्रुवतारा भय से कांपने लगा। इस कांपते हुए ध्रुवतारे को मिथलापुर के उद्यान में अवधि ज्ञान और निमित्तज्ञान से परिपूरित सागरचन्द्र मुनिराज ने अवलोकन किया। और हस्तिनागपुर के भयानक उपसर्ग के कारण उनके मुख से हाय हाय का शब्द निकला। इस शब्द को पुष्पदन्त नामक मुनिराज ने सुन उन महाराज से पूछा कि गुरुदेव ! मुनिराज रात को नहीं बोलते, आपने हाय हाय क्यों कहा ? क्या कारण है ? तब सागरचन्द्र मुनिराज ने ७०० मुनिराज के उपसर्ग का बृतान्त कह सुनाया और कहा कि इस उपसर्ग का निवारण यदि कर सकते हैं तो केवल विष्णुकुमार मुनि, जो धरणीधर पर्वत पर तपस्या कर रहे हैं। उन्हें विक्रिया ऋद्धि प्राप्त है।

विष्णुकुमार मुनि का बामनरूप

पुष्पदन्त मुनिराज गुरु सागरचन्द्र जी से शीघ्र ही आज्ञा लेकर विष्णुकुमार मुनि जहां तपस्या कर रहे थे चल दिये और जाकर विष्णुकुमार जी मुनि से मुनि सागरचन्द्र जी से सुना सब बृतान्त कह सुनाया। ७०० मुनियों के उपसर्ग की बात सुन कर तत्काल विक्रिया ऋद्धि की परीक्षार्थ हाथ लंबा कर दिया। जब हाथ लम्बा होता चला गया तो समझ लिया कि वास्तव में इस उपसर्ग पर विजय मिल सकती है। तब विष्णुकुमार मुनि हस्तिनागपुर में आकर अपने बड़े भाई पद्मराय के पास गये और इस निन्दित कार्य की आलोचना की और बताया कि जिस क्षत्रिय कुल में श्रेयांस जैसे दानी हुए वहां तुमने इस निन्दित कार्य को राज्य का दान दिया और वह भी सात दिन का हिंसक यज्ञ रचवा दिया। जगत्वन्द्य मुनिराजों पर उपसर्ग कराया और कुल में कलंक लगाया। यद्यपि यह कार्य मुनिपद के अनुकूल नहीं था, परन्तु और कोई उपाय भी न था। उस वक्त पद्मराय विष्णुकुमार से क्षमा याचना करने लगे। अपनी विवशता उनके समक्ष रख दी। और प्रार्थना की कि आप इसका उपाय कीजिये।

भगवान विष्णुकुमार मुनि ने अपनी वैक्रियक ऋद्धि से वामन रूप सुन्दर शरीर बनाकर, मस्तक पर तिलक लगा कर, बगल में वेद दाब कर, भिक्षापात्र हाथ में लेकर मंत्रोच्चारण करते हुए उस यज्ञभूमि की ओर चल दिये। राजा बलिराज अपने चारों भाइयों के साथ बैठे मानवों को यज्ञमें जीवित होम रहा था और उधर चीत्कार हो रहा था। उसके साथ में एक पशु ने कहा:—

(कवित्त)

कहै पशु दीन सुन यज्ञ के करैया मोहि, होमत हुताशन में कौन सी बड़ाई है ?
स्वर्ग सुखमैं न चहों, देहु मुझे यों न कहों, घास खाय रहों मेरे, यही मन भाई है ॥

जो तू यह जानत है, वेद यों बखानत है; यज्ञ जलौ जीव पावे स्वर्ग सुख-दाई है ।
डारै क्यों न वीर यामें, अपने ही कुटुम्ब ही कों, मोहि जिन जारै, जगदीश की दुहाई है ॥

(भूधर शतक)

जब वामन अवतार भगवान विष्णुकुमार मुनि को आते और मंत्रोच्चारण करते हुये देखा तो बलि आकर उठ खड़ा हुआ। उसी समय विष्णुकुमार ने आशीर्वादात्मक श्लोक सुना दिया। इस

समय हर्षित होकर राजा बलि ने कहा भगवन् जो चाहो सो दूं। तब मुनिराज कहने लगे अरे बलि! तू क्या देगा? तेरे पास क्या है? और क्या दे सकता है? इस पर बलि ने दान का हठ किया कि नहीं भगवन् जो चाहो वही दूंगा। यों दान देने को आतुर देख कहा मैं एक कुटिया के लिये तीन पग भूमि, वह भी अपने ही पग से चाहता हूं, क्या दे सकता है? तो बलि ने कहा महाराज! इससे क्या होगा? इस समय मैं राज्य--वैभव तक दे सकता हूं। तो भगवान विष्णुकुमार जी दया के सागर ने केवल तीन पग भूमि की पुनः मांग की। इसके अलावा मुझे तेरे राज्य की कोई वस्तु नहीं चाहिये। तब बलिराज विचार करते हैं कि इससे मेरा कोई नुकसान नहीं। और प्रसन्नतापूर्वक देने को उत्सुक देखा तो तत्काल ही उससे संकल्प कराया और जलधारा दिलाई और मंत्रोच्चारण के साथ यही पृथ्वी का दान विष्णुकुमार मुनि ने लिया। जो पृथ्वी भगवान विष्णु बाराह की मुखाकृति में खड़े हैं और मुख में माया रूपी नारी दबी है जिसे राजा बलि ने महाराजा पद्म से ७ दिन को दानवता के लिये ली थी। जो कमलनाभि पर दिखाई दे रही है। और वह कमलनाभि एक समुद्र में संलग्न है जो लक्ष्मी से संबंध रखती है। यह वही माया रूपी नारि है, जिसे मानव दांतों से पकड़ता है, अपने सांसारिक सुखों के लिये।

विष्णुकुमार मुनि की चमत्कारिक माया

चमत्कारिक आशीर्वादात्मक श्लोक सुन कर बलि इस बात पर प्रसन्न हुआ कि मेरे मनोरथ की सिद्धि के लिये भगवान विष्णु ने सचमुच अवतार लिया है, मेरे मनोरथ सिद्ध हो गये।

देखिये, यह हमें क्या शिक्षा देता है! आपके समक्ष छल-कपट-गर्व है, इनका परित्याग करो। जिस प्रकार बलि ने महाराजा पद्म को छल कर सातदिन का राज्य लिया और आतंक ढा दिया। उसका बदला उन्हें विष्णु भगवान ने किस प्रकार दिया। इस हाथ करलो और इस हाथ देखलो।

भगवान विष्णुकुमार मुनि ने अपनी विक्रिया ऋद्धि के द्वारा शरीर को बढ़ाया और एक पैर सुमेरु पर्वत पर रख दिया और दूसरा पैर मानुषोत्तर पर्वत पर। जब तीसरे पैर रखने को कोई भूमि न रही तब बलि से कहा कि:-अब बताओ कि तीसरा पैर कहाँ रखूं! तब बलि राजा उनके इस माया से चकित हो उठा और काँपने लगा। उस समय क्रोधित होकर विष्णुकुमार ने तीसरा पैर बलि जहां बैठा था उसके ऊपर रख दिया। उस समय उसे हाथ जोड़ क्षमा याचना करना पड़ी। इसी आशय का चित्र उदयगिरि की गुफा नं० ५ में उत्कीर्ण है। कहा है:—

जवर मिलो जब सतायो, नवल मिलो तें खायो।

बलि के सिर पर जो सर्प की घटाटोप फणावलो है वह दवदबे की प्रतीक है। क्रोध का संकेत सर्प से है। क्रोध करने से सर्वस्व नष्ट हो जाता है। तीन चीजें तीन चीजों के बगैर नहीं ठहरतीं।

(१) इलम बगैर बहस के (२) हुकूमत बगैर दबदबे के। और (३) माल बगैर तिजारत के।

प्रसंग वश:—

क्या बलि जैसी प्रवृत्ति वर्तमान भारत के शासकों की नहीं है? इसका प्रत्यक्ष प्रमाण विदिशा के पुरातत्व विभाग का संरक्षित क्षेत्र था। उसका विनाश हो गया है। अधिकारीगण

मूर्तियाँ उठाकर ले गये। जिसके सम्बन्ध में "विदिशा के पुरातत्व का भयंकर विनाश" नामक सूचनापत्र दिनांक ७--८--६२ श्रावण शुल्ल ७ वि० सं० २०१९ को छपाकर वितरण किया गया था। क्या इस स्वतन्त्र भारत में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो इस ओर लक्ष देता? इसका उत्तरदायित्व मध्य प्रदेश सरकार और पुरातत्व विभाग पर नहीं तो किस पर है ? लेखक चाहता था विदिशा के पुरातत्व का संरक्षण।

राजा बलि के पीछे जो मूर्ति अभिमानयुक्त बताई है वह बलिका अभिमान है कि मेरे समान कोई प्रतापी, शूर, वीर, चतुर, प्रकांड नीतिज्ञ नहीं है, जो हूँ वह मैं ही हूँ। उसका स्वप्न समाप्त हो गया। और जो इसके पीछे खड़ी मूर्ति बताई है वह है बलि के लोभ की। भगवत् जिनसेनाचार्य कहते हैं:—

अध्येति नृत्यति लुनाति मनोति नौति,
क्रीड़ाति हृंति वपते चुनेति विभेति।
पुष्णाति गायति धिनोति विभर्ति भिते,
लोभेन सीव्यति पणायति याचते च ॥७२॥

(सु० र० सं०)

अर्थ:—मनुष्य लोभ से, द्रव्य कमाने की इच्छा से, पढ़ता है, नाचता है, काटता है, तौलता है, नापता है, स्तुति करता है, खरीदता-बेचता है, क्रय विक्रय करता है, जीव मारता है, बीज बोता है, फूल आदि चुनता है, भय खाता है, चीजें चुराता है, गाना गाता है, कर्जा लेता है, अन्य का पोषण करता है, भेदन करता है, कपड़े सीता है, जुआ खेलता है, और भीख माँगता है ॥७२॥

तथा

लोभात्क्रोधः प्रभवति, लोभात्कामः प्रजायते।
लोभान्मोहश्च नाशश्च, लोभः पापस्य कारणम् ॥

अर्थ:—लोभ से क्रोध, लोभ से काम, लोभ से मोह और लोभ ही से नाश होता है। अतएव लोभ ही पाप का कारण है।

हिंसा चोरी झूठ अरु, क्रोधादिक जे पाप।
सो सब उपजत लोभ से, लोभ पाप का बाप ॥

या से लोभ न कीजिये, धरो हृदय संतोष।
संतोषी जग में सुखी, सर्व गुणों का कोष ॥
करो भलाई सबहि से, या से जग यश होइ।
जाके जग में मित्र बहु, सुखी सदा नर सोइ ॥
धर्म-नाव भवसिंधु से, काढ़न को लख सार।
तामें दृढ़ आसन करो, तो पाओ भव पार ॥

पहिले तिस के दोष गुण, लखि के होउ सवार।
नाहीं तो भवसिन्धु के, डूबोगे मझधार ॥
छिद्र रहित दृढ़तर घनी, हल्की बहु विस्तार।
खेवट होना पर चतुर, तब हो नौका पार ॥

मान कषाय के सम्बन्ध में आचार्य शुभचन्द्र ने योगिराज भर्तृहरि को समझाने के लिये ज्ञानार्णव ग्रन्थ की रचना की थी। उसके पृष्ठ संख्या ४८ से ५३ तक का उदाहरण यहां देते हैं।

कुलजातीश्वरत्वादिमदविध्वस्तबुद्धिभिः ।
सद्यः संचीयते कर्म नीचैर्गतिनिबन्धनम् ॥४८॥

अर्थः—कुल, जाति, ऐश्वर्य, रूप, तप, बल, विद्या और धन, इन आठ भेदों से जिनकी बुद्धि बिगड़ गई है, अर्थात् मान करते हैं वे तत्काल नीच गति के कारण कर्म को संचय करते हैं। अर्थात् कोई ऐसा समझे कि मान करने से मैं ऊंचा कहलाऊंगा सो इस लोक में मानी पुरुष ऊंचे तो नहीं होते किन्तु नीच गति को प्राप्त होते हैं।

मानग्रन्थिर्मनस्युच्चैर्यावदास्ते दृढ़स्तदा ।
तावद्विवेकमाणिक्यं प्राप्तमप्यपसर्पति ॥४९॥

अर्थ—हे मुने! जब तक तेरे मन में मान की गांठ अतिशय दृढ़ है तब तक तेरा विवेकरूपी रत्न प्राप्त हुआ भी चला जायगा। क्योंकि मान कषाय के सामने हेय उपादेय का ज्ञान नहीं रहता ॥४९॥

प्रोत्तुंगमानशैलाग्रवर्तिभिर्लुप्तबुद्धिभिः ।
क्रियते मार्गमुल्लंध्य पूज्यपूजाव्यतिक्रमः ॥५०॥

अर्थः—जो पुरुष अति ऊंचे मान पर्वत के अग्रभाग में (चोटी पर) रहते हैं वे नष्टबुद्धि हैं। ऐसे मानी समीचीन मार्ग का उल्लंघन करके पूज्य पुरुषों की पूजा (प्रतिष्ठा) का लोप कर देते हैं। भावार्थः—मानी पुरुष पूज्य पुरुषों का भी अपमान करने में शंकित नहीं होते ॥५०॥

लुप्यते मानतः पुंसां विवेकामललोचनम् ।
प्रच्यवन्ते ततः शीघ्रं शीलशैलाग्रसंक्रमात् ॥५१॥

अर्थः—इस मान कषाय से पुरुषों के भेदज्ञानरूप निर्मल लोचन लोप हो जाते हैं। जिससे शीघ्र ही शील रूपी पर्वत के शिखर संक्रम (चलने) से डिग जाते हैं। क्योंकि विवेक जब नहीं रहा तो शील कहां? ॥५१॥

ज्ञानरत्नमपाकृत्य, गृहणात् यज्ञानपन्नगम् ।
गुरूनपि जनो मानी, विमानयति गर्वतः ॥५२॥

अर्थः—मानी पुरुष गर्व से अपने गुरु को भी अपमानित करता है, सो मानी ज्ञानरूपी रत्न को दूर करके अज्ञान रूपी सर्प को ग्रहण करता है ।।५२।।

करोत्युद्धतधीर्मानाद्विनयाचारलंघनम् ।
विराध्याराध्यसंतानं स्वेच्छाचारेण वर्तते ।।५३।।

अर्थः—मान से उद्धतबुद्धि पुरुष गर्व से विनयाचार का उल्लंघन करता है और पूज्य गुरुओं की परिपाटी (पद्धति) को छोड़ कर स्वेच्छाचार से प्रवर्तने लग जाता है ।।५३।।

लोभ कषाय के विषय में भगवत् जिनसेनाचार्य कृत सुभाषित रत्न संदोह के पृष्ठ संख्या २१ श्लोक संख्या ६४--६५ व ८१ और ८२ का उदाहरण यहां दे रहे हैं ।

लोभ दूर करने का उपदेश

शीतो रविर्भवति शीतरुचिः प्रतापी, स्तब्धं नभो जलनिधिः सरिदंबुतृप्तः ।
स्थायी मरुच्च दहनोऽदहनोपि जातु, लोभानलस्तु न कदाचिददाहकः स्यात् ।।६३।।

अर्थः—संसार में स्थायी पदार्थ हैं वे चाहे अस्थाई हो जांय, सूर्य अपनी उष्णता छोड़ ठंडा बन जाय, चन्द्रमा शीतलता को त्याग दे, आकाश स्तब्ध होजाय, समुद्र नदियों से तृप्त हो अपनी मर्यादा छोड़दे, पवन अपना बहना बन्द करले; और अग्नि भी (दहन) जलाना बन्द कर शान्त हो बैठ जाय, परन्तु यह लोभरूपी अग्नि कभी भी शान्तिदायक नहीं हो सकती, । भावार्थः—ऊपर कही गई असंभव बातें चाहे एक समय संभव हो जांय परन्तु लोभ से कभी भी शान्ति-सुख नहीं मिल सकता ।।६३।।

वित्ताशयः खनति भूमितलं सतृष्णो, धातून् गिरेर्धमति धावति भूमिपाग्रे ।
देशांतराणि विविधानि विगाहते च, पुण्यं विना न च नरो लभते स तृप्तिं ।।६५।।

अर्थः—मनुष्य धन की आशा से पृथ्वी को खोदता है। पर्वत की धातुओं को फूंकता है। राजा के आगे आगे दौड़ता है । और नाना देशों विदेशों में परिभ्रमण करता फिरता है । परन्तु बिना पुण्य के कहीं भी तृप्त नहीं होता। अर्थात् पुण्य के प्रभाव से तो घर बैठे ही नाना संपत्तियां आ जाती हैं । और उसके अभाव में कहीं भी जाने से वे नहीं मिल सकतीं। इसलिये धनकी आशा छोड़ कर पुण्य का ही उपार्जन करना योग्य है ।।६५।।

लोभं विधाय विधिना बहुधापि पुंसः, संचिन्वतः क्षयमनित्यतया प्रयांति ।
द्रव्याण्यवश्यमिति चेतसि संनिरूप्य, लोभं त्यजंति सुधियो धुतमोहनीयाः ।।८१।।

अर्थः—लोभ के वश हो नाना उपायों द्वारा उपार्जन किया गया भी द्रव्य अनित्य होने से अवश्य ही एक न एक दिन नष्ट हो जाता है। इसलिये मोह के फंद से बचने वाले लोग सर्वदा लोभ से दूर रहने का ही प्रयत्न करते हैं ।।८१।।

राज्यलिप्सा के दूर करने के लिये अचार्य भद्रबाहु स्वामी ने चन्द्रगुप्त मौर्य को जिनदीक्षा दी। यह अग्रवाल जाति के इतिहास पृष्ठ सं० ११७ से स्पष्ट हो जाता है कि जैन पुस्तकों में दो लोहाचार्यों का उल्लेख आता है। और लेखक महोदय श्री प्रोफेसर सत्यकेतु विद्यालंकार जी ने जो यह अग्रवाल जाति का इतिहास पहिला संस्करण जो सन् १९३८ देहली कर्मशियल प्रेस चांदनी चौक देहली से प्रकाशित कराया है, लिखा है कि अनुश्रुतियों का प्रमाण जैन ग्रन्थों में ढूंढना सुगम नहीं है। यह बात असत्य है। जो साहित्य जैन ग्रन्थों में प्राप्त है किसी ने विद्वेष की भावनाओं के कारण उठाकर नहीं देखा। और यदि देखा भी है तो उसे छुपाने की कोशिश तो की किन्तु प्रकाश में लाने की कोशिश नहीं की।

जैसा कि "विदिशा का प्राचीन वैभव" के लेखक राजमल मड़वैया के साथ जाति-- विद्वेष के कारण अमल में लाया गया और उसका परिणाम साहित्य का विनाश, राज्य को वस्तु संग्रह प्राप्त न होना, क्षेत्रीय क्या पूर्व में महत्व रहना, पर्यटक, विद्वान, लेखक, विद्यार्थी आदि को पुरातत्वीय सामग्री का उपलब्ध न होना। विनाशकर्त्ताओं को क्या इस वैममनस्यता के कारण प्रोत्साहन नहीं मिला ? हमें यह प्रसन्नता और गौरव की बात है कि इस बैमनस्यता का स्पष्टीकरण करने का सौभाग्य उपरोक्त कथित महानुभाओं ने दिया, जिसके अत्यन्त आभारी हैं। विदिशा नगर को नगरपालिका और उसके पार्षदगण, जिलाध्यक्ष, पुलिस विभाग, प्रान्तीय और केन्द्रीय आदि सभी संरक्षक को विनाशकर्ता बताते हैं। न कभी संरक्षक से आकर पूछा, न पत्रव्यवहार देखा, न मार्गदर्शक पुस्तिका का अवलोकन किया, जिस ने देश विदेश के यात्रियों को मार्गदर्शन कराया गया। शासन को वस्तुयें अर्पित की गई। और आज भी किले की दीवाल में जो सामग्री प्राप्त हो रही है पुरातत्व विभाग के अधिकारी नहीं देख रहे हैं। जो विभाग की संरक्षित सम्पत्ति है। जिस शासनकाल में इस प्रकार के शासक हों वहां उन्नति कैसे हो सकती है ? जिस में न्याय का नाम भी नहीं, चारों ओर भ्रष्टाचार और पक्षपात हो, उसमें धर्म और सांस्कृतिक निधियों का उत्थान होना कभी भी संभव नहीं। विशेष विदिशा का इतिहास आगे देवेंगे।

यह आपको पूर्व में ऊपर बता ही दिया है कि विष्णुकुमार मुनि ने अपनी योगमाया अर्थात् विक्रियाऋद्धि से तीन पग से समस्त भूमि को नाप लिया और जो उसके हृदय में कपट के मैले का कोटा था इस पृथ्वी का उद्धार किया और उस नरमेध यज्ञ को विध्वंस करने से नगर में हल-चल मच गई। जो बाराहरूप विष्णु भगवान के गले में बड़ी मोटी माला डली है वह देव और नगरवासियों ने यज्ञ–विध्वंस और ७०० ऋषि–मुनियों के रक्षा की प्रन्नता में ही पहिनाई थी। ठीक इसी प्रकार उन भद्रबाहु स्वामी ने सम्राट चन्द्रगुप्त के मनोविकार को जीत लेने पर चन्द्रगुप्त के विकारभाव को त्याग देने पर नगरवासियों ने यह विजयमाल पहिनाई थी। जिस

कारण से जनता में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई थी। और जय--जयकार हुये थे। संग्राम नष्ट हुआ था। संग्राम भी एक प्रकार का यज्ञ है। जिस पर विजय पाना इन परम तपस्वियों का ही काम है और यही नरसिंह भगवान हैं जो मनुष्य-पर्याय में काम, क्रोध, मान, माया और लोभ पर बिजय पा लेते हैं।

आप यह भली प्रकार जानते हैं कि जब ऋषियों को बलि ने त्रसित किया था तो ऐसा कौनसा हृदय होगा जिसके लिये दुःख न हुआ हो ? और दानववृत्ति पापात्मा के प्रति घृणा और ईर्षा न हुई हो ? उस समय क्या क्या पश्चाताप न हुए होंगे ! स्वयं पर ही अनुभव कर देखें कि अपना एक पैसे का नुकसान होता है तो नेत्रों में पानी आ जाता है। नेत्र के पलक वरोनी हैं जो वरुण देव हैं और नेत्र कलश हैं जो मनुष्याकृति में समुद्र में खड़े दिखाई बताये गये हैं।

क्या वह पवित्रात्मा भगवान नहीं जो दूसरों की भलाई के लिये तपस्या को भी त्याग कर जीवनदान दे ? वह बंदनीय नहीं है तो कौन है ? ऐसे परोपकारी भगवान विष्णुकुमार मुनि को मेरी बंदना है।

मुनियों के उपसर्ग को दूर करने की बात नगरवासियों ने राजा पद्मराय को जाकर कही। नगर के निवासी श्रावक और श्राविकाओं ने यथायोग्य गुरुओं की सेवा सुश्रुषा की और आहार का दान दिया। हम आजकल दीवारों पर मुनियों के कल्पित चित्र बनाते हैं, पूजन करते हैं। यह परंपरा चली आ रही है।

गुरुओं की उदारता : बलि को जीवनदान

राजा पद्मराय को भगवान विष्णुकुमार मुनि ने बलि के उपसर्ग के संबंध में जो कहा था वह पूर्व में बता दिया जा चुका है। इस पर राजन् को बड़ा भारी हृदय में रोष है। इस कारण आचार्य के समक्ष जाकर कहा–गुरुदेव ! इस बलि ने आपको जो कष्ट दिया इसे कौनसा कठोर दण्ड दिया जावे ? यह सुन उन क्षमाभूषण योगिराज ने कहा कि यह तो हमारे पूर्वोपार्जित कर्मों का दोष था। प्राणि अपने कर्मानुसार सुख और दुख भोगता है; इसी का नाम संसार है। राजन् ! इसे क्षमा कर दीजिये। इस प्रकार दयामयी अमृतरूप वाणी सुन कर, एक आश्चर्यकारी बात सुन कर बलि-राज ने अपने अपराधों की क्षमा याचना के लिये प्रार्थना की। जो शेषनाग पर बैठे हाथ जोड़ रहे हैं। यही भाव इस प्रतिमा में छुपे हैं।

इस प्रकार से प्रजा ने सुना तो कौने कौने से जयध्वनि निकलने लगी। नगर में बंदनवार बांधे गये, जो आज श्रावण मास में रक्षाबंधन के समय बांधे जाते हैं। मुनि–रक्षा हुई इसका सूत्र बांधा जाता है। जो यज्ञ में धान बोया गया था वह ऊग आने से भुंजरियाँ पैदा होगई थीं। यज्ञ विध्वंस होने से वह जनता ने उखाड़ लीं और आपस में ले ले कर क्षमा याचना करने लगे। आज भी वह परंपरा चालू है।

इसी प्रकार चंद्रगुप्त को आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने बलवान होने के नाते और चंद्रगुप्त के दुष्कृत्यों को उदाहरण देकर संबोधन कर यह बताया कि 'क्षमा वीरस्य भूषणाम्'। इसलिये हे राजन् ! काम, क्रोध, मान, माया और लोभ ही पतन की ओर ले जाने वाले हैं। यह समन्वय इस प्रतिमा में छुपा है।

पाठकगण यह विचार करते होंगे कि इन वरुण देव के पीछे दो नदियां क्यों बताई हैं ? उनका स्पष्टीकरण यह है कि:—

मानव का शरीर समुद्र है। जिस प्रकार समुद्र में तूफान आते हैं उसी प्रकार से आपत्तियों के तूफान आते हैं। जिस प्रकार बलि ने मुनिराजों पर आक्रमण तूफान उपस्थित किया था, जिससे दयालु सज्जनों के पुत्रों में दुखों के कारण अश्रु भर आये थे, जिनका संकेत वरुणदेव से मिला। और जब अश्रुओं का बेग हुआ तो यह दोनों ही नेत्र गंगा यमुना के रूप में दिखाई बताये हैं। जो एक मगर पर है वह गंगा और जो कछुवे पर है वह यमुना का संकेत है। जो इस संसार-सागर में दुख और सुख के रूप में समा जाती है। इस लिये कहा है:—

सर्परूप संसार है, नवलरूप नर जान ।
संत बूटि संयोग तें, होत अही--विष--हान ।।

अर्थ:—यह संसार सर्प के समान है और मनुष्य नवले के समान ।

भावार्थ:—जिस प्रकार से न्योला सर्प का भक्षण कर लेता है उसी प्रकार से आध्यात्मिक ज्ञानी पुरुष क्रोध रूपी सर्प को ज्ञान से क्षय कर देते हैं। इसी प्रकार भगवान विष्णु ने अपने ज्ञान से बलि के क्रोध पर विजय पाई। काम को सिद्ध करना एक शूरवीर का ही काम है। शूर का अर्थ शूरवीर से है। बलि क्रोधवान था। जो उस बलि से शक्तिशाली होगा वही टक्कर ले सकता था, जो कि विष्णु भगवान ने ली।

गंगा और यमुना के ऊपर एक व्याकुल मनुष्य का चित्रण है

आप यह भली प्रकार जानते हैं कि मानव के जब शुभ दिन आते हैं तो अनायास ही योग मिल जाते हैं और औगुण में गुण विद्वान ही खोज पाते हैं। और यह भी बतलाते हैं कि जरा सा द्वेष विनाश का कारण होता है और वह किस प्रकार भयंकर रूप धारण कर लेता है। जो समझदार और विवेकी हैं वह भूल से भी किसी का अपमान नहीं करते। यदि भूल से हो जाय तो तत्काल ही क्षमा मांग लेते हैं। कहा है—अपनी भूल मान लेना विद्वत्ता और बड़प्पन है।

आचार्य चाणक्य का नन्द वंश ने अपमान किया था, इस बदले की भावना से चन्द्रगुप्त का योग विद्वान चाणक्य ने मिलाया, भयंकर विनाशीक कारण संग्रह किये। किन्तु यह सब पुण्ययोग से ही सफल हुए और उद्योग के साथ पुरुषार्थ किया। सफलता मिली। इसलिये चाणक्य ने उद्योगी पुरुष को सिंह कहा है और वही लक्ष्मी का स्वामी धनवान, ऐश्वर्यवान होता है। यदि नन्दवंश ऐसी भयंकर भूल न करता तो विनाश का कोई प्रश्न उपस्थित्त न होता और न यहां इतिहास में लिखा जाकर महापुराण बनता।

उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः, दैवन देयमिति कापुरुषा वदन्ति ।
दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्म्यशक्त्या, यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोऽत्र दोषः ।।

उपरोक्त प्रथम पहलू से देखा है । अब दूसरी ओर भी दृष्टि डालिये ।

जिस समय सागरचन्द्र मुनिराज ने ध्रुवतारा देखा और पुष्पदन्त मुनिराज ने हाय हाय का शब्द सुना और निवारण की युक्ति में विष्णुकुमार मुनि के द्वारा उपसर्ग (विपत्ति) निवारण का योग्य निमित्त बताया । उस समय मुनि विष्णुकुमार ने अपने सिंह के समान उद्योग से पुरुषार्थ करके उस विपत्ति का निवारण किया । यशस्वी प्रतिभा पाई । जिससे आज वह संसार में सिंह-पुरुष अर्थात् पूज्य पुरुष माने जाते हैं । उन्होंने यह यशरूपी लक्ष्मी पुरुषार्थ से प्राप्त की । वह उपसर्ग भाग्य से टल गया, इस प्रकार का आलसी पुरुषों का कहना है, प्रतिभाशालियों का नहीं । यत्न करने पर सफलता न मिले यह बात दूसरी है । जो व्याकुल अवस्था की मूर्ति बताई है वह उस समय की जब पुष्पदन्त मुनिराज ने विष्णुकुमार से कहा था और व्याकुल अवस्था में यज्ञ विध्वंस के लिये गए थे ।

आप यह भली प्रकार से समझ गये होंगे कि हमसे जो स्वार्थ–बर्बरता में कार्य बनते हैं वहाँ पापों का संचय अवश्य है, और यह भी जानते हैं कि जो कुछ हम पाप अर्थात् अशुभ कार्य (जिनकी लोग निन्दा करें) कहते हैं वह हमारे सामने ही दिखाई देता है । इसी कारण अभी जो वर्णन किया है वह जीवन के एक पहलू जिसे राग या पाप, अशुभ, अवगुण, अधर्म, अन्याय इत्यादि नामों से मानते हैं । सामने दिखाया गया है, सो लिख कर समक्ष में रखा है ।

आचार्य भद्रबाहु का समझाने के लिये मनोवैज्ञानिक परिश्रम

अब यह देखिये कि बाराह–रूप विष्णुकुमार मुनि अर्थात् भगवान विष्णु, या चन्द्रगुप्त को धर्म की व्याख्या समझाने के लिये जो मनोवैज्ञानिक परिश्रम श्री आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने किया उसमें कुछ भाग जो रहा वह बाराहमुख के सामने चार पंक्तियों में खड़े हुए संकेतयुक्त प्रतिमाओं का रह गया है । जिसे आप समझिये ।

इन चार पंक्तियों में उन सम्राट चन्द्रगुप्त के मंत्रीगण हैं जो उनके साथ दिग्विजय में थे । यह प्रथम पहलू है। और दूसरा पहलू यह है जब मुनि विष्णुकुमार बामनरूप धर कर बलि के समक्ष गये थे । और तीन पग भूमि दान में लेने का संकल्प कराने के बाद अपनी विक्रिया ऋद्धि से शरीर को बढ़ाया था । उस समय चारों मंत्री जिनका देशनिकाला उज्जैन के राजा श्रीवर्मा ने दिया वह बृहस्पति, प्रहलाद, नमुचि और बलि और इनके साथी विपरीतानुगामी संकेत करते हुए दिखाये हैं । काम, क्रोध, मान, माया और लोभ के वशीभूत अपना उल्लू सीधा करने वाले थे । आश्चर्य की दृष्टि से देख रहे हैं । अनेकान्त दृष्टि से देखने से मूर्तिकला में छुपे हुये ज्ञान का लाभ अवश्य मिलता है ।

*** पाप भाग समाप्त ***

卐

पाप और पुण्य

मानव शरीर में चार वर्ण हैं—(१) सिर-ब्राह्मण (२) भुजायें-क्षत्रिय (३) पेट--वैश्य (४) और पैर-शूद्र ।

शूद्र जन्म से सब लखो, संस्कार द्विज गाय ।
श्रुताभ्यास से शास्त्री, ब्राह्मण ब्रह्म रमाय ।।

अर्थः—जन्म से सभी शूद्र हैं । संस्कार से द्विज अर्थात् संस्कार से दूसरा जन्म माना गया है । वेद अर्थात् शास्त्र पढ़कर शास्त्री, और आत्मा में लीन होने पर वह ब्राह्मण कहलाता है । जीवों की रक्षा करने वाला ही क्षत्रिय है । इसी लिये प्रकृति ने भुजाएं रक्षा के लिये दी हैं न कि घात के लिये । और व्यापार उद्योग कर शरीर रूपी मशीन के संचालन हेतु पेट बनाया है, इस कारण वैश्य है । शूद्र इसलिए है कि पूरे शरीर का विकार मल-मूत्रादिक नीचे को ही गिरता है । इसी प्रकार से हमारे अधम कृत्य हमें पतन की ओर ले जाते हैं । देखोः—

कुव्वत थोड़ी रोष घनेरा, यह लक्षण पिट जाने का ।
आमद थोड़ी खर्च घनेरा, यह लक्षण मिट जाने का ।।

कम पूंजी अरु वनज घनेरा, कम ताकत मगरूर ।
पैदा कम खर्चा घना, बिगड़ें तीन जरूर ।।

जो ब्रह्मज्ञानी हैं, वेद-शास्त्रों के ज्ञाता हैं, रहस्य को जानते हैं । जो वस्तु जिस प्रकार है उसी प्रकार जो विचार संकल्प, कल्पनायें, सुख एवं दुख का ज्ञान आय व्यय संबंधी तथा धर्म अधर्म, सत् असत् कर्म; राग द्वेष, पुण्य--पाप आदि की क्रियाओं के मनोविकार अवस्थानुसार परि-वर्तनशीलता का ज्ञान होता है, इसलिये यह ब्राह्मण उपदेश आदेश का कर्त्ता माना है । इसलियेः—

सुख दुख अनुभव ज्ञानमय, कर संकल्प विचार ।
राग द्वेष अरु पुण्य को, ब्रह्म भेद निरवार ।।

वशीकरण

असमर्थों का बल क्षमा, समरथ भूषण जान ।
वशीकरण शुभ है क्षमा, हितकर यह बहु मान ।।

पुण्य की मूल

क्षमा पुण्य की मूल है, क्षमा सर्व गुण दान ।
जाके हिय होती क्षमा, ता संग हैं भगवान ।।

शुभ भावों से पुण्य हो, अशुभ भाव से पाप ।
दोनों की संतान से, होता पश्चाताप ।।
पुण्य पठाता स्वर्ग में, तथा नरक में पाप ।
दोनों के संसर्ग से, बढ़ता जगका माप ।।
पुण्य अरु पाप समूह से, हो कर्मों का बंध ।
पर परिणति से जीव का, हो घनिष्ट संबंध ।।
सार रहित संसार में, पुण्य पाप का खेल ।
पुण्यवान सुख भोगते, पापी भोगें जेल ।।
सुखाभास हो पुण्य से, जग में माला--माल ।
पापों के फल से अमित, दुखी होय संसार ।।

(सवैया)

काय पाय के व्रत नहिं कीना, आगम पढ़ नहिं मिटी कषाय ।
धन को पाय दान नहिं दीना, कहा काज तुम कीनों जाय ।।
लीनों जनम मरण के कारण, पुंजी गांठ तें चले गंवाय ।
चारों बात फेर नहिं मिलि हैं, ज्ञान ध्यान धन नर--पर्याय ।।

पुण्य पाप फल माँहि, हरख विलखौ मत भाई ।
यह पुद्गल--परजाय, उपजि विनसै थिर थाई ।।
लाख बात की बात, यहै निश्चय उर लावो ।
तोरि सकल जग द्वन्द फन्द, निज आतम ध्यावो ।।

इस प्रकार से आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने चन्द्रगुप्त को पाप पुन्य का वर्णन समझाया । जो प्रत्येक विवेकी मानव के जीवन पर ज्ञान-गुण में विद्यमान है। आत्मीय उन्नति के हेतु ग्रहण करें।

अब देखिये और विचार कीजिये कि बिना पुण्य के सद्योग नहीं मिलते । जब सम्राट ने पूर्व सत्कर्म किये थे उनके ही योग से उन्हें लक्ष्मी प्राप्त हुई । जो उनके सिर पर कमल लिये पीछे की ओर पुण्य का प्रदर्शन करती समुद्र में कमल पर दिखाई है । यही पुण्य-वर्गणाओं का सुयोग था जो लक्ष्मी दासी बनकर चरणों में खड़ी रहती है। यह है पुण्य की दासी लक्ष्मी । इस-लिए पुण्योपार्जन करना आचार्य ने बताया है ।

अब देखिये बाराह की मूर्ति के पीछे जो बहुत से मनुष्य वादित्रादि संयुक्त खड़े दिखाई बताये हैं वह हैं इस बात के द्योतक कि जब पुण्ययोग से आचार्य का सदुपदेश सुनने को मिला और आत्मी-

य ज्ञान मिला, विषय कषायादि को समझा, पुण्य-पाप धर्म अधर्म क्या है, हृदयंगत कर लेने पर जो प्रसन्नता हुई और परिणामों में विशुद्धता आई, विरागता का पथ ग्रहण किया कि पापों में फंसा व्यक्ति किस प्रकार महापुरुष वन सकता है और ऐसे व्यक्ति का ही सम्मान होता है । जो बाराह के गले में रत्न-गोप पहिनाई है वह तीन रत्नों से संवंधित है। वह रत्न सम्यग्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक्चारित्र रूप है । और जो बड़ी माला है वह इनके विजय की माला की सूचक है। अर्थात् विजयमाल है कि सच्ची विजयमाल आत्मा को पहिचान लेने में विजय पाने की है। इसी कारण इनका स्वागत किया गया है ।

अव यहां आपका ध्यान बाराहमूर्ति के पीछे खड़े हुये समुद्र में बरुणदेव से आकर्षित करने का है । जो कलश लिये हैं, इस बात के द्योतक हैं कि:—

विजय मिले, अनायास धन प्राप्त हो, बन्धुगणों से भेंट हो, सांसारिक भोग इन्द्र के समान भोगने को मिलें अथवा राज्यवैभव मिले, तो जो प्रसन्नता होती है उसकी प्रसन्नता से नेत्रों में जल भर आता है । वह नेत्र के पलक (बरौनी) और नेत्र-कलश उनके धारण करने वाला यशस्वी मानवशरीर पुण्य-सागर में कलशों में जल भरे खड़ा है । और जब अपार खुशी में डूब जाता हैं तो दोनों नेत्रों से अश्रुधारा बह निकलती है । यही धारा बहने वाली दो गंगा जो मगर पर है और यमुना जो कछुवे पर है, दोनों नदियां वताई हैं । जो इस पुण्य-सागर में आकर गिरती हैं। यह सुखाभास की द्योतक हैं ।

इसका दूसरा पहलू यह भी है कि जब ७०० ऋषियों की बलिराज से यज्ञ विध्वंस होने पर रक्षा हुई, उपसर्ग निवारण हुआ, इन भगवान विष्णुकुमार मुनि की विक्रिया को नगरवासियों ने देखा । ऐसे पुण्य की महिमा को जाना। इस कारण फूले नहीं समाये । उनके विशेष विवेकमय ज्ञान के आश्चर्यजनक कार्य को देखने से प्रेमाश्रु बहे । यही वरुणदेव और गंगा-यमुना है ।

इस प्रकार के संसार के स्वरूप को चन्द्रगुप्त ने आचार्य के द्वारा समझा था। इस कारण युद्ध समाप्त कर अणुव्रत धारण करने पर खुशी उत्पन्न हुई थी। जिस कारण यहाँ वरुणदेव और गंगा तथा यमुना वताई है ।

अब गंगा और यमुना के ऊपर स्त्रियों का नाच तथा वादित्रादि क्यों लिये हैं और नग्न नृत्य क्यों है ? इसलिये कि यही वैराग्य की दाता हैं। इसमें आचार्य शुभचन्द्र जी महाराजा भोज के अग्रज भ्राता थे जो ८ वर्ष की आयु में योग धारण कर गये थे, कहते हैं:—

निर्दयत्वमनार्यत्वं मूर्खत्वमतिचापलम् ।

वंचकत्वं कुशीलत्वं स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः ॥९॥

(ज्ञानार्णव)

अर्थ—निर्दयता, अनार्यता, (अपवित्रता), मूर्खता, अति चपलता, वंचकता और कुशीलता इतने दोष प्रायः स्त्रियों के स्वाभाविक होते हैं । अर्थात् ये विना सिखाये ही आ जाते हैं ।

देवदैत्योरगव्यालग्रहचन्द्रार्कचेष्टितम् ।
विदन्ति ये महाप्राज्ञास्तेऽपि वृत्तं न योषिताम् ॥२४॥

अर्थ—जो महाविद्वान् देव, दैत्य, नाग, हस्ती, ग्रह, चन्द्रमा और सूर्य इन सब की चेष्टाओं को जानते हैं, वे भी स्त्रियों के चरित्र को नहीं जान सकते। क्योंकि स्त्रीचरित्र अगाध है। यह जगत्प्रसिद्ध उक्ति है ॥२४॥

स्त्रियों के नाच के दो पहलू हैं, एक तो अपने हाव भावादि द्वारा विषय भोगादि में आनन्द मानती हैं, गाती हैं, वादित्रादि बजाती हैं, और नाचती हैं। दूसरा पहलू यह था कि जिन स्त्रियों को संग्राम में पुरुषविहीन होना पड़ा, संकटकाल देखने पड़े, उनका शील भंग हुआ, बेघरवार हुईं। ऐसे आतातार्इ ने अणुव्रत ले लिये, विपत्ति से सदैव के लिये छुटकारा पाया, इसलिये नाच रही हैं। तीसरा पहलू यह भी है कि ऐसा आततार्इ पुरुष संसार को क्षणभंगुर मान संसार की असारता जानकर विभूति संकटों से पाने के पश्चात् योग धारण कर रहा है। इसलिये भी आनन्द उसके उपलक्ष में मना रही हैं। इत्यादि और भी शुभ बन्ध के कारण हो सकते हैं।

तब देखिये, इन स्त्रियों के ऊपर एक देव विमान में बैठा पुष्पवृष्टि कर रहा है। इसका सम्बन्ध इससे क्यों है? इसका कारण यह है कि भगवान विष्णुकुमार मुनि ने बलिराज को बामनरूप धारण कर छला और ७०० ऋषि-मुनियों की रक्षा की। उसकी दानवता का प्रतिकार अपने बाहुबल पर किया। इसलिये नगरवासियों के साथ देवों ने भी जय-जयकार किये और पुष्पवृष्टि की। उसका भाव दर्शाया गया है। तथा दूसरी बात यह भी है कि सम्राट चन्द्रगुप्त ने आचार्य भद्रबाहु जी के द्वारा धर्मोपदेश प्राप्त कर अणुव्रत धारण कर मोक्षमार्ग का अनुसरण किया, इसलिये जनता और देवों ने उनका स्वागत किया, पुष्पवृष्टि की, जिसका यह चित्रण है।

इसी तरह जो अतिथि अपने घर या नगर में आते हैं, जिनसे कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता, किन्तु अपने भारस्वरूप होते हैं, जब उनका स्वागत एक मानवता के नाते करते हैं तो फिर जो एक महापुरुष के रूप में हों, जिनसे अद्वितीय ज्ञान मिलता है, कैसे वंचित रह सकते हैं?

चित्रण की साकारता

अब आप बाराह रूप भगवान विष्णु के सिर पर जो भगवान शिव हैं जो कि वृषभ पर आरूढ़ हैं कहती हैं कि—स्वामिन्! इस चित्रण का क्या अर्थ है? तो भगवान क्या उत्तर देते हैं? यह सब मायारूपी नार है। जो इसके चक्कर में फंस जाता है उसका निकलना बड़ा कठिन है। इसके जीतने वाले तो अलौकिक शक्ति के धारी भगवान वीतरागी पुरुष हैं। उन्हें छोड़कर कोई विजय नहीं पा सकता।

❋ गुफा नं० ५ का इतिहास संपूर्ण समाप्त हुआ ❋

❋

मकरवाहिनी गंगा

मकर वाहिनी गंगा की मूर्ति इस विदिशा में मौर्य साम्राज्य में थी। इसकी प्रतीक मौर्य साम्राज्य की निर्माणित उदयगिरी गुफा में मिलती है। तथा कई जगह विदिशा के किले की दीवाल में से लोगों को मिली है।

साम्राज्य किसी के एकसे नहीं रहे, यह तो चलती फिरती छाया है। एक का उत्थान दूसरे का पतन अवश्य है।

मौर्य साम्राज्य के पतन के बाद कुषाणों के शक्ति की बृद्धि हुई। ईर्षा के कारण तथा अपना प्रभुत्व जमाने के हेतु परिस्थितियों के अनुसार हिन्दू जैन बौद्ध धर्म अत्याचारियों के कारण भयंकर दुर्दशा में पड़ गया। लोगों को विश्वास था कि भगवान शिव ही इस संकट की घड़ी को दूर करेंगे, वे ही अपने भक्तों को स्वतंत्र करने के लिये खड़े होंगे।

कुषाणों की नीति थी कि उच्च वर्ग को नष्ट कर दिया जाय, राष्ट्र की सांस्कृतिक स्वतन्त्रता की जड़ें कमजोर पड़ जांय, जनशक्ति समाप्त हो जाय। ब्राह्मणों के नाश हेतु वैदिक धर्म का कट्टरता से विरोध किया गया, जनता पर अत्याचार किये गये। इससे भारतीय समाज दुखित हो उठा। ऐसा इतिहासकार बताते हैं।

भारशिवों ने गंगा तट पर विजय प्राप्त करने के बाद अपना कार्य विदिशा, पद्मावती और मथुरा तक राज्य की बृद्धि की, कुषाण साम्राज्य को उखाड़कर फेंक दिया। इस सम्बन्ध में एक ताम्रपत्र में लिखा मिला है—

"अंशभारसंन्निवेशित शिवलिंगोद्वाहन शिवसु परितुष्ट समुत्पादित राजवंशानाम् परक्रम आधिगत-भागीरथी अमजलः मूर्द्धाभिषिक्तनाम् दशास्वमेध-अवभृथस्नानाम् भारशिवानम् ॥"

भारशिव शासनकाल में सिक्कों और राज्यचिन्हों में भी शिव के स्वरूप को स्वीकारा है। गंगा की शक्ति पर उनका अटूट विश्वास था। उनके सिक्कों पर एक ताड़ बृक्ष और उसकी छाया में बैठी स्त्रीमूर्ति अंकित रहती थी। यह स्त्रीमूर्ति गंगा की होती थी। उनका राज्यचिन्ह मकरवाहिनी गंगा का था। भारशिव मूर्तियों के सिर भी प्राप्त हुए हैं जो मड़वैया संग्रहालय विदिशा में विद्यमान हैं।

जैनधर्म, बौद्ध धर्म, हिन्दू धर्म में मृर्तिपुजा प्रबल थी। भारशिव केवल लिंग पूजा ही करते थे। कुषाणों का नाश, शैव धर्म का प्रचार, हिंदू संस्कृति और धर्म की रक्षा के लिये उन्होंने तीन स्थानों (राजधानियों) में पद्मावती, विदिशा और मथुरा में रह कर कार्य किया। इसके वारे में पुराणों में उल्लेख मिला है।

"नवनागाः पद्मावत्यां कान्तिपुर्याम् मथुरायाम्"। भारशिवों के संस्थापक वीरसेन को कहा है। किन्तु जिनवीरसेन ने उदयगिरी की गुफायें बनवाई हैं। इससे मालूम होता है कि यह दूसरे वीरसेन हैं। वह वीरसेन तो जैन धर्मानुयायी थे। इसलिये मालूम होता है कि उन्होंने सिद्धों को नमस्कार करते हुए जिनबिम्बों की प्रतिष्ठा कराई है, और जिनबिम्ब निर्माण कराये हैं।

उज्जैन:—

आराधनासार कथाकोष पृष्ठ संख्या ३३१--कथा आचार्य भद्रबाहु ।

जैनियों के दिगम्बर-श्वेताम्बर दो भेद

सम्राट चन्द्रगुप्त की दिग्विजय यात्रा से लौटने के पश्चात् आचार्य भद्रबाहु के उपदेशामृत पान करने के उपरांत जिनधर्म स्वीकार किया । और उज्जैन प्रस्थान किया । श्वेताम्बर--दिगम्बर इन दो धर्मों का भेद बारह वर्ष का अकाल पड़ने से हुआ । एक दिन आचार्य भद्रबाहु स्वामी चर्या को (भोजनार्थ) नगर में गये हुए थे। और किसी गृहस्थ के घर पालने में पड़े दुधमुंहे बच्चे ने आचार्य के अन्दर आते ही कहा कि जाओ--जाओ !

इन शब्दों पर अपने निमित्तज्ञान से जानकर कि यहाँ बारह वर्ष का अकाल पड़ने वाला है, आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने उज्जैन नगर से जैनविद्री को प्रस्थान किया, जो दक्षिण भारत में जैनियों का सब से बड़ा तीर्थस्थान है ।

इन्हों का जैनविद्री जाना सम्राट अशोक के १५० वर्ष पूर्व यानी हजरत ईसा से ४३ वर्ष पहिले बताते हैं । आचार्य भद्रबाहु स्वामी के आगमन के कारण ही भेलसा का नाम भादलपुर भी रखा गया था। जैनियों की मजहबी रश्मों में आज तक यह पुराना नाम लेते हैं ।

इस बात का ग्वालियर गजेटियर जिल्द पहली सन् १९०८ में जो उल्लेख किया है वह जैन शास्त्रों के अनुसार संवत् १४१ में हुये हैं ऐसा ज्ञात होता है । आचार्य भद्रबाहु द्वितीय--बाराह मिहिर के छोटे भाई थे और सम्राट चन्द्रगुप्त द्वितीय (विक्रमादित्य) के दरबार के नव रत्नों में से थे । जिनमें दिगम्बर जैन साधु भी थे । जिनके नाम निम्न प्रकार हैं—

(१)--धन्वन्तरी (१)–क्षपणक–द्वितीय नाम सिद्धसेन दिवाकर जो दिगम्बरी जैन साधु थे (३)–अमरसिंह जिनका लिखित अमर कोष कहते हैं । (४)--शंकु भट्ट (५)–घटपरकर (६)-- कवि कालिदास (७)–बाराह मिहिर (८)--वररुचि ।

इन्हीं सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के नाम से जिनको विक्रमादित्य कहते हैं संवत् चल रहा है और मालव संवत् से जुड़ा है । विक्रम ने शकों पर विजय पाई और शकारि कहलाया, इसी का यह संवत्सर चला है और वह मालव संवत् से जोड़ दिया गया है ।

विदिशा और उदयगिरि गुफा नं १३ भगवान शेषशायी विष्णु

पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि, जलमन्नं सुभाषितं ।

मूढः पाषाणखण्डेषु, रत्नसंज्ञां विधीयते ।।

भावार्थ—इस वसुन्धरा पर मुख्य तीन रत्न हैं (१) अन्न (२) जल और (३) सुभाषित (मधुरवाणी), किन्तु मूर्ख मनुष्य पाषाण के टुकड़ों को रत्न मानता है ।

कुटिल वचन सबतें बुरो, जार करै तन छार ।
साधु--वचन जलरूप है, बरसे अमृतधार ।।

भगवान विष्णु के साथ सप्त ऋषि भी हैं । वह निम्न प्रकार हैं—

(१) दो आखें (२) दो कान (३) दो नाक के स्वर (४) एक मुख । इनका दो प्रकार से उपभोग होता है । सन्त समाज सदुपयोग के रूप में और विपरीत (कुटिल) बुद्धि वाले इसका दुरुपयोग करते हैं।

पांच मंत्रियों के नाम

(१) प्रधान मन्त्री–अहंकार (२) गृह मंत्री--काम, क्रोध (३) विदेश मंत्री--माया मोह (४) अर्थ मंत्री--लोभ (५) रक्षा मन्त्री--दया, क्षमा ।

एक कवि ने भगवान विष्णु से पूछा कि भगवान! आप सूख क्यों गये ? तो भगवान उत्तर देते हैं:—

एका भार्या प्रकृतिमुखरा, चंचला च द्वितीया ।
पुत्रश्चैको भुवनविजयी, मन्मथः दुर्निवारः ।।
शेषा शैय्या पवनवहनो, वारिसेवितसुरारिः ।
स्मारं स्मारं स्वगृहचरितं, दारुभूतो मुरारिः ।।

भावार्थ—भगवान विष्णु की दो पत्नियाँ हैं, उनमें एक तो प्रकृति से मुखर है अर्थात् धारा प्रवाही बोलने वाली सरस्वती जो जीवन भर साथ देती है, पतिव्रता है, मुझमें अत्यन्त स्नेह रखती है । और दूसरी जो स्त्री लक्ष्मी है वह ऐसी चंचला है कि आज इसके पास, कल उसके पास है, आपस में झगड़ा रहा करता है । इस पर पूछा कि विशेष कर सूम के घर क्यों रहती है ?

(दोहा)

एक दिना लक्ष्मी प्रतें, पूछत हैं कवि एम ।
दाता पंडित सूर तजि, रहै सूम घर केम ।।

लक्ष्मी का उत्तर (कवित्त)

सूर घर जाऊं तौ अकेली रहि जाऊं रांड, बो तौ जूझि जूझि मरिजाय रणथान में ।
दाता घर जाऊं तौ मैं आदर न पाऊं नेक, बो तौ भरि भरि थाल फैंकदेत दान में ।।
पंडित के जाऊं सौत विद्या से लड़ाई रहै, दोय तलवार न समांय इक म्यान में ।
तातें सेठि सूमचन्द ढूंढ लियो ठीक मैंने, खरचै न खाय जोड़ि धरत मकान में ।।

भगवान विष्णु कहते हैं—लक्ष्मी की यह दशा है इस कारण दुखी हूँ। और पुत्र कामदेव है जो लोक में विजय प्राप्त करने वाला है। वह है यौवनावस्था जिसे दूर नहीं किया जा सकता। मदान्ध होकर विषयों में अपने आत्मस्वरूप को भूल गया और मेरा शयन इन आपत्तियों के कारण शेषनाग पर है। शेषनाग का काटा हुआ मंत्र और औषधि से बचा सकता है किन्तु क्रोधरूप सर्प का काटा किसी भी हालत में नहीं बच सकता अर्थात् जिस राजा का दबदबा (प्रभाव) है वह राज्य उत्तम है, जिस राज्य का प्रबन्ध भ्रष्टाचारियों और स्वार्थियों के हाथ में हो वह न यश पा सकता है न वह अधिक समय टिक सकता है। इस कारण देव और दानव अर्थात् पाप पुण्य आपस में झगड़े कराते रहते हैं। और मेरा बाहन गरुड़ है। वह आपस में विरोधी हैं। क्रोध (सर्प) और ज्ञान (गरुड़) है। इस प्रकार एक कवि ने कहा है कि:—

चिन्ता बिन चतुरई नहीं, दुख बिन नहीं शरीर ।
पाप बिना लक्ष्मी नहीं, सो भूले दास कवीर ॥

यह मायारूपी लक्ष्मी नारि विदेशमन्त्री है। कहा है:—

काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह के धारि ।
तिन महँ अति दारुन दुखद, माया रूपी नार ॥

भावार्थ—काम क्रोध मद और लोभ आदि मोह की प्रबल सेना है। इसमें स्त्री जो माया की साक्षात् मूर्ति है वह तो बहुत ही भयानक दुख देने वाली है।

अग्नि; समुद्र, प्रबल स्त्री और काल की समानता—

प्रश्न:—**कहा न अवला करि सकै, कहा न सिन्धु समाय ।**
कहा न पावक में जले, कहा काल नहिं खाय ॥

उत्तर—**सुत नहिं अबला करि सकै, मन नहिं सिन्धु समाय ।**
धर्म न पावक में जले, नाम काल नहिं खाय ॥

(दोहा)

जन्म पत्रिका बरति के, देखहु मनहिं विचार ।
दारुन बैरी मीचु के, बीच विराजत नार ॥

भावार्थ—जन्मकुंडली को व्यवहार में लाकर मनमें विचार कर देखो कि स्त्री भयंकर बैरी के और मृत्यु के स्थान में विराज रही है। कुंडली के बारह स्थानों में छठा शत्रु का और आठवाँ मृत्यु का माना जाता है। इनके बीच में स्त्री का स्थान सातवाँ है। जगत में स्त्रियों के कारण न मालूम कितने लोगों में शत्रुता और कितने की मृत्यु हुई है।

इसलिये हे लक्ष्मी—

समुद्रे वसते लक्ष्मी, पर्वतस्तनमंडले ।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं, पादस्पर्शं क्षमस्व मे ।।

भावार्थ—हे देवि ! आपका निवास समुद्र में है अथवा आपमें ही समुद्र निवास करता है। आपके उन्नत स्तन मंडलाकार गोल पर्वत के समान हैं। ऐसी जो भगवान विष्णु की पत्नी लक्ष्मी, मैं तुझे चरणस्पर्श कर क्षमा मांगता हुआ नमस्कार करता हूँ।

आप प्रातःकाल विस्तर से उठकर सर्वप्रथम अपनी हस्तरेखायें क्यों देखते हैं ? इसलिये कि—

कराग्रे वसते लक्ष्मी, करमूले च सरस्वती ।
करमध्ये तु गोविन्दा, प्रभाते करदर्शनम् ।।

भावार्थ—आप इन्हीं हाथों से धन कमाते हैं सो लक्ष्मी का निवास है और लिखते हैं सो सरस्वती का निवास है । और दोनों हाथ मिलाने पर चन्द्रमा बन जाता है इसलिये चन्द्रमा समुद्र का पुत्र है, आपका शरीर ही समुद्र है, और चन्द्रमा की बहिन लक्ष्मी है, उसका बाहन उल्लू है। जो इसके चक्कर में फंसता है वह उल्लू बन जाता है। जैसे चन्द्रमा का पुत्र बुध यदि आपके मस्तिष्क में शान्ति का भंडार है तो आप अपनी विवेकबुद्धि से सुख, लक्ष्मी, धर्म कर्म, सब कुछ भोग सकेंगे और जो हाथ में चन्द्रमा बन जाता है वह देव माना गया है अर्थात् वही भगवान है जो इन हाथों में विद्यमान है। इसलिये प्रातःकाल हस्तरेखा के दर्शन का महत्व बतलाया है। यदि इस प्रकार न किया तो—

चला लक्ष्मीः चला प्राणाः, चला जीवितमंदिरे ।
चलाचले च संसारे, धर्म एको हि निश्चलः ।।

इसलिये कहा है कि भगवान विष्णु के समान कौन है:—

लोभ पाप में नहिं फंस्यो, लगे न मन्मथ बाण ।
क्रोधानल में नहिं फंस्यो, सो नर विष्णु समान ।।

लोभ की प्रबलता (अर्थ-मंत्री)

ज्ञानी तापस सूर कवि, कोविद गुन आगार ।
केहि के लोभ विडंबना, कीन्हि न एहि संसार ।।

भावार्थ—ज्ञानी, तपस्वी, शूरवीर, कवि, पंडित और गुणों का धाम इस संसार में ऐसा कौन मनुष्य है जिसकी लोभ ने मट्टी पलीद न की हो ?

माया की फौज (विदेश मंत्री)

व्यापि रहेउ संसार महुँ, माया--कटक प्रचंड ।

सेनापति कामादि भट, दंभ कपट पाखंड ।।

भावार्थ—माया की प्रचंड सेना संसार में फैल रही है। कामादि (काम क्रोध मद लोभ मोह मत्सर) वीर इस सेना के सेनापति हैं। और दम्भ कपट पाखंड इसके योद्धा हैं। अत एव इसके गृहमंत्री काम, क्रोध और अर्थमंत्री लोभ की प्रबलता है—

तात तीनि अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ ।

मुनि विज्ञान धाम मन, करहिं निमिष महुँ क्षोभ ।।

यह तीनों दुष्ट बड़े ही बलवान हैं। ये विज्ञानसंपन्न मुनि के मन में भी पलक मारते मारते क्षोभ उत्पन्न कर देते हैं। अतएव—

क्रोध मान माया धरत, लोभ सहित परिणाम ।

ये ही तेरे शत्रु हैं, समझो आतम—राम ।।

हे आत्मन् ! यही तेरे शत्रु हैं।

काम क्रोध और लोभ के सहायक—

लोभ के इच्छा दंभ बल, काम के केवल नार ।

क्रोध के पौरुष वचन बल, मुनिवर करहिं विचार ।।

भावार्थ—श्रेष्ठ मुनिवर विचार करते हैं और कहते हैं कि लोभ के इच्छा और दम्भ का बल है, काम के केवल कामनी का बल है और क्रोध के कठोर वचन का बल है।

(उद्‌बोधन)

दीपशिखा सह युवति तन, मन जनि होसि पतंग ।

भजहिं राम तजि काम मद, करहिं सदा सत्संग ।।

तथा

फिसलो मत भूल कर भी, ऊपर की सफाई पर ।

वर्क सोने का लगा, गोबर की मिठाई पर ।।

पुनः—नवयुवती के भाल पर, लगी हुई सिन्दूर ।

यारो खतरा है यहां, रहना इनसे दूर ।।

भावार्थ—युवतियों का शरीर खोटी खोटी सप्त धातुओं का भण्डार जिसमें मल-मूत्रादिक झरता रहता है ऐसे अपवित्र गोरे शरीर रूप दीपक की लौ पर हे मन ! तू उसमें पतंग बनकर क्यों भस्म होता है ! काम और मद को त्याग कर राम जो अन्तर्यामी हैं आत्मचिन्तवन कर । काम क्रोधादि एक एक अनर्थकारक हैं, फिर सब की तो बात ही क्या है ?

ग्रह ग्रहीत पुनि बात बस, तेहि पुनि बीछू मार ।

तेहि पियाइय वारुणी, कहहु काह उपचार ।।

भावार्थ—जिसकी होनहार और भविष्य खोटा हो, जिसे क्रूरग्रह लगे हों अथवा पिशाच लगा हो और उसमें भी वायु रोग से पीड़ित हो, ऐसी ही दशा में विच्छू डंक मार देवे, ऐसे तीन प्रकार के पागल को यदि शराब पिलादी जाय तो यह कैसा इलाज है ? क्या यह उस जीव के विनाश का कारण नहीं ?

विच्छू के पीछे बसे, मुख में वसत भुजंग ।

नाहर के नख में बसै, सो सब त्रिया के अंग ।।

भाग्यवान कौन है ?

बुध सो विवेकी विमल मति, जिन्ह के रोष न राग ।

सुहृत सराहत साधु जेहि, तुलसी ताको भाग ।।

भावार्थ:—विवेकी निर्मल बुद्धि के धारक ज्ञानी पुरुष राग का योग मिलने पर आशक्ति और विछोह (न मिलने) पर क्रोध नहीं करते, किन्तु साधुजन जिनका हृदय पवित्र है प्रशंसनीय और भाग्यशाली हैं ।

इस प्रकार महाराजा चन्द्रगुप्त को आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने यह देवासुर संग्राम का उदाहरण देकर सम्बोधित किया है । जिनका चित्रण आप उदयगिरि की गुफा नं० १३ में अवलोकन कर रहे हैं ।

नव नाग एवं विष्णु के नाम

अनन्तं, वासुकी, शेषं, पद्मनाभं, च कंबलम् ।
शंखपालं, धार्तराष्ट्रं, तक्षयं, कालियं, तथा ।।
एतानि नव नामानि नागा नागं च महात्मनाम् ।
प्रातःकाले संध्यायां नित्यं, पापं संपूर्ण मुच्यते ।।

गुफा नं० १३

इस परम पुनीत ऐतिहासिक विदिशा नगरी में आचार्य भद्रबाहु स्वामी का प्रथम उपदेश हुआ और सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य को जिनदीक्षा दी गई ।

यहां भगवान शीतलनाथ के ३ कल्याणक हुए थे। भगवान नेमिनाथ का समवशरण श्रीकृष्ण के ३ युगल भ्राताओं को लेने आया था, जो कंस के भय से देवों ने अलका नामक सेठानी के घर पालनार्थ रखे थे।

रामचन्द्र जी का बनवास के समय आगमन तथा शत्रुघ्न के पुत्र शत्रुघाती (सुबाहु) को इस दशार्ण प्रदेश की राजधानी का स्वामी बनाया था।

२६ जैनाचार्य यहाँ पट्टाधीश हुए। यहाँ पर २० गुफायें हैं जिनमें प्रमुख और दर्शनीय गुफा नं० १ सूर्य गुफा, गुफा नं० ५ बाराह नाम से, गुफा नं० १३ शेषशायी विष्णु, गुफा नं० १९ देव और दानवों द्वारा समुद्रमंथन नाम से विख्यात है। गुफा नं० २० इसमें जैन तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ की पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। गुफा नं० ६, ७, और २० में सम्राट चन्द्रगुप्त के शिलालेख, उनके आगमन तथा दिग्विजय से आने और अजेय होने के संबंध में साक्षी दे रहे हैं तथा उनमें आचार्य भद्रबाहु के धर्मोपदेश का भी वर्णन है। आचार्य वीरसेन पूर्व में उनके मंत्री थे। भली प्रकार से सिद्ध होता है। आचार्य भद्रबाहु स्वामी की मनोवैज्ञानिक धर्मोपदेश की प्रचारपद्धति क्या थी? हिंसक, आततायी को जिनधर्म में दीक्षित किया।

शेष का भावार्थ—कुछ नहीं से है और नाग का सर्प से। इन्हें अनंतशायी भी कहते हैं। अनंत का भी अर्थ सर्प से ही है। सामायिक पाठ में कहा है—

काल अनंत भ्रमों जग में सहिये दुख भारी।
जन्म मरण नित किये पाप कौ हों अधिकारी॥
क्रोध मान मद लोभ, मोह माया वश प्राणी।
दुःख सहित जे किये दया तिन की नंहि आनी॥

कवि दौलतराम जी कहते हैं:—

मोह--महामद पियो अनादि, भूल आपको भरमत बादि।
तास भ्रमण की है बहु कथा, पै कछु कहूँ कही मुनि यथा॥

आचार्य कहते हैं कि इस जीव ने अनन्तानन्त बार जन्म लिया और मरण को प्राप्त हुआ। इस कालरूप शैय्या पर शयन करने से अनन्तशायी कहा है।

जो जनमत सो मरत है, समय आय पुनि जाय।
फिर क्यों सोच करो बृथा, हितकर करो उपाय॥

यह जीव चैतन्यस्वरूप आत्मा जिसे विष्णु भी कहते हैं, जिनकी नाभि से ब्रह्मा की उत्पत्ति बताई है, मोह के वशीभूत उसके लालन-पालन के अर्थ लक्ष्मी की ओर दौड़ता है। वह तो पुण्य से ही प्राप्त होती है। यह दो प्रकार की है:—

(१) माया दोय प्रकार की, जो कोई जाने खाय ।
एक मिलावै राम से, एक नरक ले जाय ॥
माया ठगनी ने ठगा, यह सारा संसार ।
पर माया जिनने ठगी, तिनको बहु बलिहार ॥

(२) मोह:— (राग रामकली)

जीव को मोह महा दुखदाई ॥

काल अनादि जोति जिंहि राख्यो, शक्ति अनन्त छिपाई ।
क्रम क्रम करके नर--भव पायो, तऊ न तजत लराई ॥१॥
मात तात सुत बान्धव बनिता, अरु परवार बढ़ाई ।
तिन सों प्रीत करै निशि बासर, जानत सब ठकुराई ॥२॥
चहुँगति जन्म मरण के बहु दुख, अरु बहु कष्ट सहाई ।
संकट सहत तऊ नहिं चेतत, प्रेम मदिरा अति पाई ॥३॥
इह विन तजे परम पद नाहीं, यों जिनदेव बताई ।
तातें मोह त्याग ले भैया, ज्यों प्रगटै ठकुराई ॥४॥
गुण अनंत प्रगटै जिह थानक, ता पटतर को आवै ।
इह विधि हंस सकल सुख--सागर, आपुहि आप लखावै ॥५॥
यह मोह महा बलवंत भूप, तुम ज्ञाता जानत सब स्वरूप ।
कैसे कर इन सों बचै जीव ? तुम स्याने ह्वै चूकौ न दाव ॥६॥

ज्ञातव्य रूपक:—

आयुध जाके भ्रम चक्र हाथ, बहु धारा जास उपाधि साथ ।
महां नागफांस विद्या अनेक, बंध सत्तर कोड़ा कोड़ि टेक ॥
बाणादिक महा कठोर भाव, जिंहि लगै वचत नहिं रंक राव ।
इह विधि अनेक हथियार धार, कहूं नाम कहत नहिं लगे पार ॥

जाके संग सूरा हैं अनेक, अज्ञान भाव सब गहैं टेक ।
मंत्री सुर राग द्वेष हेर, छिनमें सब सेना करहिं जेर ॥
संशय सो गढ़ जाके अटूट, विभ्रम सी खाई जटाजूट ।
विषया सी रानी जासु गेह, सुत जाके सूर कषाय सेह ॥
सेनापति चारों हैं अनंत, जिहिं घेरो अव्रतपुर महंत ।
प्रधान मंत्री अहंकार नं० ७—सेनापति(राग)नं० ८ सहायक सेनापति (द्वेष) नं०९

परिवार का रूपक

सत है पिता धर्म है बन्धु, लज्जा सी महतारी ।
शील बहिन, संतोष पुत्र, अरु क्षमा हमारी नारी ॥
ज्ञान सो गुरु, विवेक है चेला, रहत सदा हितकारी ।
काम क्रोध द्वय चोर वसत हैं, तिनकौ डर मोय भारी ॥
आशा सासू तृष्णा साली, लोभ मोह ससुरारी ।
अहंकार है स्वसुर हमारे, ते सबके अधिकारी ॥
मन दीवान सुरत है राजा, बुध मंत्री अति भारी ।
राम नाम की बसत नगरिया, तुलसी पंच मझारी ॥

विषया रानी के मन्त्री लोभ हैं, जो गृहमन्त्री काम यौवनावस्था में पदार्पण कर भोगों को भोगते हैं ।

जो विषयी निश दिन रहै, भरा मदन सन्ताप ।
ऋद्धि सहित भी निंद्य हो, लज्जित होता आप ॥

उस समय कामाग्नि को सान्त्वना नहीं मिलती तो क्रोधाग्नि प्रज्वलित होती है, जो अग्नि हाथ में लेकर संकेत कर रहे हैं।

जलता वह ही आग में, जो हो उसके पास ।
क्रोधी का पर वंश भी, जलता विना प्रयास ॥
वह क्रोधी मृततुल्य है, जिसे न निज का भान ।
पर त्यागी उस क्रोध का, होता सन्त महान ॥

मन्त्री–लोभ नं० ११ और काम क्रोध जो गृह मन्त्री जो प्रधान मंत्री (अहंकार) के ए० डी० सी० हैं पाप कर्म के उदय से कर्म–बंधनों से बांधे हुए है । इसलिये:—

राग द्वेष छल लोभ मोह कामादि विचार हटाऊं ।
पर परणति को त्याग निरन्तर, स्वाभाविक चित लाऊं ॥

इसलिये:—

शीत समय दर्याव किनारे, ध्यान धरें अन्तरंग में ।
करें निर्जरा कर्मबन्ध की, योग संवार छिन छिन में ॥

यह शुभ भावना हमारे रक्षामन्त्री नं० ५ एवं ६ क्रमशः बारम्बार पुष्टि करते हैं ।

(नं० ५) दया:—

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान ।
तुलसी दया न छोड़िये, जब लग घट में प्रान ॥

दुर्बल की जैसी दशा, करता है तू क्रूर ।
वैसी ही तेरी दशा, तब कैसा हो शूर ॥

जिन पापों के नाम से, कांप उठे यह जीव ।
वह उनको भोगे नहीं, जिसमें दया अतीव ॥

(नं० ६) संयम के माहात्म्य से, मिलता है सुर--लोक ।
और असंयम राज--पथ, रौरव को बे-रोक ॥

क्षमा पुण्य की मूल है, क्षमा सर्व गुण दान ।
जाके हिय होती क्षमा, ता संग दें भगवान ॥

सामाजिक वा धार्मिक, कार्य वही कर पाय ।
जो पृथ्वी सम गह क्षमा, सब की सब सह जाय ॥

जीवन का आनन्द विवेक पर निर्भर है । और विवेक पुण्ययोग से ही मिलता है । विवेकी अपने अवगुण और दूसरों के गुण देखते हैं ।

ज्ञानरूप गरुड़ नं० ३ क्या कहते हैं:—

ज्ञान कहै चेतन सुनो, तुमसे मेरे नाथ ।
कहा विचारौ क्रूर वह, गहि डारौ इक हाथ ॥

तब चेतन ऐसे कही, जीत तुम्हारी होय ।
मारि भगावो मोह को, रागद्वेष अरि दोय ॥

जीवित मानव जाति के, दो ही नेत्र विशेष ।
अक्षर कहते एक को, संख्या दूजा शेष ।।
शिक्षित को सारी मही, घर है और स्वदेश ।
फिर क्यों चूके जन्म भर, लेने में उपदेश ।।
विद्या ही नर के लिये, अविनाशी त्रुटिहीन ।
निधि है, जिससे अन्य धन, होते शोभाहीन ।।

उस समय सरस्वती नं० ४ चित्र में बताई गई है । देखो रुद्रयामल तत्रान्तर्गत भवानी सहस्रनाम बेंकटेश्वर प्रस बम्बई में छपे पृष्ठ ९ श्लोक नं० १३ पर :-

कुन्डासना जगद्धात्री बुद्धमाता जिनेश्वरी ।
जिनमाता जिनेन्द्रा च शारदा हंसवाहिनी ।।

इसलिए माता सरस्वती कहती हैं :—

निर्लोभी करुणा भरा, कर्मठ, बुद्धि विशाल ।
राज्यकार्य को राखिये, ऐसा नर भूपाल ।।

जिसकी प्रतिभा से रहे, शासन में विस्फूर्ति ।
और हटे विपदा वही, करे सचिव पद--पूर्ति ।।

भक्त कुशल भी भृत्य पर, रुष्ट रहे जो देव ।
भाग्यश्री उस भूप की, फिर जाती स्वयमेव ।।

जिसे प्रतिष्ठाभंग का, भय रहता स्वयमेव ।
उस कुलीन निर्दोष को, कहो सदा नर-देव ।। ---मड़वैया

माता सरस्वती का भव्य जीवों को अन्तिम उपदेश । यदि विश्व में जीवित रहना है तो:—

करना है कुछ करना सीखो, छाती तान विचरना सीखो ।
जीना है तो मरना सीखो, तब हो पूर्ण विजय ।।

इसलिये: —**हमें महत पुरुषों के जीवन, ये ही बात सिखाते हैं ।**
जो करते हैं सतत परिश्रम, वे पवित्र बन जाते हैं ।।

इस शेषशायी भगवान् विष्णु की गुफा नं० १३ से जो शोधपूर्ण ज्ञान मिला वह है एक आदर्श पुरुष का महत्वपूर्ण जीवन, जो कि श्री पूज्यपाद आचार्य भद्रबाहु स्वामी जो एक ब्राह्मण कुल के दीपक थे । और सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य जिसे विक्रमादित्य भी कहते हैं जिसने सेल्यूकस की पुत्री

हेलना से विवाह किया था और दिग्विजय से लौटने के पश्चात् उज्जैन जाते समय विदिशा में आचार्य भद्रवाहु स्वामी से प्रथम बार भेंट करने गये थे। जिनकी भावना सांसारिक भोगों को भोगने में थी, प्रवृत्ति हिंसक, आत्मचिन्तवन से दूर थी, सदगुरु द्वारा आत्मीय शत्रु मित्र का निर्णय कराया गया, जो हजारों वर्ष बीत जाने पर भी अपनी शौर्यपूर्ण कीर्ति के द्वारा आज भी संसार में जीवित है, जो इस प्रतिमा से ज्ञान मिलता है।

प्रतिमाओं का हृदय पर, पड़ता बहुत प्रभाव।
जैसे रूप विलोकते, तैसे होते भाव ॥

देव-दानवों द्वारा समुद्र-मंथन

पाठकगण भली प्रकार जानते ही हैं कि देव और दानवों ने समुद्र-मंथन किया था और उसमें से १४ रत्न निकाले थे। यह समझने की बात है कि वह देव कौन हैं और दानव कौन हैं? समुद्र क्या है? और १४ रत्न क्या हैं?

(१) पुण्य प्रकृति देव है और (२) पाप प्रकृति दानव है।

जो यशस्वी कार्य हैं, जिन्हें संसार अच्छा कहता है, जिनमें यह लक्षण हों :—

दोहा—**विनय दया अरु प्रेम से, जासु हृदय भरपूर।**
नहिं मनुष्य, वह देवता, गहहु तासु पद--मूर॥

और वही संसार का महापुरुष है जिसके चरित्र को पढ़कर मानव अपने जीवन को यशस्वी बनाता है। कहा है—

सूरत से कीरति बड़ी, बिना पंख उड़ जाय।
सूरत तो जाती रहे, कीरति कभी न जाय।
जाकी जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान।
यातें यश संचय करहु, लोग करैं सम्मान॥

और दानव इसके विपरीत कार्य करने वाला है। कहा है—

जूआ खेलन मांस मद, वेश्या व्यसन शिकार।
चोरी पर--रमनी रमन, सातों पाप निवार॥
हिंसा चोरी झूठ अरु, क्रोधादिक जे पाप।
सो सब उपजत लोभ से, लोभ पाप का बाप॥

यह सब कुछ विषय भोगादि के लिये ही किया जाता है। उसका मूल कारण नारी है। वही संसार-समुद्र है। उसी का मथन होता है। नारी में ९ ग्रह, १४ रत्न और १० प्रकार के कल्पवृक्ष दशांग विद्यमान हैं। वही भोग की भंडार है। नारी के गुण—

नारि विना घर भूत समान, सु नारि सबै घर की रखवारी।
नारि चखावत है षट् भोजन, नारि दिखावत है सुख भारी॥
नारि विना रजनी सुख कारण, पुत्र उपावन को बड़वारी।
और बड़ाई कहां लों करूं, साख बड़ी मन रंजनहारी॥

इस पर जिनसेन आचार्य अपने सुभाषित रत्नसंदोह पृष्ठ १०१ श्लोक संख्या ३०३ में कहते हैं—

येषां स्त्रीस्तनचक्रवाकयुगले पीतांशुराजत्तटे,
निर्यत्कौस्तुभरत्नरश्मिसलिले आस्यांबुजभ्राजिते।
श्रीवक्षःकमलाकरे गतभया क्रीड़ां चकरापरां,
श्रीर्हि श्रीहरयोऽपि ते मृतिमिताः कुत्रापरेषां स्थितिः॥३०३॥

अर्थ—स्त्री के स्तनरूपी चक्रवाकों से युक्त, पीतांशु–पीताम्बर रूपी मनोहर तट से भूषित, कौस्तुभ मणि की छटकती हुई किरणरूपी जल से व्याप्त, मुखरूपी कमल से अलंकृत जिनके श्री वक्षस्थलरूपी विशाल तालाब में साक्षात् लक्ष्मी ने क्रीड़ा की। जब ऐसे महापुरुष भी काल के गाल में फंस गये, तब अन्य मनुष्य सदा काल कैसे जीवित रह सकते हैं? कभी नहीं।

स्वर्ग के देव दशाँग भोग भोगते हैं कल्पवृक्षों से, जो नारी में प्राप्त है

मद्यतूर्यगृहज्योतिर्भूषा—भाजन—विग्रहाः।
स्रुग्दीपवस्त्र पात्रांगा दशधा कल्प-पादपाः॥ १७२॥

भावार्थः—शब्द	अर्थ—
(१)—मद्य	स्त्री का नशा
(२)—वादित्र	संगीतयुत गायन
(३)—गृह	गृहिणी
(४)—ज्योति	घर की शोभा
(५)—भूषण	शील
(६)—भोजन	समय पर आहार
(७)—माला	वैराग्य पैदा कराने वाली, भगवद्भक्ति में लेजाने का मार्ग बताने वाली।
(८)—दीपक	कुलदीपक पुत्र पैदा करने वाली
(९)—वस्त्र	विषय–वासनाओं संबंधी दोषों के ओढ़ने का वस्त्र
(१०)—पात्र	विषयों का पात्र

इन दश प्रकार के भोगों की देने वाली दश प्रकार के कल्पवृक्ष इसमें स्वर्ग के देवों के समान होते हैं। ज्ञानार्णव प्र० सं० ३७८ श्लोक सं० १७५, शुभचन्द्राचार्य।

यह भवसागर है; इस कल्पवृक्ष से जब परिवार बढ़ जाता है तो वह एक संसार बन जाता है, और फिर मानव का माया–मोह–जाल में फंस कर निकलना दुर्लभ हो जाता है।

(१) स्त्री को मुग्धा कहते हैं (२) इसका मन समुद्र है। कहती कुछ और करती कुछ और है (३) नारी की वाणी (भंवर) में फंसना सरल है, किन्तु निकलना कठिन (४) इसके गुण (५) विद्या (६) और कल्लोलमय कलायें विचित्र हैं। यह छह समुद्र इसमें विद्यमान हैं।

बालक के जन्म लेने से मरण पर्यंत जो मानव--जीवन में घटनायें और क्रियायें होती हैं वह सभी अनुभव करते हैं।

बालक माता के उदर से निकल कर माता का स्तन मुंह में दबाता है और दूसरा हाथ दूसरे स्तन पर रखता है, उसे नाखूनों से खोंटता है, मसलता है, किन्तु विकारभाव से रहित रहता है।

बालक माता पिता के साथ सोता है और उनकी समस्त क्रियाओं को देखता समझता है और उसके उसी के अनुकूल संस्कार पड़ते हैं तथा वह उत्तरोत्तर जीवन में बृद्धि करता है।

जब बालक ५ वर्ष का होता है उसे माता पिता लाड़ प्यार से विद्याभ्यास कराने गुरु जी के पास बिठाते हैं। जब बालक अपने साथी बालक बालिकाओं के साथ मैत्री कर लेता है तो वह पूर्ववत् माता पितादि की विषय संबन्धी क्रियाओं को तथा पशु इत्यादि की विषयोन्मद क्रियाओं के अनुसार क्रीड़ायें प्रारम्भ कर देता है। यह अवस्था कुमारकाल के श्रीगणेश की है और यही सम्हालने की है। यदि बालक को विषयों का चस्का लग गया तो चरित्र से गिर जाता है। और इस कामान्धता की पूर्ति में वह बालक क्या नहीं कर सकता? एक तो चढ़ती जवानी, दूसरे माता पिता का द्रव्य हाथ में होने से, तीसरे अविवेक और बल का प्रयोग क्या अनर्थ नहीं करता? इस पर हितोपदेश में कहा है :—

यौवनं धनसंपतिः प्रभुत्वमविवेकिता।
एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम्॥

दुराचारी बनने में कौन सी कमी बाकी रहजाती है? वैसे तो वर्तमान की शिक्षा—

आधुनिक शिक्षा यदी तुम प्राप्तगर यह कर सको।
तो लाभ क्या, बस क्लर्क बनकर पेट अपना भर सको॥
गर हो सके तो बन मदर्रस, पेट का पालन करो।
नहिं हो सके तो भीख मांगो, अन्यथा भूखों मरो॥
सिर झुका लिखते रहो, सुन अफसरों की गालियां।
तो दे सकेंगी सांझ को, दो रोटियां घरवालियां॥

शिक्षे ! तुम्हारा नाश हो, तुम नौकरी के हित बनी ।
जीवित रहो जीवित रहो, रक्षक तुम्हारे हैं धनी ॥

जब से पैदा हुए न हमने, एक घड़ी भी सुख को जाना ।
कितना बड़ा पेट का खंदक, भरने को दो दाने पाना ॥

मुट्ठी भर लोगों ने जग का, लूट रखा है सभी खजाना ।
आज व्यक्तिगत प्रश्न नहीं है, आज बदलना हमें जमाना ॥

वर्तमान शिक्षा के शिक्षक बीड़ी, सिगरेट तथा अन्य मादक वस्तुऐं और दुर्व्यसन जैसे जुआ आदि खेलते और खाते पीते हैं, क्या इसका नवनीत से बालकों पर कुप्रभाव नहीं होता ? जिसे सुधारने की क्या आवश्यकता नहीं है ? और जब वर्तमान शासक जो चन्द दिनके लिये बनते हैं वे क्या सभ्यता के साथ टैक्स लगा कर उनमें चोरी करना नहीं सिखाते ? क्या यह सरासर सभ्यता के साथ डाका नहीं डाला जा रहा है ? यह सब किस लिये ? सांसारिक भोगों को भोगने के लिये । क्या यह संसार–समुद्र का मथन नहीं है ? और क्या यह दानवता नहीं है ?

जब यह बालक कुमार--अवस्था से निकल कर यौवनावस्था में प्रवेश करता है तो माता पितादि को विवाह की चिन्ता होती है और सभी लोग व्यवहार में कहने लगते हैं कि शादी करो, शादी करो । उस समय परिवार के लोग शादी की तैयारी करते हैं, संसार--सिन्धु में उतारने के लिये । जिसका प्रतीक है :—

संसार--सिन्धु में उतर रहे, दो प्राणी नादान खिवैया ।
श्रीमान् दो आशीस इनको, पार लगे जीवन की नैया ॥

दो प्राणी जीवन--नौका ले, संसार--सिन्धु में उतर रहे ।
आशीस आपकी पाने को, उत्सुक नयनों से निरख रहे ॥

यह दोहे विवाह--मंडप में प्राय: लोग लिखकर टाँगते हैं, और चिट्ठी–पत्रिकादि में भी छापते हैं । अब देखिये, यहाँ विकार--भाव उत्पन्न होता है । पूर्व में माता के साथ सोने में कोई विकार–भाव नहीं था । अब स्त्री के साथ सोने में विकारभाव पैदा होता है । स्त्री में मनुष्य के मुग्ध हो जाने से मुग्धा कहलाती है । रम जाने से रम्भा । रमण के समय रमणी । जीवन की साथी होने से नारी । साथ रहने से स्त्री । विगड़े कार्य बनाने से वनिता । डरने से भीरु । धोखा देने में चातुर्य होने से अंगना । बालक खिलाने से ललना । कामोद्दीपन की क्रियाओं के करने से कामिनी । क्रोध का जोश दिलाने से योषिता । स्वयं जोश में रहने से योषा । सीमायें बांधने से सीमन्तिनी । आदि अनेकों नाम गुण और दोष के अनुसार श्लोक में बताये हैं । वह धनंजय नाम माला इस प्रकार गिनाये हैं:—

स्त्री नारी वनिता मुग्धा, भामिनी भीरुरंगना ।
ललना कामिनी योषिद्, योषा सीमन्तिनी वधूः ॥

नि ास्त्रिन्यबला बाला, कामुकी बामलोचना ।
भामा तन्नूदरी रामा, सुन्दरी युवतिश्चला ॥
भार्या जाया जनिः कुल्या, कलत्रं गेहिनी गृहम् ।
महिला मानिनी पत्नी, तथा दारा पुरन्ध्रयः ॥
बल्लभा प्रेयसी प्रेष्ठा, रमणी दयिता प्रिया ।
इष्टा च प्रमदा कान्ता, चण्डी प्रणियनी तथा ॥
सती पतिव्रता साध्वी, पा[illegible]कपत्यपि ।
मनस्विनी भवत्यार्या विपरीता निरूप्यते ॥

ऊपर स्त्रियों के नाम कहे गये हैं । अब विपरीत स्त्रियों के नाम कहे जाते हैं:--

बन्धकी कुलटा मुक्ता, पुनर्भू पुंश्चली खला ।
स्पर्शाभिसारिका दूती स्वैरिणी संफली तथा ॥
गणिका लंजिका वेश्या, रूपाजीवा विलासिनी ।
पण्यस्त्री दारिका दासी, कामुकी [illegible]र्ववल्लभा ॥

मित्र के रूप में स्त्री के नाम

वयस्याऽऽली सहचरी; सध्रीची वसयाःसखी ।
आली विर्वाजित मित्रं; सम्बन्धो मित्रयुक् सुहृत् ॥

माता के रूप में स्त्री के नामः—

सवित्री जननी माता, जनकः सविता पिता ।
देहोऽपघनकायांगं, वपुः सहननं तनुः ॥

यह नारी के नामों के अनुकूल-प्रतिकूल गुण दोष विद्यमान हैं ।

यौवनावस्था में विकारभाव का मूल कारण क्या है ?

(श्लोक)

न देवो विद्यते काष्ठे, न पाषाणे न मृण्मये ।
भावे हि विद्यते देवस्तस्माद् भावो हि कारणम् ॥

भावार्थः—देवता न काष्ठ में है न पाषाण में, न मिट्टी में न मूर्ति में । यदि देवता है तो भावों में ही है । इसलिए वेश्या की मनोभावना कही है किः—

पंडित उपदेशक मरि जावें, शास्त्र अगनि माँहि जरि जाँहि ।
पुरखा जन परलोक पधारें, तरुण पुरुष रडुआ ह्वै जाँहि ।।
कन्या सब हमको मिलि जावें, गनिका इम चिन्तत मन माँहि ।
इत्यादिक नित करैं अमंगल, ताहि मंगला--मुखी कहाँहि ।।

हाट बाट नित बैठकरि, जोवन बेचनिवारि ।
कही जाति या देश में, हाय मंगला नारि ।।

और अमंगला किसे कहते हैं ?

विधवा तरुण तपस्विनी, असिव्रत पालनहारि ।
कही जाति या देश में, हाय अमंगला नारि ।।

वेश्याऽसौ मदनज्वाला रूपेन्धनसमेधिता ।
कामिभिर्यत्र हूयन्ते, यौवनानि धनानि च ।।

वेश्या कामरूपी ईंधन से प्रचण्ड हुई अग्निज्वाला है, जहां कामी पुरुष अपने धन और यौवन का होम करते हैं।

कश्चुम्बति कुलपुरुषो वेश्याधरपल्लवं मनोज्ञमपि ।
चार भाट चोर चेटक, नट विट निष्ठीवनशरावम् ।।

भावार्थ—वेश्या के अधर-पल्लव को कौन कुलीन पुरुष चूमेंगा ? वह तो ठग ठाकुर चोर नीच और नट आदि जारों के थूकने का शकोरा (पीकदान) है ।

रजकशिलासदृशोभिः कुक्करकर्परसमानचरिताभिः ।
गणिकाभिर्यदि संगः, कृतमिह परलोकवार्ताभिः ।।

भावार्थ—जिस प्रकार धोवी की शिला पर हरेक के वस्त्र धुल जाते हैं, उसी प्रकार वेश्या से भी हरेक ऊंच नीच विषय सेवन कर जाता है। जिस प्रकार मर्घट में पड़ी खोपड़ी पर कुत्ते लड़ते हैं, उसी प्रकार वेश्या पर भी लोग लड़ते रहते हैं। जिसने वेश्या का संगम किया उसने परलोक की बात जान ही ली, अर्थात् उसे जान लेना चाहिए कि मैं नरक अवश्य जाऊंगा।

स्त्री के ७ दोष

अनृतं साहसं माया मूर्खत्वमतिलोभिता ।
अशौचत्वं निर्दयत्वं, स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः ।।

भावार्थः—१. झूठ बोलना, २.साहस के साथ कार्य करना, ३. कपट क्रियाओं का सेवन करना, ४. जड़मति, ५ अति लोभ दशा का होना, ६. दुर्गंधनीय अपावन दशा में रहना, ७. निर्दय हृदय होना; इत्यादि स्त्री--जाति में स्वाभाविक दोष होते हैं।

अर्था: पादरजोपमा गिरिनदीवेगोपमं यौवनम् ।
मानुष्यं जलविन्दुलोलचपलं फेनोपमं जीवनम् ॥
धर्मं यो न करोति निश्चलमतिः स्वर्गार्गलोद्घाटनम् ।
पश्चातापहतो जरापरिणतः शोकाग्निना दह्यते ॥

भावार्थ—लक्ष्मी Wealth के समान चंचलता (१) पर्वत की नदी के समान यौवनावस्था (२) चार दिन की जवानी (३) मनुष्यों का जीवन कल्लोलित जल के चपल विन्दु तथा जल के झाग सदृश तत्क्षण नष्ट होने वाला, स्थिर बुद्धि को दूर हटाने वाला (४) वृद्धावस्था में हत-प्रहत किया जाता है (५) शोकाग्नि में जलाना (६) अग्नि के समान पौद्गलिक स्थूल पदार्थों को जलाने की क्षमता (७) शोक के समान दुखदाई अन्य पदार्थ नहीं।

कहां गये वे दिन मूरख बोल ?

जनमत ही उच्छाह भये बहु, बजे नगाड़े ढोल।
लाड़ प्यार से गोदी खेला कर कर विविध कलोल ॥कहां०॥१॥

पांव चला, फिर थोथी बोली से बोला तू बोल।
ज्यों ज्यों वृद्धि हुई या तन की, त्यों त्यों बढ़े कपोल ॥कहां०॥२॥

मात पिता अरु गुरू जनों ने, दी शिक्षा अनमोल।
लेकिन तूने बालकपन का, किया न कुछ भी मोल ॥कहां०॥३॥

युवा हुआ तरुणी संग राचा, खोया वीर्य अमोल।
मत्त भ्रमर बन यौवन खोया, चूमत चाम कपोल ॥कहां०॥४॥

धन संपति पाकर के तूने, कीना दुर उपयोग।
ज्ञान, ध्यान, जप, तप नहिं कीना, चित रहा डांवांडोल ॥कहां०॥५॥

सतसंगति नहिं कीनी तूने, खोया समय अमोल।
इससे ही तू बना हुआ है, आज ढोल की पोल ॥कहां०॥

धर्मकार्य में दई न कौड़ी, समझी उनको पोल।
रंडीबाजी में पैसे को, लुटा दिया दिल खोल ॥कहां०॥७॥

अर्द्ध मरे सम हालत हो गई, सूखे लाल कपोल।
हाड़ मांस का नाम शेष बस, लटका चामर झोल ॥कहां०॥८॥

राग द्वेष माया—तृष्णा ने जाना तुझको बोल।
ज्ञानदृष्टि से देख मूर्ख तू, अपना खाता खोल ॥कहां०॥९॥

क्षणभंगुर संसार अटल तू, काया माने चोल ।
जरा देर में विनश जायगी, आने दे झकझोल ।।कहां०।।१०।।

अब भी गर तरना चाहे तो, धरम करम को तोल ।
मुन्नालाल लगादे आतम, प्रभु--चरणों में खोल ।।कहां०।।११।।

गुरु उवाच (दोहा)

देह अपावन है बुरी, मल-मूत्रन की खान।
अरे आतमा मूढ तू, क्यों नहिं करता ग्लान ।।१२।।

तू अविनाशी आतमा, ये जड़ विनशनहार ।
तू ज्ञानी अज्ञान ये, फिर क्यों करता प्यार ।।१३।।

इसलिए—

शुभ भावों से पुण्य हो, अशुभ भाव से पाप ।
दोनों की संतान से, होता पश्चाताप ।।

इसमें भाव ही मुख्य कारण है। कमर झुकी हुई एक वृद्ध माता से एक यौवनासन्न लड़के ने हंस कर पूछा:—

अधः पश्यसि किं बाले, पतितं किं सुन्दरि ?

तो उसने उत्तर दिया—

रे रे मूर्ख ! न जानासि, गतं तारुण्यमौक्तिकम् ।

भावार्थ — अरे मूर्ख ! तू नहीं जानता कि मेरा तरुणतारूपी मोती गिर गया है। इसी प्रकार से एक लड़के ने एक बृद्ध पुरुष से पूछा (जिसकी कमर झुकी हुई थी) कि तुम्हारा क्या गिर गया है, जिसकी तुम तलाश कर रहे हो ? बृद्ध ने उत्तर दिया :—

कमर खमीदा नहीं है, वे--बजह जईफों की ।
जमीन ढूंढ़ती है, मजार के काविल ।।

भावार्थ — यह है कि हे नवयुवको ! तुम्हें इस बात पर ध्यान देना है कि यदि तुमने अपने शील की रक्षा नहीं की और समुद्र मथने में अर्थात् सांसारिक विषय-भोगों में ब्रह्मचर्य को नष्ट कर दिया तो तुम भूले न रहो, यही दशा कल को तुम्हारी भी होगी। इसलिये खोकर अवश्य सीखो।

चोर और महाराजा भोज

एक दिन महाराजा भोज के महल में एक चोर चोरी करने को घुसा, और कोशिस करता हुआ राजा के पलंग के नीचे जाकर बैठ गया।

राजा को नींद नहीं आई थी। राजा ने पड़े पड़े एक श्लोक बनाया। उसके तीन चरण तो बन गये, पर चौथा चरण न बन सका। उस चौथे चरण को चोर ने बना दिया।

राजा के तीन चरण यह थे—

चेतोहरा युवतयः, सुहृदोनुकूलाः, सद्बान्धवाः प्रणयगर्वगिराश्च भृत्याः।
गर्जन्ति दंतिनिवहाः तरलास्तुरंगाः,..............................॥

भावार्थ :- मेरे चित्त को हरने वाली स्त्रियां हैं, मेरे अनुकूल मित्र हैं, मेरे भाई बन्धु बड़े सज्जन हैं; मेरे नौकरों को घमंड बिलकुल नहीं है, मेरे द्वार पर हाथी गरज रहे हैं, घोड़े हिनहिना रहे हैं, मैं ऐसी सम्पत्ति वाला हूँ। इस प्रकार ३ चरणों को राजा बार बार उच्चारण करता है, तब चौथा चरण चोर कहता है —

"सम्मीलिते नयनयोर्नहि किंचिदस्ति ॥"

अर्थात्—आँखें मिच गईं तो फिर तुम्हारा कुछ भी नहीं है !

⁂

विकारभाव का मूल कारण संगति है—

ज्ञान घटै शठ कूरन के संग, मान घटै पर के घर जाये।
पाप घटै पुनि दान किये, तन--रोग मिटै कछु औषधि खाये ॥

प्रीति घटै कछु मांगन तें, अरु नीर घटै ऋतु ग्रीषम आये।
जोर घटै अति मैथुन तें, यम--त्रास घटे प्रभु के गुन गाये ॥

ज्ञान बढ़ै गुनवानन के संग; ध्यान बढ़ै तपसी संग कीये।
मोह बढ़ै परिवार की संगति, लोभ बढ़ै धन में चित दीये ॥

क्रोध बढ़ै नर मूढ़ की संगति, काम बढ़ै तिय को संग कीये।
पाप बढ़ै गणिकानि की संगति, पुण्य बढ़ै जिन--पूजन कीये ॥

पाठको ! इस समुद्र-मंथन को आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने सम्राट चन्द्र-गुप्त को अपने मनोविज्ञान से समझाया कि इस यौवनावस्था को व्यर्थ मत जाने दो। सच्चरित्र व्यक्ति तेजस्वी होता है।

मरणासन्न एक बृद्ध पुरुष खाट पर पड़ा अन्तिम श्वास ले रहा था। उस समय किसी मिलने वाले नौजवान ने आकर पूछा—पिताजी ! कैसे पड़े हो ? तो उत्तर में बृद्ध पुरुष ने कहा:—

(दोहा)

बृद्ध पुरुष खटिया विषें; करता पड़ा विलाप।
रोगग्रसित दुःखित हृदय, भरा शोक सन्ताप ॥१॥

नौजवान इक मित्र ने आकर पूछी बात ।
कहो पिता कैसे पड़े, तन में है कुशलात ।।२।।

कुशल क्षेम के दिन गये, गई सुक्ख की रात ।
जोश जवानी का ढला, सूख गया सब गात ।।३।।

पौरुष सारे थक गये, पैसा रहा न पास ।
रुग्ण पड़ा हूँ खाट पर, तजि जीवन की आस ।।४।।

किसी समय के दिन बड़े, किसी समय की रात ।
भैया ! तुमसे कहत हूं, अपने मन की बात ।।५।।

हाय कहां अब ढूंढूं मैं ...... !

जो कुछ करना हो सो करलो, सुकृत तरुण अवस्था में ।
पैसा पास निरोगी काया, इन्द्रिय ठीक व्यवस्था में ।।
करि न सकोगे बृद्धापन में, बल पौरुष थकि जाने से ।
आग लगी कुटिया में फिर क्या, होता कूप खुदाने से ।।
बृद्धा सौत सतावेगी तब, रोओ तरुणा रानी को ।
हाय कहां अब ढूंढूं मैं उस, रूठी हुयी जवानी को ।।६।।

समय एकसा सदा न रहता, ढलती फिरती छाया है ।
आज धनी वह काल निर्धनी, आनी जानी माया है ।।
तरुण समय की गौरव-गाथा, अपनी तुम्हें सुनाता हूं ।
धर्म कर्म कुछ किया न मैंनें, अब पीछे पछिताता हूं ।।७।।

सोलह से चालीस बरस तक, चढ़ती हुयी जवानी में ।
कूद जाउंगा निर्भय होकर, बांसों गहरे पानी में ।।
मार छलांग पेड़ पर चढ़, टहनों को खूब हिलाता था ।
बातों ही बातों में ऊंचे, पर्वत पर चढ़ि जाता था ।।
सह न सकूं था कभी किसी की, किंचित कड़ुवी बानी को ।। हाय० ।।८।।

दौड़ भाग में सब से आगे, अब्बल नम्बर पाता था ।
रस्साकसी पटेबाजी, लाठी भी खूब चलाता था ।।
कुश्ती में अपने से दूने, पहलवान को ढाता था ।
ताल ठोक कर बड़े बड़े, योधाओं को डरपाता था ।।
बेधि देउंथा कठिन निशाना, लेकर तीर कमानी को ।।हाय०।।९।।

मेरे थप्पड़ से दुश्मन का, निकल जवाड़ा आता था ।
मेरे सिर से सिर दुश्मन का, नरियल सा फट जाता था ॥
मेरी कुहनी से दुश्मन का, चूर चूर हो जाता था।
मेरी टेढ़ी नजर देखि, दुश्मन का दिल थर्राता था॥

मुक्के से सीधा करता था, बड़े बड़े अभिमानी को ॥हाय०॥१०॥

भरा जवाड़ा था मुंह में, बत्तीसों दांत चमकते थे ।
कश्मीरी सेवों के सदृश, कलले सुर्ख दमकते थे ॥
उन्नत मस्तक गोल चांद सा, सुन्दर दिव्य ज्योति बाले ।
घूघर वाले केश शीस पर, नागिन से काले काले ॥

तनी हुई मूछें मुह पर, जतलाती थीं मर्दानी को ॥ हाय०॥११॥

हृष्टपुष्ट था बदन गठीला, सुन्दर सुदृढ़ सजीला था ।
गज की सूंड़ समान भुजाएं, हृदयस्थल जोशीला था ॥
सिंह समान पराक्रम था, सब अंग अंग फुर्तीला था।
थंभ समान पुष्ट जंघाएं, कोई अंग न ढीला था ॥

देता था निकाल पृथ्वी से, लात मारकर पानी को ॥हाय०॥१२॥

दूर दूर के पहलवान भी मुझे देखने आते थे ।
गुजराती कश्मीरी सिंधी, सरहद्दी शरमाते थे ॥
वाह वाह कहते थे, मेरी देख सलौनी सूरत को ।
रची विधाता ने आकर क्या, ऐसी सुन्दर मूरत को ।

नीचा अचकन चुश्त पजामा, साफे के रंग धानी को ॥ १३ ॥हाय० ।

जैसा था मैं बली साहसी, वैसा ही था व्यापारी ।
पुरुषारथ से धन संचय करि, भरि देता था अलमारी ॥
नारि सुता सुत पोता पोती, आज्ञा में थे घर वाले ।
नाते रिश्तेदार करें थे, स्वागत सब जीजा साले ।

सब को राखि प्रसन्न किया करता अपनी मनमानी को ॥हाय॥१४॥

जोश जवानी का रंग फीका, पड़ने लगा पचासा में ।
साठ बरस का शठ कहलाया, इस जीवन की आशा में ॥
सत्तर में सब कहने लगे हत्तेरे की, धुत्तेरे की ।
वे ही करने लगे वदी, जिनके संग में की थी नेकी ॥

अपने हुए बिराने अब तो, करि करि खेंचा तानी को ॥ हाय० ॥ १५ ॥

सत्तर के लगभग अब, तन पर, सही बुढ़ापा छाया है।
किधों काल ने मुझे पकड़ने को यमदूत पठाया है॥
पग खूंटा दो हालन लागे, चरखा हुआ पुराना है।
विगड़ि गई पेट की अंतड़ियां, होता हजम न खाना है॥

सभी रोग आये करने, मुझ बूढ़े की महमानी को॥ हाय०॥ १६॥

शीस भया सब स्वेत, मुरादावादी जेम पतीली है।
बैठि गये हैं गाल बदन के, खाल भई सब ढीली है॥
रौनक जाती रही भई, चहरे की रंगत पीली है।
टप टप टपके नाक सिड़क से, मूंछे रहती गीली हैं॥

हंसते हैं सब आंख देखि, अंधी चुंदी घुंधलानी को ॥ १७॥ हाय०॥

टूटि गये सब दांत बना मुंह, सांपो का सा भट्ठा है।
बोला जाता नहीं ऐंठि करि, जीभ बनी ज्यों लट्टा है॥
खांसत खांसत धड़क उठा दिल, बलगम हुआ इकट्ठा है।
अंग अंग में वायु भरी सब, चीवत रग रग पट्ठा है॥

अरे करूं कैसे मैं सीधी, अब इस कमर कमानी को॥ हाय०॥ १८॥

जो करते थे प्यार वही अब, टेढ़ी आँख दिखाते हैं।
नारि यार परिवार सुता सुत, भाई पास न आते हैं॥
खाना पीना औषधादि भी, नहीं समय पर मिलती है।
हाथ पांव असमर्थ हुए, कमबख्त न काया हिलती है॥

पड़ा खाट पर काट रहा था, इस मौत सदृश जिंदगानी को॥हाय०॥ १९॥

जो धन माल पास था मेरे, सबने मिलकर बांटा है।
फिर भी मैं इनकी आंखों में, खटकूं जैसे कांटा है॥
दे दे गाली कहते मुझ से, खून हमारा पीवेगा।
ये खूसट बूढ़ा नहिं मरता, जाने कब तक जीवेगा॥

हृदय फटा जाता है मेरा, सुन सुन तीक्षण बानी को॥ हाय०॥ २०॥

मन में था उत्साह पास में, पैसा तरुण अवस्था थी।
सब मेंरे खाने पीने की, घर में ठीक व्यवस्था थी॥
तब न किया आतम हित मैंने, भोगों में फंस जाने से।
चोर निकल भागा घर से, फिर क्या है शोर मचाने से॥

खड़ा शीस पर काल लूटने, इस नरभव रजधानी को॥ हाय०॥ २१॥

कहते थे गुरु बार बार; मैं समझा नहिं समझाने से ।
जप तप संयम नेम धरम ब्रत, सीखा नहीं सिखाने से ।।

बीता समय हाथ नहिं आता, गीत पुराने गाने से ।
'मक्खन' छोड़ चलो अब जल्दी, इस झोंपड़ी पुरानी को ।।हाय०।।२२।।

देव और दानव

पाठकगण ! समझ लीजिये कि देव कौन है और दानव कौन है ? समुद्र क्या है और मथन किस चीज का किया गया ? और समुद्र मथने पर क्या परिणाम निकला ? इस गुफा नं० १९ जो अमृत गुफा है, इसके दरवाजे पर बाहर की ओर समुद्र में एक शिवलिंग है, जिसे सर्प की रस्सी बनाकर दोनों ओर देव दानव के रूप में मानव अपनी ओर खींच रहे हैं ।

काम एक प्रकार का भयंकर सर्प है और इसका काटा हुआ नहीं बचता, किन्तु सर्प का काटा हुआ मंत्र और औषधि से बच जाता है ।

इसी प्रकार से विवाह होने के पश्चात् वर-वधू विषय भोगों में लवलीन हो जाते हैं । अब यहाँ पर भाव दो प्रकार के हो जाते हैं, एक तो विकारभाव, दूसरा विरागभाव ।

कामी पुरुष नारी के उन्नत स्तन देख कर जिन्हें दूध, आंचल, बोबो, धन और क्षीर आदि कहते हैं । कामांधी उन्हें मसल कर विकारभाव से आनन्द मानता है । यह दानवता है । यह नहीं जानता कि यह तो मांस की रक्तादि से भरी थैली है । ग्लानि नहीं करता । और अपनी शक्ति-- ब्रह्मचर्य, शील को नष्ट कर अन्त में पराजित होता है । यदि यह बात सत्य नहां तो किसी बृद्ध पुरुष को देखो और उससे अनुभव की बात सुनो और समझो ।

विरागी पुरुष विचारते हैं कि यह ज्ञानेन्द्रिय ५ हैं । अब एक इन्द्री के पीछे किन किन जीवों की क्या दशा हुई । उस संबन्ध में पढ़िये :—

पंचेन्द्रिय के विषय

(छप्पय)

रसना के सर मीन, प्राण पल माँहि गमावै ।
अलि नासा परसंग, रैन बहु संकट पावै ।।
मृग करि श्रवण सनेह, देह दुर्जन को दीनी ।
दीपक देख पतंग, दृष्टि हित कैसी कीनी ।।
फरस इन्द्रि बस गज (करि) परयो कौन कौन संकट सहै ।
एक एक विष--बेलि सम, पंचन सेय तु सुख चहै ।।

जो अज्ञानी ज्ञान की, बातें करे विशेष ।
ज्ञानपरिणमन ना करै, भुगतै दुःख विशेष ।।

जब एक इन्द्री ही विनाश का कारण बन जाती है तो पांचों ही इन्द्रियों के सेवन करने वालों की क्या गति होगी ?

पठको! स्वयं अनुभव में लाई हुई कृति की ओर भी ध्यान दीजिये कि:-आप नदी,बावड़ी, तालाब आदि के जल में ओंधे-सीधे- आसन मार कर उसका आनंदानुभव लेते हैं । अर्थात् उसमें तैरते हैं । उसका पानी भी उछालते हैं । अनेकों प्रकार से उस जल में क्रीड़ा करते हैं । उसी प्रकार मानव स्त्री के साथ अनेकों आसनों का प्रयोग अर्थात् विषय भोगादि काम-क्रीड़ा करता है, उसका मथन करता है, किन्तु उस विषय-भोग से तृप्ति नहीं होती । जिस प्रकार कुत्ता कुतिया के पीछे फिरता है किन्तु कार्तिक मास में भूख प्यास को छोड़ देता है, इतना मुग्ध हो जाता है ।

प्यारे बन्धुओ ! मानव की यही दशा है । इसने बारहों महिने विषय भोगादि के लिये मान लिये और कार्तिक मास बना लिया । तथा अपने संयम, नियम का परित्याग कर दिया । जब स्त्री गर्भ धारण कर लेती है और प्रसव करती है तो वह एक कन्या रत्न को जन्म देती है तो उसमें ही वह १४ रत्न प्राप्त होते हैं जो पुण्य प्रकृति देव और पाप प्रकृति दानव थे ।

श्री मणि, रम्भा, वारुणी, अमिय, शंख, गजराज ।
कल्पद्रुम, शशि, धेनु, धनु, धन्वंतरि, विष, बाज ।।

भावार्थ:— शब्द ································ अर्थ ································

१—श्री (लक्ष्मी है)= यह गृहलक्ष्मी है ।

२—मणि= शील और सेवाभाव इसका मणि है ।

३—रम्भा= लड़की सुदूर अपरिचित ग्राम-कुल की होकर जब वह विवाहित होकर हमारे ही वंश में आती है और वह हम लोगों में इतनी रम जाती है कि जहां उसका जन्म हुआ उसे त्याग भी देती है और अपने अनुकूल बना लेने से रम्भा है।

४—बारुणी= कोई भी पर पुरुष या घर के ही लोग अनुचित बात उसे कह देवें तो अपने पति से कह कर सिर कटाने में कमी नहीं करती अर्थात् इसका मदिरा जैसा नशा चढ़ता है और अपमानित कराती है मद्य के समान, यह स्त्री मद है ।

५—अमिय= अमृत के समान इसलिये है कि:—

कार्ये दासी रतौ वेश्या, भोजने जननी समा ।
आपत्तौ बुद्धिदात्री च, स भार्या भुवि दुर्लभा ।।

उत्तम पदार्थों युक्त अमृत के समान भोजन कराती है। जिससे हम स्वस्थ रहते हैं। आज्ञा में चलने से अमृत के समान है ।

६—शंख=शंख का अर्थ मूर्ख से भी है। अकसर लोग मुझे शंख कहा करते थे और जब मैं उनसे पूछता था कि शंख का अर्थ क्या है ? तो मूर्ख ही बताया गया। अकसर विना विचारे कार्य कर डालना, पूर्वापर विचार न करना मूर्खता है। वह प्राय: स्त्रियों में पाई जाने से उन्हें शंख की भी उपमा दीगयी है। तथा शंख का अर्थ शंखध्वनि से भी है। जब माता बालक को जन्म देती है या कोई महान् कार्य या उत्सवादि हों तो अपनी माधुरी वाणी से गायन गा कर उपदेशामृत देकर मुग्ध कर लेती है। वाणी से गीत गाना भी शंखध्वनि करना है।

७—गजराज=जब हाथी बाजार से निकलता है तो उसके पीछे पचासों कुत्ते लग जाते हैं और चिल्लाते भोंकते हैं, किन्तु वह चिन्ता नहीं करता और अपने मार्ग से चला जाता है। ठीक उसी प्रकार से जब नारी श्रृंगारयुक्त होकर कारणवशात् मार्ग से निकलती है तो उसके पीछे कामान्धी जो उसके शील को विगाड़ना चाहते हैं नाना प्रकार के दोषयुक्त वचनों से निन्दा करते हैं, किन्तु वह विदुषी महिलारत्न कामी कुत्तों की परवाह नहीं करती और गजराज की भाँति गंभीरता धारण कर चली जाती है। इस कारण उसे 'गजगामिनि' कहने में कोई दोष नहीं।

८—कल्पद्रुम=अर्थात् कल्पबृक्ष इसलिये है कि वह संतानों से घर भर देती है और समय समय पर जो खाने, पहिनने, ओढ़ने आदि की सुख-सामग्री मांगने पर पूर्ति कर देती है।

९—शशि=आप यह भली प्रकार जानते हैं कि चंद्रमा शीतल होता है। शिवजी के मस्तक पर चंद्रमा होता है। समुद्र का पुत्र चन्द्रमा, विष्णु का साला चन्द्रमा। और जहां समुद्र में अथाह जल भरा हो वहाँ अग्नि शान्त हो जाती है। इसी प्रकार से मानव के शरीर की अग्नि को शांत करने की शक्ति नारी में होने से इसे शशिप्रभा, शशिवदनी, शशिकुमारी आदि नामों से पुकारते हैं। तथा अनन्य प्रकार के सुखों की दाता होने से भी शशि है।

१०-धेनु= धेनु का अर्थ गाय से है। जिस प्रकार गाय अपने बछड़े को दूध पिलाती है उसी प्रकार से यह अपने बालकों को दूध पिलाने से धेनु है।

११-धनु=नारी पुरुष की बामांगी है। यह सुख में पीछे और आपतिकाल में सदैव आगे रहती है। भगवान राम जिस समय वन-वास को गये तो धनुष को पीछे कंधे पर टांग कर गये थे। और जब खरदूषण और रावण जैसे पराक्रमी से मुकबला हुआ तो वह सामने आ गया था। उस समय बांया हाथ दाहिने हाथ से कहता है :--

दान मान सम्मान में, सदा रहेउ अगवान।
अब क्यों पीछे जात है, लगत दशानन वान॥

उस समय दाहिना हाथ उत्तर देता है :---

रामचन्द्र के श्रवण ते, पूछन चाहों वात।
एक एक मस्तक हनूं, या हनूं एक ही साथ॥

भावार्थ यह है कि नारी भी धनुष के समान आपत्ति काल में सामने आ जाती है। जैसे वीरॉगना लक्ष्मीबाई महारानी झांसी तथा रानी दुर्गावती आदि। तथा धार्मिक और पारमार्थिक कार्यों में सहायता करने से धनु समान है।

१२—धन्वंतरि=वैद्य इसलिये है कि बालक के जन्म से मरण पर्यन्त तक उसका स्नेह इस प्रकार है जैसे गाय और बछड़े का। माता स्वयं गीले में सोती है और बालक को सूखे में सुलाती है। जिस प्रकार समुद्र में तूफान आता है उसी प्रकार से देहधारियों के भी कहा है।

देह धरे कौ दण्ड है, सब काहू को होय।
ज्ञानी भुगते ज्ञान सों, मूरख भुगते रोय ॥

जब रोगों का तूफान सिर पर आ जाता है उस समय माता अपने बालक के स्वस्थ रखने की चिन्ता में लग जाती है। औषधि उपचारादि कर उसे स्वस्थ बनाती है। प्राय: स्त्रियाँ दवाखानों में नर्स, दाइयों और डाक्टरनी आदि को देखते हैं। इसलिये वह धन्वंतरि वैद्य भी है।

१३-विष=इसलिये है कि विष-पान करने से मनुष्य इकदम सो जाता है और यह हंसाते खिलाते सुलाती है।

नारी विष की जड़ लखो, नारी नागिन जान।
यम अरि मारे दाव से, यह हंस हरती प्रान ॥

और यह क्रूर स्वभाव की होने से सिंहनी भी है। कहा है:—

क्रूर सिंह हिय तास से, क्रूर तिया हिय जान।
पति सुत धन से रहित तिय, का हिय क्रूर महान ॥
अशुचि कुटिलता मूर्खता, द्वेष कपट छल मान।
क्रोध झूठ ये नारि के, दोष सहज ही जान ॥
पति को वश करके तिया, करती महा कसूर।
निजी दोष को ढाँकने, पति पर गुस्सा पूर ॥
कान नाक सिर हाथ पग, कटि बंधन सब अंग।
तो भी नारी वश नहीं, फिर भी करती तंग ॥
नारी के सब वश भये, जग के जीव अपार।
दुःख खानि यह जिन तजी, हुए मुक्ति भर्तार ॥

१४-बाज=यहाँ बाज का अर्थ घोड़े से है। जिस प्रकार घोड़े में दोष होते हैं, वह स्त्री के गुण कहे गये है। जैसे :—

शीतल पातल पतल नख, लघु भोजन लघु रोष।
ये स्त्री के पांच गुण, येहि तुरी के दोष ॥

और घोड़ी के गुण स्त्री के दोष हैं :—

अति चयन्च चंचल चपल. अती खाद्य अति रोष ।
येहि तुरी के पांच गुण, ये स्त्री के दोष ॥

जिस प्रकार मानव घोड़े पर सवारी करता है उसी प्रकार विषय-लंपटी स्त्री पर। जिस प्रकार से बाज पक्षी पक्षियों पर आक्रमण करता है उसी प्रकार से स्त्री पुरुष पर । इसलिये वह बाज है ।

इस प्रकार से देव और दानवों ने १४ रत्न समुद्र मथ कर निकाले, यह भी एक अर्थ निकलता है । जिस प्रकार पतंगा एकइन्द्री जनित सुखों के पीछे अपने प्राण गंवा देता है उसी प्रकार से मानव पांचों ही इंद्रिय जनित सुखों को भोगता हुआ भी तृप्त नहीं होता और विषयों के पीछे अपने जीवन की आहुति दे देता है ।

आचार्य कहते हैं कि हे राजन् ! यह विषय भोग तभी तक सुहावने लगते हैं जब तक शरीर में रक्त है, शक्ति है । जिस समय शक्ति क्षीण हुई और रोगादि ने घेरकर तेरी सूर्य समान दैदीप्यमान कीर्ति पर कालिमा लगाई। यदि इसमें सुख होता तो :—

जो विषया संतन तजी, मूर्ख ताह लपटात ।
ज्यों नर डारत वमन सो, श्वान स्वाद सों खात ॥

द्वीपायन ऋषि कोप में, रावण मान मंझार ।
माया में साधू मरा, लोभ विप्र क्षयकार ॥

रोग लूटता भोगि को, लोभी को शठ जान ।
वेश्या लूटे कामी को, काल सभी को मान ॥

मृग कस्तूरी, बृक्ष फल, तिया रूप, गज हन्त ।
सिंह चाम, नर द्रविण ये, बैर करें तन दन्त ॥

मांसभक्षि के कंह दया, मद्यप कंह सतवान ।
कामी के विद्या कहां, रंक कहां सुख जान ॥

माया ममता दीनता, तृष्णा चिन्ता जान ।
ये पन पापिनि मनुज का, खून सोखती मान ॥

इस लिये हे राजन् ! यह नारि ही समुद्र है । देव प्रकृति पुण्य और दानव प्रक्रिति पाप है । नरक–गति में लेजाने वाली है, त्यागने योग्य है ।

भारत की भविष्य वाणी

सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य के सोलह स्वप्न

स्वप्न	फल
(१) सूर्य अस्त—	बृष-धर्म का अभाव। गोवध के कारण घी, दूध का अभाव। द्वादशांग के जानने वाले नहीं रहेंगे।
(२) रत्नों का ढ़ेर धूल में—	यतियों में एकता नहीं रहेगी। प्रत्येक घर में फूट होगी।
(३) कल्पवृक्ष की डाल टूट गई—	क्षत्रिय जिन-धर्म को नहीं मानेंगे। आत्मस्वभाव दयारहित होगा।
(४) समुद्र मर्यादा रहित होगा—	राजा नीतिज्ञ एवं पटु नहीं होंगे। भ्रष्टाचारी, चोर, डकैती और हिंसकों, विषयभोगियों, विद्वेषियों के हाथों में शासन की बागडोर होगी।
(५) बारह फण का सर्प—	बारहों मास अकाल रहेगा। प्रजा दुखी रहेगी।
(६) देवताओं का विमान उलट गया—	सज्जन और दयावान नहीं दिखेंगे।
(७) राजपुत्र ऊंट पर चढ़ा हुआ है—	शासक वर्ग निम्न श्रेणी के असत्यभाषी छली और दगाबाजी से बनेंगे और राज्य भोगने की लालसा से भीख के मांगने वाले निर्दयी होंगे।
(८) दो काले हाथी का युद्ध —	बर्षा का अभाव होगा।
(९) गाय के दुधमुंहे बछड़े गाड़ी में जुते—	तरुणावस्था, जब तक शासन की बागडोर हाथ में नहीं आवेगी, धर्म धर्म चिल्लावेंगे।
(१०) हाथी पर बन्दर बैठा—	शासक नीच स्वभावी चंचल होंगे।
(११) प्रेत नाच रहा है—	झूठे, दगाबाजी में निपुण और मक्कारों की पूजा होगी।
(१२) सुवर्णपात्र में श्वान खीर खा रहा है-	धनिकों के धन से दुष्कर्म अधिक होगा।
(१३) जुगनूं देदीप्यमान हो रहे हैं —	सत्यवादिता कहीं कहीं चमकेगी।
(१४) तालाब सूख गया है--	मंहगाई, टैक्सों की अधिकता से दया दान पूजा पाठ इन्कमटैक्स, सैलटैक्स से सूख गया है।
(१५) धूल में कमल खिला हुआ है—	उच्च कुल में जन्म लेकर बाममार्ग का प्रचार करेंगे। जिनकी हिंसक मनोभावनायें होंगी।
(१६) चन्द्रमा में कई छिद्र होंगे—	सुख शान्ति के देने वाले सत्य अहिंसा के भेद में प्रभेद होगा।

इसका स्पष्टीकरण श्री आचार्य रत्ननन्दी विरचित भद्रबाहु चरित्र अनुवादक स्व० पं० उदयलाल जी काशलीवाल, प्रकाशक श्री मूलचन्द्र किशनदास जी कापड़िया सूरत के पृ० सं० १४ और १५ पर विष्णु की उपासना के संबंध में 'भागवतामपाश्चा' श्लोक दिया है, देखिये और शंका समाधान करिये।

सांसारिक दशा (संयम और असंयम)

प्राचीन राजमंदिर के ४ सहतीर : झाँई पौर विदिशा

(११ वीं शताब्दी)

इस परम ऐतिहासिक प्राचीन नगरी में ३० जैनाचार्य पट्टाधीश हुए हैं। इन जैनाचार्यों की सांकेतिक प्राचीन इतिहास से सुसंबंधित प्रतीकात्मक चिन्हयुक्त कला और कलाकृतियां मानव जीवन के उपयोगी शिक्षाप्रद आध्यात्मिक एवं मनोवैज्ञानिक सांसारिक दशा की साकारता का चित्रपट और उसका परिचय आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ।

इसके उपदेशक जैनाचार्य निर्माता जैन शासक परमार वंशीय क्षत्रिय थे।

सहतीर नं० १

इस प्रथम सहतीर में जो मूर्तियां क्रमशः हाथी, शेर संयम का ज्ञानयुक्त वृक्ष एक वीर पुरुष कालसिंह से युद्ध करते दिखाया है। एक वृक्ष मानव के ज्ञान का शुष्क वृक्ष होने पर मानव पर जो कालरूप हाथी चारों पैर देकर खड़ा हुआ है इसका क्या अर्थ है ? इसका स्पष्टीकरण निम्न प्रकार है :-

आचार्य मानव को संबोधित करते हैं कि हे भाई ! तू कहां सो रहा है ? जरा सावधान हो देख। जब तू माता के उदर-कुंड में माता के रज-वीर्य से बालक के रूप में बना तभी से यह दिन रात जिसे काल या समय कहते हैं इस काल को पूर्वाचार्यों ने हाथी का रूप क्यों दिया ? इसलिए कि काल बहुत बड़ा है, उसकी एक रूप हाथी से तुलना कर इसलिए दिखाया है कि भूमण्डल पर हाथी बड़ा और शक्तिशाली पशु है, उससे कोई विजय नहीं पा सकता। केवल मानव ही। ऐसा है जो अपने ज्ञान द्वारा उसे बस में कर सकता है। वह भी विवेकपूर्ण ज्ञान के द्वारा ही किन्तु सामने देखता क्या है कि इधर यदि कालरूप हाथी से बचता है तो उधर कालरूप सिंह इसे खाने को खड़ा है।

यह कालरूप सिंह हिंसक और क्रूरस्वभावी है, मांसलौलुपी है किन्तु, हाथी शाकाहारी है। दोनों आपस में विरोधी हैं। हाथी अपने पैरों से कुचल कर मारता है तो कालरूप सिंह अपने

हिंसक स्वभाव से । मौत दोनों ही दशा में है । आचार्य बारह भावनाओं में कहते हैं :—

काल—सिंह ने मृग—चेतन को घेरा भव—वन में ।
नहीं बचावनहारा कोई, यों समझो मन में ।।
मंत्र यंत्र सेना धन सम्पति, राज पाट छूटे ।
वश नहिं चलता काल—लुटेरा, काय—नगरि लूटे ।।

यह कालसिंह शिक्षा-गुरु भी है, बचने के लिये पुरुषार्थ करना भी सिखाता है । पुरुषार्थ ४ प्रकार का है। वह है धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष । यह संकेतात्मक चिन्ह आपको बताया, इसे समझें और ज्ञानार्जन करें ।

इस काल-सिंह के पीछे देखिये कि एक वृक्ष जिसका नाम संयम वृक्ष लिखा है । ज्ञान के द्वारा ही इसकी रक्षा हो सकती है । होना चाहिये विवेकपूर्ण अनुभवी । यह प्रश्न उठता है कि मानव वृक्ष कैसे है ?

जीवन एक बगीचा है, स्वांस—नीर ने सींचा है ।
भोंदू इसको काट रहा, पड़ा किये सिर नीचा है ।।

इसकी शाखायें इन्द्रियां हैं। वे क्रमशः हैं स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, और श्रोत्र यानी कान । इसकी पांच ही उपेन्द्रियां भी हैं। यह मिलकर १० हो जाती हैं ।
यहां एक उर्दू का शायर कहता है :—

बेशाख्ता बुलबुल चहक उठी, पूछा गुलिस्तां वालों से ।
बर्बाद गुलिस्तां करने को, बस एक ही उल्लू काफी है ।।
हर शाख पै उल्लू बैठा है, अंजाम गुलिस्तां क्या होगा ।।

हे भाई ! इसका अर्थ है कि देख, पूर्व में एक कमाता था और सब बैठे कुटुम्बी खाते थे । आज जितने कमाते हैं वह भी इस मंहगाई और संकटकालीन स्थिति से तुलना कर देख ।

बुलबुल एक पक्षी है, वह है आत्मा, जिसे उर्दू फारसी में बुलबुल कहते हैं। रुह को हिन्दी और संस्कृत में ब्रह्म, जीव, चैतन्य। जिसे चेतना शक्ति है वह संसार के समस्त कार्य सुलभ कर सकता है, केवल पुरुषार्थ द्वारा ।

गुलिस्तां—बाग को कहते हैं। जो इन्द्रियां हैं वह शाखायें और मानवशरीर वृक्ष है । यदि इसे नष्ट करना है तो एक कोई व्यसन लगा लो । व्यसन ७ हैं, वह हैं :-

जुआ खेलन, मांस, मद, वेश्या व्यसन, शिकार ।
चोरी पर-रमणी-रमन, सातों पाप निवार ।।

यह सातों ही उल्लू व्यसन हैं। उल्लू से भाव है मूर्खता से। आचार्य कहते हैं तू इनसे बच। इनसे बचने के लिये पुरुषार्थ सिंह चाहिये। पुरुषार्थ के ४ प्रकार हैं:—

धर्म, अर्थ, अरु काम, शिव, पुरुषारथ चतुरंग।
कुधी कल्पना गहि रहे, सुधी गहे सर्वंग॥

जो शीलवान और सदाचारी हैं, जिन्हें ब्रह्मचारी कहते हैं, जो संयमरूप ज्ञान की लगाम अपने हाथ में रखते हैं उन पर भी कालरूप हाथी जो दिन रात है चारों पहर रूप पैरों से चढ़ा हुआ है। यह प्रथम तीर का स्पष्टीकरण आचार्यों ने अपनी मूक लेखनी द्वारा चित्रों में समझाया है।

सहतीर नं० २

नर-तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान।
इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावें धीमान॥

इस दोहे का स्पष्ट भावार्थ यह है कि यह मानव-शरीर रथ है जो वृक्ष के रूप में कहा है। आत्मा इसका सारथी है। जो इस रथ को हांकता है अर्थात् चलाता है इन्द्रियां घोड़े हैं। विवेकवान, ज्ञानवान, धीमान यह सब पर्यायवाची शब्द हैं। जो इस घोड़े पर बैठा है। इन्द्रिय रूप घोड़े पर बैठ कर संयम की लगाम अपने हाथ में रखे है।

इस घुड़सवार के आगे एक मानव-पथिक (राहगीर) कन्धे पर लाठी रखे, लाठी में पोटली लटकाये चल रहा है। यह तीन भावों को स्पष्ट करता है। स्वात्मरक्षा के लिये संयम की लाठी पोटली एक पात्र है। वह मानव-शरीर, हृदय पोटली में बंधा है विवेकपूर्ण ज्ञान।

ज्ञानीजन हैं जौहरी, करमी सकल मजूर।
देह—भार का टोकरा, धरे शीश भरपूर॥

अब आप देखिये, इस पथिक के आगे एक घोड़े पर सवार पुन: बतलाया है किन्तु सामने कुत्ता का संकेत है। वह इस बात को स्पष्ट करता है कि कुत्ता असंयमी है, जो मैथुन छुप कर नहीं करता किन्तु अपनी ऋतु पर ही करता है। मानव इतना पतित है कि उसे कोई समय निश्चित नहीं है, इसलिए यह असंयमी इन्द्रिय रूप घोड़े पर सवार दिखाया है। कुत्ते के साथ वाला आदमी अपनी अंगुली से संकेत कर रहा है कि जो मानव अपनी चरम सीमा को छोड़ देते हैं वे विवेकशून्य हैं, असंयमी और दुश्चरित्र हैं। वह इसप्रकार बांधे जाते हैं जैसे दो चमार एक बैल को बांधकर और लटकाकर ले जा रहे हैं। यहां आचार्यों ने बैल ही क्यों बताया है ?

बैल इसलिये बतलाया है कि यह वृष यानी धर्म को सम्बोधित करता है। इसके अनेक नाम हैं। जैसे वृष, वृषभ, बैल, सांड, नादिया, नंदी, । यह धर्म ही आनंद का देने वाला है। दयामय है, जिसे हमने उल्टा टांग रखा है अर्थात् हम विपरीत-मार्गानुगामी बन गये हैं।

आप स्पष्टरूप से देखिये, अनुभव कीजिये कि क्या अपने ज्ञान का दुरुपयोग करने वाला विषयासक्त व्यक्ति जब पकड़ा जाता है क्या बांधा नहीं जाता ? क्या जनता और पुलिस के द्वारा बांधा और मारा नहीं जाता ? अथवा दंडित नहीं किया जाता ? कौनसी कमी रह जाती है ? संसार में ४ प्रकार के अन्धे हैं :—

जन्म अन्ध, कामान्ध नर, और महामद धार।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार ॥

वर्तमान पाठकों से निवेदन है कि आप प्रत्यक्ष में इन चित्रों को देखें और अपनी ओर अपने गुण और दोषों पर दृष्टि डालेंगे बिचार करेंगे तो क्या आप आत्मकल्याण से वंचित रह सकेंगे ? कदापि नहीं। आप विद्या का दुरुपयोग न कर सदुपयोग ही करेंगे। आचार्य कहते हैं :—

विद्या विवादाय, धनं मदाय, शक्तिः परेषां परिपीडनाय।
खलस्य साधो विपरीतमेतत्, ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय ॥

सहतीर नं० ३

सहतीर नं० ३ इस बात की पुष्टि करता है कि मानव का ज्ञान एक संयम-वृक्ष है। इसके पूर्व की ओर घोड़े पर सवार संयमी पुरुष है। इसके पीछे एक हाथी लगा हुआ चला आ रहा है। वह है दिन और रात रूप हाथी, जिसे काल से संकेत किया है।

वृक्ष के पश्चिम की ओर एक घुड़सवार जो दिखाया है वह इस बात की पुष्टि करता है कि मैं असंयमी इसलिये हूं कि इन्द्रियां घोड़े हैं। और घोड़ा अपने बांये पैर से शूकर की ओर संकेत कर रहा है, इसलिए कि शूकर मैला खाने में आनंद मानता है और विषयी असंयमी मानव विषयों में आनंद मानता है। विषयों का स्थान मैले का स्थान है, जिसमें से मलमूत्रादि बहता रहता है। किन्तु वही घुड़सवार अपने दाहिने हाथ की अंगुली से संकेत कर रहा है कि मैंने इस मानव के ज्ञानरूप वृक्ष का दुरुपयोग किया है और करता ही जा रहा हूँ, इसलिए कि मुझे मृगतृष्णा है। इस कारण से मुझे खाने को कालरूप सिंह सामने से चला आ रहा है।

सभी को काल ने खाया, तुझे भी काल खायेगा।

काल सामने और पीछे दोनों ही ओर है। चेतावनी को आचार्यों ने संकेत में दर्शाया है।

सहतीर नं० ४

इस सहतीर नं० ४ में सबसे पहिले इन्द्रियरूप घोड़े पर सवार विषयों का लोलुपी है; जिसे कहते हैं मृगतृष्णा। जिस विषय का एक बार रसास्वादन कर लेने पर उसकी पिपासा शान्त नहीं होती है। बार बार भोगने की लालसा रखता है। जिस प्रकार मृग चौकड़ी भर कर वन में चारों ओर सुगंधी को खोजता फिरता है, किन्तु वह सुगन्धी उसकी नाभि में ही है। आचार्य कहते हैं :-

ज्यों मृग दौड़ा फिरे विपिन में, ढूंढे गन्ध बसै निज तन में।
पर में करै हुलासी, मोय सुन सुन आवै हांसी ॥

उसकी नाभि में कस्तूरी की सुगंध मौजूद है, किन्तु वह भूला हुआ है। इसी प्रकार से मानव अपने आत्मीय सद्‌गुणों को, अपने दयामय धर्म को, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि के चक्र-व्यूह में फंस कर भूला हुआ है।

इस हिरण के आगे एक और हिरण चौकड़ी भर कर भागता जा रहा है। वह है ज्ञान का तीसरा नेत्र। मृग की आंख से आचार्यों ने मानव की आंख की उपमा दी है। कहा है कि :—

फूटी आंख विवेक की, कहा करै जगदीश।
रामजनी (कंचनिया) को तीन सौ, मनीराम को तीस ॥

तो पुनः कहते हैं :—

परख सकती नहीं रतनों को, हर इन्सान की आंखें।
दिखाई ब्रह्म क्या देगा, जो ना हों ज्ञान की आंखें ॥

तो ज्ञान-नेत्र आवश्यक हैं, और यह जानना भी आवश्यक है कि आगे पीछे कालरूप शिकारी चला आ रहा है। तो सुख और शान्ति कहां है ?

कविवर पंडित दौलतराम जी ने छहढाला की तीसरी ढाल में कहा है :—

आतम को हित है सुख, सो सुख आकुलता बिन कहिये।
आकुलता शिवमांहि न, तातें शिवमग, लाग्यो चहिये ॥

अर्थ—आत्मा की यदि भलाई है तो सुख और शान्ति में। वह सुख और शान्ति वहां है ? जहां आकुलता नहीं है। आकुलता मोक्ष में नहीं है, इसलिए मोक्षमार्ग पर लगना चाहिये।

इस शिकारी की पीठ के पीछे जो वृक्ष है वह ज्ञान का वृक्ष है, जो कि संयम से ही प्राप्त होता है। जहां पर तृष्णा है वहां नहीं। वे तृष्णारूपी ६ डांकनें हैं:—

तृष्णा, चिन्ता, दीनता, माया, ममता, नारि।
ये षट् डांकिनि पुरुष के, पीवत रुधिर निकारि ॥

इस पर भगवत् शुभचन्द्राचार्य ने ज्ञानार्णव ग्रन्थ में १७ वें प्रकरण पृ० सं० १८३ श्लोक सं० १४ में योगिराज भर्तृहरि को रसायन विद्या के सम्बन्ध में संबोधन किया है कि हे योगिराज ! यदि तुझे सुवर्ण की ही आवश्यकता थी तो तू राज्य का त्याग कर योगी क्यों हुआ ?

न मज्जति मनो येषामाशाम्भसि दुरुत्तरे।
तेषामेव जगत्यस्मिन् फलति ज्ञानपादपः ॥

अर्थ— इस जगत में जिनका मन दुस्तर आशा-तृष्णारूपी जल में नहीं डूबता उनके ही ज्ञानरूपी वृक्ष फलता है। और आशा तृष्णारूपी जल में ज्ञानरूपी वृक्ष गल जाता है। इस कारण फल नहीं लगता।

इन्द्रियों की मृगतृष्णा के सम्बन्ध में अमितगति आचार्य सुभाषित रत्नसंदोह में उपदेश ५ पृ० २८, श्लोक संख्या ८७ में कहते हैं :—

दूर्वांकुराशनसमृद्धवपुः कुरंगः, क्रीडन् वनेषु हिरणीभिरसौ विलासैः।
अत्यन्तगेयरवदत्तमना वराकः, श्रोत्रेन्द्रियेण समवर्तिमुखं प्रयाति ॥८७॥

अर्थ—हिरण वन में रहकर स्वच्छन्दता से हरी हरी घास को खाता है, हिरणियों के साथ मनमानी क्रीड़ा कर सुख भोगता है, परन्तु श्रोत्र इन्द्रिय के वश होकर गीतों के सुनने से पकड़ा जाता है। इस तरह यम के मुख में चला जाता है।

इस पर आचार्य अमितगति सांसारिक विषय-सुख-निराकरण प्रकरण के दूसरे श्लोक में कहते हैं :—

न तदरिभिराजः केसरी केतुरुग्रो, नरपतिरतिरुष्टः कालकूटोऽतिरौद्रः।

अर्थ—प्राणियों का जितना उग्र अहित संसार में विषयरूपी शत्रु करते हैं उतना मदोन्मत्त हाथी (दिन रात पीछे लगा है) व मांसलोलुपी सिंह (काल) सामने खड़ा है, भयंकर राहु, कुपित हुआ राजा, अति तीक्ष्ण विष, अति क्रुद्ध यमराज, प्रज्वलित अग्नि, और भयंकर शेषनाग, आदि भी नहीं करते। अर्थात् शत्रु, मदोन्मत्त हाथी आदि तो एक ही भव (जन्म) में दुःख देते हैं व अनिष्ट करते हैं, परन्तु भोगे हुए इन्द्रिय विषय जन्म जन्म में दुःख देने वाले होते हैं। इसका मुकाबला वीर पुरुष ही कर सकते हैं। देखिये, एक वीर पुरुष काम-शूकर जो विषय है उससे युद्ध कर विजय पा रहा हैं। उसे वीतरागी पुरुष, जितेन्द्रिय पुरुष कहते हैं।
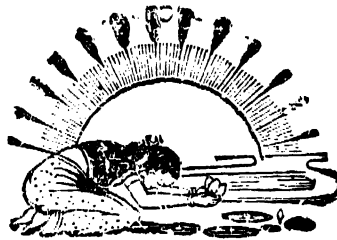
शिव और शिवालय

मानव—जीवन से एक तुलनात्मक दृष्टिकोण

यहां परम पवित्र प्राचीन भारत में महापुरुषों का जन्म हुआ है। ऐसी उत्कृष्ट तीर्थस्वरूप भूमि पर विषयासक्त स्वार्थलंपटी वाममार्गियों ने धर्म की आड़ ले ले कर भोली भाली जनता को क्षणिक स्वार्थ के लिये कर्त्तव्यों से विमुख कर अहिंसक दयामय धर्म के पालने वालों को हिंसक प्रवृत्ति में ले जाने का प्रयत्न व अधिकार जमाया था। ऐसे कठिन समय में जैनाचार्यों का देश काल क्षेत्रानुसार जन्म और आगमन होता ही रहा हैं। इन महापुरुषों की लोकोपकारमय अहिंसक प्रणाली को विवेकपूर्ण ज्ञान, अनुभव, त्याग और तपस्या के द्वारा सारगर्भित अहिंसामय धर्म, संस्कृति एवं साहित्य की सुरक्षा हेतु प्रचार और प्रसार की दृष्टि रखते हुए जो मार्गदर्शन विश्व के प्रांगण में साकार रूप से प्रत्येक नगर, अटवी, खेड़े, ग्रामों में विद्यमान है निर्माण कराया था, जिसे हम पुरातत्व कहते हैं। जो कि प्राचीन मूर्तियों के रूप में मोम की भांति उत्कीर्ण कराये थे। जिनसे उनकी विद्या, कला कौशल और बुद्धि का परिचय मिलता है। जिसे हम या हमारी विद्वद् मंडली समझ ही नहीं पाई है।

इन मूर्तियों के अंग प्रत्यंग से मानव जीवन को शुद्ध धर्म की तुलनात्मक दृष्टि से सामने रखा है, शिक्षा देती हैं, किन्तु विवेकशून्य मानव खजुराहो आदि की मूर्तियों को नग्न रूप में देखकर सही लक्ष्य से हटकर विपरीत मार्ग अपना कर उपहास करते हैं! हमने जो इन मूर्तियों से ज्ञान प्राप्त किया और शिक्षा ली है उसे महत्त्वपूर्ण और आवश्यक समझ कर पाठकों के समक्ष रख रहे हैं।

आप अपने विवेकपूर्ण ज्ञाननेत्र से देखेंगे तो हमें कौन वस्तु ग्रहण करना है और कौन त्यागना है, इसका सही निर्णय हो सकेगा। इसकी तुलना देखिये कि जहां पर जैन मंदिर है उसी के निकट में शिवालय भी है। ऐसा क्यों ? प्रश्न १।

उत्तर :-शिवालय में शिवलिंग कामदेव के रूप में पूजा जाता है, जिनका संकेत काल (मृत्यु), सर्प, हाथी, सिंह, व्याघ्रादि को प्रतीकात्मक बताया है। और दूसरी ओर जैन मंदिरों में इसके विपरीत रागद्वेषादि से वर्जित बताया है। शिवालय में केवल शिवलिंग को ही संकेतात्मक दिया है और जैन मंदिरों में सर्वांग को।

प्रतिमायें अवलोकते, हट जाता अज्ञान ।
इसीलिए सब पूजते, मान उन्हें भगवान ।।
प्रतिमाओं का हृदय पर, पड़ता बहुत प्रभाव ।
जैसे रूप विलोकते, तैसे होते भाव ।।
जो विषयी निशदिन रहै, भरा मदन संताप ।
ऋद्धि सहित भी निंद्य हो, लज्जित होता आप ।।

परंपरागत रूप से अहं ब्रह्मास्मि, अहं विष्णुः, शिवोऽहं को मंत्र मानकर उसका जाप करते हैं। इस सम्बन्ध में गीता, भागवत और जैन सम्प्रदाय के आचार्य श्री भगवतजिनसेन ने जिन सहस्रनाम स्तोत्र में उल्लेख किया है।

प्रश्न २—शिव किसे कहते हैं और वह कहां पर है ?

उत्तर-शिव आत्मकल्याण को कहते हैं। जहां आकुलता नहीं है। आलय घर को कहते हैं। यह मानवशरीर भी एक शिवालय है, यदि निराकुलता हो। श्री कविवर दौलतराम जी कहते हैं:—

आतम को हित है सुख, सो सुख आकुलता विन कहिये।
आकुलता शिवमांहि न, तातें शिवमग लाग्यो चहिये ।।

प्रश्न ३—शिवलिंग क्या है ?

उत्तर-शिवलिंग पुरुषचिन्ह हैं और जिलहरी स्त्रीचिन्ह ।

प्रश्न ४—शिवलिंग पर सर्प-फण छाया क्यों किये है ?

उत्तर-सर्प काल यानी मृत्यु का प्रतीक है । वह हमें सावधान करता है ।

प्रश्न ५—शिवलिंग पर त्रि-कुंड क्यों लगा है ?

उत्तर--प्रत्येक व्यक्ति अपने शरीर की ओर देखे कि टुन्डी का मध्य भाग, ऊपर ऊर्ध्व भाग, नीचे की ओर अधो भाग है। यही तीन कुंड हैं।

पुरुषा अकार ठांड़ो निहार, कटि हाथ धरे द्वय पग पसार।

और यही तीन लोक हैं।

प्रश्न ६—शिवलिंग बाहर की अपेक्षा मंदिर में गहराई लिये जमीन के बराबर गुफाओं में क्यों विराजमान होते हैं ?

उत्तर--आप अपने शरीर की ओर स्वयं देखिये। प्रकृति ने आपके शरीर की रचना किस प्रकार की है । केवल भावना ठीक होनी चाहिये ।

अन्धकार है वहां, जहां आदित्य नहीं है।
है वह अन्धा देश, जहां साहित्य नहीं है।।

अन्धे ४ प्रकार के होते हैं।

जन्म अन्ध, कामान्ध नर, और महामद धार।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार।।

जहां हमारी आंखों पर विषयोन्मत्त भावनाओं की पट्टी बंधी हुई है, उसे दूर करने के लिये ज्ञान-सूर्य की अत्यन्त आवश्यकता है। मानव शरीर एक देश है। उस पर स्वार्थलंपटता की पट्टी बंधी है। वहां आदर्श और आध्यात्मिक ज्ञान जो एक साहित्य के रूप में विद्यमान हैं कैसे प्राप्त हो सकता हैं ?

भोग बुरे भव-रोग बढ़ावें, बैरी हैं जग जीके।
वे रस हॉय विपाक समय अति, सेवत लागें नीके।।
बज्र अगनि विष से विषधर से, हैं अधिके दुखदायी।
धर्मरत्न के चोर प्रबल अति, दुर्गति पंथ सहाई।। (भूधर कवि)

विधि को कियो कुम्हार जिन, हरि को दश अवतार।
भीख मंगावत ईश को, ऐसो कर्म उदार।।

ब्रह्मा को कुम्हार, विष्णु को दश अवतार और शंकर जी को भीख क्यों मांगना पड़ी ? यह कर्म की विचित्रता है। विष्णु जी की नारी लक्ष्मी जी के चार बेटे हैं :—

लक्ष्मी के सुत चार हैं, धर्म अग्नि नृप चोर।
जेठे कौ आदर नहीं, तीन करें भड़फोर।।

भगवान शंकर ने भीख क्यों मांगी और योगी क्यों हुऐ ?

स्वयं सुरेशः स्वसुरो नरेशः, सखा धनेशस्तनयो गणेशः।
तथापि भिक्षाँ कुरुते महेशः, वलीयसी केवलमीश्वरेच्छा।।
आपको बाहन बैल बली, वनिताहू को बाहन सिंहहि पेख कें।
भूषक है सुत बाहन एक को, दूजो मयूर की पच्छ विशेख कें।।
भूषण हैं कवि चैन फणीन्द्र के, बैर परे सबतें सब लेख कें।
तीनहुं लोक के ईश गिरीश, सु जोगी भये घर की गति देख कें।।

हिन्दु, जैन, शिव और शैव धर्मावलम्बी समाज में जो तिलक लगाने की पद्धति है वह एक प्रकार से प्रतीकात्मक चिन्ह है। वह चार प्रकार की है :—

पार्वती की गोल विन्दी, महादेव का आड़ा ।
विष्णु जी की तीन फाँक, राम जी का ठांड़ा ॥

पार्वतीजी की गोल विन्दी इसलिये है कि:—पृथ्वी को वैज्ञानिकों ने गोल माना है। जिस प्रकार से चक्र गोल है। तो नारी के सिर से पैर तक सर्वांग के आभूषण गोल हैं! वस्त्र जो भी पहिनती हैं गोल होते हैं। आंगोपांग भी गोल हैं। यह एक प्रकार से सांसारिक रचना का चक्रव्यूह है। यही एक शक्ति है। इसलिये वैज्ञानिकों का कहना सत्य प्रतीत होता है।

महादेव का आडा तिलक इसलिये है कि सांसारिक भोगों में प्रधान काम है। उससे बचने का वह संकेत देता है। इसलिये विद्याभ्यासियों को त्यागने योग्य निम्नांकित श्लोक में पूर्वाचार्यों ने कहा है :—

कामं, क्रोधं तथा लोभं, स्वादं शृंगारकौतुके।
अतिनिद्राऽतिसेवा च, विद्यार्थी ह्यष्ट वर्जयेत् ॥

इनसे लोभ का कारण उत्पन्न होता है। इसलिये लोभ ही पाप का बाप है।

लोभात्क्रोधः प्रभवति, लोभात्कामः प्रजायते।
लोभान्मोहश्च नाशश्च, लोभः पापस्य कारणम् ॥

अहंभाव उत्पन्न करने वाला काम ही हैं, इसलिये आड़ा तिलक अहंभाव के त्याग की ओर संकेत करता है। विष्णु जी की तीन फांक इसलिये बतलाई है कि यह मानव-शरीर बिषय-वासनाओं के अणुओं का पिंड है और रोगों का भण्डार (शरीरं व्याधिमंदिरं) है। इसकी चीरफाड़ी होती रहती है। आप प्राय: अस्पतालों में देखते ही हैं। चौथा तिलक जो राम जी का खड़ा हुआ बतलाया है वह जितेन्द्रिय पुरुष का है, जिन्होंने इन्द्रियों पर विजय प्राप्त की है। जो वीतरागी हैं। जिनका राग समाप्त हो गया है। इस प्रकार का तिलक जैन धर्मावलम्बी, रामस्नेही ही लगाते हैं, यह उन्हीं का चिन्ह है।

प्रश्न ७—शिवजी का बाहन नन्दीगण क्यों है? और शिवलिंग से दूर क्यों है? तथा ऊंचाई पर क्यों है?

उत्तर—शिव का अर्थ कल्याण से है। नन्दीगण का अर्थ आनन्द का देने वाला है। बृष का अर्थ धर्म से है। धर्म के द्वारा ही समस्त प्रकार का आनन्द, जिसे सुख कहते हैं, मिलता है। वह दयामय है। जहाँ दया है वहां धर्म है।

धर्म प्रशस्त होता है। धर्म का भाग ऊंचा है। वह उत्तरोत्तर ऊंचा ही चढ़ाता है। और कामदेव पतन की ओर ले जाता है। यह प्राकृतिक वस्तु है। धर्म १० प्रकार का होता है :—

शम, दम, शौच, धृति, क्षमा, विद्या, धी, अक्रोध ।
सत्य, अचौरी, धर्म दश, करते हैं मन बोध ॥

जैन शास्त्रों में कहा है:-

उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव भाव है, सत्य शौच संयम तप त्याग उपाव हैं ।
आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य धरम दश सार हैं, चहुँगति दुखतें काढ़ि मुक्ति करतार हैं ॥

धर्मात्मा का निर्धन जीवन, विज्ञों ने उत्तम सदा कहा ।
पर पापी धनी पुरुष का जीवन, भला किसी ने नहीं कहा ॥

(८) अंतरंग नग्न वह हैं जिन्हें वीतरागी पुरुष कहते हैं, जो निरंतर आत्मकल्याण में लगे रहते हैं । वह विचारते हैं कि :-

न सुखं देवराज्ये च, न सुखं चक्रवर्तिनः ।
यत्सुखं वीतरागस्य, मुनेरेका[illegible]ः ॥

गौ-धन गज-धन, बाज-धन, रतन खान, बहु धान ।
जिन धार्यो सन्तोष धन, सब धन धूल समान ॥
लोभ पाप में नहिं फंस्यो, लगे न मन्मथ वाण ।
क्रोधानल में नहिं तप्यो, सो नर विष्णु समान ॥

(९) जिनकी चिरकाल तक जीने की आकांक्षा रहती थी, ऐसे तपस्वी त्यागी पूर्वाचार्य प्रत्येक प्रकार से संयमी जीवन विताते थे । वह आज हजारों वर्ष वीतजाने पर भी जीवित हैं । किन्तु आज का मानव राजनीति में पड़ कर प्रजा का हित नहीं सोचता । उसकी जैसे तैसे पांच वर्ष तक राज्य करने की लिप्सा बनी रहती है ।

राजनीति की चासनी, मुंह लागे इक बार ।
लगी रहत धुन उसी की, जीत होय या हार ॥

(१०) फूट का फल

भारत में एक कर फूटी अनेक बार, बार बार भारत में उपद्रव मचे रहे ।
फूटी थी कचरिया अयोध्या दशरथ गृह, दुखी हुआ राम हृदय वन वन भ्रमत ॥
सहोदर में फूटत जो फूट देखी लंका में, सवा दो लाख पुत्र नाती सफाचट भये ।
द्वापर में श्रीकृष्ण के समक्ष ही फूट पड़ी, कौरव और पांडव भारत में भसम भये ॥

फूट गये मान राजपूतों का गंवा दिया, अपनी ही बहिन को मुगलानी बनात भये ।
फूटे जयचन्द्र देशद्रोही जो भारत से, भारत पर मुगलों के हमले करात भये ।।
फूट पड़ी दोनों में खोल नैन देख मित्र, भारत अखण्ड के खण्ड दो हो गये ।
अब यार चहुँओर फूट पड़ी भारत में, सो कूकर से भोंकत घर घर में भटक रहे ।।

वर्तमान में देश के लुटेरे !

कला सीख ज्ञान सीख पूरे विद्वान हुए, सीखा कुल बन्श पर बांध एक टूटा है ।
भारत का गुण लेय भारत ही नाश कियो, भारत के वासियों ने भारत ही लूटा है ।।
विदेशी तो भारत को लूट कर ले ही गये, लूटा कुल भारत एक कोना न छूटा है ।
भारत के रोहिणी विदेश ही न जा सके, लूटा स्वदेश तो क्या लूटने में लूटा है ।।

यह हमारा एक दृष्टिकोण विद्वद् समाज के समक्ष पुरातत्वीय शोध का है । हमें जहां पर भी जो प्रतिमायें मिलती हैं उनकी व्याख्या अंग प्रत्यंग से करने की जिज्ञासा रहती है । केवल लेखनी में ही नहीं, किन्तु इसके साथ चित्र सहित कपड़ों पर बनाई गई प्रदर्शनी लोकसेवा के लिए नि:शुल्क है । इसप्रकार से मानव जीवन में घटने वाली अनेक मूर्तियों का साहित्य हमारे संग्रहालय में उपलब्ध है ।

भारतीय देव पूजा क्या है ? देव पूजा की परंम्परा का प्रादुर्भाव क्यों हुआ ? इस परम पवित्र भावना को धार्मिक भावना की मान्यता क्यों दी गई ? इसका मूल कारण मनुष्य का स्वार्थ है ।

प्रतीकात्मक जो संकेत पूर्वाचार्यों ने किये हैं वह परिणामों में शुद्धि लाने के लिये । जिन चिन्हों से हमें और हमारी आत्मीय संपत्ति पर आघात पहुँचता हो उसे त्याग कर देना चाहिये । इस कारण से प्रतीकात्मक चिन्ह अंकित किये गये थे । किन्तु खेद है कि मिथ्यात्व को भी धर्म मान लिया गया है । जहाँ आत्मा में ग्लानि आवे वह कार्य निषेध किया गया है । जिसमें निर्दयता है उसमें क्या सुख होना सम्भव है ? कदापि नहीं ।

सत्कर्मों से मानव को देव और निर्दयतापूर्वक कार्य करने वाले को दानव कहते हैं । जिन शास्त्रों में निर्दयता झलकती है उनका त्याग करने पर ही आत्मा में सुख हो सकता है ।

पूर्व महापुरुषों का उद्देश्य आत्मकल्याण की भावनाओं को लेकर ही था । मानव शिव अर्थात् कल्याण का घर है । इसका संक्षिप्त नाम शिवालय भी इसी उद्देश्य को पूरा करता है ।

वर्तमान की शिक्षा आन्तरिक ज्ञान; आध्यात्मिक ज्ञान, धार्मिक ज्ञान, सांस्कृतिक ज्ञान में कोई श्रद्धा क्यों नहीं रखती ? क्योंकि वह विषयभोगी निरन्तर बनती जा रही है । यह इस देश का दुर्भाग्य है ।

नग्न रागी

आज की शिक्षा केवल पेट पालन के लिये ही है। यह राजरोग राग है। राग और द्वेष आपस में मित्र हैं और रागी द्वेषी जिसकी आत्मा है वही भिक्षा माँगने वाला संसारी नग्न है।

नग्न वीतरागी

दूसरा नग्न वह है जिसकी केवल दिशायें ही अम्बर (कपड़ा) हैं, जिसने इन्द्रियों पर विजय पा ली है, जिसे वीतरागी पुरुष या जितेन्द्रिय पुरुष कहते हैं, वह हैं दिगम्बर जैन साधु अथवा तीर्थंकर। जो कि आध्यात्मिक ज्ञान के प्रकाण्ड स्याद्वादी विद्वान हैं।

सिर पर जटाओं में सर्प क्यों लिपटा है ?

समाधान :- यह सर्प काल अर्थात् मृत्यु का संकेत करता है कि तेरे सिर पर काल अर्थात् सात बार आक्रमण कर रहे हैं। तेरी मृत्यु इन सात बारों में होना है। इन सातों में से कोई एक दिन ऐसा काल (समय) आवेगा जो तुझे खा जायगा। अतः तू धर्म कर्म में सावधान रहकर अपना जीवन यापन कर।

माथे पर चन्द्रमा क्यों चमक रहा है ?

समाधान :- यह शान्ति और सुख का प्रतीकात्मक चिन्ह है। जो बात पूर्वा-पर विचारों के साथ दूरदर्शी परिणाम को सोच समझ कर कही जाती है उसी में अपना और दूसरों का हित है।

प्रथम ही जो सोच कर बात है कहता नहीं।
वह बिना लज्जित हुए, संसार में रहता नहीं॥

भगवान शंकर के त्रि-नेत्र क्यों हैं ?

समाधान :- दोनों नेत्र मानव के चर्मचक्षु हैं, जिनसे —

इन नैनन का यही विशेख, मैं तोय देखूं तू मोय देख।
देखत देखत इतना देख, मिट जाय दुविधा रहिजाय एक॥

तृतीय नेत्र विवेकपूर्ण ज्ञान का है।

ज्ञानी जन हैं जौहरी, करमी सकल मजूर।
देह-भार का टोकरा, धरें शीश भरपूर॥

मस्तक पर त्रिकुण्ड क्यों लगा है ?

समाधान :- यह रजोगुण ब्रह्मा, सतोगुण विष्णु, तमोगुण शंकर का प्रतीक है। यह बाल, युवा, वृद्ध तीनों अवस्थाओं और तीनों लोकों का भी प्रतीक है। इनसे शिक्षा ग्रहण करके आत्म-हित में लगना चाहिये।

जब तक मानव के शरीर में शक्ति है, जो जितेन्द्रिय पुरुष हैं वह चक्र पुरुष कहलाते हैं। जिनमें चारों पुरुषार्थ भोगने की शक्ति है, जो अन्याय का प्रतीकार कर न्याय के पथानुगामी हैं, जो भलाई और बुराई को समझते हैं; गुण और दोष, पुण्य और पाप, सज्जनता और दुर्जनता को भली प्रकार से समझते हैं, वह सिंह-पुरुष कहलाते हैं।

भर लेते हैं पेट सभी, है जिनके काया।
पुरुष-सिंह है वही, भरे जो पेट पराया॥

मानव का मुख क्या कहता है ?

मुखिया मुख को चाहिये, खान पान को एक।
पाले पोषे सकल अंग, तुलसी सहित विवेक॥
मुंह आया सो बक चले, मुंह में नहीं लगाम।
मुंहफट होना जगत में, नहीं मनुज का काम॥

दांत, जीभ से क्या कहते हैं ?

हम बत्तीस अकेली है तू, हम में आवे जावे।
एक बार मैं धर मसकूं, किससे फरियाद करावे॥

जीभ का दांतों को उत्तर :-

तुम बत्तीस अकेली हूं मैं, तुम में आऊं जाऊं।
एक बात मैं ऐसी कहदूं, बत्तीसों तुड़वाऊं॥

सिर क्या कहता है ?

सिर झगड़त है जीभ से, मैं समझाऊं तोय।
तू कहके छुप जायगी, पिटवावेगी मोय॥

यह बात प्रकृति को अच्छी नहीं लगी :—

कुदरत को नापसंद है, सख्ती जवान में।
पैदा हुई न इसलिये, हड्डी जवान में॥

यौवन विनाश का कारण क्यों हैं ? चाणक्य ऋषि कहते हैं :-

यौवनं धन-संपत्तिः प्रभुत्वमविवेकिता।
एकैकमप्यनर्थाय, किमु यत्र चतुष्टयम्॥

यौवन, धन, संपत्ति और प्रभुता यह चारों ही प्रत्येक मानव के पास हैं। किसी के पास कम और किसी के पास ज्यादा। आज का प्रत्येक मानव विषय भोगी बन गया है। और विषय की पुतली नारी है जिसे माया कहते हैं। बैरी दाव पेंच से मारता है, यह हंसा खिलाके मारती है। यह जिसके पास होती है या आ जाती है उसे उल्लू और अन्धा बना देती है। अन्धे चार प्रकार के होते हैं:—

जन्म अन्ध, कामान्ध नर, और महामद धार।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार॥

जन्म का अन्धा तो किसी को हानि नहीं पहुंचाता, किन्तु शेष तीनों अन्धे बहुत दुखदायी होते हैं। इसलिये देखिये, लक्ष्मी का दूसरा नाम माया है। यह एक शक्ति है। इसको जीतना कठिन है। यदि इसे जीता है तो केवल वीतरागी पुरुषों ने ही।

इस माया को सिर से पैर तक देखिये, जितने आभूषण देखेंगे सब गोल, जितने वस्त्र पहिनती हैं सब गोल, जितने अंग और प्रत्यंग हैं सब गोल। इसलिये ही इसके हाथ में चूड़ी चक्र का प्रतीक दिया है। जो माया के चक्र में फंसता है वह उल्लू बन जाता है। यह माया एक विषय-विष भी है। विषय-विष के धारण करने से ही तो यह विषधर अर्थात् नागन कही जाती है। विषयों में फंसने वालों का अन्तिम परिणाम दुर्गति का मूल कारण है।

विषय—विकार के कारण

विषयी मानव विषयों में आनन्द का अनुभव करता है, किन्तु मैले का खाने वाला शूकर उससे घृणा करता है या नहीं? जिस अपवित्र स्थान से मलमूत्र और रक्त की नदी बहती है क्या यह शारीरिक विकार नहीं है? और क्या काम एक विकार नहीं है? विकारी वस्तु को देखकर विकारभाव पैदा होते हैं या नहीं?

जब नारी प्रसन्न भई, दे न सकहि कछु और।
अशुचि पात्र आगे धरे, वही नरक का ठौर॥

यही काम-विकार विनाश का कारण बन जाता है। यह मानव शरीर एक रथ है। दशों इन्द्रियां घोड़े हैं, जो इसमें जुते हुए हैं। आत्मा इसका ड्रायवर है और इस रथ में बैठने वाला विवेकी संयम है।

नर तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान।
इंद्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावे श्री मान॥
कामदार कामी पुरुष, मान मांगनों सोय।
इन चारों के दया नांहि, राम करे सो होय॥

इस लिऐ विद्याभ्यासियों को आचार्यों ने कहा है कि—

कामं क्रोधं तथा लोभं, स्वादं श्रृंगार कौतुके ।
अति—निद्रातिसेवा च, विद्यार्थी ह्यष्ट वर्जयेत् ॥

आठ बातों का त्याग कर देना चाहिये । जो इनका त्याग नहीं करते हैं वह विद्यार्थी जीवन को सफल नहीं बना सकते । यही विषय मानवजीवन को कालरूप सिर पर छाये हुए हैं ।

बोली—वाणी की महिमा

लोभ पाप में नहिं फंस्यौ, लगे न मन्मथ बाण ।
क्रोधानल में नहिं तप्यो, सो नर विष्णु समान ॥
जिह्वा बड़ी सु बावली, कह गई स्वर्ग पाताल ।
आप कह भीतर भई, जूता खाय कपाल ॥
शब्द सम्हारे बोलिये, शब्द के हाथ न पांव ।
एक शब्द औषधि करै, एक शब्द करै घाव ॥
शब्द बराबर धन नहीं, जो कोई जाने बोल ।
हीरा तो दामों बिकै, शब्द का मोल न तोल ॥
वाण लगे तो काढ़िये, कीजे कोट उपाय ।
बचन-वाण जो हिय धसै, सो नहिं काढ्यो जाय ॥
ज्ञानी से ज्ञानी मिलै, कहै ज्ञान की वात ।
मूरख से मूरख मिलै, कै घूंसा कै लात ॥
मस्करी दिन दश करी, ज्यादा करी तौ बीस ।
तीसों दिन की मस्करी, कटा देत है शीश ॥
शब्दहि मारा मर गया, शब्दहि छोड़ा राज ।
जिन जिन शब्द परखियां, तिनके सर गये काज ॥
मिष्ट बचन है औषधी, कटुक बचन है तीर ।
श्रवण द्वार ह्वै संचरे, साधै सकल शरीर ॥
मधुर बचन से है सभी, वशी होत संसार ।
कौड़ी लगे न गांठ की, बाढ़ै प्रीति अपार ॥
आवत गारी एक है, उलटत होय अनेक ।
कहैं कबीर नहिं उलटिये, रहै एक की एक ॥

गारी ही से ऊपजै, कलह कष्ट और मीच ।
हारि चलै सो साधु है, लागि चलै सो नीच ॥
अपनी मीठी बोलि सों, कोयल पाती मान ।
लोग रूप नहिं देखते, गुण पर रखते ध्यान ॥
वाणी प्रिय बचनों सहित, निर्मदता संग ज्ञान ।
क्षमा शौर्य धन दानयुत, विरले दिखते जान ॥

क्रोध का क्या फल होता है ?

क्रोध कर मरे और मारे, ताह फांसी होय ।
किंचित हू मारे तो, जाय जेलखाने में ॥
अगर कहुं निबल भयो, हाथ पाँव टूट गये ।
ठौर ठौर पट्टी बंधी, पड़े सफाखाने में ॥
पीछे से कुटुम्बी जन, हाय हाय करत फिरें ।
हाथ पाँव पड़त फिरें, तहसील और थाने में ॥
किंचित हू किये ते क्रोध, एते दुख होत भ्रात ।
अनेक सुख होत भ्रात, जरा गम खाने में ॥

यह बात हमें भगवान शंकर की वाणी रूप गंगा जो अथाह समुद्र हैं, शिक्षा देती है। इसलिये प्रकृति ने मानव को सुनने को दो कान और बोलने को एक जीभ दी है ।

कम कहना सुनना अधिक, ये है परम विवेक ।
याही तें विधि ने दये, कान दोय जीभ एक ॥

पूर्वाचार्यों ने यह स्पष्ट कह दिया है कि जीवों की परिणति तीन प्रकार है :—

परिणति सब जीवन की, तीन भांति वरणी ।
एक पुण्य, एक पाप, एक राग हरणी ॥

यौवन में बिषयों की मदान्धता रोग का कारण है । इस रोग के कारण कुसंगति, कुशिक्षा, कुगुरु, कुमित्र विषयानुगामी हैं ।

धीर वीर तब ही तलक, जब तक लखी न नारि।
नारि नैन के मिलत ही; सर्वस्व देत विगारि ॥

यौवनावस्था में चढ़ता हुआ खून अपनी सुर्खी बतलाता है; उसी प्रकार मंगल गृह भी है। यही शरीर का राजा है । आचार्यों ने कहा है :- वीरभोग्या वसुन्धरा ! वीर बालक ही जो ब्रह्मचारी हैं जिन्होंने विषय कषायादि का त्याग किया है वही इस कायारूप बसुन्धरा को स्वस्थ (आरोग्य) रख सके हैं। और इसका सही सदुपयोग कर यश प्राप्त कर सके हैं । उन्हीं ने विजय पाई है । और जो विषयों के वशीभू त हैं वहः—

है फंसा विषयों में जो, वह वीर है किस काम का ।
जंग जिसको लग चुका, शमशीर है किस काम का ॥

यह भी एक कर्म की विचित्रता का स्वरूप है जो यह विषयों के जाल में फंस जाता हैं, इसे कालरूप सर्प द्वारा आचार्यों ने सांकेतिक कलाकृतियों में निरूपण किया है। चतुर मनुष्य जो ब्रह्मज्ञानी हैं इसका सदुपयोग करते हैं और जो शंख पुरुष हैं वह इसका दुरुपयोग करते हैं । जो बात हम यहाँ पर लिख रहे हैं वैसी मूर्तियां भी हमें प्राप्त हुई हैं ।

क्रोध, मद, लोभ, माया, इनमें राचै है ये जीव।
जिनके कारण बन्ध करता, फिरता रहता है सदीव ॥
जीव कर्मों का ये सम्बन्ध है, अनादि काल से ।
जिस तरह दूध में मक्खन है, स्वयं बिन मिल बावरे ॥
कर्मों के संसर्ग में, जीव हुआ बेहाल ।
मति माफिक वर्णन हुआ, अनुभव लेहु सम्हारि ॥

मानव—शरीर क्या एक वृक्ष है ?

समाधान :— यह मानवशरीर एक संसारवृक्ष है । इसे कालरूप हाथी पकड़ कर पटक रहा है । जिस प्रकार से काल बड़ा है उसी प्रकार से भूमण्डल पर हाथी बड़ा है । यह एक शाका-हारी पशु है । यह बालक के जन्म लेते ही पीछे लग जाता है । जिस प्रकार से सफेद और काला हाथी होता है उसी प्रकार से दिन सफेद हाथी है और रात काला हाथी है । इसके चार पैर हैं, दिन के भी चार पहर हैं और रात के भी चार पहर हैं ।

दूसरा सिंह भी काल है, किन्तु यह माँसाहारी है। यह भी काले और सफेद दोनों ही रंग के होते हैं । इसके भी चार पहर हैं। यह मृत्यु को संकेत करता है । सिंह हमें पुरुषार्थ करना सिखाता है । पुरुषार्थ चार प्रकार का है—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। जिसने इन चारों पुरुषार्थों को साधा है वही इस संसार में जीवित है । आज वही महापुरुष हमें देवस्वरूप हैं, जिनने इस कालरूप सिंह से संग्राम कर विजय पाई है । और जो विषयों में आशक्त रहे उन्हों को यह अनन्तकाल से चारों पैरों से कुचलता और खाता आया है ।

यह कालरूप हाथी संयमी और असंयमी प्राणी मात्र के पीछे लगा हुआ चला आ रहा है। उसे असंयमी मनुष्य अपने मानव जीवन में उस समय महसूस करता है जब इन्द्रियां शिथिल हो जाती हैं, शक्ति क्षीण हो जाती है । अय मेरे नौजवानो ! देखो एक वृद्ध पुरुष को और अनुभव करो कि मैंने इन विषय भोगों में रुचि रखकर क्या काम-शूकर की भांति कालरूप सिंह को आमंत्रित नहीं किया अर्थात् मृत्यु को नहीं बुलाया ? देखिये, आज भारत के अनेकों छात्र विषयों के फन्दे में फंस कर मौत के घाट उतरते जा रहे हैं । शिक्षा लेना क्या आवश्यक नहीं है ?

नर तन, रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान।
इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावें धीमान ।।

संयमी और असंयमी दोनों ही प्राणी पथिक हैं, जो मनुष्य शरीररूप रथ है । आत्मा इसका ड्रायवर है, इन्द्रियां घोड़े और इस पर बैठने वाला धीमान् पुरुष है, जो एक राहगीर बटोही है, किन्तु असंयमी मानव का जीवन श्वान से भी पतित है, क्योंकि विषयान्धी का कोई समय विषयों के लिये निश्चित नहीं है और श्वान के लिये समय निश्चित है ।

कुत्ता कातिक मास में, तजत भूख और प्यास।
तुलसी विषयी नरन को, बारहुं कातिक मास ।।

हम इन्द्रियरूप घोड़े पर सवार होकर मृगतृष्णा के समान अपनी मृगनयनी को साथ लेकर रमते हैं और जीवनयात्रा के अंतिम समय में काल समाप्त होते ही यमराज अपना बाण छोड़ देते हैं । इस मानवरूप वृक्ष की रक्षा विरला वीर पुरुष जो जितेन्द्री वीतरागी है, वही कर सकता है ।

इसप्रकार के चार सहतीर हमें विदिशा नगर में किले के अन्दर झांई पौर में मिले हैं, जिनमें इस प्रकार का चित्रण किया गया है ।

कविवर भूधरदास जी ने इसे अनुभवी-ज्ञान द्वारा चरखा बताया है :—

चरखा चलता नांही रे, चरखा भया पुराना ।।
पग खूंटे दोउ हालन लागे, उर मदरा खखराना ।
टेढ़ी भई पांखुरी पांसू, चाले नहिं मनमाना ।।
रसना तकली ने बल खाया, सो कैसे करि खूटै ।
शबद सूत सूधा नहिं निकसै, घरी घरी में टूटै ।।
आयु माल का नहीं भरोसा, अंग चलाचल सारे ।
रोज इलाज मरम्मत चाहै, बैद बढ़ई सब हारे ।।
नया चरखला रंगविरंगा, सबका चित्त चुरावै ।
पलटे वरण गये गुण अगले, अब देखत नहिं भावै ।।

मोटा महीन कात के अजहुं, करि अपना सुलझेरा।
अंत अग्नि में जलना होगा, 'भूधर' समझ सबेरा ॥

शिवजी के दो गण नन्दी और भृंगी कौन हैं ?

समाधान :—नन्दी आनन्द का देने वाला धर्म है जिसे वृष कहते हैं। वृष का संकेत बैल से किया है। प्रत्येक जीव मात्र के अन्दर धर्म है। वस्तु का स्वभाव ही धर्म आचार्यों ने निरूपण किया है। और भृंगी है जठराग्नि, जिसका संकेत आचार्यों ने बाघाम्बर से किया है। जिस प्रकार से बाघ खाने को दौड़ता है उसी प्रकार से यह जठराग्नि है। इस पेट की जठराग्नि को शान्त करने के लिये क्या क्या उपाय नहीं रचे जाते ?

भर लेते हैं पेट सभी, है जिनके काया।
पुरुषसिंह है वही, भरे जो पेट पराया ॥

हम आपकी दृष्टि श्रीमंत राजमाता सिंधिया की ओर ले जाते हैं कि वह इस युग की सही मायनें में सिंह-पुरुष हैं। उन्होंने जनता की सेवा के लिये चुनाव लड़ा और शानदार विजय प्राप्त की थी।

ध्यान देने की बात है कि राजमाता ने स्वयं मुख्य मंत्री पद स्वीकार नहीं किया। ऐसा क्यों ? इसलिये कि सिंहवृत्ति धारक क्या आधीनता धारण करते हैं ? कदापि नहीं। जो हंस मोती चुगते हैं क्या वह कभी उच्छिष्ट वस्तु की ओर नजर डालते हैं ? नहीं। जिस राजा ने राज्य किया है क्या वह गुलामी करेगा ? नहीं। जिस दानी ने दान दिया हो क्या वह कभी भिक्षा मांगेगा ? नहीं। जितना वेतन मुख्य मंत्री पाते होंगे उतना तो दान नित्य प्रति दिया जाता है। यह हमारे पूर्व राजाओं के दान की परंपरा रही है।

शंकर जी के विवाह में बरातीगण

(मानव जीवन से तुलनात्मक)

नन्दीगण पर सवार होकर, बरात चली शंकर भोला।
पर्वत से उठ चले महादेव, सुरत धरी है गोकुल की ॥
उत्तराखंड से उतर कर, हनूमान आगे भोला।
ब्रह्मा तो चढ़ चले हंस पर, गरुड़ पै विष्णू भगवाने ॥
भटक पै भैरों, चार पैर चूहे पर गणपति सोहाने।
लाल बैल पर मंगल राजा, काले सांड पर महाकाले ॥
भूरे हाथी पर वृहस्पती, सवार होकर के चाले।
जरख के रथ में चली डंकनी, चले जो शिव के अगवाने ॥

घोड़े के रथ में सूर्य नारायण, चल धरती दे सत् म्याने ।
हिरण के रथ में चलै चन्द्रमा, चले जो शिव के अगवाने ।।
अर्र ततइया, बर्र ततइया, विच्छुन की झालर लटकें ।
सहस नाग की नांद बनाई, मुण्डन की माला लटक ।।
कहत नादिया सुनलो बाबा जी, खूब सजालो तुम हमको ।
यहां की दुनिया नाम धरेगी, शरम लगेगी दोनों को ।।

भावार्थ :—नन्दीगण का अर्थ है, आनन्द देने वाला धर्म, जिसे वृष कहते हैं व वृष बैल से संकेत किया है। धर्म दश प्रकार का वेदों और ग्रन्थों में पूर्वाचार्यों ने लिखा है ।

बारात का अर्थ है मानव जीवन की जीवनयात्रा से और भोला कहते हैं सीधा सरल मानव ।

ब्रह्मा-यह मानव शरीर जिसके द्वारा सृष्टि की रचना होती है और ब्रह्म चैतन्य स्वरूप आत्मा जिसे हंस कहते हैं । इसी हंस पर यह मानव शरीर बैठा हुआ है । मानव-शरीर विषय-वासनाओं के अणुओं का एक पिंड है । और यह ज्ञानरूप गरुड़ पर सवार है ।

चूहे के चार पैर हैं । जो दिन और रात यह मानव की आयुरूप डाल को काटते रहते हैं । इसके भी चार चार पहर होते हैं । गण नाम समुदाय का है और इसका पति चैतन्य स्वरूप आत्मा है। यदि यह आत्मा इस शरीर में न हो तो क्या इस शरीर की शोभा हो सकती है ? नहीं ।

मानव का सुखी जीवन शुक्र है । जहां सुखी जीवन है वहां पर विषय अपनी विभिन्न कलायें दिखाते हैं । विषय शनि है । जिसे विषय लग जाते हैं उसका जीवन कलंकमय बन जाता है । और वही मृत्यु का कारण बन जाता है । मृत्यु को यम कहा है । इन तीनों का बाहन काला साँड जिसे भैंसा कहते हैं । सांकेतिक भाषा में आचार्यों ने उल्लेख किया है । शुक्र, शनि और यम का बाहन भैंसा है ।

भूरा हाथी मानव की वृद्धावस्था है । जब श्वेत बाल आते हैं उसी काल विवेकपूर्ण ज्ञान का अनुभव होता है । अनुभव ज्ञान की कसौटी है । ज्ञान हमारा गुरु है । ज्ञानी ज्ञानरूप हाथी पर सवार होकर संयम का अंकुश लेकर चलाता है ।

आपने देखा होगा कि जरख एक .जंगली खूंख्वार के समान मांसाहारी पशु है । यह विशेष कर खून पीता है । इसकी कमर टेढ़ी होती है । इसी प्रकार से वृद्धावस्था में मानव की भी कमर टेढ़ी हो जाती हैं । आयु शेष रहने से जरा बुढ़ापे का प्रतीक है । जर्जर बुढ़ापे के शरीररूप रथ में डंकनी आकर अपना राग आलापन करने लग जाती हैं । वह छः हैं ।

तृष्णा, चिन्ता, दीनता, माया, ममता, नार ।
ये षट् डाँकिनि पुरुष का, पीवत रुधिर निकार ।।

जिस प्रकार से विवाह में गीत प्रायः स्त्रियां गाती हैं, यह भी अपना अपना गीत गाने लग जाती हैं। जो हमारे कल्याणमार्ग में अगवानी करने आ जाती हैं।

शंकर जी की बारात में ग्रह, नक्षत्र, भूत पिशाचादि सभी गये थे। तो इस कविता के भावार्थ में यह सभी बतलाये गये हैं। इनमें सूर्य और चन्द्रमा भी थे।

सूर्य नारायण :—घोड़े के रथ में। घोड़े इन्द्रियां हैं। नेत्र इन्द्रिय में जब तक प्रकाश है तभी तक शक्ति है और यह मानवशरीर शक्ति की पालकी (म्याना) है। पुरुषार्थी व्यक्ति ही नारायण है, यदि सत्कर्म करे तो। अन्यथा पशुओं से भी गिरा हुआ है।

जो दार्शनिक पुरुष हैं वह अपनी शूरवीरता, धर्म और मोक्ष के साधनों में, परोपकारों में बतलाते हैं और कामान्धी पुरुष सांसारिक भोग भोगने में, अर्थ और काम के साधनों में लगे रहते हैं। जिसप्रकार से शूकर विष्टा खाने में आनन्द मानता है उसी प्रकार से विषयी मानव विषयों में आनन्द मानता है।

हिरण के रथ में चन्द्रमा इस बात को बतलाता है कि मुखाकृति से सुख और दुख का आभास होता है। हमारे सद्‌विचार मस्तिष्क में केन्द्रित होते हैं। इसलिये शीतलता का प्रतीक शंकर जी के मस्तक पर चन्द्रमा बतलाया है। नेत्रों को मृगनयन की उपमा से विभूषित किया है। जिस प्रकार से हिरण चौकड़ी भरता है उसी प्रकार से नेत्र भी दूर दूर के सांकेतिक चिन्हों को पहिचान लेता है। यही हिरण का रथ है।

अर्र ततइया, बर्र ततइया मानव जीवन की चंचलता, चिड़चिड़ा स्वभाव, हृदयविदारक कटु वचन और असत् कार्य जिनसे कि आघात पहुँचता है।इसका द्योतक है।

दुर्गा का बाहन सिंह पुरुषार्थ का प्रतीक बतलाया है। नारी ही पुरुषार्थ करना सिखाती है। आलसी, रोगी और विषयी मानवों के घरों में प्रायः कलह इसीलिये मचा रहता है कि वह पुरुषार्थहीन होते हैं।

यह मानव शरीर एक नाद (कुण्ड) के मानिन्द है और इस शरीर से अनन्तानन्त काम, क्रोध, मान, माया, लोभ, अनन्तकाल से लिपटा हुआ है। अनन्त नाम सर्प का और अनन्त नाम काल का है।

प्रार्थना में से ध्वनित अर्थ

धन धन भोलानाथ दिगम्बर, कौड़ी नहीं खजाने में।
तीन लोक बसती में बसाके, आप बसे वीराने में॥

भावार्थ—यह शरीर ही तीन लोक की रचना का है। इसमें आत्मा आकर बसी। इस बसती की रचना किस प्रकार है? आत्माराम भोलानाथ है। इसे जैसी संगति मिल जाय। किन्तु आत्मा भिन्न है, पुद्गल भिन्न है। इसके खजाने में तीन रत्न अमूल्य हैं–वह हैं रत्नत्रय,

जो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र कहे जाते हैं। और लोक भी तीन ही हैं। ऊर्ध्व नाभि से ऊपर का भाग, मध्य टुन्डी का भाग और अधोभाग पैरों की ओर का भाग कहलाता है।

दर्शन मस्तिष्क में विचारणीय है; ज्ञान हृदयंगत किया जाता है और चरित्र विषयादि से बचाया जाता है। किन्तु मूर्ख मानव इस निधि को स्वत: के पास न रख खो देता है और खोजता फिरता है। देखिये तीन लोक-

पुरुषा अकार ठाड़ो निहार, कटि हाथ धरैं द्वै पग पसार।

इस प्रकार यह तीन लोक का नकशा बन जाता है।

जटा जूट का मुकुट शीश पर, गले में मुण्डों की माला।
माथे पै है डटा चन्द्रमा, कपाल का कर में प्याला ॥

भावार्थ—मानव के सिर पर जटाओं का मुकुट प्रकृति ने स्वयं ही निर्माण किया है। और जो सर्पफण बताया है वह काल सिर पर छाया है इसका प्रतीकात्मक चिन्ह है। इस कारण नाना प्रकार की शंकायें उत्पन्न होती हैं, जो शुभ रूप और अशुभ रूप हैं। गले में मुण्डमाल है वह काम, क्रोध, मान, माया, लोभ, छल कपट आदि की जो कि संसार परिभ्रमण कराने वाली विषय भोगादि में ले जाने वाली है। इनसे सावधान रहने का उपदेश मिलता है। मस्तक पर जो चन्द्रमा विराजमान है वह सुख और शान्ति का प्रतीक है।

सिंह चर्म का वस्त्र पुराना, वृद्ध बैल असवारी को।
शिव-रमणी तुव सेवा करती, धन धन गौर विचारी को ॥

धर्म एक बूढ़ा बैल है जिस पर शंकर जी सवारी करते हैं। यह इनका गण है। सद्गुणों के समुदाय को गण कहते हैं। क्षुधा एक सिंह है जो जीर्ण शीर्ण पुराने वस्त्र से ढका हुआ है। गौरा जी का वाहन सिंह है। सिंह और बैल आपस में विरोधी हैं। गौरा जी एक देवी शक्ति है। धन्य है उन महापुरुषों को जिनकी सेवा में शिव-रमणी खड़ी रहती हैं।

उत्तम पुत्री है राजों की, व्याही गई भिखारी को।
क्या जाना क्या देखा उसने, नाथ तेरी सरदारी को ॥

विद्वज्जन! यह ऊपर बता ही चुके हैं कि मोक्षगामी महापुरुषों की तीन-१ पद्माभनी, २ कमलासनी, ३ हंसासनी पत्नियां हैं, जो सर्वोत्तम मानी गई हैं। जो इनके राजा हैं और यह पुत्रियां वैरागी के लिये व्याही गई हैं नाथ! जब तक केवलज्ञान नहीं होता तब तक इस अपार संसार के अन्दर क्या देखा, क्या सुना और क्या समझा तथा अनुभव किया ?

सुनी तुम्हारी व्याह की लीला, भिखमंगे क्यों नंगे तुम ?
नाम तुम्हारे हैं अनेक पर, सबसे उत्तम है नंगा ॥

भावार्थ :—हे मोक्षाभिलाषी ! आपने इस सांसारिक व्यवहार रूप विवाह का चरित्र देखा और सुना जो कि क्षणभंगुर है। जो असंयमी हैं, जिनका भविष्य खतरे में है, वही तो दर दर के भिखारी और नंगे कहे जाते हैं। आप तो संसार-सागर से पार उतारने वाले हैं। आपने माया मोह जाल का परित्याग कर दिया है। इसलिये आप नंगे हैं। इसीलिये आप दिगम्बर कहलाते हैं।

भगवान ऋषभदेव को भागवत में महादेव कहा है, जो दिगम्बर हैं और उनके अनेकों नाम हैं। इच्छाओं से रहित होने से वे नंगे हैं।

याही तें शिव शोभा पावै, बैठ रही सिर पर गंगा।
भूत प्रेत बेताल साथ में, यह दिल सब से है चंगा॥

अतः हे भगवन् !

अष्ट कर्म जो दुःख देते हैं, तिनके क्षय का करो उपाय।
नाम आपका जपें निरन्तर, विघ्न रोग सब ही टर जाय॥

यही भूत प्रेतादि का समुदाय जो जबरदस्त है उसको आपने तपस्या से जीत लिया है। केवलज्ञानरूप गंगा (वाणी) को मुखारविन्द से बहाकर शोभा पाई है जो सबको कल्याण की देने वाली है, इसलिये आप शोभा को प्राप्त हैं।

तीन लोक के दाता होकर, आप बने क्यों भिखमंगा।
अलख तुझे बतलाते मुझे; क्या मिलता अलख जगाने से॥

भावार्थ :—इस कविता की दो लाइन में भगवान से तर्क किया है कि आप जब तीनों लोकों के दाता हैं तो भिखारी क्यों बने ? और अलख जगाने से तुम्हें क्या मिला ? वास्तविक पूछना कुछ तथ्य रखता है। वह निम्न प्रकार हैं, ध्यान दीजिये ! माता-पिता, गुरुजन या महत् पुरुष सद्-शिक्षायें यदि न दें तो स्वात्मानुभव प्राप्त नहीं हो सकता और विरागता के वगैर उसका प्रभाव नहीं पड़ सकता। न यह ज्ञात हो सकता कि मैं कौन हूँ ? मेरा कर्त्तव्य क्या है ? मैं किस मार्ग पर जा रहा हूं ? और मुझे किस तरफ जाना है ? राग-विराग, आत्मा-पुद्गल, साकार-निराकार, पुण्य-पाप, गुण-अवगुण, भलाई-बुराई, दया-निर्दयता, दोष-निर्दोष आदि में अन्तर है। यदि यह न बताया जाय तो भव्य जीवों के कल्याणमार्ग जो आत्मीक स्वाभाविक गुण आत्मा में विद्यमान हैं कैसे प्राप्त हों ? इसलिये वैरागी, या कहिये भिखारी बने और चेतावनी दी। अलख जगाने का तात्पर्य यही है।

अंतिम आशय यह है कि जिन्हें काम, क्रोध, माया, लोभ है वह कुल का ईश (मुखिया) नहीं हो सकता।

(सवैया)

पंकज-कोष में भृंग फंस्यो इक, यों करतौ मन में मनसूवा।
होयगौ प्रात उगेंगे दिवाकर, मैं उड़ि जैहों पराग लै सूवा॥

बैनी सो बीचहि और भई, कछु हो गयौ काल कौ ख्याल अजूवा ।
आय गयंद चबाय लियौ, मन ही में रहे मन के मनसूवा ॥

(दोहा)

अलि पतंग गज मीन मृग, जरत एक ही आंच ।
तिन का कौन हवाल है, जिन के संग में पांच ॥
हिय निर्गुन नयननि सगुन, रसना नाम सुनाम ।
मनहुँ पुरट संपुट लसत, तुलसी ललित ललाम ॥

भावार्थ—भगवत् नाम जपते समय, हृदय में निराकार ब्रह्म की व्यापकता और नेत्रों में साकार के दर्शन और जिव्हा पर सुन्दर नामोच्चारण ऐसा शोभा देता है मानो दो सोने के पर्तों की डिब्बी में हीरा रखा हो । ऐसा सुन्दर मालूम होता है । पुनः :—

हिय फाटहु फूटहु नयन, जरहु सो तन केहि काम ।
द्रवै स्रवै पुलकै नहीं, तुलसी सुमिरत नाम ॥

भावार्थ—तुलसीदास जी कहते हैं कि भगवान का नाम स्मरण करते हुए जिसका हृदय नम्रीभूत न हुआ, आंखों में प्रेम की अश्रुधारा न बही और शरीर रोमांचित न हुआ तो ऐसा हृदय फट जावे, नेत्र फूट जावें, शरीर जल जावे । क्योंकि इनका कोई उपयोग नहीं हुआ । इसलिये कहा है कि :—

हिय के हरि अति लघू हैं, मंदिर के अति बृद्ध ।
घरकौ जोगी जोगिया, आनगाँव कौ सिद्ध ॥
प्रतिमायें अवलोकते, हट जाता अज्ञान ।
इसीलिये सब पूजते, मान उन्हें भगवान ॥
प्रतिमाओं का हृदय पर, पड़ता बहुत प्रभाव ।
जैसे रूप विलोकते, तैसे होते भाव ॥
वीरों की फोटू निरख स्वयं फड़कते अंग ।
वारांगनाओं को निरख, सुभग शील हो भंग ॥

दश धर्म–निरूपण

उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव भाव हैं, सत्य शौच संयम तप त्याग उपाव हैं ।
आकिंचन ब्रह्मचर्य धरम दश सार हैं, चहुंगति दुखतें काढ़ि मुकति करतार हैं ॥

शब्द	अर्थ
(१) क्षमा—	पृथ्वी (मिट्टी) की मृदुता।
(२) मार्दव—	मिट्टी के गुठलों से पृथक् होना।
(३) आर्जव—	कूड़ा कचड़ा का त्याग करे, मन की सरलता।
(४) शौच—	दिखने में मिट्टी की स्वच्छता।
(५) सत्य—	यथार्थ निरूपण।
(६) संयम—	मकान के दरवाजे, खिड़की बन्द करना। इसी प्रकार से शरीर की १० इन्द्रियों पर कंट्रोल करना।
(७) तप—	(तपाना)। इंद्रिय, मन की वृत्ति को रोकना। अनशन उपवासादि द्वारा स्वर्ण में मिश्रित धातु मैलादि की पृथकता।
(८) त्याग—	उसी प्रकार आत्मा से विकारों का त्याग करना।
(९) आकिंचन्य—	कुछ भी विजातीय पदार्थ का न रखना।
(१०) ब्रह्मचर्य—	आत्मा में लीन होना।

उत्तम क्षमा :—शिव जी का वाहन नन्दी है। भगवान आदिनाथ ने कल्पवृक्षों के लुप्त होने पर बैल की उपयोगिता, पशुपालनादि की क्रियाओं का उपदेश दिया था। और उसके परोपकारमय गुणों को समझाया था। इसलिये भगवान आदिनाथ का चिन्ह वृषभ है !

दु:ख है कि स्वतंत्र भारत में गौ-रक्षा न हो और अकबर मुगल साम्राज्य में गौवध बन्द हो। भारतीय शासक जो हिन्दुत्व की डींग मारते हैं क्या उनका पतन नहीं हुआ ?

(छप्पय)

अरिहु दंत तृण धर्राहि, ताहु मारत न सबल कुइ।
हम नित उठ तृण चर्राहि, बैन बोर्लाहि जु दीन हुइ॥
हिन्दुहि मधुर न देंहि, कटुक तुरकाहु न पियार्वाहि।
जुपै एक हम जर्नाहि पुत्र, जगतहि मन भावहि॥
सुन शाह अकब्बर अरज यह, गौ बिनवै जोरे करन।
कौन चूक मोहि मारयतु, मुयहु चाम सेवत चरन॥

उत्तम क्षमादि १० धर्म और गौ महिमा

(१) उत्तम क्षमा—भगवान आदिनाथ और ११वें रुद्र शंकर जी दोनों ही भारत में महा-

पुरुष हुए और उन्हें पहचानने के चिन्ह और वाहन बृषभ ही हैं। जिसे बैल, नादिया, नन्दी, बुल सांड आदि और गाय को सुरभी, अंग्रेजी में काउ कहते हैं।

यह भारतवर्ष एक कृषिप्रधान देश है। इसका उपकारदाता यदि है तो केवल पशुओं में प्रधान गौ-वंश ही है। इसकी अनुपम उपकारमय सेवायें जो स्वार्थ रहित हैं- (१) कृषि, (२) गाड़ी, नाड़ी के जोतने में, (३) लादने में, (४) सवारी करने में, (५) कोल्हू में। भूख-प्यास, मारन-ताड़न, बन्धन आदि के कारण उपस्थित होने पर समताभाव और मरने पर नरपिशाच (मनुष्य) तथा पशु, पक्षी, कीड़े, मकोड़े मांस खाते हैं और खाद बनकर भी सेवा करता ही है।

वर्तमान में तो मांस सुखाकर और डब्बों में भरकर बाहर भेजने का व्यापार स्वार्थियों ने बना रखा है और कहते हैं कि हम भारतीय गौ-रक्षक हिन्दू हैं।

इस मांस में चरबी भी रहती है, जो सचिक्कन पदार्थ है, जिसे वैज्ञानिकों ने विटामिन बताकर और अंग्रेजी दवाओं में मिलाकर खिलाने से बुद्धि परिवर्तित की है। कहा है—"जैसा खाओ अन्न, वैसा होय मन। जैसा पिओ पानी, वैसी बोलो बानी।"

इसके लीवर के मांस की थैली में गौलोचन निकलता है, जो प्रायः औषधि के ही उपयोग में आता है। प्रकृति कस्तूरी जैसी है,और वह कस्तूरी के ही भाव बिकता हैं। इसकी आँतें रक्त से नदी नालों की तरह भरी रहती हैं। इन आंतों की तांत, रस्सी आदि बनती हैं। हड्डी का चूरा कर सरेस निकाल कर शेष हिस्सा का खाद बना लेते हैं। तथा हड्डी के खिलौने, दस्ते हथियारों के उपयोग में आते हैं। बालों की रस्सियां मुहरी आदि बनती हैं। चमड़ा आपके चरणों की रक्षा करता है तथा रस्से आदि बनते हैं जो मिलों के काम में आते हैं और वायसर व चामटी आदि बनती हैं। रक्त राक्षसीवृत्ति वाले मानवों ने इंजेक्सनादि में उपयोग में ला दिया है। सींग का बाजा बनता है।

ऐसे उपकारी का बदला निर्दयता पूर्वक दिया जाय। क्या यही मानवता है ? और क्या उस पशु में धर्म नही ? समता भाव नहीं हैं ? यह है उत्तम क्षमा पहला धर्म।

(२) उत्तम मार्दव—पार्वती जी का बाहन सिंह यह सिखाता है :-

उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।
नहि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशंति मुखे मृगाः।

तथा- **उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः॥**

भावार्थ—उत्तम कुल, उत्तम विद्या, उत्तम बल का गर्व नहीं करना चाहिये और पुरुषार्थ कर मोक्षलक्ष्मी प्राप्त करना चाहिये।

(३) उत्तम आर्जव धर्म—

क्रोध मान माया धरत, लोभ सहित परिणाम।
ये ही तेरे शत्रु हैं, समझो आतम राम॥

भावार्थ—हृदय में बसी हुई कामाग्नि और विषयों के कारण मानव मायाचार, छल-कपट, क्रोधादि से अपनी स्वार्थपूर्ति करता है। स्वार्थपूर्ति का त्याग कर देना ही आर्जव धर्म है। और जो इसे धारण करता है वही नकुलीश है।

(४) सत्य धर्म—

कठिन बचन मत बोल, परनिन्दा अरु झूठ तज।
सांच—जवाहर खोल, सतवादी जग में सुखी ॥
ऐसो बचन कहै मुख सोय, तिन को सुनि जन मोहित होय ।
मधुर मिष्ट वच अति सुखदाहि, सो जिन पूजों अर्घ चढ़ाहि ॥
मन में हो सो वचन उचरिये, वचन होय सो तन सों करिये ॥
ऊंचे सिंहासन बैठि वसु नृप, धरम का भूपति भया।
बच झूंठ सेती नरक पहुंचा, सुरग में नारद गया ॥
ईर्षा मद अविवेकता, निर्दयता धुन जान ।
बहु अनर्थ इक ही करै, चारों मौत समान ॥

भावार्थ—निर्दयतापूर्वक विवेक रहित मदान्ध होकर ईर्षा वश अपनी वाणी से जिससे दूसरों का अहित होता हो तो उसका त्याग करना ही सत्य धर्म है।

(५) शौच धर्म—

लोभ पाप में नहिं फंस्यो, लगे न मन्मथ-वाण ।
क्रोधानल में नहिं तप्यो, सो नर विष्णु समान ॥
लोभ पाप कौ बाप बखानौं ॥
आशा फांस महाँ दुखदानी, सुख पावै संतोषी प्राणी ॥

भावार्थ—विषयों की आशा की फांस और उसका लालच सब पापों का बाप है, जो अत्यन्त ही दारुण दुख देने वाली है। जो जीव अपने शील, जप, तप, और संतोष पूर्वक शुद्धि करते हैं वही सुख पाते हैं। जो काम-वाण से बचकर क्रोधाग्नि में नहीं तपे हैं वह मनुष्य विष्णु के समान हैं। यही शौच धर्म है।

(६) संयम धर्म—

जो काय अपने हाथ राखै, चपलता मैटे सही।
परमादि टारि सुधारि थिरता, जारि अघ ले सुख मही ॥

लखि काय गुपति सु नाम याकौ, सदा आचारज करै ।
ते धीर या फल जारि कर्म सु मुकति सी रमनी बरै ॥
(पंचपरमेष्ठी विधान पृ० १९)

उद्बोधन

आया रे बुढ़ापा मानी सुधि बुधि विसरानी ॥टेक॥
श्रवण की शक्ति घटी, चाल चलै अटपटी ।
देह लटी भूख घटी, लोचन झरत पानी ॥आया रे०॥१॥
दांतन की पंक्ति टूटी, हाड़न की संधि छूटी ।
काया कि नगरी लूटी, जात नहिं पहिचानी ॥आया रे०॥२॥
बालों ने बरन फेरा, रोग ने शरीर घेरा ।
पुत्र हू न आवै नेरा, औरों की कहा कहानी ॥आया रे०॥३॥
'भूधर' समुझि अब, स्वहित करोगे कब ।
यह गति ह्वै है जब, तब पछितैहै प्रानी ॥आया रे०॥४॥

इन्द्री और मन को वश में कर छह काय के जीवों को रक्षा करना और सांसारिक विषय-भोग क्षणिक सुख हैं, आत्मा के सद्गुणों को चुराने वाले हैं, इनसे सावधान रहना और नियमों का पालन करना संयम धर्म है ।

(७) उत्तम तप—तीन अवस्था (सवैया)

बालक है तब बालक सी बुद्धि, जोवन काम हुताशने जारे ।
बृद्ध भयौ सब अंग रहे थकि, आये हैं सेत गये सब कारे ॥
पांय पसारि पर्यौ धरती मांहि, रोवै रटै दुख होत महां रे ।
बीती यों बात गयौ सब भूलि, तू चेतत क्यों नहिं चेतनहारे ॥
(ब्रह्मविलास पृ० १९)

(मात्रिक कवित्त)

जबलों राग द्वेष नहिं जीतत, तबलों मुकति न पावै कोई ।
जबलों क्रोध मान मन धारत, तबलों सुगति कहां तें होई ॥
जबलों माया लोभ बसै उर, तबलों सुख सुपने नहिं जोई ।
ए अरि जीत भयौ जो निर्मल, शिव—संपति विलसतु है सोई ॥

भावार्थ :–कार्तिकेय स्वामी के हाथ में त्रिशूल है, जो तीन कांटों का संकेत करता है। वह मानव के लिये सत्य दर्शन, सत्य ज्ञान, सत्चारित्र धारण करने का है, जिसे वीर पुरुष ही धारण कर सकता है।

सम्यग्दर्शन का लक्षण :–

तीन मूढ़ता और आठ मद रहित तथा आठ अंग सहित सच्चे देव, गुरु, शास्त्र का श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है।

सम्यग्ज्ञान का लक्षण :– (दोहा)

हीन अधिक संशय रहित, सत विपरीत न जान।
यथा तथा जाने उसे, कहते सम्यकज्ञान ।।

सम्यक्चारित्र का लक्षण :– (दोहा)

मोह गये समकित मिलै, समकित से सम ज्ञान।
राग द्वेष के क्षपण कौ, व्रत धारे द्रग मान ।।

स्वामी कार्तिकेय के हाथ का त्रिशूल वाह्याभ्यंतर तप करने की ओर संकेत करता है।

(८) उत्तम त्याग :–

दरश विशुद्धि धरै जो कोई, ताकौ आवागमन न होई।
विनय महा धारै जो प्राणी, शिव-वनिता की सखी बखानी ।।
शील सदा दृढ़ जो नर पालै, सो औरन की आपद टालै।
ज्ञानाभ्यास करै मनमांहीं, ताके मोह-महातम नाहीं ।।

भावार्थ :—जो मनुष्य अपनी दृढ़ता के साथ आत्मा में लीन हो जाता है, जिसके पास मोह ममत्व नहीं रहता, जो निरन्तर ज्ञान का ही अभ्यास करता है, जो महान विनय का धारी है, जिसका दर्श विशुद्ध है वह अवश्य ही आवागमन रहित होता है और मोक्ष-लक्ष्मी उसकी सखी कही गई है।

वीर पूजन में कहा है—

गणधर अशनिधर चक्रधर, हलधर गदाधर वरवदा।
अरु चापधर विद्यासु धर, तिरशूलधर सेवहिं सदा ।।

इस बात की पुष्टि हमारे गणेश जी महाराज से होती है जो गणों के ईश अर्थात् परमात्मा कहे जाते हैं। जिनका मस्तक विशाल, कान बड़े, सूड़ लंबी, गले में रत्नों का हार, पेट पर सर्प, बड़ा

पेट, वाहन चूहा, हाथ में कुल्हाड़ी, कमल, मोदक, लाडू एवं दान मुद्रा जिसको संकेत कर रही हैं।

विशाल मस्तक—विवेकपूर्ण विशेष बुद्धि का सूचक है। दो बड़े कान, और एक जीभ क्यों है ?-

कम कहना सुनना अधिक, ये है परम विवेक।
याही तें विधि ने दये, कान दोय जिभ एक॥

(चौपाई—१५ मात्रा)

जिन उपदेश सुनै दे कान, ताके हृदय बढ़त अति ज्ञान।
जे सुनते नहिं हित उपदेश, ते बालक दुख सहत हमेश॥
मृदु बचनामृत मुख पर धारि, कटुक बचन कबहूँ न उचार।
पर-धन तृण समान नित जान, पर की जान अपन सम मान॥

लघु नेत्र :—

चाम चखन से सब मती, चितवत करत न वेर।
ज्ञान-नैन से जिनमती, चितवत इतनों फेर॥

गणेश जी की लम्बी सूंड क्या संकेत करती है ? :—

विश्व के सुगंधी सद्‌गुणरूप मोदक जो हाथ में लिये हैं उनका स्वयं उपभोग करना और अन्यों को भी ज्ञान–मोदक बांटना, यह महान कार्य गणधर (गणेश जी) का ही है।

गले का हार परोपकार का सूचक है :-

आभरण नर-देह का, बस एक पर उपकार है।
हार को भूषण कहैं, उस बुद्धि को धिक्कार है॥

पेट पर सर्प इस लिये है कि संसारी प्राणी दोषों—क्रोध, मान, माया, लोभ, छल, कपट से युक्त है और यही मानवता के सर्प हैं। जिन्हें हजम करने का संकेत कर रहे हैं। अर्थात् अपने अवगुण और दूसरों के गुण देखो, यह संकेत कर रहे हैं। इसलिये पेट बड़ा है।

वाहन चूहा-दिन और रात रूपी दो चूहे संसारी जीवों की आयु को काट रहे हैं।

आयु कटत है रात दिन, ज्यों करोंत तें काठ।
हित अपना जल्दी करौ, पड़ा रहेगा ठाठ॥

आचार्य कहते हैं कि मानव का शरीर ही संसार है। यह एक भयानक जंगल है। जठराग्नि (सिंह मुख है)। मन एक हाथी है; जो विषयरूप हथिनी के पीछे भागता फिरता है। जब इच्छित वस्तु प्राप्त नहीं होती और असमर्थ हो जाता है तो वटबृक्ष की लटकती हुई जटाओं को

पकड़ लेता है और उसपर चढ़कर कालरूपी हाथी से अपनी जान बचाता है। और वह कौटुम्बिक मधु-मक्खियों और नाना प्रकार के रोगादि की पीड़ा को सहन करता है। यह वृक्ष संसाररूपी कुए के बीच में है और उसमें महान् भयंकर अजगर मुंह फाड़े हुए है। जो अनादि काल से परिभ्रमण करता चला आ रहा है।

यह मानव जिस तिस प्रकार से विषयाश्रित होकर विषयरूपी मधु की बूंद का रसास्वादन करता है और आयु रूपी डाल को दिन-रात रूपी दो चूहों से कटवा रहा है। और सदैव संकट में पड़ा रहता है।

उस समय विद्याओं के धारण करने वाले सद्‌गुरु आदेश और उपदेश देते और समझाते हैं। कहते हैं कि यह संसार के विषय भोग अत्यंत ही दुखदाई हैं। किन्तु यह ज्ञानहीन जीव सद्‌गुरु के बचनों का पालन नहीं करता और अन्तिम अवस्था अर्थात् वृद्धावस्था में जब इसका तेज (ब्रह्मचर्य) नष्ट हो जाता है तो इस प्रकार पछताता है जिस प्रकार मक्खी शहद में लिपट कर अपने जीवन को समाप्त कर देती है और आत्मीय सुख चैतन्य स्वरूप को भूल जाती है। इसलिये गणेश जी का वाहन चूहा संकेत कर रहा है कि अपनी आयु का सदुपयोग करो, व्यर्थ मत जाने दो।

आचार्य पुनः समझाते हैं कि—

हंस काग को परख को, सतगुरु दई बताय।
हंसा मोती को चुगे, काग नरक पर जाय ॥
हंसा बगुला एकसा, मानसरोवर मांहि।
बगुला ढूंढ़ै माछली, हंसा मोती खांहि ॥
हंसः श्वेतो, बकः श्वेतो, को भेदो बकहंसयोः।
नीरक्षीर—विभागेषु, हंसो हंसः बको बकः ॥

यदि ऐसा न किया तो— (कवित्त)

सिन्धु से तात, हते विधि से सुत, सूरज सोम, सहोदर दोऊ।
रम्भा रमा जिनकी भगिनी, मघवा मधुसूदन से बहिनोई ॥
तुच्छ तुषार इतौ परिवार, सुआन सहाय भयो नहिं कोई।
सूख सरोज गयौ छिन में, सम्पति में सबकौ सब कोई ॥

भावार्थ—सिंधु के पिता वरुण, ब्रह्मा जैसे पुत्र, सूर्य चन्द्रमा जैसे भाई, लक्ष्मी सरस्वती जैसी बहिन, इन्द्र और विष्णु जैसे बहनोई। इतना परिवार होने पर भी एक जरा सा तुषार लगते ही हे कमल ! क्षणमात्र में सूख गया, कोई आकर तेरा सहायक न हुआ। अरे भोले जीव ! संपत्ति के अन्दर तो :-

सब रिश्तेदार बन जाते हैं, जब पैसा पास होता है।
टूट जाता है गरीबी में, जो रिश्ता खास होता है ॥

बीज दो प्रकार के हैं, एक राग, दूसरा द्वेष :—

राग द्वेष दो बीज हैं, कर्म बंध फल देत ।
इनकी फाँसी में बंध्यो, छूट्यो नहीं अचेत ॥

चार खान

धन भोगों की खान है, तन रोगों की खान ।
ज्ञान सुखों की खान है, दुःख खान अज्ञान ॥

चार बल

तन बल, धन बल, स्वजन बल, विद्या बल, बल चार ।
एक मनोबल के बिना, चारों ही बेकार ॥

अन्धे चार प्रकार

काम क्रोध मद नयन से, अन्धे चार प्रकार ।
नयन अन्ध इनमें भला, करे न पर अपकार ॥

गणेश जी के हाथ में कुल्हाड़ी इसलिये है कि आठों कर्म काष्ठ हैं। इन्हें (१) मतिज्ञान (२) श्रुतज्ञान (३) अवधिज्ञान (४) मनःपर्यय ज्ञान (५) केवलज्ञान द्वारा ही काटा जा सकता है। कुल्हाड़ी यही सूचित करती है ।

कमल :–जो हाथ में लिये हैं वह लक्ष्मी का द्योतक है। अर्थात् आप इन्हीं हाथों से धनोपार्जन करते हैं। लक्ष्मी आपके हाथ में है, और वह पुण्यवान को ही प्राप्त होती है। वह किस प्रकार मिलती है ? सिद्ध पूजा है लिखते हैं कि–

काम अग्नि है मोहि, निश्चै शीलस्वभाव तुम।

भावार्थ–हे भगवन् ! मुझे कामाग्नि सता रही है और आपका स्वभाव शीतल है। कर्म आठ होते हैं। उनमें प्रथम कर्म १–ज्ञानावरणी है :—

मूरत ऊपर पट पड्यो, रूप न जाने कोय ।
ज्ञानावरणी करम ते, जीव अज्ञानी होय ॥

२—दर्शनावरणी कर्म

जैसे भूपति दर्श को, होन न दे दरवान।
तैसे दर्शन आवरण, देखन दे न सुजान ॥

३-वेदनी कर्म

शहद मिली असि धार, सुख दुख जीवन को करै।
करम वेदनी धार, साता असाता देत है ॥
पुन्नी कनक महल में सोवै, पापी राह पड़ौ दुख रोवै।
पुन्नी वांछित भोजन पावै, पापी मांगै टूक न पावै ॥
पुन्नी जरी जवाहर सोवै, पापी फाटे टुकड़े खोवै।
पुन्नी कंचन थार कटोरा, पापी के कर प्याला खोरा ॥
पुन्नी गज पर चढ़ चालंता, पापी पग नागे धावंता।
पुन्नी के सिर छत्र फिरावै, पापी शीश बोझ ले धावै ॥
पुन्नी हुकम जगत में होई, पापी बात सुनै नहिं कोई।
पुन्नी भौन दर्व नित आवै, पापी धन देखन नहिं पावै ॥
पुन्नी को सब देखन जावै, पापी जन का मुंह न लखावै।
पुन्नी कबहुं रोग नहिं पावै, पापी को नित व्याधि सतावै ॥
पुन्नी शील रूप युत नारी, पापी लहै न कानी कारी।
पुन्नी के सुत करें कमाई, पापी तरसें हो दुखदायी ॥
पुन्नी गई वस्तु फिर आवै, पापी के कर तें गिर जावै।
पुन्नी के षड् ऋतु सुख विलसै, पापी महा दुखी अति विलखै ॥

पुण्य पाप दो डार, कर्म वेदनी वृक्ष के।
सिद्ध जलावन हार, द्यानत निरवाधा करौ ॥

४—मोहनी कर्म

जैसे मदिरा पान तें, सुध बुध सर्व विलाय।
तैसे मोह कर्म उदय, जीव गहल हो जाय ॥

५-आयु कर्म

जैसे नर का पांव, दियौ काठ में थिर रहै।
तैसे आयु स्वभाव, जिय को चहुँगति थिर करै ॥

६-नाम कर्म

चित्रकार जैसे लिखै, नाना चित्र अनूप ।
नाम कर्म तैसे करै, चेतन को बहुरूप ॥

७--गोत्र कर्म

ज्यों कुम्हार छोटे बड़े, भांड़े गढ़ जानेइ ।
गोत्र कर्म त्यों जीव को, ऊंच नीच कुल देइ ॥

८—अंतराय कर्म

भूप दिलावैं द्रव्य कों, भंडारी दे नाँहि ।
होन देय नाँहि संपदा, अंतराय जग माँहि ॥

गुणों का मोदक संकेत करता है कि—

गुण वाले संपति लहैं, लहैं न गुण विन कोय ।
काढ़े नीर पाताल तें, जो गुनयुत घट होय ॥

दान चार प्रकार का है :-

(१) औषधि दान, (२) अभय दान, (३) आहार दान, (४) शास्त्र दान अर्थात् ज्ञानदान।

(सवैया ३१ मात्रा)

लक्ष्मी आगम का सुख अब तक, नष्ट हुआ नहिं कितनी बार।
भ्रमवश पुनि पुनि कर प्रयत्न क्यों, विफल मनोरथ होता यार ॥
समझ रहा है जिसे चपलमति, तू सुस्थिर—सुख—पारावार ।
बहुत समय सो नहीं रहेगा, करत क्लेश क्यों बारम्बार ॥

(चौबोला)

आने में होती है चिन्ता, जाने में फिर भारी ।
इससे साफ समझ में आता, धन आना दुखकारी ॥
यों विचार कर ज्ञानवान का, लोभ—विटप विच्छेद करें।
जिससे जगमें सब अनर्थकर, विषमय फल फिर नहीं फरें ॥

(ज्ञान-सूर्योदय)

यह लक्ष्मी आते तो गर्व कराती है और जाते हुए कमर तोड़ती है। इसका नाम ही दो-लत है। दो लत से तात्पर्य दो आदत से है। इसलिये :--

दान औषधि पुण्य यश कर, बचे वृष धन प्राण है।
जग में शिरोमणि है वही, जो देत जीवन दान है॥

त्याग उचित ढंग पर करे, और पात्र को दान दे, कुपात्र को नहीं।

(चौपाई १५ मात्रा)

दूषण तज गुण भूषण धार, क्रूर भाव मन का परिहार।
झूठ वचन कबहूँ मत भास, सांच बचन पर बढ़ती शाख॥

९-आकिंचन्य धर्म

पार्वती जी अपने बाँयें हाथ में आरसी (दर्पण) द्वारा संकेत करती हैं कि परिग्रह एक चिन्ता है। जिस प्रकार शरीर में एक फांस दुख का कारण बन जाती है उसी प्रकार से सांसारिक भोगोपभोग सामग्री, स्त्री, पुत्र, पौत्रादिक भी मोह, माया, कलह आदि के कारण बन कर आत्मा को मलिन बनाते हैं और नाश के कारण बन जाते हैं। अतएव सर्वथा त्याग कर दिगम्बर मुनिराज बन कर कर्म-निर्जरा कर आत्मशुद्धि कर मोक्ष प्राप्त करते हैं। महादेव जी दिगम्बर क्यों हैं ? इसलिये कि उन्होंने त्याग किया है। सही मायने में महादेव का अर्थ यही है।

१०--ब्रह्मचर्य धर्म

बड़ी नीति लघु नीति करत है, वायु सरत बदबोय भरी।
फोड़ा आदि फुनगुनी मंडित, सकल देह मनु रोग दरी॥
शोणित हाड़ माँस मय मूरति, तापर रीझत घरी घरी।
ऐसी नारि निरख कर केशव, 'रसिकप्रिया' यह कहा करी॥

इस प्रकार के घृणायुक्त शरीर से हंस (चेतन) निकल जाने के बाद कोई प्रेम नहीं करता। पशुओं के शरीर का तो उपयोग होता भी है, किन्तु यह किसी भी प्रकार से उपकार में नहीं आता।

पशु की तो पनहीं बने, नर को कछू न होय।
नर जो कछु करनी करे, तो नर नारायण होय॥

इसलिये कहा है कि :--

विषय त्याग वैराग है, समता कहिये ज्ञान।
सुखदाई सब जीव को, यही भक्ति परमान॥

इसलिये :—

उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनों, माता बहिन सुता पहिचानों ।
सहैं बान वर्षा बहु सूरे, टिकें न नैन बान लखि कूरे ॥
कूरे तिया के अशुचि तन में, काम-रोगी रति करै ।
बहु मृतक सड़हिं मसान मांहीं, काक ज्यों चौंचें भरै ॥
संसार में विष—वेल—नारी, तज गये योगीश्वरा ।
द्यानत धरम दश पैंड़ चढ़िके, शिव-महल में पग धरा ॥

यौवन था जब रूप था, गाहक थे सब कोय ।
यौवन रतन गमाय के, बात न पूछे कोय ॥
विषय भोग जग में जिते, हैं सब दुख की खान ।
इनमें फंस कर हंस तुम, भूल गये भगवान ॥

नारीजघन—रन्ध्रस्थ, विण्मूत्रमयचर्मणा ।
वराह् इव विड्भक्षी, हन्त मूढ़ा सुखायते ॥

(सोरठा)

हेमाचल की धार, मुनि-चित-सम शीतल सुरभि ।
भव—आताप निवार, दश लक्षण पूजों सदा ॥

भावार्थ :—हेमाचल से अर्थ है हिमालय पर्वत से, जो भारतवर्ष का मस्तक है, जो सुन्दर और शीतल है । इसी प्रकार से मानव के शरीर का सिर यदि शीतल नहीं तो जब संसारियों का चित्त चंचल हो जाता है तो मुनियों का किस प्रकार स्थिर रह सकता है ?

भव आताप से अर्थ है कि गार्हस्थ जोवन की झंझट अर्थात् सांसारिक विषय भोगादि जब तक पृथक् नहीं किये जाते आत्मीक सुख प्राप्त नहीं हो सकता । यह दश लक्षण धर्म में ऊपर कहे जा चुके हैं ।

सांसारिक चिन्ताओं (शंकाओं) का स्थान मस्तक है । जितनी जटायें उतनी शंकायें । जब तक शंकायें समाधान नहीं होतीं मुनियों के चित्त को शांति नहीं मिलती । इस पर स्वामी कार्तिकेय शिवजी से कहते हैं कि माता पार्वती जी क्रोधित होती हैं कि ऐसी गंगा को जटाओं से त्याग दो जिससे दूसरों का अहित होता है ! यथा :—

अम्बा कुप्यति तात मूर्ध्नि विहिता, गंगेयमु[illegible]ज्यताम् ।

तब शंकर जी उत्तर देते हैं :—

विद्वन् षड्मुख संततं मयि रता, तस्या गतिः का वद ?

भावार्थ :—हे विद्वानों के शिरोमणि षडानन ! मुझ में निरन्तर तल्लीन रहने वाली गंगा की क्या गति होगी ?

पुनः स्वामी कार्तिकेय क्रोधित होकर शंकर जी को उत्तर देते हैं :—

कोपाटापवशात् विवृत्तवदनः प्रत्युत्तरं दत्तवान् ।

भावार्थ :—स्वामी कार्तिकेय के छह मुख थे, सो उन्होंने एक एक मुख से एक एक समुद्र का नाम लेकर कहा कि :—

(१) अम्बोधिः; (२) जलधिः, (३) पयोधिः, (४) उदधिः, (५) वारिनिधिः, (६) वारिधिः, इन छह समुद्रों में डुबाओ । ठीक ही है :-

सांची तो गंगा यह वीतराग वाणी ।
अविच्छिन्न धारा निज धर्म की कहानी ॥सांची०॥
जामें अति ही विमल अगाध ज्ञान-पानी ।
जहां नहीं संशयादि पंक की निशानी ॥सांची॥१॥
सप्तभंग जहां तरंग उछलत सुखदानी ।
संत-चित मराल-वृंद रमें नित ज्ञानी ॥साँची०॥२॥
जाके अवगाहन तें शुद्ध होय प्रानी ।
भागचन्द निहचै घट माँहि या प्रमानी ॥सांची॥३॥

सप्तभंग वाणी (दोहा)

बन्दों श्री जिन देव को, बन्दों सिद्ध महंत ।
बन्दों केवलज्ञान जो, लोक अलोक लिखंत ॥१॥
सप्तभंग वाणी कहूँ, जिन आगम अनुसार ।
जाके समुझत समझिये, नीके भेद विचार ॥२॥

(चौपाई)

अस्ति नास्ति गुण लक्षणवन्त । प्रथम दरव यह भेद धरंत ॥
ये गुण सिद्ध करन के काज । सप्तभंग भाखे [illegible]नराज ॥३॥

प्रथम द्रव्य अस्ति नय एह । नास्ति कहै दूजी नय जेह ॥
तीजी अस्तिनास्ति सु निहार । चौथी अवक्तव्य नय धार ॥४॥
पंचमि अस्ति अवक्तव्य कही । छट्ठी नास्ति अवक्तव्य लही ॥
सप्तमि अस्तिनास्ति अवक्तव्य । इनके भेद कहूं कछु अब्ब ॥५॥
अस्ति दरब को मूल स्वभाव । नास्ति परणमन निपट निनाव ॥
अथवा और दरब सो नाँहि । ताहि उपेक्षा नाम कहाँहि ॥६॥
अस्ति नास्ति गुण एकहि माँहि । बहु गुण द्रव लक्षण ठहराँहि ॥
अस्ति नास्ति बिन दर्व न होय । नय साधे तें भ्रम नहिं कोय ॥७॥
द्रव्य गुण वचननि कह्यो न जाय । बचन अगोचर वस्तु स्वभाव ॥
जो कहुं एक आस्तिता सही । तौ दूजी नय लागे नहीं ॥८॥
जो कहुँ नास्तिक गुण दोउ माँहि । तो अस्तिकता कैसे नाँहि ॥
अस्ति नास्ति दोउ एकहि बेर । कही न जाय बचन को फेर ॥९॥
दुहू को एक विचार न होय । इक आगे इक पीछे जोय ॥
कोउ गुण आगे पीछे नाँहि । दोउ गुण एक समय के माँहि ॥१०॥
तातें वचन अगोचर दर्व । सातों नय भाखी ए सर्व ॥
नय समुझे तें वस्तु प्रमान । नय समझे जिय सम्यक्वान ॥११॥
नय नहिं लखै मिथ्याती जीव । तातें भ्रामक रहै सदीव ॥
'भैया' जे नय जानहिं भेद । तिनके मिटहि सकल भ्रम खेद ॥१२॥

(ब्रह्मविलास)

(सोरठा)

अमल अखंडित सार, तंदुल चन्द्र समान शुभ ।
भव--आताप निवार, दशलक्षण पूजों सदा ॥

भावार्थ :—मैल रहित, अखंडित, श्वेत चन्दा का उदय संसार की गर्मी को शान्त करता है, पश्चात् :-

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा ।
भव-आताप निवार, दशलक्षण पूजों सदा ॥

भावार्थ :—तीनों लोक और दशों दिशाओं में श्रेष्ठ बश लक्षणयुक्त चन्दन में केशर घिसकर त्रिकुन्ड शिवजी ने इस हेतु लगाया कि मैं केवल तीन गुण (१) रजो गुण-ब्रह्मा, (२) तमो-गुण-शिव, (३) सतोगुण—विष्णु संयुक्त हूँ।

श्री पार्वती जी अपने ज्ञान-दर्पण द्वारा संबोधित करती हैं कि देखो तुम्हारे बांयें हाथ में एक फण का सर्प है और दूसरे हाथ में तीन फण का सर्प है, वह तीनों योगों को अर्थात् विवेकपूर्ण आगा-पीछा विचार कर मन से, वचन से, और काय से—इन तीनों योगों से जो कार्य किया जायगा, एकांगी कुछ भी न कर सकेगा। यही तुम्हारे हाथ में जो दाहिना हाथ जाँघ पर कलश लिए है वह अमृत का सूचक है। जो इस ज्ञानामृत को पियेगा वह अमर हो जायगा।

नारी के नाम और उनके अर्थ

(१) आर्या:—नारी दो हजार वर्ष पूर्व आर्या कहलाती थी, क्योंकि इस भरत क्षेत्र के ६ भाग हैं, जिनमें ५ म्लेक्ष खण्ड और एक आर्य खण्ड। आर्य खण्ड में रहने से आर्य पुरुष को, आर्या स्त्री को क़हते थे। भूमि पर चलने से भूमिगोचरी और युगलिया अर्थात् दो बालक नर-मादा साथ जन्म लेने से भोगभूमिया कहे जाते थे।

(२) पतिव्रता :—सात्विकवृत्ति से अपने विवाहित पति के साथ मन से, वचन से और काया से धर्म पालन कर जीवनयात्रा समाप्त करती थीं, इसलिए पतिव्रता कही जाती थीं।

(३) साध्वी :—पारिवारिक अनेक कष्ट सहने के कारण साध्वी कही जाती थीं।

(४) पति-वत्नी या एकपत्नी :—नारी एक ही पति पर अपना शीलव्रत पालने से एकपत्नी कही जाती थी।

(५) मनस्विनी :—वीर पुरुष की तरह प्रतिज्ञा कर घोर विपत्तियों का सामना कर विजय प्राप्त करने से मनस्विनी कही जाती थी।

(६) सती :—जीवन पर्यंत अन्य पुरुष को शरीर से हाथ न लगाने देने से और सिंहनी के समान शीलभंग की दशा में आत्मसमर्पण कर देने से सती कही जाती थीं।

(७) चण्डी :—शीलभंग या राजकीय, सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, मानसिक, शारीरिक, आपत्तियाँ आने पर आततायियों के प्राण लेकर या अपने प्राण देकर रक्षा करने के कारण चण्डी कहलाती थीं।

(८) रमणी :—अपरिचित वंश की कन्या दूसरे कुल में जाकर अपने अनुकूल उस को बनाले और उसमें लवलीन हो जावे तथा जो रतिक्रियाओं में निपुण हो उसे रमणी कहते हैं ।

(९) कुल्या :—दोनों कुल पीहर और ससुराल की मर्यादा रखने से कुल्या कही जाती थीं ।

(१०) गृहिणी :—जो गृहकार्यकुशल अपने मकान, वस्त्र, बालक और परिवार को स्वयं स्वच्छ रखते हुए रखे वह गृहिणी कहलाती हैं ।

(११) लक्ष्मी :—जो अपने बुद्धिबल से काम लेवे, परिवार एवं इतर लोगों में सम्मान प्राप्त कर लेवे, समस्त कार्यों को सफल बनाने में कम खर्च करे आमदनी से और आपत्तियों के लिए जिसमें धन संग्रह की चातुर्यता हो, व्यवहारकुशल हो वह लक्ष्मी है ।

(१२) जननी :—जो जन्म देने के साथ साथ बालक को सुयोग्य बनाकर अपनी कूख को यशस्वी बना लेवे । यों तो कीड़े मकोड़े जन्म लेते और मरते रहते हैं । कहा है—

जननी जने तो भक्त जन, या दाता या शूर ।
नहीं तो रहना बाँझ ही; वृथा गंवा मत नूर ।।

इत्यादि गुण और अवगुण के अनुसार स्त्रियों के यह नाम हैं ।

नारीत्व : अष्टभुजी दुर्गा

आज हमें यह देखना आवश्यक है कि पूर्व और वर्तमान भारतीय नारियों में जलवायु, शिक्षा-दीक्षा, रणकौशल, चातुर्य, शील, व्यवहारकुशलता, धार्मिक अभिरुचि, त्याग, विवेक और सत्यनिष्ठा का कितना अन्तर पाया जाता है। इन द्वादश भावों को धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक दृष्टिकोण से देखना है। विषय-भोगों को विषधर किस प्रकार से बतलाया है। यह सब मार्गदर्शन कराकर वे मोक्षमार्गप्रदर्शक बनी थीं और अपनी शक्ति का परिचय देकर, महानता का परिचय दिया था। जिससे हमारे चरित्र; ज्ञान, दान, गुण, शील, तप, विद्या, धर्म पर क्या प्रभाव पड़ता है ? जिस मानव ने इन पर ध्यान नहीं दिया वह संसार में बिना सींग-पूंछ के पशु के समान भ्रमण करता है।

अब देखना यह भी आवश्यक है कि 'अहं ब्रह्मास्मि', 'अहं विष्णु:' और 'शिवो ऽहं', पूर्व विद्वानों ने शास्त्रों में क्यों लिखा ? और इसका क्या अर्थ है ? इसका इस मानव-जीवन से क्या संबंध है ? हम यहां केवल यह बताना चाहते हैं कि भगवान शंकरजी की पत्नी माता पार्वती जी के जीवन से कौन सी अलौकिक शिक्षा प्राप्त करें ? जो उन्हीं के प्रताप का सूर्य अष्ट-भुजी दुर्गा के नाम से प्रख्यात है।

अष्टभुजी दुर्गा

वर्तमान में इस अष्टभुजी दुर्गा की पूजन नवरात्रियों में करते हैं। उन्हीं की प्राय: सभी स्थानों पर प्राचीन शिल्पकला की पाषाणोत्कीरित मूर्तियां मिलती हैं। उनसे कई गुनो सुन्दर कला में चित्रकारों ने अनेक रंगों से सजाकर, चित्र प्रकाशन में लाकर अपनी कला का परिचय दिया है। किन्तु यह ज्ञात न हो सका कि इनसे हमें कौनसा अद्भुत ज्ञान मिलता है, जिसे ग्रहण करना चाहिये और कौनसी वस्तु हमें त्याग करना चाहिये ?

पूर्व कलाकारों ने पाषाण में अपनी कला की दक्षता बतलाई है और कवियों ने अपनी बुद्धि की विशेषता साहित्यिक काव्य-कला में। किन्तु इसकी आवश्यकता की सूझ बूझ और प्रचार के संकेत शास्त्रों में क्रमबद्ध नहीं पाये जाते हैं, छिन्न भिन्न दशा में क्वचित्, क्वचित् मिलता है। और न पुरातत्ववेत्ताओं ने ही इस सम्बन्ध में क्रमबद्ध लिखा है।

इस जीव की दो स्त्रियां हैं। एक सुमत, जिसे हम पार्वती के नाम से संकेत करते हैं। और दूसरी है कुमत, जिसे हम महिषासुरी या वाराही के नाम से पुकारते हैं। और यह जीव की भावना में शंकर हैं। सुमत के द्वारा कुमत का बध होता है।

मानव-शरीर पांच तत्व का पुतला है। इन पाँचों तत्वों के पुतले का पिंड अवतार के रूप में अपने सद्गुणों द्वारा भगवान के रूप में पूजा जाने लगा है और दुर्गुणों के द्वारा निन्दा की गई है। गुण और अवगुण क्या हैं, जिन अंगों को भुजाओं के रूप में आचार्यों ने उल्लेख किया है।

यहाँ आचार्य कहते हैं —

नर तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान।
इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावै धीमान ॥

इस काव्य में चार बातें स्पष्ट की हैं। वह हैं मानव शरीर को रथ बताया है, आत्मा को चालक, इन्द्रियों को घोड़ा और घोड़ा पर सवारी करने वाले को बुद्धिमान।

आचार्य भद्रबाहु और नवग्रह विधान।

इसी प्रकार ठीक दुर्गा की आठ भुजाओं की साकारता आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने अपने हस्तलिखित ग्रन्थ नवग्रह विधान के मंगलाचरण में कही है।

(दोहा)

इस ही जम्बूद्वीप में, रवि शशि मिथुन प्रमान।
ग्रह नक्षत्र तारा सहित, ज्योतिषचक्र प्रमान ॥
तिनही के अनुसार सों, कर्मचक्र की चाल।
सुख दुख जानें जीव कों, जिन बच नेत्र विशाल ॥
ज्ञान प्रश्न व्याकरण में, प्रश्न अंग हैं आठ।
भद्रबाहु मुख-जनित जो, सुनत कियो मुख पाठ ॥

(१) हम यहां आठ भुजाओं का वर्णन अवस्थानुसार करते हैं। इसलिए कि मुरेना जिला परगना अम्बाह के ककन मठ सोंनियां (सुहानियां) जहां पर जैन मन्दिर और शिवालय दोनों ही एक साथ विद्यमान हैं। तथा:—

(२) खजुराहा छतरपुर के निकट मध्यप्रदेश में ही विद्यमान है। यहां पर भी जैन मंदिर व शिवालय साथ ही साथ बने हैं।

(३) अजन्ता और एलोरा दक्षिण में विद्यमान हैं। यहां पर भी यही बात है कि जैन मूर्तियां और शिव जी का संबंध बतलाया है।

हम ऊपर बता ही चुके हैं कि जब तक बुराईयों को सामने नहीं रखते उस समय तक अच्छाई का पता नहीं लगता और जब तक अच्छाई को सामने नहीं रखते तो बुराई का। यह मापने अर्थात् तोलने का यंत्र है। इसीलिए पूर्वाचार्यों ने साथ साथ रखकर मार्गदर्शन कराया है। यह उनकी विशेष प्रखर विद्वता का उदाहरण प्रत्येक मानव समाज के लिए कल्याणकारी है।

अष्ट-भुजायें

प्रथम (१) :—हाथ में नाग-पाश क्यों है ?

उत्तर :—इसलिए कि बाल्यकाल जो कि रत्नों का समय है अर्थात् विद्या एक रत्न है जिसे खेल कूद में खो देता है और जब यौवनावस्था आती है तो अपने वस्तु के स्वभाव धर्म को भूल जाता है और अर्थ तथा काम की ओर इसकी दृष्टि जाती है। कामान्धी अवस्था एक आसुरी अवस्था है। इसे नारी कामरूप नागपाश में बांधकर कमल (मृत्यु समय) को आव्हान करती है। उसे अपनी शक्ति के द्वारा सांसारिक खेल खिला खिला कर मारती है।

बैरी मारे दाव दे, ये मारे हंस खेल ॥

यह नाग-पाश जिसे वैवाहिक बन्धन कहते हैं, बाँधा जाता है। नारी में ९ ग्रह, १२ राशि, १० अवतार हैं। देखिये देवी भागवत :—

गणेश ग्रह नक्षत्र, योगिनी राशिरूपिणीं ।
देवीं मंत्रमयों नौमि, मात्रिका रूपिणीं ॥

देखिये रुद्राष्टाध्यायी :—

चन्द्रमा मनसो जातः, चक्षोः सूर्यो अजायते ।
श्रोतास्तथा मुखादग्नि—रजायत ॥

(२) द्वितीयः—हाथ में चक्र क्यों लिए हैं ?

उत्तरः—आप यह भली प्रकार से जानते ही हैं कि नारी के हाथों में चूड़ियाँ हैं, यह वही चक्र है जिसे संसार का चक्र कहते हैं। यह संसार समुद्र के नाम से भी वर्णित है। जब इसका मथन होता है तो इसमें से रत्न पैदा होते हैं। वह नर और नारी के रूप में विद्यमान हैं। नारी को रत्न क्यों कहा ? इसमें कितने रत्न हैं ? आपको दूसरी अवस्था में दिखायेंगे। नारी संसार की रचियता है। स्वार्थी, आलसी, विषयलोलुपी, भोगों में आसक्त; भोगों में आनन्द मानता है, उसमें ही सुखी समझता है और वियोगावस्था में दुःख।

(३) तृतीय—हाथ में पुष्प किन्तु दोनों सिरों पर काँटे क्यों हैं ?

उत्तरः—नारी एक गुलाब के पुष्प की भाँति है। इस वृक्ष में कांटे होते हैं। कांटों में मानव

उलझ जाता है तो दुःख का आभास मानता है और इसके भोगों में सुख। अर्थात् यह सुख और दुःख की दाता है। कहा है:—

फूल शूल दोनों ही जग के, उपवन में ही दिखलाते।
किन्तु फूल के लेने हारे, नहीं शूल से दहलाते ॥

(४)चतुर्थ—हाथ में शंख क्यों है ?

उत्तर—जिस प्रकार शंख में से मधुर स्वर निकलता है उसी प्रकार से नारी के मुख से भी संगीतात्मक मधुर स्वर राग और विराग दोनों ही प्रकार के निकलते हैं। राग में हर्ष और विषाद में विलाप का संकेत करती है।

(५) पंचम :—हाथ में घन्टी क्यों है ?

उत्तर :—श्री कवि दौलतराम जी ने छहढाला में कहा है :-

पल रुधिर राध मल थैली, कीकस वसादि तें मैली।
नव द्वार बहें घिनकारी, अस देह करे किम यारी ॥
जो योगन की चपलाई, तातें ह्वै आस्रव भाई।
आस्रव दुख-कार घनेरे, बुधिवन्त तिन्हें निरवेरे ॥

यह पाँचवां हाथ इस बात का बोध कराता है कि इस शरीर में पांच काय के जीव रहते हैं जिन्हें पाँच तत्व भी कहते हैं। वह जल, अग्नि, वायु, वनस्पति और पृथ्वी क्रमशः हैं। यह शरीर सोने का महल है, नेत्र इसकी खिड़की हैं, जीवात्मा इसका राजा है, जो इस पर शासन करता है।

तन कंचन का महल है, तामें राजा प्राण।
नैन झरोखा पलक चित, देखो सकल जहान ॥

इस शरीर रूपी महल में वही आनन्द मिलता है जैसा कि राजमहल में ।

राज-महल

क्या देते आप किराया, इस मकान आलीशान का।
पांच तत्व का ईंट गिलाया, कारीगर ने खूब बनाया ॥
कर पाये नीचे लगवा कर, ऊपर महल चिनाया।
रंगमहल के दश दर्वाजे, खिड़की कलश कंगूरा साजे ॥

सब से आला निकाला जीना, ख़ूबदार बनाया ।
इकदर शब्द समद में जीना, इकदर होता खाना पीना ।।
जगह अलहदा पर पाखाना, मोरी में नल लगवाया ।
अब तक बहुत दिनों तक टाली, करना होगा मकान खाली ।।
मालिक है सच राया, क्या देते आप किराया ।

इस प्रकार से यह पांचवा हाथ कालसूचक है, जागृत करता है कि :—

विषय भोग जग में जिते, हैं सब दुख की खान ।
इन में फंस कर हंस तुम, भूल गये भगवान ।।

(६) छठवां :—हाथ में त्रिशूल क्यों है ?

उत्तर :—पूर्वाचार्यों ने बड़ी शोध बीन के उपरान्त त्रिशूल हाथ में संकेत के लिये इस हेतु बतलाया है कि विषयी कामान्धी विषयों के रसास्वादन में आनन्द मानता है । किन्तु 'शरीरं व्याधिमन्दिरं' विषय एक रोग है, विषय एक विकार भावों का उत्पादक, बाणी तथा शस्त्र से, अपमान और घातक प्रहार करता है । विषय लोलुपियों को कालरूपीसिंह द्वारा मनरूपी मतंग हाथी का स्वच्छन्दता में (इच्छानि-रोधः तपः) कुत्सित भावनाओं को न रोकने पर विनाश कराता है । बैरी दाव देकर मारता है और नारी हंस खेल कर मारती है । मन, वचन, काय, यह तीनों ही शूल अर्थात् कांटे हैं, जिन्हें त्रिशूल से संकेत किया है ।

हिन्दू धर्म के पुराणों में दश अवतार निम्नांकित माने गये हैं:—

दो जलचर, दो वनचर, दो द्विज, दो भूपाल ।
इक मौनी, अरु अश्व पुनि, तुम पर सदा दयाल ।।

मन मछली के मानिन्द चिकना और चंचल होने से	मच्छ	(१)	अवतार
मन की कठोरता और उसके संकुचन होने से	कच्छ	(२)	अवतार
मन की लोलुपता होने से	बाराह	(३)	अवतार
मन की विरागता होने से	नरसिंह	(४)	अवतार
मन में वस्तुओं की याचना होने से	बामन	(५)	अवतार
अन्धकारमय विषय-विकार को नष्ट करने हेतु ज्ञान के फरसा से	परसराम	(६)	अवतार
धर्म की ग्लानि दूर करने के हेतु	कृष्ण	(७)	अवतार
मन में परिणामों की विशुद्धता एवं विषयों का त्याग होने से	राम	(८)	अवतार

मन की पवित्रता, परिणामों की विशुद्धता, विशेष
बुद्धिबल द्वारा स्व एवं पर का बोध और ज्ञानामृत को
लोक के कल्याणमार्ग में लगाने से बुद्ध (९) अवतार

इन्द्रियां घोड़े हैं। संयम की लगाम हाथ में न रखने
से कलंक लगता ही है, इसलिए कलंकी (१०) अवतार

घोड़े पर सवार संकेत किया है। इसीप्रकार से नारी में ९ ग्रह, १२ राशि, ६४ योगिनी, २८ नक्षत्रादि जो मानव में विद्यमान हैं, चित्रांकित यथास्थान लेखबद्ध किया जा रहा है।

(७) सप्तम :—हाथ में तलवार का प्रहार क्यों बताया गया है ?

उत्तर :—प्रिय विद्वज्जन ! जिस शासक के हाथ में विवेकपूर्ण ज्ञान की तलवार है वही शासन कर सकता है। अन्धे ४ प्रकार के हैं :—

जन्मअन्ध कामान्ध नर, और महा मद धार।
स्वार्थअन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार ॥

एक शायर ने कहा है :—

वेशाख्ता, बुल-बुल चहक उठी, पूछा गुलिस्तां वालों से,
बर्बाद गुलिस्ताँ करने को, बस एक ही उल्लू काफी है।
हर शाख पे उल्लू बैठा है, अंजाम गुलिस्ताँ क्या होगा ॥

भावार्थ :-वेशाख्ता का अर्थ अचानक; बुल-बुल का अर्थ आत्मा से है। जो आज प्रत्येक आत्मायें भीषण संकटकालीन स्थिति अर्थात् स्वार्थमय भावनाओं से त्रसित हैं चिल्ला रही हैं, चारों ओर हाहाकार मचा हुआ है। गुलिस्ताँ का अर्थ बगीचे से है। प्रत्येक मानव का शरीर बगीचा है, उसमें निवास करने वाली आत्मायें; आत्माओं से पूछ रही हैं कि इस बगीचे को नष्ट करने के लिये जब स्वार्थमय एक ही उल्लू काफी है, जहां सर्वांग शरीर पर, प्रत्येक शाखाओं पर जो दशों इन्द्रियाँ हैं विषयों के स्वार्थमय उल्लू बैठे हों वहां इस बगीचे की क्या दशा होगी ?

पूर्ववर्ती और आधुनिक वीरांगनाओं का अन्तर देखिये:-

लालच और तलवार के भय से, सिया न हिम्मत हारीं।
थोड़े भय से धर्म गमावें, हाय आज कल नारी ॥

(८) अष्टम:—बांयें हाथ में ढाल क्यों है ?

उत्तर:—यह बाँया हाथ दाहिने से कहता है—

दान मान सम्मान में, सदा रहेउ अगवान।
अब क्यों पीछे जात है, लगत दशानन बाण ॥

उत्तर— **रामचन्द्र के श्रवण तें, पूछन चाहों बात ।**
एक एक मस्तक हनूं, या हनूं एक ही साथ ।।

भाव यह हैं कि ढाल रक्षक शस्त्र है । इसी प्रकार से माता पुत्र की रक्षक, पृथ्वी जीवों की रक्षक, लक्ष्मी स्वास्थ्य की रक्षक है । अब देखना यह है कि भारतीय संस्कृति में इन तीनों को माया क्यों कहा है । और इस माया के अवस्थानुसार नाम भी गुण एवं दोष के पृथक् २ उल्लेख किये हैं । उन नामों में क्षमा नाम भी है । यह बिना किसी भेद भाव के हमारे प्रत्येक अपराधों को सदैव क्षमा करती है, इसलिये क्षमा की ढाल बतलाई है । वह हमारे दोषों पर क्षमता की ढाल से क्षमा करती है ।

(९) नवम :—प्राय: दुर्गा जी के मस्तक पर तृतीय नेत्र क्यों बताया है ?

उत्तर:—इस प्रकार से है कि, तृतीय नेत्र ज्ञान का है । जो वस्तु चर्मचक्षु से नहीं जानी जा सकती उसे बुद्धिमान ज्ञानचक्षु से ही अनुभव कर सकते हैं ।

(१०) दशम:—यह है कि दुर्गा का वाहन सिंह क्यों है ?

उत्तर:—है कि सिंह पुरुषार्थ करना सिखाता है। पुरुषार्थ ४ प्रकार का है। इसकी साकार मूर्ति हमें गुप्त काल की मिली है । सिंह काल का प्रतीक है ।

सिंह—पुरुषार्थ का भी प्रतीक है । पुरुषार्थ ४ प्रकार का है धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष । दुर्गा एक शक्ति है, जो माया के रूप में है । माया ३ प्रकार की है :—

धरा, कनक अरु कामिनी, ये है कड़ुवी बेल ।
बैरी मारे दावदे, ये मारे हँस खेल ।।

तीनों का योग शक्ति पर निर्भर है, जो देवी के रूप में पूजी जाती है ।

(११) ग्यारह:—दुर्गा-महिषासुर को त्रिसूल क्यों मार रही है ?

उत्तर:—मानव की कामांधता का समय यौवनावस्था है । इस यौवनावस्था में पदार्पण करते ही मानव काम की पीड़ा को पूरी करने की अभिलाषा से नारी के पैरों में जो बतलाया है जिसे दुर्गा त्रिशूल मार रही है वह मन-वचन-काय का बाण है । जो कि उनकी वीरता का द्योतक है ।

कच्छप अवतार

नारी में १४ रत्न

वर्तमान की शिक्षा दीक्षा मानवीय मनोविज्ञान और आध्यात्मिक दृष्टिकोण से भिन्न है। मानवजीवन कल्याणकारी एवं सत्पथप्रदर्शक है । इसको महिमा पूर्व आचार्यों ने वेदों और ग्रन्थों में वर्णन की है ।

आचार्यों और कवियों ने गाथाओं में और छन्द, सवैया, सोरठा, दोहा आदि में और कलाकारों ने अपनी कलाओं में मूर्तिरूपी प्रतीकात्मक वस्तु बनाकर खड़ी कर दी है। जिसे समझना और दूसरों के गले उतार देना साधारण सी बात नहीं और न आज तक किसी का ध्यान ही इस ओर गया है। अब आप कृपया इस चित्र पर और उसकी व्याख्या पर ध्यान दीजिए।

(१) समुद्र मंथन :- समुद्र क्यों बताया और वह कहां है जिसे देव और दानवों ने मथन किया था। वह समुद्र हमारा शरीर है। जीवन में आपत्ति और विपत्तियों के उतार चढ़ाव होते हैं। और मगर मच्छों की भांति रोगों ने अपना घर बना रखा है, रोग अथाह है। और दूसरा है मन यह भी संकल्प और विकल्पों के ज्वार-भाटों से खाली नहीं है। देहधारियों को रोग, शोक, भोग, विलास और पारिवारिक विपत्तियाँ समुद्र में लहरों की भांति आती रहती हैं। इस कारण यह समुद्र है।

(२) मच्छावतार :- मन जिस प्रकार से चंचल है, उसी प्रकार से मीन (मछली) भी जो तूफानों में निःसंदेह तीव्रगति से आगे बढ़ जाती है। उसी तरह से विरागी पुरुष भी संसार रूपी समुद्र से इस दरयाव में कूद कर पार हो जाते हैं। वही कर्म-निर्जरा कर मोक्ष प्राप्त कर विश्व के प्रांगण में तीर्थंकर और अवतारी महापुरुषों में नामांकित होते हैं। वही मच्छावतार हैं।

(३) कच्छावतार :- विषयासक्त पुरुष तेजस्वी तथा प्रतिभाशाली होते हुए भी विषयों के कारण सांसारिक भोगोपभोगादि विपत्तियों को अपने आप बुलाता है, वह है कुसंगति। इसकारण से वह अपने ज्ञान का सदुपयोग नहीं कर पाता है, कछुवे की भाँति। जिस प्रकार से कछवा अपने हाथ पैर और सिर को शरीर में छिपा लेता है वैसे ही ज्ञानी पुरुष आत्मीय ज्ञान के द्वारा ब्रह्म में समा जाता है। यह है कच्छावतार। कच्छावतारी मनुष्य व्यवहार में नारी को रत्न मानता है। किन्तु उस नारी में किस प्रकार से रत्न छिपे हैं यह नहीं जानता। उसका स्पष्टी-करण यहां करते हैं। वेदों में कहे गये १४ रत्न निम्न प्रकार हैं :-

श्री मणि रम्भा वारुणी, अमिय शंख गजराज।
कल्पद्रुम, शशि धेनु धनु, धन्वंतरि विष वाजि॥

श्रीं—नारी गृहलक्ष्मी होने से श्री है। मणि—नारी में शील रूपी आभूषण मणि हैं।

रम्भा:—आप अपरिचित स्थान से अपरिचित व्यक्ति की पुत्री का पाणिग्रहण अपने पुत्र के साथ करते हैं। वह आपके यहाँ आकर रम जाती है और समस्त परिवार की लाड़ली होकर सभी को प्यारी लगती है अर्थात् भा जाती है। वह रम्भा-रम्भा कहलाती है। रम्भा नाम अप्सरा का है। आप उस देवी को अप्सरा बनाकर अपने घर में लाते हैं। और वह शैय्या पर वेश्या, कार्य करने में दासी, भोजन के समय माता, और आपत्तिकाल में घर की मन्त्री है। कहा भी है—

कार्ये दासी रत्तौ वेश्या, भोजने [illegible]मा।
आपत्तौ बुद्धिदात्री च, स भार्या भुवि दुर्लभा॥

वारुणीः—आप यह भली प्रकार से जानते ही हैं कि नवयुवक इतने व्यसनी हो गये हैं किः—

सास तीरथ, ससुर तीरथ, और तीरथ सारा सारी ।
महतारी बाप गिरें कुआ में, बड़ो तीरथ घरवारी ।।

उन्हें सिवाय कामिनी के दूसरा कुछ नहीं सूझता । विषय-वासनाओं की पूर्ति स्त्री से होती है । इसका दूसरा नाम अबला है । यदि अ निकाल दिया जाय तो यह बला रह जाती है । यह घर और बाहर सभी जगह अपना करिश्मा दिखाती है । यह एक प्रकार की मदिरा अर्थात् शराब है ।

अमियः—यह अमृत इस लिये है कि जिस प्रकार से अमृत फल (आम) का बार बार रसास्वादन करते हैं उसी प्रकार से नारी का रसास्वादन करते हैं। इसलिये यह अमृत के समान होने से अमृत है ।

शंखः—शंख का भावार्थ मूर्ख से है। यह सुख में गीत गाती है और दुख में विलाप करती है । अपने विवेकपूर्ण ज्ञान को खो देती है । लक्ष्मी का वाहन उल्लू इसलिये है कि जो इस नारी के चक्कर में फंस जाता है वह नारी अपनी स्वार्थपूर्ति के लिये उल्लू बना लेती है । इसलिये आचार्यों ने इसे मूढ़ा भी कहा है ।

गजराजः—नारी गजगामिनी क्यों कही है ? इसलिये कि जब हाथीं बाजार में से निकलता है कुत्ते पीछे भोंकते हुए चलते हैं और नारी जब सोलह श्रृंगार कर निकलती है तो कामी पुरुष कुत्तों की भांति नाना प्रकार की अपवादयुक्त टीका-टिप्पणी करते हैं । जिस प्रकार हाथी कुत्तों का मान मर्दन करता है उसी प्रकार से वह नारी भी मस्त हाथी की भाँति मान-मर्दन कर देती है ।

कल्पवृक्षः—नारी एक कल्पबृक्ष इसलिये है कि जिस प्रकार से कल्पवृक्षों से १० प्रकार की भोगोपभोग सामग्री पूर्वकाल में प्राप्त करते थे, वह एक नारी से प्राप्त करते हैं । भगवत् शुभ-चन्द्राचार्य ने ज्ञानार्णव में पृ० सं० ३७८ श्लोक १७५ में कहा है :—

मद्यतूर्यगृहज्योतिर्भूषणभोजनविग्रहाः ।
सुग्दीपवस्त्रपात्रांगा, दशधा कल्पपादपाः ।।

(१) मद्य-स्त्री का नशा । (२) वादित्र-संगीतयुत गायन । (३) गृह-गृहणी । (४) ज्योति-घर की शोभा । (५) भूषण-शील । (६) भोजन-समय पर आहार । (७) माला-भगवद्भक्ति में ले जाने का मार्ग बताने वाली। (८) दीपक-वंश परम्परा को स्थित रखने वाली कुल दीपक पुत्र जन्म दात्री । (९) वस्त्र-विषय-वासनाओं संबंधी दोषों को ओढ़ने का वस्त्र। (१०) पात्र-विषयों का पात्र । इन १० प्रकार के भोगों को देने वाली नारी कल्पवृक्ष हैं ।

शशिः—पूर्वाचार्यों ने अवस्थाओं के अनुसार यथा नाम तथा गुण की पूर्ति में नारी को कामिनी इसलिये कहा है कि वह कामाग्नि को शीतलता प्रदान करती है । इसलिये वह शशि (चन्द्रमा) है । और इसके शशिकान्ता, शशिकुमारी, चन्द्रप्रभा आदि नाम हैं ।

धेनुः—नारी एक प्रकार से महत्वपूर्ण कामधेनु है। जिस प्रकार से आप कामधेनु से इच्छित वस्तु की याचना करते थे। उसकी पूर्ति वही माता करती है जिसने जन्म दिया है। आप अपने बाल्यकाल के जीवन की घटना को याद करिये कि आप जब इच्छित वस्तु के लिये मचले थे, तो क्या माता ने पूर्ति नहीं की थी ? यह सृष्टि की रचयिता है इसलिये यह धेनुरूपी रत्न है।

धनुः—धनु का अर्थ धनुष से है। धनुष सुख के समय पीठ पर और आपत्ति काल में सामने आता है। उसी प्रकार से नारी सुख के समय पीछे और विपत्ति के समय आगे आती है और आपत्तियों का मुकाबला करती है।

धन्वन्तरिः—आदर्शवान-प्रत्येक गृहस्थ सम्पन्ननारी अपना, अपने परिवार, पड़ोसी, आदि के स्वास्थ का विशेष ध्यान रखती है। इसीलिये अस्पतालों में दाइयां रखी जाती हैं। वे बालक के जन्म से लेकर मरण पर्यंत तक वैद्य, डाक्टरों की भांति औषधोपचार कर जीवन-दान देने, सेवा सुश्रूषा करने में धन्वन्तरि वैद्य के समान हैं।

विषः—विष भी एक रत्न है। संसार की जन्मदात्री विषय--सुन्दरी ही हैं। यह मानव-- शरीर विषयों के द्वारा ही बना है। किन्तु वर्तमान के विषयी पुरुषों ने जिनके पास केवल यौवन ही हैं कहलवाया है—

यौवन था जब रूप था, गाहक थे सब कोय।
यौवन रतन गंवाय के, बात न पूछे कोय॥

विद्याभ्यासियों के लिये निम्नांकित ८ बातें त्यागने योग्य हैं—

कामं क्रोधं तथा लोभं, स्वादं श्रृंगार कौतुके।
अतिनिद्रातिसेवा च, विद्यार्थी ह्यष्ट वर्जयेत्॥

बाजिः—गुणावलोकी सज्जन जिनका भविष्य उज्ज्वल है, जिनका उत्तम कुल में जन्म हुआ है, जो आदर्शमय जीवन को बनाने में अग्रगण्य हैं। वह अपने माता पिता और गुरुजन की विनय करते और अनुशासन में रहते हैं। वह सम्राट चन्द्रगुप्त के समान चाणक्य जैसे महान् तेजस्वी नीतिज्ञ विद्वान की शोध कर अपनी सूर्य के समान देदीप्यमान उज्ज्वल कीर्ति को दशों दिशाओं में व्याप्त कर चिरजीवी बन जाते हैं। वह नारी के नेत्र रूपी सूर्य के प्रकाश में इस प्रकार से रहते हैं जिस प्रकार से कीचड़ में कमल। वैसे तो उससे ब्रह्मा, विष्णु, और महेश भी नहीं बच सके।

सूर्य का वाहन घोड़ा है। ध्यान दीजिये—विवेक, और इन्द्रियां घोड़े हैं। संयमी पुरुष ही इन पर सवारी कर सकता है और असंयमी पुरुषः—

कहिये जनाब इश्क में क्या होता है।
डांट भी पड़ती और इंसल्ट बड़ा होता है॥

यहां १४ चौदह रत्नों का वर्णन किया । अब आप १४ रत्न पुरुष में किस प्रकार से हैं उन्हें भी ध्यान से पढ़िये, मनन कीजिये और रसास्वादन कर आदर्शवादी बनिये ।

ताश से क्या सीखा ?

संत लोग सब मिल कर खेले ताश रे सामलिया ।
दुक्की को दिल से निकाल कर, एक ब्रह्म को पहिचानों ।।
तिक्की से है तीन देव, और तीन लोक को पहिचानों ।
चौआ से है चतुर्भुजी, भगवान रे सामलिया ।। टेक ।।
पंजा से है पंच तत्व, जिनसे शरीर तैयार हुआ ।
छक्का से है छत्रपती, जो निराकार से मिला हुआ ।।
सत्ता से है सत नारायण, भगवान रे सामलिया ।। २ ।।
अट्ठा से है अष्टभुजी, जो दुर्गादेवी महारानी ।
नहला से वो निहाल करता, ऐसो हैं यह वरदानी ।।
दहला से वो दयावंत, मन गुलाम को जीत लिया ।
फिर बेगम पर अधिकार किया, आप बादशाह बन बैठे ।।
इक्के का कुछ ना ख्याल किया, कृष्णचन्द्र हरिगुन गान करो ।

कर्मों की विचित्र गति है कि भगवान शंकर से भी भिक्षावृत्ति करा ही ली ।

स्वयं सुरेशः श्वसुरो नगेशः, सखा धनेशः तनयो गणेशः ।
तथापि भिक्षां कुरुते महेश, ललाट वन्हि अयमेव शेष ।।

भावार्थः—स्वयं ईश है, स्वसुर हिमांचल है । मित्र कुवेर है; पुत्र गणेश जैसे विद्वान के होते हुए भी शंकर भीख माँगते हैं । भाग्य में यही लिखा था ।

कर्म की विचित्रता और भी देखिये कि:—

ब्रह्मायेन कुलालवन्नियमतो ब्रह्मांड भाण्डोदरे ।
विष्णुयेन दशावतार गहने; क्षिपतो महासंकटे ।।
रुद्रो येन कपाल पाणि कुटके, भिक्षाटनं कार्यते ।
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगणे तस्मैः नमः कर्मणे ।।

भावार्थः—जब कर्म का उदय आया तो ब्रह्मा जी ने कुम्हार का रूप धारण कर सृष्टि की रचना की । विष्णु जी ने दश अवतार धारण कर संकट उठाया । रुद्र ने कपाल में भिक्षावृत्ति की । सूर्य नित्य प्रति आकाश भ्रमता है । इसलिये हे कर्म । तुझे नमस्कार है ।

विधि कों कियो कुम्हार जिन, हरि कों दश अवतार ।
भीख मंगावत ईश कों, ऐसौ कर्म उदार ॥

भावार्थः—कर्म ऐसा उदार है कि ब्रह्मा को कुम्हार और विष्णु को दश अवतार लेना पड़े और भगवान शंकर को भिक्षावृत्ति करना पड़ी । इसलिये कि संसार-परिभ्रमण दुःख का कारण है ।

(वास्तविक सच्चा परिवार)

मेरे सम कौन बड़ो परिवारी, सुन मूरख संसारी ।
सत है पिता धर्म है भाई, लज्जा है महतारी ॥१॥
शील बहिन संतोष पुत्र है, क्षमा हमारी नारी ।
आशा सासु तृष्णा है साली, लोभ मोह ससुरारी ॥२॥
अहंकार हैं ससुर हमारे, जो सबके अधिकारी ।
मन दीवान सुरत है राजा, बुधि मंत्री अति भारी ॥३॥
काम क्रोध जो चोर बसत हैं, उनको डर मोय भारी ।
सम्यग्दर्शन मित्र हमारे, ज्ञान चरित अधिकारी ॥४॥
इन पर तू विचार रे मूरख, रामचन्द्र कह डारी ।
मेरे सम कौन बड़ी परिवारी, सुन मूरख संसारी ॥५॥

वंदना

ब रु ना, च क ती, कर गहे, ब ग हा के असवार ।
प ला स हित रक्षा करें, बाढ़ै वंश तुम्हार ॥

शब्द — **अर्थ** —

ब:— ब्रह्मा के हाथ कमंडलु, हंस की सवारी, स्त्री-सरस्वती ।

रु:— रुद्र अष्ट कर्मों पर रत्नत्रय धारण कर कैलाश पर तपस्या की, जिनका चिन्ह वृषभ हैं और स्त्री जिनकी शिव-रमणी हैं ।

ना:— नारायण-जिन्होंने असि, मसि, कृषि आदि सृष्टि के पालन का मार्ग-दर्शन (कल्पवृक्षों के लुप्त हो जाने से) कराया था, जिनकी आयुधशाला में १४ रत्न और ९ निधियां थीं जो जनन से ही

मति श्रुतादि ज्ञानरूप गरुड़ पर आरूढ़ थे। जिनके चरणों में पुण्य योग से मोक्ष जैसी लक्ष्मी प्राप्त थी।

च:— चक्र, जो संसाररूप चक्र से विजय प्राप्त कर चुके हैं।

क:— कमंडलु में भरे वाणीरूप गंगाजल से जिन्होंने संसार को पवित्र कर दिया है।

ती:— जो जन्म से ही तीन ज्ञान के धारी हैं–मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान--त्रिशूल।

ब:— वृषभ जिनका बाहन है। वृष धर्म का प्रतीक है, जो धर्म का धारण करने वाला है।

ग:— गरुड़ जिनका बाहन है। अर्थात् जो ज्ञान पर सवारी करते हैं।

हा:— हंस जो चेतनरूप हंस पर सवार हैं।

प:— पद्मासनी–जिनकी यह तीन स्त्रियां भव–सागर से पार उतारने में अग्रसर हैं ऐसे श्री जिनेन्द्र भगवान श्री ऋषभदेव स्वामी तुम्हारे वंश की वृद्धि करें। जो तीन पदवी के धारक, छह खंड के जीतने वाले हैं, उन्हें मैं मन, वचन, काय से नमस्कार करता हूँ।

ला:- लक्ष्मी : कमलासनी।

स:— सरस्वती : हंसवाहनी।

※

प्रकीर्णक

अष्टात्म–निवेदन

श्रवणं कीर्तिनं विष्णोः, स्मरणं पादसेवनं।
अर्चनं वंदनं दास्यं, सत्यमात्मनिवेदनं॥

सप्त क्षेत्र

जिनबिम्ब जिनागारं, जिनयात्रा प्रतिष्ठितम्।
दान पूजा सितान्तं, लेखनं सप्तक्षेत्रकम्॥

गृहस्थ के षट् द्रव्य

खंडनी, पिसनी, चुल्ली, उद्कुंभ प्रमार्जनी।
पंच शून्या गृहस्थस्य, षष्टं द्रव्यमुपार्जनं॥

जैनियों के तीन चिन्ह (लक्षण)

जल छानन, निशि तज अशन, जैनी चिन्ह हैं तीन ।
प्रतिदिन दर्शन जो करै, सो जैनी परवीन ।।

वैद्य के लक्षण

कर्मरोग की प्रकृति पावै, यथायोग्य औषधि फरमावै ।
उदय नाड़िका की गति जानै, सो सुवैद्य मेरे मन जानैं ।।

ज्योतिषी के लक्षण

नव रस रूप निरह पहिचानै, बारह राशि भावना भानै ।
सहज संक्रमण साधै जोई, ज्योतिषराय ज्योतिषी सोई ।।

वैष्णव-लक्षण

तिलक तोप माला विरति, मति मुद्रा श्रुति छाप ।
इन लक्षण सों वैष्णव, समुझै हरि परताप ।।

उत्कृष्ट वैष्णव

जो हरि घट में हरि लखै, हरि वाना हरि वोह ।
हर छिन हरि सुमिरन करै, विमल वैष्णव सोह ।।

चार वर्ण

शूद्र जन्म से सब लखौ, संस्कार द्विज गाय ।
श्रुताभ्यास से शास्त्री, ब्राह्मण ब्रह्म रमाय ।।

नरक के चार दरवाजे

प्रथम द्वार निशि असन अरु, द्वितीय संग पर नारि ।
तीजा संधाना, तुरिय कंद, नर्क चउ द्वार ।।

ब्रह्म-भेद

सुख दुख अनुभव ज्ञानमय, कर संकल्प वि[illegible]ार ।
राग द्वेष अरु पुण्य को, ब्रह्मभेद नि[illegible]ार ।।

चतुर्मृत्यु

ईर्षा मद अविवेकता, निर्दय[illegible] घुन जान ।
बहु अनर्थ इक ही करै, चारों मौत समान ।।

सरस्वती

कुंडासना जगद्धात्री, बुद्धमाता जिनेश्वरि
जिनमाता जिनेन्द्रा च, शारदा हंसवाहिनी ॥

१० इन्द्रियां

(ज्ञानेन्द्रियां)

इन्द्रिय	स्वामी	विषय
१–चक्षु	सूर्य	रूप
२–कर्ण	वायु	शब्द
३–नासिका	अश्विनी कुमार	गंध
४–रसना	जल	स्वाद
५–त्वचा	(वायु)	स्पर्श

(कर्मेन्द्रियाँ)

फैलाना, सकोड़ना, ऊपर नीचे करना और फेंकना ।

१–कर	कार्य करना
२–पैर	गमन
३–गुदा	अपानादि वायु
४–शिश्न (लिंग)	विषयेन्द्रियजन्य सुख
५–वाणी	अर्थ शब्द विषयक

गिरा अर्थ जल वीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न ।
बन्दों सीता राम पद, जिन्हें परम प्रिय खिन्न ॥

हरि किसे कहते हैं ?

हरति कष्टान् इति हरिः। शिव, ब्रह्म, बौद्ध, कर्त्ता, अर्हन्, कर्म इत्यादि नामों से उच्चरित हरि भगवान ।

यं शैवाः समुपासते शिव इति, ब्रह्मेति वेदान्तिनो ।
बौद्धाः बुद्ध इति प्रमाणपटवः, कर्तेति नैयायिकाः ॥
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः ।
सोऽयं वो विदधातु वांछितफलं त्रैलोक्यनाथो हरिः ॥

शिव के लक्षण

एकाकी निस्पृहः शान्तः, पाणिपात्रो दिगम्बरः ।
कदा शम्भो भविष्यामि, कर्मनिर्मूलनक्षमः ॥

दोहा

एकाकी इच्छा रहित, पाणिपात्र दिग्वस्त्र।
शिव शिव हों कब होउंगो, कर्मशत्रु को शस्त्र॥
ब्रह्म ध्यान धरि गंग तट, बैठूंगी तजि संग।
कबधों वह दिन होयगो, हिरण खुजावत अंग॥
(भर्तृहरि)

सवैया

विभूति लगावत शंकर के, अहिलोचन मध्य परो झरके।
अहि की फुफकार लगी शशि के, तब अमृत बूंद परयौ खस के॥
वहां तो हते जमराज, जब जाग पड़े अर्राय रहे अड़के।
सुरभी सुत बाहन लै जु भगे, तब गौर हंसी मुख आंचल दे के॥

भावार्थ—भगवान शंकर ने कैलाश पर तपस्या की विभूति लगाई तो, हृदय पर पड़े हुये काम क्रोधादि की माला रूप सर्पों की आंखों में, तपरूप विभूति की धूल खिसक कर पड़ी तो सर्पों ने क्रोधित होकर, शाँतिस्वरूप चन्द्रमा को फुसकार दिया। तब शाँतिस्वरूप चन्द्रमा में से अमृत की बूंद टपक पड़ी तो तृष्णा और क्षुधारूप बघराज (सिंह) निद्रा त्याग कर जागे और अकड़ कर गरजने लगे। यह पेटू बघराज जागृत होकर शंकर जी के वाहन बैल (बृष, धर्म) को धारण करने वाला वृषभ कृषिप्रधान देश का आवश्यक पशु है, अनाज उत्पन्न करने को लेकर चले उस समय मुमति रूप गौरा जी मुख में आँचल दाब के खूब हंसती हैं।

स्वार्थी संसार

काहू ने भांग धतूरे की बौंड़ी, सो काहू ने दूब को पोड़ो दियो है।
काहू ने चावल चार चढ़ायके, काहू ने प्रातहि नाम लियो है॥
गौरा हंसी मुख आँचल दाबके, देखो भई ठग लोग भयो है।
भोरौ सौ कंथ हमारौ ही जान, धतूरो हि देय धन लूट लियो है॥

प्रार्थना

जो जग जन्म दियौ करुणानिधि, सो सुख संपति दो नन्दलाला।
खाने को भंग नहाने को गंग, चढ़न को तुरंग ओढ़न को दुशाला॥
पान पुरान सुहागिन हो, और संग लिये इक सुन्दर वाला।
ये बर माँगत हों शिवशंकर, दो मृगनैनी या दो मृग--छाला॥

भावार्थ—प्रभो ! यदि आपने इस असार संसार में जन्म दिया है तो ऐसी सुख और सम्पत्ति दो जो आवागमन रहित हो। खाने को ऐसा भांग का नशा दो—

ज्ञान का गाँजा बनाले, गुण चिलम तैयार कर ।
कर्म का कंकर लगाले, तन तंबाकू डाल कर ॥
योग की अग्नि चढ़ाले, भक्ति स्वापी धोय कर ।
प्रेम से तू दम लगा, बेड़ा को अपना पार कर ॥

जिससे आत्मस्वरूप में लीन होकर ज्ञानरूप गंगा में स्नान कर सकूं। चढ़ने के लिये विवेकरूप घोड़ा, ओढ़ने के लिये ज्ञान की चादर (दुशाला) दो, साथ में एक सुमति रूप ऐसी स्त्री दो जो सदैव सौभाग्यशालिनी हो (शिवरमणी-मोक्षबधू) ऐसी मृगनयनी दो। जिस प्रकार मृग चौकड़ी भर कर आत्मरक्षा का उपाय करता है वह त्याग-तपस्यारूप छाल प्रदान कीजिये। आत्मा का हित सुख है और वह सुख आकुलता रहित है।

आतम को हित है सुख, सो सुख आकुलता बिन कहिये।
आकुलता शिव माँहि न, तातें, शिव मग लाग्यो चहिये॥

(छहढाला दौलतराम)

चौदह विद्या

राग रसायन नृत्य गत नट विद्या वेदंग ।
तुरी चढ़न रथ हांकवौ, जानत ज्योतिष अंग ॥
जल तैरन धीरज धरन, चोरी अरु ब्रह्मज्ञान।
यह चौदह विद्या कही, सुनलो परम सुजान ॥

बत्तीस गुण

हंस बगुल मृग मीन, मोर माली केहरि ।
लोह बार गुण एक एक कोकिला गयंदर ॥
तमचर के गुण चार, चार सिर चांद गणिज्जै।
तीन गर्द षट् श्वान, पंच गुण काग भणिज्जै ॥
लक्षण बत्तीस एसे कहे, चतुर पुरुष चित्तहि धरे।
पिंगल ग्रंथ इम उच्चरहि, सो राज काज सो ही करे॥

भिन्न रीति (दोहा)

क करि के पुनि भाग कर, फिर गुण लेहु सुजान।
ता पीछे ऋण धन करो, भिन्न रीति प[illegible]चान ॥

शब्द	**अर्थ**
क:—	कर्त्तव्य
भाग:—	अंगों का अध्ययन
गुण:—	अध्ययन से जो प्राप्त हो।
सुजान:—	उत्तम जानकर
धन:—	गुणसमूह एकत्रित कर
ऋण:—	गुण दूसरों को सिखाना अर्थात् वितरण करना

यह भिन्न की रीति है।

पंचेन्द्रिय-विषय (छप्पय)

कान निरंतर गान, तान सुनवे को चाहत।
आखें निरखत रूप, रैन दिन रहत सराहत ॥
नासा अतर सुगन्ध, चहत फूलन की माला।
त्वचा चहत सुख सेज, संग कोमल तन बाला ॥
रसना नित चहत रहत, खाटे मीठे चरपरे।
ए पंचन पर-पंच मिल, भूपन कों भिक्षुक करे ॥

हंस-बगुला परीक्षा (दोहा)

हंसा बगुला एकसा, मानसरोवर माँहि।
बगुला ढूंढ़े माछली, हंसा मोती खाँहि ॥
हंस काग की परख को, सतगुरु दई बताय।
हंसा मोती कों चुगें, काग नरक पर जाय ॥
सब की गठरी लाल है, बिना लाल कोई नहीं।
बना फिरे कंगाल, गांठ खोल देखी नहीं ॥
जब लग लाल समुद्र में, तब लग लख्यौ न जाय।
निकसि लाल बाहर भयो, मंहगे मोल बिकाय ॥
मैं जानूं हरि दूर है, हरि है हिरदै माँहि।
आड़ी टाटी कपट की, यातें दीखत नाँहि ॥

ज्ञान-सूर्योदय

महिष--मर्दिनी और उदयगिरि विदिशा म० प्र० गुफा नं० ६

आचार्य भद्रबाहु का भगवती की मूर्ति द्वारा

सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य को सदुपदेश

भारत में मूर्तिकला के निर्माण की आवश्यकता होने का मूल कारण बाम-मार्गियों द्वारा घोर हिंसा ही है।

कामी क्रोधी कृपण खल, भिक्षुक व्यसनी जान।
इनके हृदय दया नहीं, हो कितनी ही हांन ॥

ऐसी भयंकर निर्दयता को नष्ट करने के लिये इस पुण्यभूमि भारत में समयानुसार महा• पुरुषों का अवतार होता ही आया है।

भगवान महावीर के अनुयायी धर्मप्रचारक अनेकों जैनाचार्यों ने जिनमें कुछ के नाम— भद्रबाहु, जिनसेन, अमितगति, शुभचन्द्र, बादीभचन्द्र, समन्तभद्राचार्य, लोहाचार्यादि हैं। इन आचार्यों ने दैदीप्यमान तपश्चर्या के बल पर घोर हिंसा का डट कर मुकाबला किया और समय पड़ने पर जीवनाहुति भी दे दी है। भगवान भट्टाकलंक देव ने अपने भाई निकलंक को इस धर्म की बेदी पर बलिदान कर दिया था, यह बात किसी से छिपी नहीं है। इन्हीं आचार्यों ने विपरीत मार्गगामी राजाओं को सन्मार्ग दिखाया और उन्हीं के ही आश्रय से मूर्तिकला का निर्माण करा कर धर्मप्रचार किया। यह थी उनकी सच्ची तपश्चर्या।

भगवती के अनेक नामों में--

कुंडासना जगद्धात्री, बुद्धमाता जिनेश्वरी।
जिनमाता जिनेन्द्रा च, शारदा हंसवाहनी ॥१॥

शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमां, आद्यां जगद्व्यापिनीं।
वीणा-पुस्तक-धारिणीं, अभयदां जाड्यांधकारापहां ॥२॥

हस्ते स्फटिकमालिकां, विदध ां च मासन संस्थितां ।
.............................बुद्धिप्रदां शारदां ॥३॥

(भवानी सहस्रनाम)

आचार्य भद्रबाहु ने सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य को दिग्विजय से लौटते समय विदिशा नगर में स्थित उदयगिरि गुफा नं० ६ में महिषमर्दिनी, गुफा नं० ५ में बाराह अवतार, गुफा नं० १३ में शेषशायी विष्णु, गुफा नं० १९ के बाहरी सभामंडप के दरवाजे पर समुद्रमंथन तथा शिव-परिवार की मूर्तियां जो उत्कीर्ण करवा कर उन्हीं के द्वारा जीवन को सार्थक करने वाले जिनमार्ग को बतलाया और सम्राट् ने जिनधर्म स्वीकार किया। यह थी जैनाचार्यों की जैनधर्मप्रचार-पद्धति ।

हम यहां महिषमर्दिनी का विवरण आपके समक्ष उपस्थित कर रहे हैं। भगवती महिष-मर्दिनी के प्रत्येक अंग से क्या परिलक्षित है यह सम्राट एवं आचार्य के प्रश्नोत्तर के रूप में प्रस्तुत है। ध्यानपूर्वक मनन करने की कृपा करें ।

(१) सम्राट :—भगवती महिषा की पिछली दोनों टाँगें क्यों पकड़े हैं ?

आचार्यः—राजन् ! विषय और कषाय यह दोनों ही भैंसे की टाँगें हैं। यह दोनों ही आत्मा के प्रवल शत्रु हैं। विषयों में बाधा आने पर जो कषाय उत्पन्न होती है वह क्रोध, मान, माया, लोभ को संकेत करती है। यह चारों ही एक साथ उत्पन्न होकर प्रचण्ड रूप धारण कर लेते हैं। यदि इनपर विजय पाई है तो केवल वीतरागी पुरुषों ने ही ।

विषय कषाय बराबरी, बैरी जिय के नाहिं ।

ज्ञान विराग विवेक से , हितू नाहिं जग माँहिं ॥

विषय—शनि ग्रह है। शनि, काल, यम, इन तीनों का वाहन भैंसा है ।

सम्राट—भैंसे के सिर पर भगवती पैर क्यों रखे हैं ?

आचार्य- **जो विषया संतन तजो, मूर्ख ताह लपटात ।**

ज्यों नर डारत वमन सो, श्वान स्वाद सों खात ॥

विषयों का जब तक दमन नहीं किया जाता है जीवन सुखमय नहीं बन सकता । यह महान् भयंकर रोग है। संसार परिभ्रमण, जामन-मरण का मूल कारण और झगड़े की जड़ यदि हैं तो केवल विषय ही है। इसलिए संतपुरुषों ने इसका त्याग किया हैं। मूर्ख विषय-लंपटियों ने इनका रसास्वादन कर अनंत दुख उठाये और उठा रहे हैं। जिस प्रकार से मानव वमन करता है और उसे श्वान बड़े स्वाद से खाता है। श्वान और विषयलंपटी मानव में कोई अन्तर नहीं है।

सम्राट—भैंसे की पीठ में भगवती त्रिसूल क्यों मार रही है ?

आचार्य—यह शनि ग्रह-विषय हमारे दर्शन, ज्ञान, चारित्र जो मानव के धर्मरत्न हैं, उनको चुराने वाला है। इसे नष्ट किये बिना मुक्ति नहीं मिल सकती। इसलिये इसे त्रिशूल (दर्शन, ज्ञान, चारित्र) से मारते हुये दर्शाया गया है। सम्यक्‌दर्शन, ज्ञान, चारित्र को हर व्यक्ति धारण नहीं कर सकता। इन्हें वीतरागी पुरुष ही धारण कर सकते हैं। वही इन्हीं तीनों शूलों से विजय पाते है। यही उनका शस्त्र है। यह दाहिना हाथ नं० ५ से संकेत किया गया है।

सम्राट—महिषासुर क्या राक्षस है ?

आचार्य—हाँ, यह राक्षस है। यह मन की गति को चंचल बनाकर राक्षसी वृत्ति उत्पन्न करता है। यही विषय कहलाते हैं।

(२) सम्राट—भगवती के दाहिने हाथ नं० ६ में घण्टी क्यों है ?

आचार्य—राजन् ! यह काल (समय) सूचक यन्त्र है, जो मृत्यु और संकटापन्न स्थिति का पूर्वाभास कराता है।

(३) सम्राट - बाँये हाथ में सहस्त्रदल कमल क्यों है ?

आचार्य—राजन् ! यह लक्ष्मी, राज्यवैभव, शक्ति आदि का प्रतीक है।

इस राज्यलक्ष्मी ने-

माया ठगनी ने ठगा ; यह सारा संसार।
पर माया जिनने ठगी , तिनको बहु बलिहार ॥

यह माया-

धरा कनक अरु कामनी ये हैं कडुवी वेल।
बैरी मारे दाव दे, ये मारे हंस खेल ॥

राजन् ! माया मनुष्य को अन्धा बना देती है।

जन्मअन्ध कामान्ध नर, और महा मद धार।
स्वार्थअन्ध मानव तथा , जग में अन्धे चार ॥

यह विष्णु की पत्नी है, चंचला है। इसका वाहन उल्लू है। जिसके पास यह पहुंच जाती उसे अन्धा बना देती है।

जो व्यक्ति चाहे वह पढ़ा लिखा और विद्वान क्यों न हो अपनी भूल को भूल नहीं मानता और उसे सुधारने का प्रयत्न नहीं करता वह क्या गधा नहीं कहा जाता है ? इसलिए मूर्ख के चिन्ह लक्ष्मी का वाहन उल्लू और रावण के सिर पर गधा का संकेत पूर्वाचार्यों ने किया है।

मूर्ख के ५ लक्षण हैं—

(१) गर्व करना (२) खोटे वचन बोलना (३) क्रोध करना (४) अपनी भूल को भूल न मान कर हट करना (५) दूसरे के बचनों का अनादर करना। हम प्रायः पढ़े लिखे पुरुषों में जो आज के विद्वान और शासकगण हैं उनमें ये लक्षण पाते हैं। ऐसे व्यक्ति लक्ष्मी को पाकर क्या क्या अनर्थ नहीं कर रहे हैं?

कामी क्रोधी लालची, इनसे भक्ति न होय ।
भक्ति करे कोई सूरमा, जाति वरण कुल खोय ।।

सम्राट—बांये हाथ नं० ३ में धनुष क्यों है ?

आचार्य—यह धनुष ध्यान की ओर संकेत करता है।

राजन्! आपका ध्यान राज्यवैभव और भोगों की ओर होने से आपकी प्रवृत्ति हिंसामय है। धन, संपत्ति और वैभव भोगों की खान है। आपका शरीर रोगों की खान है। अज्ञान और अविवेक दुखों की खान है। यदि सुख है तो केवल विवेकपूर्ण ज्ञान में ही है।

धन भोगों की खान है, तन रोगों की खान।
ज्ञान सुखों की खान है, दुःख खान अज्ञान ।।

सम्राट दाहिने हाथ नं० ४ में बाण क्यों है ?

आचार्य—हे भद्र पुरुष! बाण तो अनेक हैं किन्तु मुख्य चार हैं-(१) नैन बाण (२) बचन बाण (३) काम बाण (४) विचार बाण। तीन को भोगी लोग उपयोग में लाते हैं किन्तु योगी पुरुष विचार-बाण को उपयोग में लाते हैं।

बिना सोचे बिना समझे, बशर जो काम करता है।
वह अपने हाथ से अपना, बुरा अंजाम करता है ।।
प्रथम ही जो सोच कर, बात है कहता नहीं ।
वह विना लज्जित हुये, संसार में रहता नहीं ।।

क्योंकि —

मन मतंग माने नहीं, मन के मते अनेक ।
जे मन पै असवार हैं, ते हजार में एक ।।
मन मतंग हाथी भयौ, ज्ञान करो असवार।
पग पग पर अंकुश लगे, कस कुपंथ चलि जाय ।।

यह बाण अपने लक्ष-भेदन के लिये संकेत करता है।

सम्राट—माता भगवती अपने सिर पर दाहिने हाथ व बायें हाथ नं० १ से पोटली क्यों पकड़े हैं और इसमें क्या रखा है? इस पर सूर्य और चन्द्रमा जैसा प्रकाश क्यों हो रहा है?

आचार्य—हे विद्वान्! इसमें रत्न रखे हैं। किन्तु यह रत्न चर्मचक्षु से नहीं देखे जा सकते हैं।

परस सकती नहीं रत्नों को, हर इंसान की आंखें।
दिखाई ब्रह्म क्या देवे, जो ना हों ज्ञान की आंखें॥

इस पोटली में सम्यक्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक्चारित्र रूपी तीन रत्न रखे हैं। इनकी रक्षा करो।

सम्राट—दाहिने हाथ नं० ३ में दोनों ओर नुकीला शस्त्र क्या है?

आचार्य—राजन्! यह दो धारा शस्त्र विषय और कषाय हैं। रागद्वेष के पैदा करने वाले हैं। इनका आना, रहना, बसना और संगति करना सदैव दुखकारक योग हैं।

सम्राट—बाँये हाथ नं० २ में ढाल क्यों है?

आचार्य—राजन्! यह मानवशरीर पृथ्वी है। पृथ्वी के नामों में क्षमा नाम भी पृथ्वी का है। पृथ्वी की आकृति गोल है। पृथ्वी पर रत्न उत्पन्न होते हैं। इस मानवशरीर में जो गुण सम्यक्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक्चारित्र रूपी तीनों रत्न हैं, जोकि आपमें भी विद्यमान हैं।

नेत्र में जो गोल काली पुतली है उसी में तो प्रकाश है। जिस प्रकार से सूर्य की आकृति गोल है और उसके प्रकाश में आप विश्व को देख रहे हैं। नेत्र का प्रकाश सूर्य है। जो ढाल में प्रर्दशित है।

मुख को चन्द्रमुख कहते हैं। आपके मुखचन्द्र को देख कर लोग आनन्दमग्न हो जाते हैं। यह भी ढाल में दिखाया गया है। यह ढाल क्षमा को संकेत करती है।

सम्राट—दाहिने दूसरे हाथ में खड्ग क्यों है?

आचार्य—महान् विजेता सम्राट्! यह सद्ज्ञान और सद्विवेक की खड्ग (तलवार) है, जिसके भय से घोर हिंसा करने वाले दानव मानवता के पथ पर लाये जाते हैं। यह वीतराग वाणी की तलवार है।

इसी क्षमा की तलवार से भगवान महावीर ने नरमेध और अश्वमेध यज्ञों का प्रचार रोका था। इसी से श्री विष्णुकुमार मुनि ने बलि को पराजय देकर अकंपनाचार्यादि ७०० मुनियों के जीवन की रक्षा की थी। जिसकी रक्षा का सूचक रक्षाबंधन पर्व सर्वत्र मनाया जाता है।

इस प्रकार की मूर्तियों के निर्माण का कार्य जैनाचार्यों की सूझ बूझ का ही फल है।

✕

श्री वादिचन्द्र सूरि कृत ज्ञानसूर्योदय नाटक

(वि० सं० १६४८ की)

एक साकारता

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र देवगढ (ललितपुर) उ० प्र० में

२० भुजी अनुप्रेक्षा जिनशासन देवी--माता अम्बिका के हाथों का परिचय

पूर्वकाल में जैनाचार्यों ने अपने विवेकपूर्ण ज्ञान और ज्ञाननेत्र से मानवमात्र के कल्याण-कारी जैन साहित्य को जो साकारता दी है वह है २० भुजी जिनशासनी देवी माता अम्बिका। वह क्या कहती हैं, सो सुनो।

(चौबोला)

तन तरुवर सों सघन, दुःख के हिंस्र पशुन सों मांचा है।
बुधि-जल विन सूखो, आशा की, विकट अनलमय आंचा है॥
नाना कुनय--मार्ग सों दुर्गम, यह भव-वन गुरु जांचा है।
यामें पथदर्शक शरण्य इक, जिनशासन ही सांचा है॥

मन—कुछ जीवन का भी उपाय है।

अनुप्रेक्षा—ज्ञानरूप गरुड़।

हे मन! इस अपवित्र शरीर में प्रमोद क्यों मानता है? देख, कहा है कि—

रुधिर-मांस-रस-मेदा-मज्जा, अस्थि-वीर्यमय अशुचि अपार।
घृणित शुक्र औ रज से उपजा, जड़स्वरूप यह तन दुखकार॥
इसमें जो कुछ तेज कान्ति है, समझ उसे चैतन्य विकार।
इससे मोद मानना इसमें, सचमुच लज्जाकारी यार॥

भ्रम में क्यों पड़ा हुआ हैं?

ज्ञानसूर्योदय माता अम्बिका की मूर्तिका रहस्य—

मोहादिक भाव सब उपाधिरूप चेतन के,
दुखदाई जान वृथा चित्त न भ्रमाइये।
ज्ञानादिक भाव ते तौ आप ही के स्वभाव,
तिनको हितकारी जान चित्त को रमाइये॥

जिनवानी जोर विना ज्ञान की ना शक्ति कछू,
तातें जिनवानी बिना घरी ना गमाइये ।
ताके अनुसार ध्यान धारि मोह को विडारि,
केवलस्वरूप होय आप में समाइये ॥

(श्री भागचन्द्र कवि)

जैन आचार्यों ने अहिंसामय धर्म को बाममार्गी मांसभक्षी, निर्दयी, राक्षसी वृत्ति के धारक स्वार्थ एवं जिह्वालोलुपी, कामी जनों को, जोकि देवमूर्तियों को जोवों की बलि चढ़ा कर घोर हिंसा करते थे बुद्धिबल द्वारा लोहा लिया था और उन्हें पराजय दो थी। दूध और पानी को हंसकी भांति राग और वैराग के दोनों पहलुओं का दर्पण के समान बतलाया था। देखिये माता अम्बिका अपने सिर पर दोनों हाथों से एक चक्र को पकड़े हैं। यह कालचक्र है, जो संयमी और असंयमी दोनों के ही सिर पर अनन्तकाल से छाया हुआ है।

अनुप्रेक्षा

यह भोला संसार अनित्य पदार्थों को नित्य समझ कर अनन्तकाल से भ्रमण कर रहा है। फिर उसमें यह बेचारा पराधीन जीव जिनेन्द्र भगवान के बतलाये हुए आत्मा के चित्स्वरूप को कैसे देख सकता है ?

(दोहा)

विद्युत वत अतिशय अथिर, पुत्र मित्र परिवार ।
मूढ़ इन्हें लखि मद करत, बुधजन करत विचार ॥
महा दुखद मरुभूमि में, देख दूर सों नीर ।
भोले मृग ही प्यास वश, दौरि सहें बहु पीर ॥
चंचल लक्ष्मी वय चपल, देह रोग को गेह ।
तौहू इहि संसार में, स्वातम सों नहिं नेह ॥

(राग खेमटा)

बतलाओ हे बुधिवान, विधि सों कौन बली ॥ टेक ॥
अणिमादिक वर महिमा मंडित, सुरपति विभव निदान ।
ताको लंकापति ने मार्यो, जानत सकल जहान ॥ विधि० ॥
पुनि तिहि रावण राक्षस को हू, रामचन्द्र बलबान ।
पारावार अपार लांघिके, मस्तक काट्यो आन ॥ विधि० ॥
किन्तु हाय वे रामचन्द्र हू, रहे न रघुकुल प्रान ।
काल कराल ब्याल के मुंह में, भये विलीन निदान ॥ विधि० ॥

इस कालचक्र का प्रतीकात्मक चिन्ह अम्बिका के सिर पर दोनों हाथों से पकड़ने का सूचक है। (ज्ञान सू० पृ० ८५-८६)

भरत चक्रवर्ती विचार करते हैं—

(दोहा)

मेरी आज्ञा में रहें छहों खंड के भूप ।
मो चक्री को हू ग्रसै, काल महा भयरूप ।।
नारायण नर-लोक में, महा शूर बलवन्त ।
तीन खण्ड आज्ञा बहै, तोहू काल ग्रसंत ।।

(कालाष्टक, ब्रह्मविलास पृ० १४८)

माता भवानी कहती हैं कि हे जीव !

विक्रमशाली नर बिना, बल निर्बल ह्वै जाय ।
सैन्य सहित हू 'करन' विर, जय न लही 'कुरुराय' ।।

इसलिए राजा मन की दो स्त्रियां हैं जो नीचे खड़ी घुटनों के यहाँ हैं। एक कामिनी जिसका संकेत बांयें हाथ नं० ९ में सर्प जिसे विषधर या काम की संज्ञा दी है पूंछ के द्वारा संकेत किया है कि काम पर विजय किसी ने नहीं पाई, यदि विजय पाई है तो केवल वीतरागी महा-पुरुषों ने, जोकि ऊपर तीन बतलाये हैं, दो खड्गासन और एक पद्मासन। यह तीनों तीर्थंकर तीन तीन पदवी के धारी हुये हैं। अतएव कामिनी एक तीक्ष्ण धारा है। दूसरे दाहिने हाथ नं० ९ में अग्नि को पकड़ने का संकेत मूर्तिका हाथ यह बतलाता है कि जो दाहिने घुटने के यहाँ एक स्त्री खड़ी दिखाई है, वह अग्नि है। यह चिन्ता की ज्वाला है। काम के द्वारा उत्पन्न हुई संतति मोहादिक राग और द्वेष को उत्पन्न करते हैं। यह दो धाराओं को ऊपर के दाहिने हाथ नं० २ में एक दोनों ओर नुकीला शस्त्र संकेत करता है। वह ही दोधारा कहलाता है। संकटापन्न स्थिति पैदा करता है। वह है काल की सूचक टेलीफोन की घंटी, जिसका संकेत बांये हाथ नं० २ में है। कि यह काम और क्रोध की अग्नि दोनों ही अतिशय दुखदायी हैं। इसकी विजय का साधन हाथ नं० ३ दाहना जिसमें एक कुल्हाड़ी है।

यह ज्ञान की सूचक अज्ञानता रूप काष्ठ को काटने के लिए विवेकपूर्ण ज्ञान की कुल्हाड़ी है।

(कवित्त '३१ मात्रा')

कच-कलाप जूं का निवास, मुख चाम-लपेट्यौ हाड़ समूह ।
मांसपिंड कुच, विष्टादिक की पेटी पेट, भरी बदबूह ।।

जघन जंत्र मल--मूत्र झरन को, चरन थंभ तिहि के आधार।
घृणित अपावन कामिनि-तन यों, ज्ञानी लखहिं न यामें सार॥

मन एक उन्मत्त मतंग है। विषयों की लालसा से स्नेह करता है। पेट में भरी विष्ठा को शूकर और कौए ही खाने की अभिलाषा करते हैं। वीतरागी पवित्र आत्मा जिसे हंस कहते हैं नहीं करते। इस प्रकार के उत्कृष्ट विचार-बाण से कामदेव को धराशायी कर दिया।

बांयां हाथ नं० ३ क्षमा की ढाल है।

क्षमा

क्रोध के सम्मुख निर्भय होकर आ गई, किन्तु क्रोध क्षमा को देखकर ललकार कर बोला- अरी क्षमा! तू मेरे सामने से हट जा। मैंने तेरा कितने बार घात किया, कुछ स्मरण है! आज प्रबोध की सहायता से तू क्या वैक्रियक शरीर धारण करके आ गई? तो सुन—

(भुजंग-प्रयात)

किती बार जीते नहीं मैं नरेशा, कितीबार प्रेरे न मैंने सुरेशा।
किती बार त्यागी तपाये नहीं मैं, किती बार लोप्यौ न धर्मं यही मैं॥

इस प्रकार कहकर क्रोध क्षमा को मारने के लिये झपटा। उसके भय से क्षमा पलायन करना चाहती थी, त्यों ही शांति ने आकर धैर्य देकर कहा-माता! यह डरने का समय नहीं है। तुम किसी प्रकार का भय मत करो। और फिर हिंसा के सम्मुख होकर कहा-हिंसा! आज इन तेजस्वी पुरुषों को देखते हुये इस समर भूमि में मेरे सामने आ। और अपना धनुष हाथ नं० ७ में और बाण हाथ नं० ८ में बांया (धनुष बाण) धारण करके उस प्रचंड बल को प्रगट कर, जिसे धारण करके तू मेरी बड़ी बहिन दया को मारने के लिये आई थी। क्या तू नहीं जानती है कि-

(नरेन्द्र छन्द)

तौलों दुःख शोक भय भारी, रोग महा भारी है।
अदया अकृत दरिद्र दीनता, अरु अकाल जारी है॥
तौलों ही विष शत्रु भूत ग्रह, डांकनि शांकनि डेरा।
जासों विमल बुद्धि वारे नर, जपें नाम नहिं मेरा॥

यह दाहिना हाथ नं० ५ जिसमें माला को संकेत किया है।

बस, यह सुनते ही और शांति के हाथ में माला देख कर हिंसा भाग गई।

बांया हाथ नं० ५ अंकुश का संकेत करता है। मन उन्मत मतंग (हाथी) है। इसे संयम के ही अंकुश से वश में किया जा सकता है। इसलिये अंकुश बांये हाथ में है।

शरीररूपी विष्णु--परिवार--

(दोहा)

सत्य माता पिता ज्ञानं, धर्म भ्राता दया सखा।
शान्ति पत्नि क्षमा पुत्रः, एते षड् मम बांधवाः ॥

शरीररूपी विष्णु के शत्रु--

क्रोध मान माया धरत, लोभ सहित परिणाम ।
ये ही तेरे शत्र हैं, समझो आतमराम ॥

इस चंचल मन ने कामदेव की कृपा से पूर्वकाल में पद्मनाभ ने द्रोपदी के लिये, अर्ककीर्ति ने सुलोचना के लिए, अश्वग्रीव ने स्वयंप्रभा के लिए बड़े बड़े युद्ध किये। ब्रह्मा जी ने सरस्वती के साथ, पाराशर महर्षि ने मछली के पेट से उत्पन्न हुई योजनगन्धा के साथ, और व्यास जी ने अपनी भाई की स्त्रियों के साथ रमण किया। यह सब कामबाण से ही पीड़ित होकर किया है। कामबाण से आहत होकर सूर्यदेव कुन्ती पर, चन्द्रमा अपने गुरु की स्त्री तारा पर और इन्द्र गौतमऋषि की स्त्री अहिल्या पर आसक्त हुआ था। अतएव हे चंचल मन ! मनुष्य, मुनि और देवों के पराजय करने के कारण मैं त्रैलोक्यविजयी विवेकपूर्ण ज्ञान-बीर हूँ। और प्रबोधादि के वश करने के लिए तो एक स्त्री ही बस है। यह कौन नहीं जानता कि—

तबलों ही विद्या व्यसन, धीरज अरु गुन मान ।
जबलों बनिता नयन बिष, पैठ्यौ नहिं हिय आन ॥

बायां हाथ नं० ९ का सर्प अपनी पूंछ से कामिनी स्त्री की ओर संकेत करता है। कि यह विषधर (नागन) है।

दाहिना हाथ नं० ९ अग्नि को पकड़ने का संकेत करता है। कि यह कामाग्नि को प्रज्वलित कर चिन्ता की ज्वाला में जीवनभर जलाती रहती है। जो अग्निरूपी स्त्री दाहिने ओर चंवर धारिणी के रूप में खड़ी है, संकेत कर रही है।

दाहिना हाथ नं० ३ दोधारा का संकेत करता है, कि यह काम और कामाग्नि दोनों ही दो धारायें हैं। और शुभोपयोग में दो धारायें यम और नियम का बड़ा भारी बल है। यह भी दो धारायें हैं। इस काम ने अपने अतिशय प्यारे मित्र सप्त व्यसनों का साथ लेकर युधिष्ठिर को द्यूत व्यसन से, बक राजा को मांस खाने से, यदुवंशियों को मदिरापान से, चारुदत्त को वेश्या सेवन से, राजा ब्रह्मदत्त को शिकार से, रावण को परस्त्री अनुराग से नष्ट किया है। फिर सबके युगपत सेवन से तो ऐसा कौन है जो बचा रहेगा? इससे हे मन! तू खेद मत कर।

कनक तजै कामिनि तजै, तजै जाति को नेह ।
एक मान को त्यागवौ, तुलसी दुर्लभ एह ॥

अहंकार राजा मोह से कहता है स्वामिन् ! आप आज कुछ चिन्तातुर जान पड़ते हैं। नीतिशास्त्र मे कहा है कि-पुरुषों के लिए एक सत्य ही प्रशंसनीय पदार्थ है। पक्ष का ग्रहण नहीं। देखो बाहुबली ने सत्य का अवलम्बन करके भरतचक्रवर्ती को पराजित किया था। सूर्य अकेला है, उसके रथ का एक ही पहिया है। सारथी भी एक पैर से लंगड़ा है। सर्पों की लगाम है। घोड़े भी कुल सात ही हैं। और आकाश का निरालम्ब मार्ग है। तो भी वह प्रतिदिन अपार आकाश के पार जाया करता है। इससे सिद्ध है कि महापुरुषों के कार्य की सिद्धि उनके (सत्य) तेज में रहती है। उपकरण में, सहायक वस्तुओं में नहीं रहती है। अर्थात् जो सत्यवान (कीर्तिवान-तेजस्वी) होता है, वही अपने अभीष्ट की सिद्धि कर सकता है।

(वीर सवैया '३१ मात्रा')

मेरे सम्मुख कौन निशाकर, कौन वस्तु है तुच्छ दिनेश।
राहु केतु की बात कहा है, गिनती में नहिं है नागेश ॥
सत्य कहूं हे मोहराज ! नहिं, डरो जरा है कौन यमेश।
केवल भौंहों के विकार से, जीतो मैं सुर सहित सुरेश ॥

ऐसे प्रबल काम और क्रोध तथा अहंकार को जीतने के लिए संयम का अंकुश है। जो माता अम्बिका के हाथ में संकेत किया है। भरत चक्रवर्ती विचार करते हैं कि—

मैं चक्री पद पाय निरंतर भोगे भोग घनेरे।
तौ भी तनिक भये नहिं पूरन, भोग मनोरथ मेरे ॥
राज समाज महा अघ--कारण, बैर बढ़ावनहारा।
वेश्या सम लक्ष्मी अति चंचल, या का कौन पतयारा ॥

यही तो रागद्वेष को पैदा करने वाला दो-धारा है। जो द्वन्द मचाता है।

सुव्रत शील संतोष अरु, वर विवेक सुविचार।
तुव बिन सारे विफल हैं, तुही सदा सुखकार ॥

ऐसा प्रबोध ने कहा।

दया कहती है—

भाग्य उदय सों मनुज के, सुर-गन होत सहाय।
ताके उलटे होत हैं, स्वजनहु दुर्जन राय ॥

प्रभो ! मैंने यहां से अयोध्या जाकर प्रातःकाल ही धर्मोपदेश रूपी प्रकाश के द्वारा जगत के जीवों का अज्ञानान्ध उड़ाने वाले श्री अरहंत भगवान का एकचित होकर इस प्रकार स्तवन किया।

(प्रभाती)

जगजन अघहरन नाथ, चरन शरन तेरी ।
एकचित्त भजत नित, होत मुक्ति चेरी ॥ टेक० ॥
होती नहिं विरद चारु, सरिता सम तुव अपार ।
जनम मरन अगिनि शांति, होत क्यों घनेरी ॥ १ ॥
कीनों जिन द्वेष भाव, तुम तें तिन करि कुभाव ।
रवि सन्मुख धूलि फेंकि, निज सिर पर फेरी ॥ २ ॥
शिवस्वरूप सुखदरूप, त्रिविध--व्याधिहर अनूप ।
विन कारण वैद्य भूप, कीरति बहुतेरी ॥ ३ ॥

बांयें हाथ नं० ४ में ढाल संकेत करती है। यह ढाल क्षमा की है। विधाता के प्रतिकूल होने पर सुख कैसे मिल सकता है ?

जानकी हरन, वन रघुपति गमन औ,
मरन नरायन कौ वनचर के वान सों ।
वारिधि कौ बंधन, मयंक अंक क्षयी रोग,
शंकर की वृत्ति सुनी भिक्षाटन वान सों ॥
कर्ण जैसे बलवान कन्या के गर्भ आये,
विलखे वन पांडुपुत्र जुआ के विधान सों ।
ऐसी ऐसी बातें अवलोक जहां तहां बेटी,
विधि की विचित्रता विचार देख ज्ञान सों ॥

क्षमा कहती है—बहिन दया का घात करने के लिए हिंसा को भेजा है। ऐसा सन्देश मिला है। इससे मेरा चित्त चिन्ता से व्यथित हो रहा है। स्मशान की भस्म शरीर से लपेटे हुए, हाड़ों की माला का आभूषण बनाये हुये, दोनों भुजाओं से आलिंगन करते हुए, लाल नेत्र किए हुए भैरव का भक्त अपनी स्त्री से कहता है—

(मत्त गयन्द)

पीजिये प्यारी ! मनोहर मद्य, मनोज की मौज बढ़ावत जोई ।
खाइये खूब पराक्रमि मांस, जवानी के जोर में उद्धत जोई ॥

गाइये गान अनंग जगावन, वीणा बजाइये आइये दोई ।
बोलिये बात यही दिन रात, कि 'देह से भिन्न न आतम कोई' ॥

क्षमा (ढाल) कहती है-संकेत करती है। यथार्थ में ये स्व एवं परात्म शत्रु तेरे तत्वों को नहीं समझ सकते हैं। इनके यहाँ दया का कोई प्रयोजन नहीं है। यह मत केवल इस लोक सम्बन्धी सुख भोगने के लिए बना है। यह तोते के समान तो राम राम का जप करते हैं परन्तु वैसा मनोज्ञ आचरण नहीं करते हैं। मुख से राम और नेत्रों से रामा का दर्शन करते हैं, परन्तु देव की ओर अथवा उनके पवित्र चरित्र और गुणों की ओर नहीं देखते हैं। ऐसे द्वन्द से बचने के लिए यह ढाल का संकेत किया है।

बाँये तीसरे हाथ में घंटी काल (समय-ट्रंककाल) की सूचक है।

तन कंचन का महल है, तामें राजा प्राण ।
नैन झरोखा पलक चित, देखो सकल जहान ॥

यह तन हरियर खेत, तरुणी हिरणी चर गई ।
अजहूँ चेत अचेत, अधचर चरा बचायले ॥

यह शरीर सोने का आत्मा का महल है। श्वाशोच्छवास इसमें राजा है। नेत्र इसकी खिड़कियां हैं। और यह शरीर एक खेत हैं जिसे यौवनवती हिरणी कामिनी तेरे शील (ब्रह्मचर्य) को खाती जा रही है। ऐसे अधचरे खेत को श्री अर्हंत भगवान की वाणी जिनशासनी देवी माता अम्बिका उपसर्ग दूर करने को सावधान करती है कि दुःख--समुद्र की तरंगों से निकल जा। मृत्युकाल को संकेत करने के लिए यह घंटी है।

दाहिना हाथ नं० ६ में ब्रज है।

(जोगीरासा, नरेन्द्र छन्द)

बज्र अगिनि विष से विषधर से, ये अधिके दुखदाई ।
धर्म--रत्न के चोर चपल अति, दुर्गति पंथ सहाई ॥
मोह उदय यह जीव अज्ञानी, भोग भले कर जानें ।
जो कोई जन खाय धतूरा, सो सब कंचन मानें ॥

विषय—विष बज्र अग्नि है। यह धर्मरत्न के चुराने वाले चंचल चोर हैं। प्रबल मोह के उदय से यह अज्ञानी जीव भोगों को भुजंग न मान कर भले ही करके मानता है। और यह भी जानता है कि विषय विष एक खुजली का रोग है। मृत्यु और संकटापन्न स्थिति को उत्पन्न करता है। यह मेरी आत्मा के प्रबल शत्रु हैं। इसलिये—

बाँये हाथ नं० ६ में शंख मूर्खता का प्रतीक है। जिस प्रकार से शंख का पेट फटा हुआ

है उसी प्रकार से विषय-लोलुपी को माता अम्बिका का उपदेश इस कान सुना और उसे पेट में न रखकर दूसरे कान से निकाल देना, गुणों का चिंतवन नहीं करना मूर्खता को संकेत करता है।

दाहिना हाथ नं० ८ की खड्ग (तलवार) संकेत करती है। दाहिने हाथ नं० ८ की तलवार का संकेत ऊपर बताते हैं। तीन पदवी के धारी तीर्थंकरों को जिनकी मूर्तियों के चित्र खड्गासन में दो और पद्मासन में एक है। यह चक्र पुरुषों को संबोधित कर यह प्रमाणित करता है कि शासन इन्हीं का इस भरत क्षेत्र में प्रवर्त रहा है जिनको किसी भी जीव से राग-द्वेष नहीं। सबके साथ समानता है। वृष का अर्थ धर्म और बैल से या नादिया से भी है। यह शिव जी का बाहन है। शिव का अर्थ कल्याण से है। इसलिए बैल का संकेत किया है। और सिंह पराक्रम का प्रतीकात्मक चिन्ह है। यह पुरुषार्थ को संकेत करता है। जो चक्रवर्ती पुरुष हैं, जिन्होंने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का साधन किया है वही शिव (कल्याण) कारी हैं। उनमें किसी भी प्रकार का विरोधाभास नहीं है। इसलिये सिंह और बैल दोनों को एक घाट यानी जैनियों के प्रतीकात्मक चिन्ह झंडे में गाय और सिंह को एक ही पात्र में पानी और भोजन करते दिखाया है। हिंसामय धर्म, धर्मात्माओं का लक्षण नहीं, किन्तु राक्षसी वृत्ति को संकेत करता है।

दाहिना हाथ नं० ७ में मशाल संकेत करती है—

जाको जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान।
यातें यश संचय करहु, लोग करें सन्मान ॥

मशाल—कीर्ति की द्योतक है। जिसकी कीर्ति संसार में सूर्य के समान दैदीप्य मान है। प्रकाश की सूचक एक मिशाल है। वही विश्व का कल्याणकारी पुरुष जीवित है।

हाथ नं० २ चक्र संकेत करता है कि चक्र पुरुष ६३ शलाका के पुरुष यह २४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ नारायण, ९ प्रतिनारायण, ११ रुद्र, १२ बलभद्र जो ६३ शलाका के पुण्य पुरुष हैं उन्हीं की ओर संकेत करता है।

इस प्रतिमा के चित्र में चेतन, कर्म और पुद्गल का बर्णन माता अम्बिका ने बताया है। विशेष विवरण आचार्य वादिचन्द्र सूरि ने ज्ञानसूर्योदय नाटक जोकि जैन ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय बम्बई में छपा है, पूरा उल्लेख पुरातत्व अनुसंधानकों को मिलेगा।

बांया हाथ नं० २ में गदा है। गदा शस्त्र यह संकेत करता है कि तीन चीजों के बगैर तीन चीजें नहीं ठहरतीं। (१) विद्या बादविवाद के बिना, (२) शासन बिना प्रभाव के, (३) माल बिना व्यापार के नहीं ठहरता। भारत की भविष्यवाणी सम्राट को चन्द्रगुप्त के १६ स्वप्न में स्पष्ट कर दिया है।

जो शासक धार्मिक प्रवृत्ति का है, न्यायवान है, सदाचारी है, श्रावक के छह आवश्यक कर्मों का सदैव पालन करता है, परोपकारी और दानी है, विद्याविलासी है, उसी शासक की कीर्ति सदैव काल चिरजीवी रहती है। और वह मरने के बाद भी जीवित रहता है। इसका प्रतीक गदा है।

दाहिना हाथ नं० १०–दाहिने घुटने के यहाँ चक्र अग्नि को संकेत करता है।

बांया हाथ नं० १०–बाँये घुटने के यहां चक्र काम को संकेत करता है। यह दोनों ही घुटनों के यहां बताये गये चक्र संसारचक्र से सम्बन्ध रखते हैं। जिसने संसार के स्वरूप को समझ लिया है और त्याग कर तपश्चरण कर मोक्षमार्ग में लग गया वही मुक्त जीव कहलाता है। उसी की दिव्य कीर्ति संसार में चिरजीवी रहती है।

कामिनी और अग्नि के बीच में ज्ञानरूप गरुड़ है, जिसपर कि भगवती अम्बिका बैठी है। कान में (दाहिने) कर्णफूल कानों का आभूषण है, जो शास्त्रश्रवण सद्‌वचन सुनने के लिये संकेत करता है। और बाँये कान में जो शंख है वह मूर्खता को संकेत करता है कि हे मानव ! तूने गुरुओं के मुख–कमल से सुनी वीतराग–वाणी को इस कान सुना और दूसरे कान से निकाल दिया। मनन नहीं किया।

मस्तक पर तृतीय नेत्र ज्ञान का है। हे मानव ! तू विवेकपूर्ण ज्ञान के नेत्र से देख। यह भाव इस मूर्ति के दर्शन से अनुसंधान किये हैं। विद्वद् समाज से अनुरोध है कि किसी भी प्रकार की मूर्ति को आप जिसका कि किसी विद्वान ने भाव न समझ पाया हो; कृपया उसका हस्त-चित्र ले कर पूरी जानकारी लेखक से प्राप्त करें।

अध्याय — १०

आध्यात्मिक संवाद

पाषाण की दुर्लभ प्रस्तर-मूर्ति का एक रेखा-चित्र है। जोकि गुप्तकालीन (विजय मन्दिर) एक भग्न-मन्दिर से निकली हुई है। इस मन्दिर की ऊंचाई १०५ फुट, आधा मील लम्बा व चौड़ा था। बाममार्गियों के आतंक, हिंसा एवं पापाचारमय भावनाओं की निवृ̐त्ति हेतु कल्याणकारी कल्पना की सूझबूझ आचार्य समन्तभद्र को उत्पन्न हुई। आचार्यश्री का जन्म दक्षिण देश में हुआ था। वे जाति के ब्राह्मण थे, जिन्होंने बाद-विवाद का लोहा निम्नांकित देशों में जाकर लिया था। यथा—

> पूर्वं पाटलिपुत्र नाम नगरे भेरी मया ताड़िता।
> पश्चान्मालव--सिंधुढक्यविषये कांचीपुरे वैदिशे॥
> प्राप्तोऽहं करहाटकं बहुभटं विद्योत्कटं संकटं।
> वादार्थी विचराम्यहं नरपते, शार्दूलविक्रीडितम्॥
>
> (समंतभद्र)

मूल प्रतिमा शिव और पार्वती जी की है। दाहिनी ओर ब्रह्मा जी चतुर्भुज। चतुर्भुज में ऊपर के दोनों हाथ में वेद, नीचे एक हाथ में अमृत, एक हाथ वरदहस्त मुद्रा है। बाँयी ओर भगवान विष्णु, चतुर्भुज, ऊपर के दाहिने हाथ में गदा, बाँये हाथ में शंख, नीचे के बाँयें हाथ में अमृत और दाहिने हाथ की मुद्रा वरदहस्त है। शिव जी के दाहिनी ओर स्वामी कार्तिकेय त्रिशूल लिये हैं। इनके दो हाथ हैं। बांयीं ओर विशाल मस्तक, बड़े कान, लम्बी सूंड़, आँख व जीभ छोटी, हाथ दो, बांये हाथ में लड्डू, दाहिना हाथ संबोधित मुद्रा में।

शिव जी के चार हाथ-ऊपर के, दाहिने हाथ में तीन फण का सर्प, नीचे के दाहिने हाथ में अमृत, ऊपर के बाँये हाथ में एक फण का सर्प, नीचे का बाँयाँ हाथ स्तन पर। हृदय पर सर्प, कण्ठ में विष, मस्तक पर तृतिय नेत्र, चन्द्रमा, जटा से गंगा, दाहिने पैर के नीचे बैल। बांयीं जांघ पर पार्वती जी। पार्वती जी के दो हाथ, एक बाँये हाथ में दर्पण और दाहिने में कंधे के स्पर्श का उल्लेख हमारे इतिहासकार विद्वानों ने स्पष्ट नहीं किया और न हमें किसी शाला की पाठ्य-पुस्तकों में पढ़ने को भी मिला।

इस प्रकार की मूर्ति का निर्माण हमारे पूर्वाचार्यों ने क्यों कराया ? कौन से अद्भुत भाव इस कलाकृति में छुपाये हैं ? जिन्हें हम समझ ही नहीं सके। पार्वती के बाँयें पैर के नीचे सिंह का सिर दबा है। यह पाषाण की मूर्ति ढाई फुट ऊंची, डेढ़ फुट चौड़ी है। कला बड़ी सुन्दर भव्य भावों सहित सौम्य मुद्रा में है। अरक्षित यवनों के मर्घट में एक वृक्ष के नीचे रखी हुई है। इसके निकट अन्य और भी मूर्तियां हैं जिनके सम्बन्ध में क्रमशः उल्लेख करूंगा। विज्ञ पाठक कला एवं साहित्यिक त्रुटियों को क्षमा करेंगे, ऐसी आशा है। मेरे निजी निवास स्थान पर एक संग्रहालय है। नगर की नालियों, घूरों पर हमारी सांस्कृतिक निधियां अस्त व्यस्त पड़ी नष्ट हो रही हैं। शासन से कोई सुरक्षा की आशा नहीं, न किसी को इस ओर रुचि है। इस कारण मेरे हृदय में दुख हुआ। और यह सेवा का अवसर आया।

मुझे खजुराहा में देशी-विदेशी दर्शकों को उपहास करते देखकर अत्यन्त ही दुख हुआ। यह हमारी सांस्कृतिक सभ्यता के लिए महान कलंक है। अतएव इस सेवा करने की अभिलाषा से अनुसधान लेखबद्ध करना आवश्यक प्रतीत हुआ। वर्तमान एवं भावी संतति आदर्शवान बनें, होनहार युवक-युवतियों में धार्मिक संस्कार, माता-पिता-गुरुजन-इष्टदेव आदि के प्रति श्रद्धा और भक्ति का स्रोत उत्पन्न हो, महापुरुष बनें, इसलिये—

प्रतिमायें अवलोकते, हट जाता अज्ञान।
इसीलिये सब पूजते, मान उन्हें भगवान॥
प्रतिमाओं का हृदय पर, पड़ता बतहु प्रभाव।
जैसे रूप विलोकते, तैसा होता भाव॥
वीरों की फोटू निरख, स्वयं फड़कते अंग।
वारांगनाओं को निरख, सुभग शील हो भंग॥
लड़कों ने आवारा बनकर, शान को अपनी बेच दिया।
लड़कियों ने फैशन के बदले, आन को अपनी बेच दिया॥

शिवसंवाद का आध्यात्मिक तथा भावात्मक चित्रपरिचय—

चेतन-ब्रह्म, शिव एक हैं। अवस्थायें प्रथक् प्रथक् हैं। चेतन और कर्म अनादिकाल से चारों गतियों (नरकगति, मनुष्यगति, तिर्यंचगति, और देवगति) में मिथ्यात्व के वशीभूत गाढ़--निद्रा में सोया हुआ है। जब भव-स्थिति घटी और काल--लब्धि का आगमन हुआ तब ज्ञानदृष्टि से स्व--पर का बोध हुआ, तब [illegible] (माता पार्वती जी) बोलीं-कंत (शिव) भो स्वामिन् ! तुम्हारे साथ बड़े बलवान योद्धा [illegible] लगे हैं और चारों ओर से घेरे हैं। तब शिव जी कहते हैं कि ऐसी युक्ति बताओ जिससे [illegible] निकले।

तब श्री माता पार्वती जी दर्पण दिखा कर शिक्षा देती हैं कि प्रथम आत्मचिंतवन, दूसरे भगवत स्मरण करो। इतना सुन शिव जी ध्यानमग्न हो गये। इतना देख कर कुबुद्धि रिसा गई और कहने लगी कि यह कुलक्षणी कहां से आ गई मैं राजा मोह की बेटी और चेतन की विवाहिता स्त्री हूँ।

चेतन उत्तर देते हैं—अब तुझसे स्नेह नहीं, अब मेरा मन सुबुद्धि के गुणों की ओर लग गया है। तब कुबुद्धि अप्रसन्न हो पिता मोह के पास पहुंची। पिता ने पुत्री की प्रार्थना सुन सम्पूर्ण दूतों के सरदार कामदेव को भेज दिया। चेतन ने कामदेव को त्रियोग (तीन फण के सर्प) द्वारा वश में कर लिया और दूत को क्रोधित हो (एक फण का सर्प) समय को पकड़ लिया। चेतन और मोह का युद्ध प्रारम्भ हुआ। चेतन विचारता है कि यदि मैं मोह के जाल में फंसा तो वह मुझे मार डालेगा अर्थात् अज्ञानान्ध में फंस कर अपने आत्मस्वरूप को भूल जाऊंगा।

कामदेव चेतन से छूट कर पिता मोह के पास जाता है और ससैन्य अपने दो मन्त्री रागद्वेष को प्रधान बनाकर लाता है। इनके पीछे समस्त परिवार है।

आठ कर्म क्या कहते हैं ?

ज्ञानावरणी कर्म कहता है—मेरे पास पांच प्रकार की सेना है। जिसके द्वारा संसार के जीवों को कैद कर रखा है। दर्शनावरणी कर्म कहता है—मेरे पास उनमादी नौ रस के वीर हैं। उन सबके प्रसाद से संसार के सभी जीव अंधे हो रहे हैं। वेदनी कर्म कहता है—मेरे पास दो बड़े योद्धा हैं जो तीर्थंकरों के समक्ष खड़े रहते हैं। आयु कर्म कहता है—मेरे पास चार जाति के शूरवीर हैं। उनसे कोई कायर युद्ध नहीं कर सकता। जब तक आयु कर्म बलवान है उसी स्थिति तक वह रहते हैं, अन्यथा मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

नाम कर्म कहता है—मैं पुद्गल का स्वरूप हूँ, इसमें आत्मा बसती है। मेरे बगैर संसार नहीं चल सकता। मेरे में रूप रस गंध वर्ण इत्यादि बहुत से रंग हैं और तेरानवे साथी हैं। जो इनकी बराबरी करेगा वह जन्म और मरण अवश्य करेगा। गोत्र कर्म कहता है—मैं स्वभाव से सूर्यवंशी हूं। छिनमें राजा और छिन में रंक बना देता हूँ। अंतराय कर्म कहता है—देखो महाराज सबके आगे पांच सुभट योद्धा हैं। आत्मा की सुधि बुधि का हरण करते, हाथ में हथियार नहीं लेने देते, निराधार रण में युद्ध करते हैं। ऐसे एकसौ बीस सुभट योद्धा हैं। उनके गुणों को ईश्वर ही जानते हैं। इस प्रकार राजा मोह के सुभटों का वर्णन किया।

इस प्रकार तृतिय बाँया हाथ शिव जी का माया मोह से विरक्तता का सूचक है। त्याग में ही सच्चा सुख है। जो इस अमृत का पान करेगा वह आवागमन से रहित हो जायगा। इस प्रकार पार्वती जी अपना दाहिना हाथ शिव जी के दाहिने कंधे पर रख कर सम्बोधित करती हैं।

चेतन सुनकर सावधान हुये और ज्ञान को बुला कर सलाह की।

ज्ञान ने कहा—अपनी फौज तैयार करो और राजा मोह का मान भंजन करो।

ज्ञान ने अंतर्मूहूर्त में सेना तैयार की। (१) स्वभाव (२) सुध्यान (३) चारित्र (४) विवेक (५) संवेग (६) समभाव (७) संतोष (८) धैर्य (९) सत्य (१०) उपशम (११) दर्शन (१२) दान, शील, तप, भाव। इस प्रकार सेना तैयार कर चेतन को ज्ञान ने दिखाया। हे प्रभो ! तुम्हारी शक्ति अनन्त है। अनन्तचतुष्टयादि अपार बलवान सुभटों सहित सेना तैयार है, जिनकी संख्या का अन्त नहीं आ सकता।

मोह मिथ्यापुर का राजा है, जिसने समस्त देशों पर अधिकार किया है। जिसके साथ अज्ञानभाव के अनेकों शूरवीर हैं। जिसके राग-द्वेषादि सेनानायक और मंत्रीगण हैं। संशय जिसका अटूट गढ है। विषय वासनायें जिसकी रानी हैं। क्रोध, मान, माया, लोभ जिनके सूरवीर सेनापति पुत्र हैं। और अव्रतपुर के महंत हैं। भ्रमचक्र जिनका आयुध है। अनेकों नागफाँस की विद्यायें हैं, कठोर भाव के जिनके वाण हैं। इस प्रकार राजा मोह ने चेतन पर अनादिकाल से जाल डाल कर चौरासी लाख योनियों में नाम धारण कराये।

इस प्रकार से माता पार्वती और ज्ञान ने चेतन को राजा मोह की महान सेना का वर्णन किया। ज्ञान ही चेतन का तृतिय नेत्र है। जब तृतिय नेत्र ज्ञान का खुलता है तभी शांति उत्पन्न होती है। शांति का द्योतक शिव जी के मस्तक पर चन्द्रमा है।

धीरज जाको पिता; क्षमा है जाकी जननी।
सत्य वचन है मित्र, दया है जाकी भगिनी॥
शान्ति सुवा सी नारि, सरि सज्जा लहि पौढ़े।
ऐसे मुनि द्रगराज पौढे देखे हम द्रगन॥

(चेतन कर्म चरित्र भगवती दास कृत से उद्धृत)

(चौपाई १५ मात्रा)

मोह सराग भाव के थान, मारहिं खेंच जीव को तान।
जीव वीतरागहिं निज ध्याय, मारहिं धनुष बाण इहि न्याय॥
तबहिं मोह नृप खडग प्रहार, मारै पाप पुण्य दुइ धार।
हंस शुद्ध वेदै निज रूप, यही खडग मारें अरि भूप॥
मोहचक्र ले आरत ध्यान, मारहिं चेतन को पहिचान।
जीव सुध्यान धर्म की ओट, आप बचाय करै पर चोट॥
मोह रुद्र बरछी गहि लेय, चेतन सन्मुख धाव जु देय।
हंस दयालु भाव की ढाल, निजहिं बचाय करहिं पर काल॥

मोह अविवेक गहै जम दाढ़ि, घाव करै चेतन पर काढ़ि ।
चेतन ले थम धर सु विवेक, मारि हरै वैरी की टेक ॥
चेतन क्षायक चक्र प्रधान, वैरिन मारि करहिं घमसान ।
अप्रत्याख्यान मूरछित भये, मोह मारि पीछे हट गये ॥
जीत्यौ चेतन भयो अनन्द, बाजहिं शुभ बाजे सुख कंद ।
आय मिले अव्रत के भोग, दर्शन प्रतिमा आदि संयोग ॥
व्रत प्रतिज्ञा दूजो भाव, तीजो मिल्यो सामायिक राव ।
प्रोषध व्रत चौथो बल वन्त, त्याग सचित व्रत पंच महंत ॥
षष्ठ सुब्रह्मचर्य दिन राय, सप्तम निश दिन शील कहाय ।
अष्टम पापारंभ निवार, नवमों दश परिगह परिहार ॥
किंचित ग्राही परम प्रधान, महा सुबुधि गुण रत्न निधान ।
दशमों पाप रहित उपदेश, एकादशम भवन तज वेश ॥
प्रासुक लेय अहार सु जैन, कहिय उदंड विहारी ऐन ।
ये एकादश भूप अनूप, आय मिले श्रावक के रूप ॥
चेतन सट सों करे जुहार, परम धरग धन धारन हार ।
निज बल हंस करहिं आनन्द, परम दयाल महा सुखकन्द ॥

(दोहा)

इह विधि चेतन जीतकें, आयो व्रत पुर माँहि ।
आज्ञा श्री जिनदेव को, नेकु विराधै नाँहि ॥
जिह जिह थानक काज के, कीन्हें सब विधि आय ।
अब भावै वैराग्य तह, सुनहु भविक मन लाय ॥

ज्ञान ही गणेश है। जिनका विशाल मस्तक गुणों का सागर है जो लम्बोदर कहलाते हैं जो दूर से ही गुणों का भोजन करते हैं। सूंड ही जिनका लम्बा हाथ है। दो विशाल कान और छोटी एक जीभ इसलिये है कि—

कम कहना सुनना अधिक, ये हैं परम विवेक ।
याही तें विधि ने दये, कान दोय जिभ एक ॥

प्रथम दर्शन आवश्यक—

सब संसारी जीव को पहिले दर्शन होय ।
ताके पीछे ज्ञान है, उपजें संग न दोय ।।
उपजें संग न दोय, कोइ गुण किसि न सहाई ।
अपनी अपनी ठौर, सबै गुण लहै बड़ाई ।।
पै श्री केवलज्ञान को, होय परम पद जब्ब ।
तब कहुं समै न अंतरो, होंहि इकट्ठे सब्ब ।।
दर्शन सुज्ञान चारित्र मय, यह है परम स्वरूप मम ।
कारण सु मोक्ष को आपु तें, चिद्‌विलास चिद्रूप क्रम ।।

— गुरुरुवाच —

गुरु बोले समकित बिना, कोऊ पावै नांहि ।
सबै ऋद्धि इक ठौर है, काया नगरी मांहि ।।
काया नगरी जीव नृप. अष्ट कर्म अति जोर ।
भाव अज्ञान दासी रचे पगे विषय की ओर ।।
विषय बुद्धि जहाँ है नहीं, तहां सुमति की चाह ।
जो समती सो कुल त्रिया, इहि याकौ निरवाह ।।
आप पराये वश परे, आपा डार्‌यो खोय ।
आप आपु ना जानहीं, कहो आपु क्यों होय ।।
आप न जानें आपको, कौन बतावनहार ।
तबहिं शिष्य समकित लह्यो, जान्यो सबहिं विचार ।।
इहि गुरु शिष्य चतुर्दशी, सुनहु सबै मन लाय ।
कहै दास भगवंत को, समता के घर आय ।।

(कवित्त)

कोटि कोटि कष्ट सहे, कष्ट में शरीर दहे ।
धूम्रपान कियो पै न, पायो भेद तन को ।।

बृक्षन के मूलि रहे, जटान में झूलि रहे ।
मान मध्य भूलि रहे, किये कष्ट तनको ॥
तीरथ अनेक न्हये, तिरत न कहूँ भये ।
कीरति के काज दयो, दान हू रतन को ॥
ज्ञान बिना बेर बेर, क्रिया करी फेर फेर ।
कियो कोऊ कारज न, आतम जतन को ॥

इस प्रकार स्वामि कार्तिकेय संबोधित कर कहते हैं।

ब्रह्म-निर्णय-चतुर्दशी

(दोहा)

अ सि आ उ सा जु पंच पद, बन्दौं शीस नवाय ।
कछु ब्रह्मा कछु ब्रह्म की, कहूं कथा गुण गाय ॥
ब्रह्मा ब्रह्मा सब कहैं, ब्रह्मा और न कोय :
ज्ञानदृष्टि धर देखिये, यह जिय ब्रह्मा होय ॥
बृह्मा के मुख चार हैं, याहू के मुख चार ।
आंख नाक रसना श्रवण, देखहु हिये विचारि ॥
आंख रूप को देख कर, ग्रहण करे निरवार ।
रागी द्वेषी आतमा, सबको स्वादन हार ॥
नाक सुवास कुवास कौ, जानत है सब भेद ।
राचै विरचै आतमा, यों मुख बोलै वेद ॥
रसना षटरस भुञ्जती, परी रहै मुख माँहि ।
रीझै खीझै आतमा, मुख यातें ठहराँहि ॥
श्रवण शब्द के ग्रहण को, इष्ट अनिष्ट निवास ।
मुख तो सो ही प्रकट है, सुख दुख चाखै तास ॥
ये ही चारों मुख बने, चहुँ मुख लेय अहार ।
तासों बृह्मा देव यह, यही सृष्टि करतार ॥

हृदय कमल पर बैठिकें, करत विविध प[illegible]णाम ।
करता नाहीं कर्म को, ब्रह्मा आतमराम ।।
चार वेद ब्रह्मा रचे, इनहू तजे कषाय ।
शुद्ध अवस्था ये भये, यह बिन शुद्ध कहाय ।।
नाना रूप रचें नये, ब्रह्मा विदित कहान ।
नाम कर्म जिय संग ले , करत अनेक विनान ।।
ब्रह्मा सोई ब्रह्म है, यामें फेर न रंच ।
रचना सब या[illegible]ो करै, तातें कह्यो विरंच ।।

ब्रह्मा जी के दोनों हाथों में वेद है। वेदों में लिखे हुये अमृत का पान, पठन-पाठन और मनन से ही होता है। जो विद्या पढ़ेगा वह ज्ञानामृत का पान करेगा। यही अमृत है जो तृतीय हाथ में है। और चतुर्थ हाथ वरदहस्तमुद्रा में संबोधन करता है।

अहं—विष्णु

देखो मेरे चार हाथ हैं—ऊपर के बांये हाथ में शंख है। जो मेरे संगठन; न्याय; धर्म एवं राजनीति का संबोधक है। जो मेरे त्याग, क्षमता, उदारता एवं दया की भावनाओं का प्रतीक है। जो मेरे शंखनाद को सुनकर मनन और अध्ययन करता है उसको विश्व में अवश्य विजय होती है। तथा मेरे दूसरे दाहिने हाथ में गदा है जो मेरे राज्यसंचालन, दंडविधान का द्योतक है। बिना भय के राज्य नहीं चलता। तीन चीजें तीन चीजों के बगैर नहीं ठहरतीं—(१) इल्म बगैर बहस के (२) हुकूमत बगैर दबदबे के (३) माल बगैर तिजारत के।

देखो मेरे तृतीय हाथ में अमृत है। और चतुर्थ हाथ संबोधन मुद्रा में है। मेरा राज्य संचालन युक्तियुक्त है। मैं ही संसार का पालनकर्ता विष्णु हूँ।

मेरी स्त्री लक्ष्मी है। लक्ष्मी के कई नाम हैं। इसे माया भी कहते हैं। वह तीन प्रकार की है—पैसा, पृथ्वी, स्त्री।

माया छाया एक है, घटै बढ़ै छिन मांहि ।
इनकी संगति जे लगें, तिनहिं कहूँ सुख नांहि ।।
एक दिना लक्ष्मी प्रतें, पूछत हैं कवि एम ।
दाता पंडित सूर तजि, रहै सूम घर केम ।।

लक्ष्मी कहती है—

(कवित्त)

सूर घर जाऊं तो अकेली रह जाऊं रांड ।
वो तौ जूझि जूझि मरि जाय रण-थान में ॥
दाता घर जाऊं, तौ मैं आदर न पाऊं नेक ।
वो तौ भरि भरि थाल फेंकि देत दान में ॥
पंडित के घर जाऊं, सौति विद्या से लड़ाई रहै ।
दोय तलवार न समाँय एक म्यान में ॥
तातें सेठि सूमचंद ढूंढ लियो ठीक मैंने ।
खरचै न खाय, जोड़ि धरत मकान में ॥

ब्रह्म—विष्णु कहते हैं मेरा वाहन गरुड़ है, जो सांसारिक विषय भोगादि सर्पों का भोजन करता है। नाग मेरी शैय्या है जो मोह के वशीभूत आत्मस्वरूप का रसास्वादन नहीं करने देता है। उसे मैंने दबा रखा है ।

एक दिन आत्मा ने शरीर से कहा—

सोलै श्रृंगार विलेपन भूषण, सों निशि वासर तोहि संवारे ।
पुष्ट करी बहु भोजन पान दे धर्म रु कर्म सबै हि विसारे ॥
सेय मिथ्यात्व अन्याय किये बहु, तो तन कारन जीव संहारे ।
भक्ष गिनौ न अभक्ष गिनौ, अब तौ चलि काय तू संग हमारे ॥

शरीर का उत्तर—

ये अन-हौनो कहौ कहा चेतन, भांग खई कि भये मतवारे ।
संग चली न चलूं कबहूँ, लखि ये तौ स्वभाव अनादि हमारे ॥
इन्द्र नरेन्द्र फणीन्द्रन के नहिं, संग चली, तुम कौन विचारे ।
कोटि उपाय करौ क्यों न चेतन, मैं न चलूं अब संग तुम्हारे ॥

*

ज्ञान की साकारता

ज्ञान के घट को जानने के लिये उपयुक्त होना (निश्चय करना) साकारता है। ज्ञान की साकारता का साधारण अर्थ यह समझ लिया जाता है कि जैसे दर्पण में घटादि पदार्थों का प्रतिबिंब पड़ता है उसी समूह ज्ञान का भी घटाकार हो जाना ज्ञान का घट में प्रतिबिंब पहुंच जाना है। पर वास्तव में ऐसा नहीं है। घट और दर्पण दोनों मूर्त और जड़ पदार्थ हैं। उनमें एक दूसरे का प्रतिबिंब पड़ सकता है। परन्तु चेतन और अमूर्त ज्ञान में मूर्त जड़ पदार्थ का प्रतिबिंब नहीं आ सकता और न अन्य चेतनान्तर का भी।

चैतन्यशक्ति के दो आकार होते हैं। (१) ज्ञानाकार (२) ज्ञेयाकार। ज्ञानाकार प्रतिबिंब शून्य शुद्ध दर्पण के समान पदार्थ विषयक व्यापार से रहित है।

ज्ञेयाकार सप्रतिबिंब दर्पण की तरह पदार्थ विषयक व्यापार सहित होता है। साकारता के सम्बन्ध में जो दर्पण का दृष्टांत दिया जाता है उसी से यह भ्रम हो जाता है कि ज्ञान में दर्पण के समान लम्बा, चौड़ा, काला प्रतिबिंब पदार्थ की आभा है। और इसी कारण ज्ञान साकार कहलाता है। यहाँ दर्पण के दृष्टांत का इतना ही प्रयोजन है कि चैतन्य धारा ज्ञेय को जानने के समय ज्ञेयाकार होती है। शेष समय में ज्ञानाकार। (धवला—प्र० पु० पृ० ३८० : तथा जयधवला-प्र० प० पृ० ३३७)

हंस--वाहन का अर्थ क्या है ?

जीवात्मा ही हंस है। इसे ब्रह्म, चेतन, जीव, विष्णु, शिव, ब्रह्मा कहते हैं। इसी हंस पर जिनराज की वाणी जिसे सरस्वती, विद्या, माता कहते हैं यही जैन शासन देवी है, जो वीतराग पुरुषों द्वारा कही गई है। स्याद्वादवाणी कही जाती है। यह पठन पाठन और स्मरण तथा मनन से ही इस हंस-मयूर पर आरूढ़ होती है। इसी वाणी में दूध और पानी को पृथक करने की अपूर्व शक्ति है। इसे पहिचानने के लिये सद्गुण युक्त हंस पक्षी को आचार्यों ने संबोधनार्थ वाहन बतलाया है।

आत्मचिंतवन के लिये ज्ञान दर्पण है। ब्रह्मा की जो सरस्वती पुण्य के साथ शुभरूप और पाप के साथ अशुभरूप आत्मा को अपवित्र करने वाले भयंकर सर्प हैं जो संसार कूप में मुंह फाड़े बैठे हैं।

शुभ भावों का परिणमन होने पर त्याग और तपस्या द्वारा ही छुटकारा मिलता है। यह माता पार्वती जी जो ज्ञान दर्पण हाथ में लिये हैं बोध कराती हैं। ज्ञान प्राप्त होते ही तृतीय नेत्र ज्ञान का खुल जाता है। आत्मा में शान्ति का स्रोत पैदा होता है अर्थात् चंद्रमा का उदय होता है, जो शिव जी के मस्तक पर दिखाया गया है। चन्द्रमा का उदय होते ही संशय और विभ्रम की जड़ें नष्ट हो जाती हैं। स्व और पर का बोध होता है। पांच ज्ञान-(१) मतिज्ञान, (२) श्रुतज्ञान, (३) अवधिज्ञान, (४) मनःपर्ययज्ञान और (५) केवलज्ञान रूप लक्ष्मी प्रकट हो जाती है।

यह पवित्र मन ही कैलाश है, जिसे राग-द्वेषादिरूप रावण अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर उठा रहे हैं। (चित्र में देखिये) सुमति रूप गौरा जो क्रोधरूप सिंह को अपने बांये पैर से दबा रही हैं। जो कि इनका वाहन हैं।

शिवजी का वाहन बैल है। जो शिवजी के पैर की आड़ में बैठा है। वृष धर्म को कहते वृषभ धर्म धारण करने वाले को इस ही कारण से वृषभ कहा गया है।

लक्ष्मी के सुत चार हैं, धर्म अग्नि नृप चोर।

जेठे को आदर नहीं, तीन करें भड़ फेर॥

ज्येष्ठ पुत्र धर्म का आदर न होने से ही हमारी मनोवृत्तियाँ और हार्दिक प्रेम इस विज्ञान के युग में पतन की ओर तो है ही, किन्तु चरित्र और भी गिरता ही जा रहा है।

धन यदि गया, गया नहिं कुछ भी, स्वास्थ्य गये कुछ जाता है।

सदाचार जो गया मनुज का, सर्वस्व ही लुट जाता है॥

सच्चरित्र व्यक्ति तेजस्वी होता है। भारतवर्ष कृषिप्रधान देश है। इसी देशमें महापुरुषों का जन्म हुआ है।

पशु की तो पनहीं बने, नर को कछू न होय।

नर जो कछु करनो करे, तो नर नारायण होय॥

(कवित्त)

भूलि मत जैयो यह, माया महाराजन की।

राज मई करम यह, फुहारे की नहर है॥

बवा बदी हांके खेत, आवत अंधेरो पाख।

ढांके सब चाँदनी सी, कला ना ठहर है॥

करले निकाई-करनी, कीरति दीनन पै।

करही निकाई संग, सोई तो ठहर है॥

पाई राज द्वारो पुन्य, डगर सुधारो आप।

राजद्वारे की बहार यारो, पारे की लहर है॥

भगवान आदिनाथ का चिन्ह वृषभ है। इन्हीं ने कृषि उत्पादन किया बतलाई। इन्हीं ने कल्पवृक्ष लुप्त होने से वृषभ ही उपकारी प्राणी बताया था। जिसके ऋण से मानव कभी भी उऋण नहीं हो सकता। जिस देश में घी और दूध की नदियाँ बहती थीं आज प्रायः लुप्त सा होता जा रहा है।

इन प्राचीन कलामय मूर्तियों में पूर्वजों ने अमूल्य देन छुपा रखी है। यदि समाज तथा शासन का सहयोग प्राप्त हुआ तो प्रकाश में लाने के लिये आकांक्षी हूँ। मध्यप्रदेश शासन गौरव-वृद्धि को प्राप्त हो; इस मंगल-कामना से दो हजार अदभुत मूर्तियां, अनेकों भाषाओं के शिलालेख, ताम्रपत्र इत्यादि संग्रहालय सम्बन्धी सामग्री अर्पित करने का भी लेखक अभिलाषी है।

सम्राट् अशोक की ससुराल विदिशा के जैन श्रेष्ठि के घर क्यों ?

विदिशा में सम्राट् अशोक (वर) एवं श्रेष्ठिपुत्री असंघमित्रा (वधू)

प्रसन्नता की बात है कि भारत सरकार के प्रधान मन्त्री महोदय पं० जवाहरलाल नेहरू ने दिनांक १२ मई १९६३ को लखनऊ में दिये भाषण में बताया था कि-हर गांव में संग्रहालय निर्माण किये जांय। किन्तु स्वप्न साकार कैसे हो सकता है ? जबकि पक्षपात और विद्वेषात्मक भावनाओं के साथ सेवाओं में रुचि लेने वाले अधिकारीवर्ग अपनी उदारता का परिचय न देवें तथा विरोधी बने रहें।

सबसे प्रथम व्यक्ति प्रधान मन्त्री जी के स्वप्न को साकार बनाने वाला—विदिशा नगर-निवासी पुरातत्व अन्वेषक राजमल मड़वैया है, जो विदिशा और भोपाल नगर के संग्रहालयों को समस्त प्रकार की सामग्री (मूर्तियां, शिलालेख, ताम्रपत्र, स्तंभ, स्तंभशीर्ष, तोरणद्वार, मुद्रायें, चित्र, हस्त लिखित ग्रन्थ आदि) प्रान्तीय शासन को अर्पित करने को तेयार है।

संग्रहालय कैसे निर्माण होंगे ?

सम्राट अशोक की प्रस्तर-प्रतिमा सांची में लगे तोरणद्वार के पाषाण की, सफेद रंग, लम्बाई ८, चौड़ाई ४।।।, मोटाई १।। फुट। द्रव्यलोलुपियों ने स्थानान्तर करने में सम्राट अशोक के हाथ कोहनी से कोंचा तक तोड़ दिये हैं। तथा महारानी के सीने के नीचे से कमर तक का भाग भी टूटा हुआ है। (लं० ५-३,-१।। क्रमशः है)

लोग कहते थे कि बदलता है जमाना अक्सर।
मर्द वह है, जो जमाने को बदल देता है।।

अभी तक तो इतिहासकार लिखी-पढ़ी बातों से सम्राट अशोक की ससुराल विदिशा को बताया करते थे। जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण सम्राट अशोक (बर) एवं महारानी असंघमित्रा (वधू)

के वेष में प्रतिमायें बड़ी मनमोहक प्राप्त हुई हैं। कलाकार ने अद्‌भुत कारीगरी की है। जिस प्रकार से लेखक अपनी कलम से मनोनीत भावों का प्रदर्शन करते हैं उसी प्रकार से कलाकार ने भी कोई कमी नहीं की है। जो प्रतिमा के अंग-प्रत्यंग से अपनी प्रतिमा का दिग्दर्शन कर रहे हैं।

चित्र--परिचय

सम्राट के चरित्र, वैभव, शक्ति, प्रभा, पुरुषार्थ, उदारता, गुणग्राह्यता, परोपकार-बुद्धि, विरागता और जीवन के आदर्श को सांचे में ढालकर अमर बना दिया है। यह सभी जानते हैं कि राज्यलिप्सा के पीछे अपने १० भाइयों का जोकि प्रथक् प्रथक् गवर्नर थे प्राणघातक बना। और लाखों मनुष्यों को मौत के घाट उतार दिया।

परिणति सब जीवन की, तीन भांति बरणी।
एक पुण्य एक पाप, एक राग हरणी॥
बालापन हंस खेल गमायौ, ज्वानीपन में तकुआ से।
आये बुढ़ापे माला ले लई, राम जानलये घपुआ से॥

योवनावस्था में मानव विवेक रहित अन्धा बन कर, सत्कर्म या दुष्कर्म को नहीं देखता। यौवनावस्था अकेली विनाश का कारण बन जाती है। यदि धन, सम्पत्ति, प्रभुता और अविवेकता साथी बन जांय तो कौनसी कमी बाकी रह जाती है?

उद्यम, साहस, धीरता, पराक्रमी, मतिमान।
एते गुण जा पुरुष में, सो निर्भय बलवान॥

कलिंग-विजय में नरसंहार देख कर, मानव-जीवन की क्षणभंगुरता का चित्रपट समक्ष में आया। विचारों में विरागता पुण्यप्रकृति ने समक्ष में ला दी। युद्ध बन्द कर उज्जैन की ओर प्रस्थान कर दिया। पुण्ययोग से मार्ग में एक ब्राह्मण का बालक अपने पिता से कह रहा था कि पिता जी! यदि अशोक मेरी बात सुने, समझे और मनन करे तो उसे मैं विश्व का एक ऐतिहासिक महापुरुष बना सकता हूँ। (वह जीवों पर दया करे, अपनी राज्यस्मृति में फलदार वृक्ष, धर्मशालायें, कुयें, बावड़ी, बाग, स्तंभों पर सुभाषित तथा शिलालेखादि निर्माण के सम्बन्ध में चर्चा कर रहा था), किन्तु पिता उसे बुरी तरह से धमका रहा था और कह रहा था कि वह बड़ा निर्दयी और हत्यारा है। जिसने वंश के वंश नष्ट कर डाले हैं। क्या तू हमारे वंश को भी नष्ट कराना चाहता है?

यह बात एक गुप्तचर ने सुनी और रात्रि की घटित घटना सम्राट को कह सुनाई। प्रातःकाल ही सम्राट ने पिता-पुत्र ब्राह्मण को दरबार में बुलाने का आदेश दिया। ब्राह्मण को बुलाने जब सैनिक आये तो वह भय से कांप गया, किन्तु सैनिक उसे सम्मानपूर्वक दरबार में ले गये। बालक बड़ा साहसी और बुद्धिमान था। निर्भीकतापूर्वक अपनी शुभ कामनायें अशोक को

कह सुनाई। सम्राट ने उस बालक की चातुर्यता और निर्भीकता पर प्रसन्न होकर वह आदर्शपूर्ण कार्य किया जिससे आज सम्राट हजारों वर्ष बीत जाने पर भी जीवित हैं।

जाको जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान।
यातें यश संचय करहु, लोग करें सम्मान ।।

जब अशोक ससैन्य विदिशा में आये तो एक विद्वेषी ने बदले की भावना से विदिशा के एक श्रेष्ठि की पुत्री को हरण कराने का संकल्प करके पुत्री असंघमित्रा के रूप-लावण्य, धार्मिक बुद्धि और पराक्रम की प्रशंसा कह सुनाई।

अशोक ने श्रेष्ठि से कन्या को लाने का आदेश दिया, किन्तु श्रेष्ठि यह जानता ही था कि यह आतताई है, स्वधर्म रक्षा कठिन है। वह उपाय सोच कर धैर्य को साथ लेकर मिला और सम्राट से वार्तालाप किया।

पुत्री के प्रकरण में उसने आदर्शपूर्ण कार्य करने (साँची में बौद्ध विहार बनाने) के लिये प्रश्न उपस्थित कर दिया। और अहिंसा की छाप अशोक के हृदय-पटल पर अंकित कर दी। श्रेष्ठि की बात स्वीकार कर लेने के पश्चात् विवाह की तैयारी की गई। उस समय सम्राट अशोक और महारानी दोनों बर--वधू के वेश में थीं। कलाकारों से मूर्ति निर्माण कराई गई थी, जो अनुसंधान से प्राप्त हुई है।

मर कर होवे अमर, वही बस मरना होवे।
लघु कुटुम्ब ही नहीं, जिसे सारा जग रोवे ।।

अशोक के सिर पर ११ फण का सर्प राज्य के दबदबे का सूचक है। जिनके अष्टांग और त्रियोग चारों ही पुरुषार्थ में अवतरित हैं।

धर्म, अर्थ अरु, काम का. साधन यही अमोल।
कबहूं मती बजाइये, निज स्वारथ का ढोल ।।

सिर पर पुण्यकार्यों में भाग लेने के लिए धर्मचक्र का बोधक सेहरा (मुहर) विवाह समय जो बाँधा जाता है, रत्नजटित पगड़ी के पेंचों से बंधा सुशोभित है। जिनका हृदय मान सत्कार्यों के लिये सदैव को नम्रीभूत हो गया है।

कानों में कुंडल इसलिये सुशोभित हैं कि—

कम कहना सुनना अधिक, ये है परम विवेक।
याही तें विधि ने दये, कान दोय जिभ एक ।।

मुख की शोभा—

शब्द सम्हारे बोलिये, शब्द के हाथ न पांव।
एक शब्द औषधि करे, एक शब्द करे घाव ।।

कण्ठ की शोभा—

सत्य कण्ठ-भूषण कहा, कर का भूषण दान ।
शास्त्र श्रवण भूषण सुभग, कहत जिनागम कान ।।

गले में रत्न गोप परोपकार का सूचक है—

भर लेते हैं पेट, सभी है जिनके काया ।
पुरुषसिंह है वही, भरे जो पेट पराया ।।

इसलिये विद्याध्ययनार्थ विश्वविद्यालय निर्माण कराकर अशोक की ओर से चार दान (विद्या, औषधि, अभय, आहार) की राज्य की ओर से व्यवस्था की गई थी।

हाथ में कमल लक्ष्मी का द्योतक है, इसलिये कहा है -

दधिसुत सुत सोहे नहीं, दधि की सुता न होय ।
भुआ भतीजे के बिना, बात न पूछे कोय ।।

हृदय पर मोतियों का हार क्या संकेत करता ?

एक मोती क्या कहता है ?

मोती अकेला कान में या नाक में है झूलता ;
मलद्वार का सेवक बना, कर जाति की प्रतिकूलता ।।

सम्पूर्ण मोती क्या कहते हैं ?

जब तक न माला में मिलेगा, वह न उरपर आयगा ।
कर जाति का अपमान कोई, मान कैसे पायगा ? ।।

कमर क्यों कसी है ?

काम मर्दों का नहीं, कौल अधूरा करना ।
जिस राह में कदम रखो उसे पूरा करना ।।

धर्म, न्याय, नीति, दया, क्षमा, संतोष धारण कर सत्कार्यों द्वारा अशुभ कर्मों की निर्जरा करना और आगे बढ़ना । जिन महापुरुष ने अपने राजकीय गौरव को इतिहास के क्षेत्र में जीवित रखा है चिरस्थाई बनाया है सद्‌शिक्षायें लेना हैं।

जाकी जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान ।
यातें यश संचय करहु, लोग करें सन्मान ।।

महारानी असंघमित्रा का चित्र-परिचय

विकसत सब गुण शील में, शील सुगुण की खान ।
शीलहीन नर नारि के, सब गुण धूल समान ।।

प्राचीन भारत में यथा नाम तथा गुण के अनुसार ही नाम रखने की प्रथा थी। जीवन में घटित घटनायें, योगी जनों के अनुभवी ज्ञान का एक चित्रपट है। जो प्रायः सभी धर्मों में प्राप्त है; समझने की वस्तु है। यह सभी जानते हैं कि नारी को नागन कहा है, क्योंकि यह विषयों की आगार है। सिर के बालों से स्पष्ट है कि सिर की चौड़ाई और चोटी का अन्तिम सिरा सर्प के समान है। यह हंसते खेलते ही अपने विषय-वासनाओं द्वारा जीवनयात्रा समाप्त कर देती है, तथा क्रोधाग्नि प्रज्वलित कराती है। क्रोध एक प्रकार का सर्प है। इसका काटा हुआ नहीं बच सकता। किन्तु सर्प के काटे की औषधि एवं मंत्र है। किन्तु इसके काटे की कोई औषधि नहीं है। और क्रूर स्वभाव के कारण यह सिंहनी भी है। इसका दूसरा नाम लक्ष्मी भी है। यह आते हंसतो और जाते रुलाती है। लक्ष्मी का दूसरा नाम दौलत है। इसमें दो लतें हैं—पहले तो गर्व कराती और जाते समय कमर तोड़ देती है। नारी और लक्ष्मी दोनों का मद चढ़ता है। इसके चार बेटे हैं—

लक्ष्मी के सुत चार हैं, धर्म अग्नि नृप चोर ।
जेठे को आदर नहीं, तीन करें भड़फोर ।।

नर नारी का मन समुद्र है, वाणी गंगा है, चेतन-आत्मा ब्रह्म है। शरीर से क्रियायें होने से ब्रह्मा भी है। (अहं ब्रह्मास्मि) पालनकर्ता होने से अहं विष्णुः भी है। पैसा, पृथ्वी, स्त्री इन्हें संत जनों ने झगड़े की मूल माया कहा है।

नारी के उन्नत स्तन मांसपिंड, रक्त पीपादि से भरे होने पर भी कामी जन मसलने और स्पर्श करने में आनन्द मानता है। और भोग भोगता हुआ तृप्त नहीं होता।

काल हाथी है—जो इस संसार को सूंड़ से पकड़ कर चतुर्गति रूप सर्पों के मुंह में डालना चाहता है।

नाग चतुर्गति मुख फैलाये, काल करी ने खींचा है।
यह संसार बृक्ष है जिसको, सुख आशा ने सींचा है ।।
योवन पाया धन जन पाया, सभी बृथा है पाना।
अगर नहीं दुनियां के हित में, अपना हित पहिचाना ।।

आचार्यों ने नारी के शरीर में (क्षत्रचूड़ामणि में) कहा है—

नारी जघनरंध्रस्थ, विण्मूत्रमयचर्मणा ।
बाराह इव विड्भक्षी, हन्त मूढ़ाः सुखायते ।।

चर्म से बनी, मल मूत्र से भरी, रक्तादि बहने वाली नदी के समान घृणायुक्त अपवित्र वस्तु को योगीजनों ने निम्दनीय माना है। कामीजन बार बार छूता संघर्षण करता हुआ आनन्द मानता है। और शूकर अपवित्र वस्तु को खाने में आनन्द मानता है। दोनों के एक ही मार्ग हैं। इसी लिये योगीजनों ने कामीजन को शूकर की समानता दी है।

महारानी असंघमित्रा का बांया हाथ कमर पर रखा अधोभाग की ओर संकेत कर रहा है। 'यथा नाम तथा गुण' के अनुसार दोनों बर एवं बधू निषेध कर रहे हैं। नारी (महारानी) के सिर पर ५ फण का सर्प पांचों ही इन्द्रियों से सम्बन्ध रखता है।

(१) विवाह का प्रतीक सत्कार्यों में भाग लेने के कारण सेहरा (मुहर) बंधा है।

(२) राज्यवैभव का प्रतीक सिर पर सर्पों का फण दबदबे और विष का सूचक है।

(३) सिर पर बेंदा और बोर सौभाग्य का प्रतीक एवं विवाह के समय का बोध कराता है।

(४) हाथ में कमल से भावार्थ है कि मैं लक्ष्मी हूँ, मैं ही गार्हस्थ जीवन की नौका की केवट हूँ, और दशों ही अवतारों की जननी हूँ।

आचाय कहते हैं—

नर तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान ।
इन्द्रिय गण घोड़े विरल, चढ़ पावें धीमान् ।।

जिनका मन पवित्र है, राग परिणति से रहित है, जिनका आत्मीय बल, पराक्रम, बुद्धि, गुणग्राह्यता, व्यवहार, चरित्र पवित्र है। जो शोक रहित हैं। इन्द्रियों पर विजय पाने में श्रेष्ठ पुरुष रागपरिणति को हरण करने वाले वीतरागी पुरुष ही शोक रहित हैं। अर्थात् अशोक नाम से प्रसिद्ध हैं।

इन्हीं सम्राट अशोक के पुत्र महेन्द्र और पुत्री संघमित्रा दोनों बहिन भाई चन्द्रमा और लक्ष्मी ने अपने भतीजे बुध को साथ लेकर अपनी विवेकबुद्धि से विदेशों में धर्मप्रचार किया था।

फूट का दुष्परिणाम

सिंघई वंश-परिचय

(इस नगर का नाम आलमगीरपुर क्यों पड़ा ? आगे पढ़िये)

ऐमदराय जी टड़ैया भेलसा नगर में विक्रम संवत् १६२५ में बुन्देलखंड से आकर बरईपुरा में रहे। इनके पुत्र समदराय थे। संवत् १६५१ में स्वर्गवास हो गया। समदराय को पहलवानी का शौक था। हाकिम टांका लेकर आते जाते थे। उसके साथी पहलवानों से कुश्ती में विजय

पाते रहे। इनकी वीरता की हाकिम प्रशंसा करते और सम्मान भी करते थे। इधर डाँकों के कारण प्रजा त्रसित थी। डाकुओं के पकड़ने के लिए एक बीड़ा रखा गया था।

पान स्वाद की खान है, पान शान की आन ।
बीड़ा लेकर पान का, मर्द निवाहत आन ॥

उस बीड़े को कचहरी में समदराय ने उठाया। साधुओं के वेश में जमात तैयार कर ग्रामों में भ्रमण करना शुरू किया। डाकुओं के ३ गोल थे। पता लगाया, प्रत्येक गोल में ३०-३० बदमाश थे। जिसके २ गोल में पिंडारे और एक गोल में मेवाती थे। गिरफ्तारी की। हाकिम ने प्रसन्न होकर इन्हें रुतवा देकर दूसरे गोल की गिरफ्तारी को शासकीय सहायता देकर भेजा। समदराय ने एक बणिक् की बारात बनाई जिसमें कुछ सैनिकों को औरतों के वेष में नकली बच्चों को लेकर चले और उस गांव में पहुंचे जहाँ डाकुओं का सन्देह था। ऐसे मुकाम पर बारात ठहराई जहाँ से आदमी मुश्किल से निकल सके।

समदराय बारात को मुकाम पर कर के कंजड़ का वेष बना कर उन डाकुओं के गोल में गये और गोल के सरदार से बारात का हाल इस ढंग से कहा जिससे डाकुओं को सन्देह न हो। और बारात लूटने को साथ हो गये।

लुटेरों को ऐसे स्थान पर ले जाया गया जहाँ दोनों ओर की दीवालें बहुत ऊंची थी। रास्ता सकड़ा और पथरीला था। केवल बैलगाड़ी ही जा सकती थी। मुकाम पर पहुंचते ही बरात सामने आने लगी। बराती भी सातों हथियारों से सुसज्जित थे। एक सीटी की आवाज आई और गोली बरसना प्रारम्भ हो गया। इधर बरातियों ने भी धावा बोल दिया। पीछे से सैनिकों ने भी अपना पराक्रम दिखा कर डाकुओं को बहादुरी के साथ पकड़ लिया। समदराय को शासन की ओर से सम्मान मिला और इनके दबदबे और बुद्धिमानी से डाकू दल कांपने लगा। इनका ९२ वर्ष की अवस्था में स्वर्गवास हो गया।

समदराय के पुत्र समोखनराय मिष्टभाषी थे।

आलमगीर बादशाह ने भेलसा के ऊपर बेतवा नदी के किनारे जहां महल घाट बना है युद्ध की दृष्टि से पड़ाव डाला। उस समय नदी छोटीसी थी। मनुष्य आसानी से आता जाता था। यहां पर ही सूर्यमन्दिर था, जिसे तोड़ कर यह महलघाट बनाया। इस मन्दिर का एक शिलालेख प्राप्त हुआ है जिसका प्रकाशन भारत सरकार के एपीग्राफी आफ इंडिया उटकमंड के श्री डी० सी० सरकार ने अपने इंडोएशियन कल्चर पृष्ठ २१० नं० ३६ दो शिलालेख माह दिसम्बर सन् १९५२ में प्रतिलिपि करके ले गये थे, जिसकी प्रतिलिपि व फोटो संलग्न है।

समोखनराय ने बवरची खाने के दरोगा से मिलकर रसद की व्यवस्था अपने हाथ में ले ली। और लश्कर वालों से भी मित्रता की। जिस कारण हजारों रुपया पैदा किया। और ४६ वर्ष की उम्र में स्वर्गवास हो गया। उस समय इनके ६-७ वर्ष का बालक ताराचन्द्र था। सती होने की प्रथा थी, किन्तु सती होना उचित न समझ पत्नी धर्मसाधन करती रहीं। ताराचन्द्र को

संस्कृत के जैन शास्त्रों का अच्छा ज्ञान था। तथा यंत्र मंत्र सीखने का शौक भी था। संस्कृत के विद्वान होने के कारण जती, सेवड़ा, मंत्रवादी, सभी सम्मान करते थे। बाल्यकाल में पिता के स्वर्गवास के कारण गृहस्थी का भार आ जाने से लेन देन का कारोबार बड़ा लिया था। और २० वर्ष की आयु में भेलसे में ही विवाह किया।

इस समय नगर के सेठ विजयराम जी मारवाड़ी चार-पाँच लाख के धनिकों में माने जाते थे और ताराचन्द जी ढाई लाख के। चोर गली में जो बड़ी इमारत दिखाई देती है वह दिगम्बर जैन मन्दिर की है।

व्यापार के कारण विजयराम मारवाड़ी और ताराचन्द्र के बीच वैमनस्य की गांठ पड़ गई। इसलिये ताराचन्द्र ने विद्याबल से पलंग पर सोई हुई उनकी धर्मपत्नी को उठवा कर मंगवा लिया। और सूचना पहुंचा दी कि सेठानी जी हमारे यहाँ आई हैं। शर्मिन्दा किया और सेठानी जी को पूर्ववत् सम्मानपूर्वक वापिस विदा कर दिया। इससे आपसी वैमनस्य समाप्त किया। ताराचन्द्र की अधिक मान्यता हो गई। ६२ वर्ष की उम्र में स्वर्गवास हो गया। यानी सं० १७७६ में।

परवार दिगम्बर जैन मन्दिर भेलसा के निर्माण का चन्दा

लगभग सं० १७०० में जब विजय मन्दिर का विध्वंस हो गया और जैनियों का अधिकार जाता रहा तो समाज ने एक छोटासा मन्दिर धर्मसाधन के लिए बना लिया था। समाज के लोग लगभग ३०० घर के थे। अतएव ताराचन्द्र जी के स्वर्गवास के पश्चात् इनके पुत्र रतीराम जी ने दूरदर्शिता से पंचायत को बुला कर ८० हजार का चन्दा एकत्रित किया, जिसमें ६० घर अच्छे धनी और सम्पन्न माने जाते थे। शुभ घड़ी और शुभ नक्षत्र में मन्दिर-निर्माण का कार्य प्रारम्भ किया गया।

विजय मन्दिर में देवी-देवताओं, ऋषि-मुनियों और तीर्थंकरों की मूर्तियाँ थीं, उनको उसने तुड़वाया और सड़कों में, दर्वाजों के मार्गों में बिछवा दिया।

इस विजय मन्दिर के कई शिलालेखों के टुकड़े मिले हैं, जिनके पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि परमारों ने जो महाराजा भोज के वंशज थे निर्माण कराया था। जोकि जैन धर्म के पालने वाले थे। यह भोजराज तीन भाई थे। सबसे बड़े भाई का नाम शुभचन्द्र और मझले भाई का नाम भर्तृहरि था, जिनका वर्णन 'भोज और भोपाल' जोकि राजधानी का इतिहास लिखा है उसमें पढ़िये।

विनाशकाले विपरीतबुद्धिः

रतीराम जी के जुगराज जी नामक पुत्र पूर्वपुण्योदय से देवों के समान रूपवान और भाग्यशाली हुए, किन्तु इन्हें अय्याशी और दुर्व्यसनों में गाँजा, भंग, चरस, चंडूल आदि कुसंगति के कारण मुंह लग गये और अधिकतर यह बात यौवनावस्था में संपत्ति, प्रभुता, अविवेकता प्राप्त कर ही होती है, इस कारण पिता के सुयश पर कालिमा लगाई गई। इस वजह से पिता ने इन्हें प्रथक् कर दिया।

यह अधिक व्यभिचारी थे। नगरवासी इनकी नजरों से अपनी बहू बेटियों को बचाने लगे। किन्तु यह अपनी पूर्ति कोई रुपयों से करता है वहाँ यह अशर्फियों से पूरी करने लगे। इन्हें इस दुर्व्यसनियों के संसर्ग से गायनविद्या का योग मिला। अच्छे गवैयों को पराजय दी। किन्तु जो कार्य-भार जैन मन्दिर निर्माण का हाथ में इनके पिता ने लिया था न हो सका। इस कारण जैन समाज के अन्दर क्षोभ हो गया और इसका कार्यभार जुगराज जी पर इसलिये डाला कि इनकी प्रवृत्ति इस ओर लगे और दुर्व्यसनों से बच जावें।

इन्होंने पुनः चन्दे की पानड़ी बनाई। ५० हजार रुपया लिखा; २५ हजार समाज से एकत्रित किया गया। दुर्व्यसनों की ओर से मुंह मोड़ कर कार्य मन्दिरनिर्माण का शुरू करते ही ये कि मर गये। कोई यश प्राप्त न कर सके। रतीराम जी के द्वितीय पुत्र जोमदराय थे। इस समय मीरशाही में सिंघई वंश की ७ स्त्रियाँ विधवा हुई थीं। दुर्व्यसन का पाप इनके समय में आ पड़ा। इस हाथ कर लो और इस हाथ देख लो।

मीर-शाही

नवाब मीरखाँ चार भाई थे। दूसरे का आलगीर तीसरे का चीतू, चौथे का करीमखां नाम था यह अफगानिस्तान के रहने वाले थे। जमइयत लेकर भारत में बगावत करते आये और १८६० में बगावत करने भेलसा पर आये। और लुहांगी पर तोपें रखीं और ६ माह तक इस भेलसा को घेरे पड़ा रहा, किन्तु फतह न पा सका। इस समय यह ग्वालियर राज्य के अधिकार में था किन्तु ठेके पर रहा करता था। इसका प्रबन्ध अच्छा था। गुर्जों पर तोपें रखीं थीं, गोलंदाजी होती रही। जब इसका राशन समाप्त होने लगा तो यहाँ से जाते समय गंधी दर्वाजे की तोप के गोले ने लुहांगी पर रखी मीर साहब की तोप को लुहाँगी के नीचे पटक दिया। इस कारण यह यहां से चल दिये और नटेरन होकर जा रहे थे कि एक घोड़े पर बैठ कर डालसिंह नवाब मीरखां से आकर मिले।

पाठको! यह नटेरन जिला भेलसा परगना बासौदा का भेलसा और पछार (अशोक नगर) रोड पर कागपुर के निकट है। २३०-४६ उत्तरी और ७७०-४९ पूर्वी रेखाओं पर स्थित है। १८वीं शताब्दीं में यह ग्राम डालसिंह नामी रघुवंशी के पास था।

एक जगह सन् १८०० ई० में डालसिंह ने मीरखां से मिलकर भेलसे को लुटवाने में सहायता देने और प्रोत्साहित करने का लिखा था। सहायता दी थी और भेलसे को लुटवाया था। इसके पश्चात् डालसिंह गिरफ्तार कर लिया गया। इसका नटेरन की गढी जगह जगह से नष्ट भ्रष्ट करके बर्बाद की गई और उसे दारुण दुःख दिये। गये उन दुःखों को पाते हुये उसकी मृत्यु जेल में हो गई।*

*गजेटियर ग्वालियर जिल्द पहली सन् १९०८ से प्राप्त।

डालसिंह तरफदार की सहायता से किलेदार को धोखा देकर वैसदरवाजे की खिड़की यह कह कर खुलवाई कि दुश्मन नटेरन से गुजर चुके हैं। मुझे सूवा साहब से समाचार कहना है। किलेदार ने जैसे खिड़की खोली कि साधुओं के वेष में छुपे मुगल सैनिकों ने अन्दर घुसकर मारकाट शुरू करदी और फाटक खोल दिया। बस क्या था, बात की बात में सैनिक किले के अन्दर दाखिल हो गये और लूटमार शुरू कर दी, और किले पर अधिकार कर लिया। उस समय सिंघई जी के वंशज उत्तमचन्द्र का किलेदार से प्रेम था इसलिये साधू का वेष बनाकर निकल जाने को कहा और अन्य किसी को नहीं जाने दिया। ५ असर्फी चोटी में रख कर और छुप कर रायसेन में लखमीचन्द्र के यहाँ पहुंचे।

लूट मार का तरीका

नगरवासियों को प्रत्येक घर से बुलाना और उनकी हैसियत से दुगना जुर्माना करना। चांदी, सोना, जवाहरात, तांवा, पीतल, आदि जो भी वस्तु मिले वसूल करना। जो बाकी बचे उसकी बसूली में मिरचों के तोवड़ा चढ़ाना और गरम तोपों पर नंगा करके बिठाना, नारियों के सतीत्व को लूटना, कत्ले आम मचाना। इस प्रकार से जनता को कष्ट पहुँचाया। भेलसे को बर्बाद किया। इसी प्रकार से सिंघई वंश के व्यक्तियों को बुलाया गया। उत्तमचन्द्र भाग निकले थे। इनकी जायदाद से चार लाख रुपया जुर्माना किया और इसी प्रकार से ६ माह तक लूटा और सिंघई वंश के लोगों को मार डाला। १७ गाड़ी सोने की नथनी, और चांदो के जेवरात, तांवा, पीतल आदि धातु का कोई हिसाब नहीं था।

विजय मन्दिर के पास वाली खारी बावड़ी में लाशें लबालब भर गई थीं। इस बावड़ी के दो खम्भों पर जो सुन्दर मूर्तियाँ खुदी हैं विजय मन्दिर के निर्माता का जीवन-चरित्र है। जिसका एक इतिहास लिखा जा सकता है। शासन की इसकी सुरक्षा और अनुसंधान इतिहास के लिये चारों ओर से साफ कराना आवश्यक है।

मीरखां ने भेलसा को लूट कर अरबों रुपयों का माल लिया और इस कस्वे का नाम आलमगीरपुर रखा। यह जाति के पिंडारे थे। इनके आतंकों से इन्दौर, ग्वालियर और कोटा राजस्थान के राजाओं ने टौंक का नवाब बनाकर निकट संबंधी जागीरें देकर एक राज्य स्थापित कर दिया जो भारतीयों की फूट और आपसी वैमनस्य का प्रधान कारण बन बैठा।

अद्भुत चमत्कार

परवार दिगम्बर जैन मन्दिर में एक भगवान के बैठने की बड़ी बेदी है और वह देशी लाल पाषाण की कलामय बनी है। उसी बेदी में तीसरे तीर्थंकर भगवान संभवनाथ स्वामी की मूर्ति है। दोपहरी का समय था कि मंहगूशाह जिनका वंश आज भी है, जिनदर्शन को आये। दर्शन करते समय उनकी दृष्टि भगवान संभवनाथ जी की मूर्ति पर पड़ी। इन्होंने मूर्ति का हाथ उठा हुआ देखा जिसका संबोधन था कि ठहरो और विचार करो, भयंकर आपत्ति आने वाली है। ऐसे उठे हुए हाथ को देखकर मंहगूशाह जी मंदिर के बाहर आये और समस्त जैन समाज को शीघ्र ही एकत्रित कर मूर्ति के हाथ उठने का बृतान्त कह दिया।

विवेकवान दूरदर्शी विद्वद् समाज ने भविष्य पर विचार कर और अनुमान लगाकर समझ लिया कि कोई न कोई आपत्ति अवश्य आने वाली है। इस कारण मन्दिर की सुरक्षा आवश्यक है। यह विचार कर समस्त मूर्तियां यत्र तत्र तहखानों में छुपा दीं। किन्तु तीन मूर्तियाँ जो रायसेन के किले के जैन मंदिर के समवशरण में विराजमान हैं, वह न उठ सकीं। जैन समाज ने बड़ी कोशिस की। आपत्ति का समय निकट ही आ चुका था। उन्हें यथास्थान ही छोड़ देना पड़ा।

घड़ी-नक्षत्र और मूर्ति का चमत्कार

यह घटना सवत् १८६० की है जबकि वह मीरखां इस मन्दिर में लूटने की नियत से मन्दिर के अन्दर गया था, किन्तु वहाँ पर समस्त मंदिर खाली पाया। और इन्हीं तीन मूर्तियों को बगैर शिर के देख कर मन्दिर के बाहर आ गया। मगर कुछ लोग जो मीरखां के साथी थे वह मंदिर के अन्दर पीछे रह गये थे। इन्होंने वह तीनों मूर्तियाँ सिर सहित सांगोपांग देखीं। और मीरखां से आकर कहा-मूर्तियाँ सिर सहित हैं, सिर रहित नहीं हैं। पुनः मीरखां बदनियती से मन्दिर के अन्दर गया तो तीनों मूर्तियों को बे-सिर के पाया। जो साथी मन्दिर में रह गये थे उन्हीं से पूछा तो मालूम हुआ कि वह साबुत हैं।

नत मस्तक

अब तो मीरखां को यकीन हो गया कि यह बुत तो बाबा आदम की है। और मेरे को दीदार करना चाहिये। जो मैं बदनियती से जाता था वह बदनियती मैं दूर करता हूँ। ऐसा कहकर जब मीरखां मूर्तियों के सामने आया तो तीनों मूर्तियां सिर सहित देख कर आश्चर्यचकित हो गया। और जितने दिन भेलसे में रहा रोजाना दर्शन को आता रहा। और पसेरियों लोबान का हवन करता रहा। किन्तु जब तक इसे यह चमत्कार नहीं दिखा उस समय तक इसने जो प्राचीन ग्रन्थ हस्तलिखित २६ पट्टाधीश आचार्यों का अपूर्व संग्रह शास्त्र भंडार जला कर भस्मीभूत कर दिया। जितना लूट पाट मीरखां ने किया। उससे आज तक भेलसा सरसब्ज न हो सका। यही है हमारी फूट का मुख्य फल।

सदैव दिन एकसे नहीं रहते

पिंडारों के आतंक से प्रजा अत्यन्त त्रसित थी। कुछ लोग भाग कर ग्वालियर नरेश के समक्ष पहुंचे और पिंडारों का अत्याचार कहा तो महाराजा ने तत्काल ही फौजें रवाना कर दीं। इसमें समय ६ माह का व्यतीत हो गया। जब फौजें आईं तो मीरखाँ भाग गया। उसके पीछे उत्तमचन्द भेलसा आये। इनका जन्म सं० १८३५ का है। इनके दो पुत्र थे। बड़े पुत्र का नाम गोपालदास था। इनका विवाह सं० १८९८ में सिरोंज में हुआ था। और सिरोंज में इनकी स्मृति में निसई जी नामक पहाड़ी पर एक धर्मशाला बनी है, जो जुगराज वालों की कहलाती है। दूसरे पुत्र का नाम जुगराज था।

पुण्य से देव भी सहायक हो जाते हैं

जुगराज जी (नं० २) के वंश में दयाराम का जन्म हुआ। यह बालकों के साथ खेल रहे

थे कि अचानक एक दिन पत्थर गढ़ के कोठे में से आकर और बालक के रूप में बन कर इस व्यंतर देव ने दयाराम से मित्रता की। और सब मित्र मंडली के लड़कों को मिठाइयाँ खिलाते रहे। सद्‌शिक्षायें देते रहे और उत्तम खेल खिलाते रहे।

पत्थरगढ़ का कोठा क्यों ?

इसलिये कि बादशाह मुहम्मद गौरी के हुकम से महाद जी सेंधिया गुलाम कादर का सिर काट कर पत्थर गढ से लाये थे। साथ में दो तोपें मय मेगजीन के व बारूद गोला के रखा गया था। इससे यह पत्थर गढ का कोठा कहलाता था। इसके पीछे इसे जेल खाना बना दिया गया था। किन्तु बगल में ही लगा हुआ सिं० जुगराज जी का मकान था। कैदी औरतों को छेड़ते और गालियां बकते थे इसलिये इनके वंशज श्री जवाहरमल जी ने लश्कर जाकर १९००) रु० में पत्थर गढ का कोठा खरीद लिया था और उसमें कुआं खुदवाया।

सोनागिरि का गजरथ सेठ गुलाबचन्द्र जी तथा सिं० जुगराज वालों का महाराजा दतिया नरेश से मिलन। इस सम्बन्ध में नीचे पढ़िये।

पाठकगण चन्देरी का नाम प्रायः जानते ही हैं, किन्तु इस रत्नगर्भा वसुन्धरा में कैसे विलासी, प्रतिभाशाली, दानी और विरागी व्यक्ति होते थे। और वह आज मरने के बाद भी इस वसुन्धरा पर जीवित किस प्रकार हैं। क्या आज उनकी समानता करने वाले प्रतिभाशाली व्यक्ति हैं ? यही कहना पड़ेगा कि नहीं हैं। इन शासकों का जीवन पशुओं से भी गया बीता है। चूंकि पशु, पक्षी, कीड़े मकोड़े किसी न किसी प्रकार से परोपकार में अपना सर्वस्व अर्पण कर कर्तव्य निभाते हैं किन्तु यह अपनी ईर्षा. मद, अविवेकता और निर्दयता की धुन में सवार रहा करते हैं। इन विलासियों और पूर्व विलासियों का अन्तर देखिये।

पूर्व विलासी भोग भोगते हुये अपने परोपकारमय गुण को नहीं त्यागते थे। आज इन्होंने उस परोपकारमय परम्परा को रसातल में पहुंचा दिया।

वह दान देते थे यह दान माँगते हैं भिखारी बन गये। पूर्व शासक जीवों पर दया कर हिंसावृत्ति को रोकते थे, यह उनका उत्पादन करते और उनका व्यापार करते और आप स्वयं हिंसक बन, दूसरों को हिंसा का शिक्षण देकर माँसाहारी बनाते जा रहे हैं। पहिले विद्यार्थियों को सद्‌शिक्षायें दी जाती थीं वहाँ आज सभ्यता से लूटने खाने की शिक्षा दी जाती हैं। पहिले एक कमाता था और समस्त परिवार बैठ कर आराम से खाता था वहाँ आज जितने कमाते हैं उनका पेट नहीं भरता। अब अधिक न लिखकर आपको एक महत्वपूर्ण घटना का दिग्दर्शन कराते हैं।

सोनागिर का गजरथ

यह संवत् १८९६ है। जहाँ सुवर्णगिरि (सोनागिरि) बम्बई दिल्ली के बीच और ग्वालियर के निकट दतिया राज्य का स्थान है। और रेलवे स्टेशन सोनागिरि है। यहाँ का जलवायु उत्तम है जो रेल में से बहुत से मन्दिर दिखाई देते हैं यह वही स्थान है। यहां पर लाला मन्नासिंह जी चन्देरी वालों ने गजरथ चलाया था।

भेलसा की भजनमंडली और गजरथ

इस गजरथ में भेलसा जैन समाज की भजन मंडली गई हुई थी। एक ओर तो गजरथ की मन्द मन्द गति और एक ओर भेलसा जैन समाज के कलामयनृत्य ने श्री जिनेन्द्र के चरणों में दुन्दुभी वादित्रों के साथ अपनी अद्भुत कला का परिचय दिया, जिसपर श्रीमंत दतिया नरेश श्री विजय बहादुर जी ने अपनी प्रसन्नता के साथ पारितोषिक देते हुये सम्मानित किया। यह थी राजाओं की दान-परम्परा।

लाला सवासिंह कौन थे ?

लाला सवासिंह दिगम्बर जैन धर्मावलंबि खंडेलवाल जैन कुल भूषण एक चौधरीवंश जिनकी बड़ी भारी जागीर थी उस घराने के प्रधान कारिन्दा थे। आपकी कार्यप्रणाली, बुद्धिबल अत्यन्त ही प्रशंसनीय था। आप नीतिशास्त्र के अच्छे विद्वान माने जाते थे। यदि इन्हें चाणक्य कहा जाय तो अतिशयोक्ति न होगी।

लाला सवासिंह का रंग श्याम था जिस प्रकार चाणक्य का था। जिस प्रकार से शस्त्र और शास्त्र विद्या में चाणक्य प्रवीण थे उसी प्रकार से लाला सवासिंह भी थे। आपके मालिक को कोई नहीं जानता था, इन्हीं को मालिक जानते थे।

लोढा रंडी

इन्हीं के पास एक लोढा रंडी थी जो इनकी वीरता-विद्वत्तादि पर मुग्ध थी। प्रतिक्षण लाला सवासिंह के प्रत्येक कार्यों में मन्त्री की तरह काम करती थी और सहयोग देती थी। बड़े निर्भीक और वीर पुरुष थे। किन्तु समाज इनसे इस रंडी के सम्पर्क के कारण अप्रसन्न रहा करती थी। कई बार समाज ने सम्बन्ध विच्छेद के लिये प्रयत्न किये, जुर्माने में दावतें खाई। क्यों-

जलन की साधना संसार में सस्ती नहीं होती।
मधुर मुस्कान की कीमत चुकाते अश्रु के मोती॥

समाज जुर्माना करती थी और यह उनके कथनानुसार जुर्माने का भुगतान करते रहते थे। जिस प्रकार से कुत्ता अपने पेट के लिए मालिक के समक्ष दुम हिलाता रहता है उसी प्रकार से पेट के लिए समाज दुम हिलाया करती थी। इसी प्रकार से वर्तमान में शासन की दशा हो गई है। ऐसा कोई विभाग नहीं बचा जिसमें भ्रष्टाचार न हो।

यह लोढा रंडी बड़ी नीतिज्ञ और कार्यकुशल थी। राजकीय कार्यों में बड़ी सहायक था। इस कारण कठिन से कठिन कार्य इनके सुलभ हो जाते थे।

राजमहल के पीछे दक्षिण की ओर लोडा रंडी की स्मृतिस्वरूप एक छत्री बनी हुई है। और पश्चिम दिशा में बड़ी भारी गणेश जी की एक प्रतिमा भी है, जो दर्शनीय है।

वीर बुन्देला क्षत्री और लाला सवासिंह

लाला सवासिंह का समस्त बुन्देलखंड के क्षत्रीय वीर पुरुषों से घनिष्ट सम्बन्ध था और वह बिना लाला सवासिंह की सलाह के कोई कार्य नहीं करते थे और अनुशासन में चलते थे। इतना सम्मान था।

दौलतराव सिंधिया द्वारा लाला सवासिंह की परीक्षा

ग्वालियर नरेश महाराजा दौलतराव सिंधिया लाला सवासिंह को सम्मानपूर्वक छल से बल की परीक्षा हेतु ग्वालियर ले गये और अफवाह फैला दी कि लाला सवासिंह की गिरफ्तारी हो गई। इतनी बात सुनते ही वीर बुन्देलों ने बात की बात में गंगाजली लूट ली। श्रीमन्त दौलतराव जी सिंधिया ने लाला सवासिंह से कहा कि गंगाजली लुट गई तो लाला ने उत्तर दिया वापिस आ जायगी। वह कैसे ? फिर क्या था, वापिस लाला सवासिंह आये और गंगाजली वापिस लुटी हुई पहुंच गई। यह है एकता और सत्यनिष्ठा का चित्रपट।

पूर्व शासक और वर्तमान शासकों का अन्तर प्रदर्शन

पूर्वकाल के राजनीतिज्ञ शासक विद्वानों, वीर पुरुषों का यथोचित सम्मान करते थे। पूर्वा-पर विचार कर न्यायदृष्टि समभाव रख कर ही न्याय करते थे। शासकगण राज्य के द्रव्यादि का उपयोग और उपभोग केवल प्रजा के हित के लिए ही करते थे। और स्वार्थ भी हो तो प्रजा के हित के लिए। कभी भी प्रजा को कष्ट नहीं पहुँचाते थे और पुत्रवत् मानते थे। आज जिस प्रकार भी हो सब कुछ शासन का है, प्रजा कहां से लाई !

है राज्य की शोभा प्रजा, राजा प्रजा का दास है।
राजा प्रजा में भेद हो तो, सर्व सत्यानाश है ॥
मुश्किल है मिलना चोर का जब, घर के ही सब चोर हैं।
कैसे चलेगा राज जब, सारे ही रिश्वतखोर हैं ॥

राज्यसंचालन-पद्धति

यदि आधीनस्थ कोई शासक या जागीरदार अथवा बागी मनुष्य प्रजा को सताता था तो उसे देश काल योग्यतानुसार दन्डित कर या सम्मान देकर लोकप्रिय बना लेते थे। चारों नीतियों का उपयोग करते थे। इसी कारण वह शासक आज हजारों वर्ष बीत जाने पर भी सूर्य के समान इस वसुन्धरा में चमक रहे हैं। विरोधी पैदा नहीं होने देते थे। यह थी उनकी न्याय और सिद्धांत की रक्षा।

जब कोई व्यक्ति अपने देव, गुरु, राजा और वैद्य के समक्ष मनोवांछित भावनाओं को लेकर जाता था तो कुछ न कुछ भेंट अवश्य ले जाता था, इसलिये कि वह आगन्तुक के शुभाशुभ

का ज्ञान करने के लिये एक मार्ग था जिसने भविष्य की परीक्षा होती थी न कि वह रिश्वत थी। देव के समक्ष करुणा, दया, आत्मज्ञान के लिए, गुरु के समक्ष ज्ञान के लिये, राजा के समक्ष अपनी दरिद्रता निवाणार्थ और वैद्य के समक्ष स्वास्थलाभ की कामना लेकर ही जाते थे। और वह पूर्ति करते थे। आज समय ने पल्टा खाया।

पूर्व शासक जब कभी शिक्षा संस्था, मन्दिर, धर्मशाला, देव मन्दिर आदि के अवलोकनार्थ जाते थे तो बच्चों तथा गरीबों को भोजन मिष्टानादि बटवाते थे, पारितोषिक देते थे, इससे जनता और राजा में स्नेहवृद्धि होती थी और इसी को सुकाल कहते थे।

स्वाथ की बात लाला सवाईसिंह और बुन्देलों में नहीं थी। वह तो उन्हें अपना राजा मानते थे। लाला सवाईसिंह ने संवत् १८७५ में एक चौबीसी बनवाई जिसमें २४ तीर्थंकरों की शास्त्रोक्त रंग वाली पाषाण की २८ मूर्तियां ४-४ बैल की गाड़ियों में ९-९ मन रुई में रख कर लाये। ८४००० रुपया उस सस्ते समय में न्योछावर में लगा था। प्राणप्रतिष्ठा कराई। जो अति दर्शनीय हैं।

दतिया नरेश की कंजूसी !

जब लाला सवाईसिंह की भावना सोनागिर जी में गजरथ चलाने की हुई। तो श्रीमन्त महाराजा श्री विजयबहादुरसिंह जी दतिया नरेश से आकर मिले और अपना विचार महाराजा के समक्ष रखा। राजा साहब ने गजरथ चलाने की अनुमति दे दी। जब प्रीतिभोज देने के लिये खाद्य सामग्री की सुविधाओं का प्रश्न आया तो स्वीकार नहीं किया। और कुछ कठोरता दिखाई। तथा यह भी कहा कि बनियों को कोई सुविधा नहीं दी जा सकती। यह बात लाला सवाईसिंह को बहुत बुरी लगी। इस पर लाला सवाईसिंह चन्देरी आ गये।

घर आकर समस्त सैनिकों और बुन्देलों को बुला कर अपने पुनीत कार्य का विवरण समक्ष रखा और सब लोग समस्त सामग्री और सुविधाओं तथा व्यवस्था जमाने में लग गये। अल्प समय में ही सामग्री एकत्रित हो गई।

संवत् १८९६ में सोनागिरि में रथयात्रा के लिये पहुँचे। उस समय चन्देरी से खाद्यादि समस्त वस्तुएं बैल गाड़ियों में भर कर प्रस्थान किया और गाड़ीवालों को यह आदेश दिया कि दतिया शहर के बीच बाजार में होकर राजमहल के नीचे से होती हुई, सोनागिर को जानेवाली सड़क पर से ही जाना है। ध्यान रखें। गाड़ियां प्रातःकाल ८ बजे के वक्त दतिया शहर से निकलें। एक गाड़ी की नक्की दूसरी गाड़ी की पिछाड़ो से बराबर लगी रहे, कोई भी आदमी इधर से उधर न जाने पावे। आदेशानुसार जिस समय गाड़ियाँ शहर में पहुंची तो पानी वालीं जहां को तहां रुक गई। तीन दिन रात तक खाद्य तथा अन्य वस्तुओं की गाड़ियों का निकलना बन्द नहीं हुआ। नगर में बड़ी हल चल मच गई। और राजा साहब के पास यह सन्देश पहुंच गया।

अब महाराजा विजयबहादुरसिंह ने अपने राजमहल पर से कोसों तक गाड़ियों को जाते हुए कतार देखी तो आश्चर्यचकित रह गये। और लाला सवाईसिंह को लोहपुरुष मानना ही पड़ा। क्या यह पूर्व पुण्य का ठाटबाट नहीं ? महाराजा विजयबहादुरसिंह ने अपनी भूल स्वीकार की

और यही मानना पड़ा कि यह बनियां नहीं, कोई रईस है। यह कोई तराजू तौलने वाला वनियां नहीं है, जो राजाओं का मान मर्दन करता है। यह है एकता और संगठन।

जब तीन दिन बाद गाड़ियों का तांता समाप्त हुआ उस समय स्त्रियां पानी लेकर घर जा सकीं।

लाला सवासिंह ने सोनागिरि में एक जिनमन्दिर बनवाया, जिनबिम्ब बिराजमान किये, गजरथ चलाया और प्रतिष्ठा का कार्य सम्पन्न किया। यह है समाज के रत्न, गौरवशाली महापुरुष के जीवन की यशोगाथा, जिस कारण उनकी कीर्तिरूप सुगंधी अभी भी फैल रही है।

इसी रथोत्सव में श्रीमान् सेठ गुलाबचन्द्र जी सिंघई जुगराज वालों का महाराजा दतिया नरेश से मिलन हुआ था।

चन्देरी के दर्शनीय स्थल

(१) बूढ़ी चन्देरी नई चन्देरी से १५ मील शिवपुरी रोड पर १० वें मील पर उतर कर इमला से पश्चिम में ५ मील जंगल में जाना पड़ता है। यहाँ पर ७५ मन्दिरों के भग्नावशेष पड़े हुए हैं। यहां पर एक झरना से पानी गिरता रहता है और कहते हैं कि इस पानी में स्नान करने से कोढ़ किसी भी प्रकार का हो नष्ट हो जाता है। यह यहाँ की महिमा है।

(२) इसी के पास नदी के किनारे बीठला नामक ग्राम है। यहां पर पूर्व काल में बस्ती रही होगी। इसी ग्राम के भग्न जैन मन्दिर से माणिक रत्न की भगवान पद्मप्रभु की १७ इंच की मूर्ति सौराष्ट्र के एक जौहरी महोदय ले गये, जिसकी रिपोर्ट पुरातत्व विभाग प्रदेशीय और केन्द्रीय दोनों को की, किन्तु शासन मौन है।

(३) मामौन नामक स्थान है तथा मियादान, यह उर्वशा नदी के ही किनारे पर है। रास्ता जंगली है। शेर, चीता आदि शिकारी जानवरों का भय रहता है। इस क्षेत्र में जैन मंदिर अधिक मात्रा में ही मिलते हैं और यह प्रदेश जैन वस्तुओं का भण्डार है।

(४) सिंहपुर के महल भारत वर्ष की अनुपम कला है। अभी भारत में इस शानी का महल दूसरा देखने में नहीं आया और न है। यह चन्देरी से अशोकनगर रोड पर लगभग ४ मील है।

(५) दिल्ली दरवाजा—यह शहर से ही लगा हुआ है और शिवपुरी रोड पर दिखाई देता है। यहां बादशाही कतवे-शिलालेख खुदे हुए लगे हैं। जिसमें गौरी का नाम खुदा हुआ है और गौरी खानदान अभी मौजूद है।

(६) बत्तीसी वावड़ी—कहा जाता है कि यह किसी बंजारे ने बनवाई थी, जो एक महत्वपूर्ण और दर्शनीय है।

(७) मालन खोह-इसकी विशेषता यह है कि यहाँ पर एक कुण्ड अतिशययुक्त है जो कि एक हाथ गहरा, दो दो हाथ लम्बा व चौड़ा है। कितना भी पानी निकालिये अंत नहीं आता। और वहां एक गुफा है जिसमें सिद्धों का स्थान है।

(८) मुंगावली रोड पर जामामस्जिद-आप यह भली प्रकार जानते हैं कि जब जब भारत में यवनों ने आक्रमण किये फूट के ही कारण हुए। और आक्रमणकारियों ने बनाया कुछ नहीं केवल उनकी तूमा पलेटी ही रही है। इसी प्रकार से यह जामामस्जिद भी है।

(९) यहां से एक सीधा मार्ग रामनगर को जाता है। घाटी चढ़ते ही एक कटी घाटी मिलती है, जिसे बादशाह गौरी ने बनाया था, जो कटी घाटी के नाम से प्रख्यात है। इसमें एक शिलालेख भी लगा है।

(१०) आगे चल कर २ मील पर रामनगर है। यह ग्राम भी चन्देरी से विशेष संबंधित है। यहां प्राचीन राजाओं के महल आदि बने हुए हैं। एक रमणीक तालाब भी है। जो कला की दृष्टि से अत्यंत महत्व पूर्ण है।

(११) श्री खंधार जी—यह स्थान जैनियों का परम तीर्थ हैं और पहाड़ी को काट कर ही गुफा में जैन प्रतिमायें निर्माण कराई और उनकी प्रतिष्ठा भी कराई गई है, जो लगभग ४-५ शताब्दी की मालूम होती हैं।

(१२) यहां पर एक किला पहाड़ी की चोटी पर हैं और इसे कहा जाता है कि राजा मर्दनसिंह बुन्देला ने बनवाया था। इसी के अन्दरूनी हिस्से में एक बावड़ी भी है जिसे गिलौआ ताल कहते हैं। तथा यहां पर मुगलों के आक्रमण के समय नारियां सती हुई थीं, उन्होंने अपने शील (ब्रह्मचर्य) की रक्षा आतातायियों से की थी, अपना जौहर बतलाया था। इसलिये यहाँ पर जौहर तलाई भी है। तथा राजमहल भी दर्शनीय है।

(१३) श्रीमंत सरकार माधवराव जी सिंधिया ने अद्वितीय कलामय एक कोठी का भी निर्माण कराया था, जो आज सिंधिया वंश की स्मृति अपनी प्रतिभा राज्य परम्परा की याद दिला रही है।

(१४) किले से उतरने पर दूसरे मार्ग से जागेश्वरी देवी का मन्दिर है। यहां भी झरना झरता ही रहता है। गर्मियों में बड़ा ही शीतल मन्द सुगन्ध वायु मण्डल से स्वर्ग के सुख का आनन्द आता है। यहां एक कुण्ड है। और नीचे उतरने को शहर की ओर सीढ़ियां बनी हुई हैं।

(१५) इस किले के दो दरवाजे हैं। एक का नाम खूनी दरवाजा है। जहां आक्रमणकारियों ने नगरवासियों को मौत के घाट उतारा था। इसलिए यह खूनी दरवाजा कहा जाता है। और दूसरा है ढोलिया दरवाजा।

(१६) एक ऊंट-सार भी अद्वितीय ढंग की बनी हुई है। जो बीच शहर में बड़े गणेश जी और लोढा रंडी की छतरी के ही निकट में है।

(१७) राजा मर्दनसिंह का महल गगनचुम्बी अति दर्शनीय हैं। इसके कुछ भाग शासन ने उतरवा दिये हैं। जो काम विनाश का मुगल साम्राज्य न कर सका वह इस राज्य के

मनचले मिनिस्टरों ने किया। और उसकी मरम्मत न करा सके। इसका नाम है बावर महल। इसी में एक पाताली कुआं भी है, जो पहाड़ी को चातुर्यता से काट कर बनाया गया है। इस महल में कई तलघर भी हैं, जो गुप्त हैं।

(१८) यहां पर चौबीसी जैन मन्दिर हैं, जिसे चौधरी सवासिंह जी ने बनवाया था।

(१९) मुंगावली जाते समय मार्ग में हरकुंड भी है, जिसमें चारों ओर रमणीक घाट बने हुये हैं।

(२०) अशोक नगर रोड पर उर्वशा नदी की रमट से थूवौन जी अतिशय क्षेत्र को मार्ग जाता है। पक्की सड़क बन गई है। चन्देरी से लगभग २० मील है। यहाँ २५ विशाल जैन मन्दिर गगनचुंबी पाड़ाशाह के बनवाये हैं। एक मन्दिर में हनुमान जी दो दिगम्बर जैन मुनियों को कंधे पर लेकर आकाश-मार्ग से जा रहे हैं। इससे प्रतीत होता है कि—

जब राम ने हनुमंत को गढ़ लंक पठाया।
सीता की खबर लेने को सह सैन्य सिधाया॥
मगबीच दो मुनिराज की लख आग में काया।
झट बार मूसलधार से उपसर्ग बचाया॥

इस चित्रण से यह पता लगता है कि रामचन्द्र जी के आदेशानुसार सीता की शोध में हनुमान जी लंका को जा रहे थे कि उन्हें भीषण अग्नि में जलते हुये दो मुनि दिखे, जिन्हें अपने विद्याबल से मेघों द्वारा जलवृष्टि कर रक्षा की थी। इस सम्बन्ध में बड़ा भारी पुरातत्वीय संग्रह अरक्षित दशा में पड़ा है। दिन प्रतिदिन नष्ट होता जा रहा है। इसकी फिकर धनाभिमानी या राज्याभिमानी नहीं कर सकता, करेगा वही जिसे प्राकृतिक लगन हो, किन्तु उसके पास तन और मन तथा लेखनी ही है।

गदर विक्रम संवत् १८१४, सन् १८५७

श्री दिगम्बर जैन धर्म प्रतिपालक भिंड निवासी गोलापूर्व जाति के भायजी श्री बच्चोलाल जी इस भेलसा नगर में पधारे। आप मंत्रविद्या के अद्वितीय विद्वान थे। आपका जैन समाज से परिचय हुआ। पारस्परिक प्रेमालाप के पश्चात् सिं० गुलाबचन्द्र जी के मकान के दरवाजे पर एक यंत्र लिख कर इसलिये लगाया कि कोई भी व्यक्ति सिंघई जी के मकान में लूटने की नियत से न घुसे और न हानि ही पहुंचा सके। इसी कारण यह घर छोड़ कर नहीं भागे।

पिशाच और भायजी

एक दिन प्रातःकाल भायजी और गोपालजी अपने कई साथियों के साथ काजी जी के मकान के पास विजय मन्दिर की गली में से निकले, तो देखते हैं कि एक पिशाच दो मकानों

की दीवारों पर पैर रखे खड़ा है। और नीचे सड़क काफी चौड़ी है। अगर कोई निकले भी तो पिशाच की दोनों टांगों के बीच में से निकलना पड़े। उस पिशाच का सिर आसमान तक चला गया! ऐसा देखते ही लोगों के छक्के छूट गये। किन्तु भायजी ने अपने मंत्र बल द्वारा उसे हटा दिया और धैर्य के साथ समझाया। उस समय भायजी के मंत्र बल पर और उनकी विद्वत्ता पर अधिक विश्वास हो गया।

भेलसा का गजरथ

रात्रि के पिछले पहर में जनकाबाई जी (जिनका द्वितीय नाम लालो बहू भी था यह सिं० मूलचन्द्र जी की धर्मपत्नी थीं) ने स्वप्न देखा कि मूलचन्द्र जी भाग रहे हैं। बड़े मन्दिर जी को समवशरण की शिखर पर सुवर्ण कलश बहुत बड़ा चढ़ा हुआ है। और श्री जिनेन्द्र पंच-कल्याणक के उत्सव संयुक्त पूजन देखी। गजरथ, जिनेन्द्र बरात देखते ही निद्रा समाप्त हो गई। प्रातःकाल स्नान कर पूजन के पश्चात् अपने पतिदेव से स्वप्न का पूर्ण समाचार कह सुनाया।

पश्चात् श्री सिंघई मूलचन्द्र जी ने समाज के समक्ष अपने विचार व्यक्त किये। शुभ मुहूर्त में गजरथ की तैयारी हेतु स्थानीय अधिकारियों से मिलना ही चाहते थे कि एक साधु यहां आये और मोहनगिरि के बगीचे में ठहरे। जनता दर्शन को गई हुई थी कि जनता के समक्ष उन साधु ने कहा कि यहाँ के सूबा के आज से १०वें महीने में पुत्र होगा। किन्तु सूबा सा० के संतान नहीं थी और उम्र भी ढल चुकी थी, फिर भी लोगों ने सूबा सा० को यह संदेश साधु का जाकर कह ही दिया। इस पर से सूबा साहब साधु के दर्शनार्थ आये और सूबा साहब को पुत्र होने का आशीर्वाद मिला। इस पर सूबा सा० ने कहा हमें इस उपलक्ष में क्या करना है? कहा तुम्हारे द्वारा एक महान कार्य और होगा, वह है जिनेन्द्र पंच कल्याणक। बस क्या था, सिं० जी शासन का सहयोग चाहते थे। अनायास ही इन्हें प्रोत्साहित किया गया। बाबा माधवराव जी सूबा के ही आदेशानुसार तैयारी की गई। किन्तु यह जानते ही हैं कि शुभ कार्यों में ही विघ्न आया करते हैं। वह है वास्तविक परीक्षा।

> फूल शूल दोनों ही जग के उपवन में हैं दिखलाते।
> किन्तु फूल के लेने हारे, नहीं शूल से दहलाते॥

द्वितीय जेठ शुक्ला ११ को नवीन शिखर पर कलश चढ़ाने का मुहूर्त था। कि विद्रोहियों ने अष्टमी के दिन ही पहरेदारों से मिल कर मन्दिर का दरवाजा खुलवा लिया और मन्दिर का शिखर तोड़ना शुरू कर दिया। किन्तु शासन की सहायता से उपद्रवकारी पकड़ लिये गये और उन्हें इस नीच कृत्य से शर्मिन्दा किया। किन्तु जब सूबा सा० का सहयोग देखा तो सूबा सा० को लोग बुरा भला कहने लगे। इससे और भी गहरा सहयोग मिला।

द्वितीय जेठ शुक्ला ११ वि० सं० १९३४ को रात्रि के समय प्रतिद्वन्दीयों ने सैनिकों को मिला कर रथ तुड़वाना शुरू कर दिया। किन्तु सूबा साहब ने तत्काल ही सैनिक बदल कर

व्यवस्था ठीक कर ली। गजरथ के संचालक त्यागी केशरीमल जी, भायजी पं० खेमचन्द्र जी खुरई निवासी थे।

भयंकर तूफान

इसी समय एक बड़े जोर की घटा आंधी के तूफान के साथ उठी और जल बरसना प्रारम्भ हो गया। ऐसी भयंकर घटना को देखकर लोगों का हृदय कांप रहा था। सब लोगों को यही मालूम हो रहा था कि रथ की फेरी नहीं हो सकती। किन्तु त्यागी केशरीमल जी और भायजी पं० खेमचन्द्र जी ने मंत्रोच्चारण करना प्रारम्भ कर दिया। इस कारण आंधी का तूफान समाप्त हो गया और जल बरस गया। और जयघोष के साथ रथ की फेरी फिरना प्रारम्भ हो गयी।

आश्चर्य

जहाँ यात्रियों का निवास था और जहां पर रथ का क्षेत्र था, फेरी के स्थान पर एक बूंद पानी नहीं आया और न कोई हानि ही हुई। और सर्वत्र मूसलाधार पानी बरसा। इस आश्चर्यजनक घटना का लोगों पर बड़ा ही प्रभाव पड़ा। और जय जयकार होने लगी। इधर सूबा साहब के घर पुत्रोत्सव होने से आचार्य का कहना भी पूर्ण हुआ। सिंघई जी को पदवी से विभूषित किया गया। इस रथ में १ लाख रुपयों का खर्च आया। इस समय महाराजा जियाजीराव सिंधिया थे। इनके दीवान दादा खटके सरसूवा माधवराव थे और यह जिला ईसागढ से लगता था और उन्हीं के प्रयत्न और आदेश से यह रथ चलाया जा सका। यह बड़े धर्मात्मा थे, पूजा पाठ में सदैव संलग्न रहा करते थे।

हिन्दू समाज का ह्रास क्यों ?

यह बात भी समझने के योग्य आवश्यक है कि जब जब राज्यों पर विपत्ति के बादल आये तो वणिक् वर्ग ने ही साथ दिया। जैसे–भामा शाह।

कितना बड़ा त्याग उस दानी ने किया और किस आपत्तिकाल में। और इसी कारण से वणिकों को खजानची बनाया जाता था कि वह उसकी रक्षा भली प्रकार करना जानते हैं। और किस समय उसका उपयोग किया जाना चाहिये यह भी जातते हैं। किन्तु ओछे आदमी और छोटे नाले अपने पीछे गंदगी ही छोड़ जाते हैं। वही दशा इस अभागी भारतीय हिन्दू समाज की है। यह पक्षियों से भी गये बीते हैं। देखिये, मुर्गा क्या सिखाता है ? कि अपने परिवार का भरणपोषण करके जो पीछे खाता है वह सम्पन्न गृहस्थ कहलाता है। और जो अधिकारी, समाज का नेतृत्व करने वाला, या राजा अपने नगर, समाज और प्रजा का भरणपोषण का ध्यान नहीं रखता और न्यायदृष्टि नहीं रखता तो वह कभी भी यशस्वी नहीं बन सकता और वही मृतक समान है। इसी कारण से इस दक्षिणी समाज का ह्रास हुआ। यह पेशवा कहलाते थे, किन्तु ईर्षा और फूट ने इन्हें किस प्रकार मिटाया। जिसका एक नमूना—

संवत् १९३४ में यह भेलसा भद्रावती क्षेत्र कहलाता था। जैन धर्मावलंबियों को रथ के लिये नागरिक बंधुता को परम्परागत चलाने हेतु अपनी न्यायपूर्ण उदारता का परिचय देने हेतु सनातन धर्म के श्रद्धानी श्री माधवराव जी सूबा पूजन पाठ करते हुये कचहरी का काम करते थे। किन्तु कुछ समाज के विद्रोहियों ने जो उन्हीं की कीर्ति नहीं चाहते थे तथा केसू भैया धर्माधिकारी, नरसिंहराव आवा जी, आपी जी राक्षस, इनकी मंडली में यह चर्चा चल रही थी कि समाज में एकता नहीं। यह बात सूबा साहब को भी मालूम हो गई और वह भी दुखी थे। और वह इस वैमनस्य को समाप्त करना चाहते थे। किन्तु इसका परिणाम यह हुआ कि सूबा सा० के ऊपर चढ़ाई कर दी। किन्तु जिसके हाथ सत्ता हो उसका कोई क्या बिगाड़ सकता है। आतंकवादियों ने अपनी राजनीति से प्रबन्ध कर लिया।

महाराष्ट्र समाज के रत्न श्री अण्णा साहब तहसीलदार, अन्ता जी व दामोदर सित्ते ने अपनी उत्तम व्यवस्था के साथ रथ निकलवाया था।

जिस प्रकार से यज्ञ करने पर ब्राह्मण समाज में दीक्षित होते हैं उसी प्रकार से सेठ मूलचन्द्र जी मानिकचन्द्र जी को सिंघई की पदवी दी गई। यह जानकारी श्री सदाशिवराव जी मुले से उन बातों से जो इस विदिशा के ही मूल निवासी हैं। उन्हीं की जीणशीर्ण हस्तलिखित डायरी से प्राप्त किया।

महत्वपूर्ण वंशावलि और नामावलि

वंशावलि

मोरू जगन्नाथ मुले उर्फ मोरूपंथ अम्बड [illegible]र

मोरूभैया सेउ वाले भेलसा

अन्ता जी दामोदर सितु सूबा भेलसा की वंशावलि

|

दत्तक माधोराव सितुत

|

नारायण राव — सदाशिव

|

आनन्दराव — दत्तक-रामचन्द्र राव
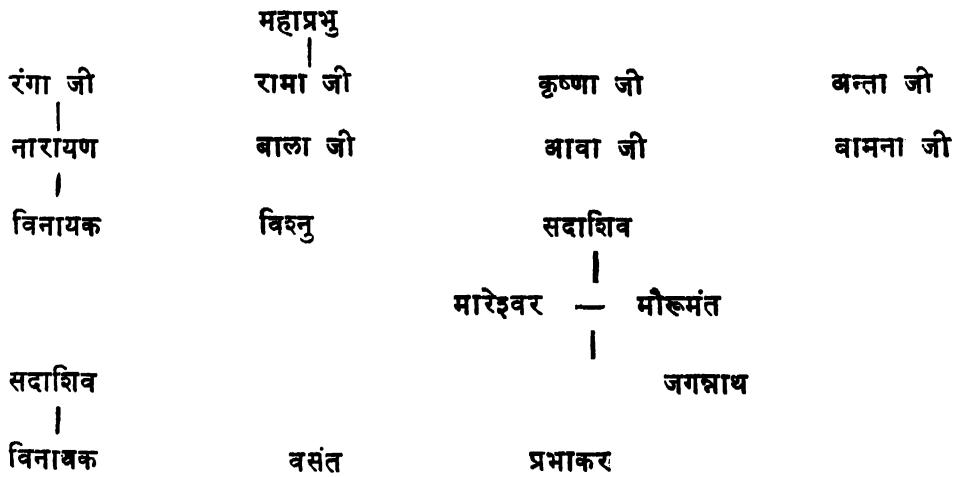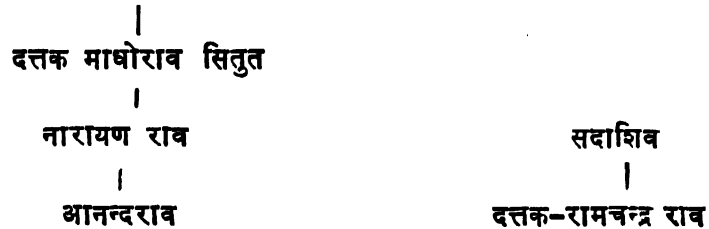
चौबे जी का मन्दिर

शिलालेख

श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। अथ शुभ संवत्सरे अस्मिन्नृपति विक्रमार्कराज्यतः। संवत् १८३३ शालिवाहनशके १६९८ पवगनाम संवत्सरे दक्षिण देशे, दुर्मुख नाम संवत्सरे ग्रीष्म ऋतौ मासानां मासोत्तमे मासे ज्येष्ठमासे शुक्लपक्षे पंचम्यां पुष्यनक्षत्रे तद्दिने श्री सिद्धेश्वर जी कस्य देवालये निर्मिते।

श्रीमन्त पंतप्रधान सवाई माधवराव जी कस्य राज्ये गोपाल संबाजी रची है। फरतेन प्रतिष्ठापिते दरोगा बाबूराय जिणशी सोवतकर वतनाने वंगेनड कोक हस्ताक्षर मुकंद मन मोहनलाल कानूगोई गोलावा।

कारीगर चौ यारी माने साध गजायराव। धरम गोरेहार नीये किसोरी इसनतु लंघेसी।

मन्दिर के पुजारी का जागीरदारी परिचय

कवायद जागीरदारान जिल्द २ ग्वालियर राज्य पृष्ठ सं० २८३ हालात नाथूराम पुरोहित।

चौबे जी का मन्दिर

इस खानदान के मालिक को पेशवा शासन से आराजी वगैरह वास्ते खर्च मन्दिर श्री गोपालकृष्णजी को दी गई थी। जिसका असल ताम्रपत्र मोरखां की बगावत के समय लूटमें चला गया।

सिंधिया शासन के अधिकार में आने पर हिरदेराम चौबे को महाराजा दौलतराव सिंधिया ने मन्दिर के खर्च के लिये २८५ रुपये ७ आने का ताकीद पत्र दिया।

संवत् १९११ सन् १८५४ में रोजाना भोग पोशाक श्री जी के लिये दिया जाता था, उसे बन्द कर एवज में ५५० रुपया कायम किया गया।

संवत् १९१८ सन् १८६१ में ८३० रु० मिलता रहा। फिर कमी होकर ५५० रु० मिलने लगे। संवत् १९३२ सन् १८७५ में कमी होकर २५९ रु० २ आना बांकी मिलता रहा।

✖

वंशावलि—चौबे जी

हिरदेराम के बाद—सांवलाराम, ध्यानदास, फुन्दीलाल उनके बजाय भोगचन्द्र के पुत्र नाथूराम। फुन्दीलाल के लड़के रामचन्द्र, और रामचन्द्र के पुत्र दुर्गाप्रसाद के पुत्र जानकीप्रसाद और जानकीप्रसाद और जानकीप्रसाद के लड़के शंकरप्रसाद, बाबूप्रसाद, रामाशंकर, चन्द्रशेखर के नाम दाखिल खारिज हैं। ये माफीदार रहे।

माफी में—मौजा पड़रिया १६ आना, सुआखेड़ी में ४१ बीघा आराजी, कस्वा भेलसा में बाग सहित ६७ बीघा, लश्करपुर में २५ बीघा ७ विस्वा कुल मीजान ६५३-५ आदमनी १४७ रु० मर्दन शुमारी १५।

चौबे जी का मन्दिर संवत् १८३४ में निर्वाण हुआ था। सुन्दर और मजबूत बना है। इस मन्दिर में गणेशोत्सव बड़ी धूम धाम से मनाया जाता था। उस समय जब कि महाराजा सिंधिया का राज्य था और धर्मप्रेमी शासक थे। अब इस धार्मिकता का अभाव है।

इस मन्दिर के पुजारी पं० नाथूराम जी चौबे थे, जिनके दो लड़के हैं। इनकी इस मन्दिर से लगी जागीर पड़रिया नामक ग्राम रंगई के निकट है। सं० १९९२ में पं० नाथूराम जी का स्वर्गवास हो गया, ग्राम कोर्ट आफ वार्ड की निगरानी में ले लिया गया। उस समय उनकी पत्नी ने २९ सनदें सुप्रिन्टेन्डेन्ट सा० को पेश की थीं जो वापिस नहीं दी गईं। पड़रिया का मिसल नं० [illegible] तहसील भेलसा में देखें।

✠

विदिशा के हिन्दूधर्म समाज के मन्दिरों की

नामावलि

१—त्रिवेणी घाट पर रामचन्द्र देवालय।

२ - चरणतीर्थ पर खण्डेराव जी शिवालय।

३ - टूटा हुआ शिवालय चंदेलों का।

४—छतरी शिवजी की विश्रामघाट।

५—छतरी शिवजी की लखेरा घाट के ऊपर।

६—चरणतीर्थ महाप्रभु जी की बैठक माहेश्वरी समाज।

७—महन्त कांकड़े राव की बगिया।

८—टीले पर मंगलदास का मन्दिर।

९—विजय मन्दिर।

१०—लछमन भोई का देवी का मन्दिर।

११—बाला जी का मन्दिर, गरुड़ मन्दिर, राम मंदिर, कृष्ण मंदिर। यहाँ पर चार मंदिर हैं। लेख नहीं है। किंवदन्ती के आधार पर, लाला प्रयागदास कायस्थ समाज जागीरदार विदिशा द्वारा मंदिर का निर्माण काल १८०१।

१२—रूपा की बजरिया में श्रीराम जी गुलाबचन्द्र जी पीपर खेरे वाले पुत्र श्री रेवाराम जी के पौत्र श्री उमाशंकर जी भृगुवंशी ने कृष्णेश्वर महादेव की स्थापना शुभ मिती वैशाख सुदी ५ सं० १९५१ में कराई।

१३—विजय मन्दिर के सम्बन्ध में पं० जय जयराम जी कार्तिकचौक विदिशा का कहना है—

विजय मन्द्र बना नग्र भेलसा ठाम।
संवत इन्दु विन्दु वसु सिन्धु के मांहि॥

अर्थः—इन्दु का अर्थ=चन्द्रमा १; बिन्दु का=शून्य । वसु=अङ्क आठ । सिन्धु=समुद्र १ ।

१४-चौबे जी के मंदिर के पास फणीस साहब का मन्दिर ।

१५-ढोली बुआ का मंदिर दक्षणी ।

१६-नन्दवाना में बड़े बाला जी का मंदिर ।

१७-लक्ष्मीनारायण का मंदिर ।

१८-रामा किशन जी चन्देरी वालों का राधाकृष्ण मंदिर ।

१९-एक मंदिर गाड़ी अड्डे में शंकर जी का है ।

२०-पावर हाउस पर हनुमान जी का मंदिर हैं ।

२१-रामकुंअर बाई भारतन गुसाइं का मन्दिर ।

२२-शिवालय अप्पा जी राव ।

२३-समाधि जैन भट्टारक विश्राम घाट ।

२४-औघड़ का मन्दिर विश्राम घाट ।

२५-छतरी शिवजी पोकरदास मानकचन्द्र की धर्मशाला के पास । माहेश्वरी समाज ।

२६-धर्मशाला भड़भूंजा समाज ।

२७-धर्मशाला अहीर अजुद्दीलाल ।

२८-मन्दिर सरयूदास का ।

२९-हवेली में रघुनाथ जी का मन्दिर ।

३०-गुप्तेश्वर महादेव मन्दिर ।

३१-व इन्हीं का एक मन्दिर भी है ।

३२-मूलचन्द्र जी जटाधारी का सत्यनारायण जी का मन्दिर ।

३३-राम मन्दिर दक्षणी समाज ।

३४-रंगियापुरा में चमारों का मन्दिर ।

३५-श्री जी का मन्दिर ।

३६-श्री विश्वम्भरदयाल सक्सेना वकील भेलसा ने एक धर्मशाला व महारानी सिंधिया की मूर्ति निर्माण कराई थी । अब महारानी सा० के बजाय शंकर जी की मूर्ति विराजमान की गई है, माधव गंज में ।

३७-त्रिवेणी घाट पर रामचन्द्र जी के पुत्र प्रानचन्द्र जी गनेशराम जो दिगम्बर जैन परवार छोवर मूर फागुल गोत्र खेरुआ निवासी जिनके पुत्र मोतीलाल जी के चिरंजीव गोरेलाल; सुमत प्रकाश, मलूकचन्द्र हैं इनकी सत्ती हैं रामचन्द्र देवालय के सामने और सिंघई मोतीलाल जी, चम्पालाल जैन की सत्ती की छतरी और घाट चरणतीर्थ पर है ।

X

विदिशा के दर्शनीय स्थान

इस परम पवित्र विदिशा नगर में दर्शनीय स्थान हिन्दू धर्म के मुख्य मन्दिर जिनमें उत्कृष्ट सांस्कृतिक कला और विज्ञान की दृष्टि से इन्जीनियर लोगों को आश्चर्य में डालने वाली बाला जी के मन्दिर की छत हैं। एक बार इन्जीनियरिंग पढ़ने वाले विद्यार्थी और पढाने वाले प्राचार्य महोदय अवश्य देखें। इस छत की विशेषता—

इस छत में जिसकी लम्बाई लगभग ३५ फुट समानान्तर चौड़ाई में कोई सहतीर या गाटर वगैरह नहीं लगे हैं न कोई आर० सी० सी० का ही सिमेंटेड कार्य किया गया है किन्तु छोटे छोटे पत्थर की पट्टियों के जोड़ अवश्य दिखते हैं। छत एकसी लेबिल में है। यह छोटे बालाजी का मंदिर कहलाता है।

इस मन्दिर के सामने एक छोटा मन्दिर है जिसमें गरुड़ जी की मूर्ति है जो एक अद्वितीय कला और संस्कृति की हैं। इसके निकट में ही चौबे जी का मन्दिर है।

ग्वालियर राज्य के समय यहां गणेशोत्सव राज्य की ओर से बड़े उत्साहपूर्वक मनाया जाता था, किन्तु हिन्दू जाति के दुर्भाग्य से वह सांस्कृति सभ्यता धार्मिक प्रेम हिन्दूवंश परम्परा नाममात्र को ही रह गई है। यह गणतन्त्र राज्य की धार्मिक निष्ठा का एक नमूना।

नई खूबी नई आदत, नये अरमान पैदा कर।

तू अपनी खाक से, इक दूसरा इंसान पैदा कर॥

खाम बाबा जिसे भगवान विष्णु का वाहन गरुड़ है। विष्णु के मन्दिर के सामने था। विष्णु मन्दिर नष्ट हो चुका है। यहां पर एक कनारी के आकार का एक बहुत बड़ा पत्थर था जिसे ग्वालियर राज्य के समय बड़ी हिफाजत के साथ ले जाया गया है। किंवदन्ति है कि उसमें जवाहारात थे इस कारण से ले जाया गया है। इसे तात्कालिक राज्य शासन का रिकार्ड ही बता सकेगा।

इस खाम बाबा के सामने दक्षिण दिशा की ओर वैस नदी को पार कर दृष्टि डालेंगे तो आपको त्रिवेणी संगम पर राम जानकी का मन्दिर है। यहां पर पुरातत्व विभाग केन्द्रीय ने खुदाई की थी उसमें किले की दीवार के आसार मिट्टी के पाईप गंदे पानी के, मूर्तियां तथा अन्य सामग्री निकली किन्तु जनता के समक्ष नहीं बताई गई और न कोई इस सम्बन्ध में जानकारी ही दी गई जब भी हमें जाने और देखने की लालसा रही छिपाव ही रखा गया।

इस मन्दिर के पूर्व में सूबा खंडेराव जी का बीच बेतवा नदी में शिवालय सुन्दर और मजबूत ऊंची कुर्सी देकर बनाया गया है। यहां पर दो मन्दिर हैं।

इस दूसरे शिवालय के नीचे माहेश्वरी समाज की बल्लभकुल सम्प्रदाय की बनी हुई है। इसी

के पास एक मन्दिर औंधा पड़ा हुआ है। इसी के बगल में चन्देले राजपूतों के प्रभुत्व की स्मृति और अंतिम दशा की प्रतीक धर्मशाला बनी किन्तु उनके बंशज उसे पूरा करने में असमर्थ हो रहे हैं आज की सन्तति अपने पूर्वजों के नाम पर कालिमा तो लगा सकती है किन्तु उत्थान में नहीं ला सकती। आशा है कि उसे वंशजगण समुन्नत बनायेंगे। इसके दक्षिण की ओर गिरधारीलाल श्री अग्रवाल जिनके वंश की प्रतीक केवल यह सीढ़ियां ही शेष हैं।

विदिशा के वेत्रवती नदी पर घाट

(१) दाऊदपुरा घाट, (२) त्रिवेणी घाट, (३) चरणतीर्थ घाट, (४) विश्राम घाट; (५) तमोलियों का घाट, (६) तेलियों का घाट, (७) हनुमान घाट, (८) लखेरा घाट, (९) ताम्रकार घाट (१०) हरदेव हरनारायण अग्रवाल घाट, (११) केवगल में एक घाट, (१२) महलघाट, (१३) चोर घाट, यहाँ पर प्राचीन सूर्य की मूर्ति और गंगा की मूर्ति प्राप्त हुई थी जो संग्रहालय विदिशा में [illegible] है। तथा और भी कई मूर्तियां यहाँ पर हैं तथा मूर्तियों की जिलहरी काफी तादाद में नदी में पड़ी हुई हैं। (१४) बैरा बाबा घाट, (१५) रामघाट, (१६) सुनपुरा घाट, (१७) मौआ घाट; (१८) मढ़ा घाट, (१९) बंगला घाट, (२०) बन्दा घाट, (२१) रंगई घाट, (२२) भोंर घाट, (२३) बेरखेड़ी घाट तक मछलियों की व अन्य किसी जीव की शिकार करना ग्वालियर राज्यान्तर्गत कतई बन्द थी। किन्तु मत्स्योद्योग के विधान प्रस्तुत कर्ता हिंसक प्रवृत्ति धारक मांस लोलपियों ने इस अहिंसक भारत को माँसाहारी बनाया है। क्या यही मानवीयता और मानवता है या दानवता ?

अय सिंहपुरुष कहलाने वाले अविवेकियो ! तुम्हारा पुरुषार्थ विषयों के पोषण के लिये नहीं। जैसा मांसाहारी सिंह है वैसा तुम्हारा पुरुषार्थ यह पहला मुख—(१) तुमने राज्यलक्ष्मी के भोग के लिए एक मृगी जो राज्यलक्ष्मी है जिसके विषयों का भोग कर रहे हो तुमने भोगने की लालसा से दोनों हाथों से राज्याधिकार की कुर्सी जिसकी चारों टांगें दोनों हाथों से पकड़ रखी हैं रसास्वादन ले रहे हो काम पुरुषार्थ है। अर्थ पुरुषार्थ को सिर पर बिठाया है। धर्म पुरुषार्थ और कल्याण की भावनाओं को भूले हुये हो यही चार पुरुषार्थ के चार मुख हैं। इनके विपरीत अर्थात् बाधायें आने पर विषय भोगियों को चार कषायें पैदा होती हैं। वह क्रमशः—क्रोध, मान, माया, और लोभ यह चार मुख हैं। रसास्वादन जिव्हा तक ही रहता है। क्षणभंगुर है। अपनी इन्द्रियों पर संयम न रखने वाला ही क्रूर प्रवृत्ति धारण कर लेता है। क्या यह राक्षस नहीं है। दश मुख एक सिंह, चार पुरुषार्थ, चार कषाय, एक मूर्खता का जिसे गधे का मुख कहते हैं इस प्रकार से दश मुख होने से दशानन कहलाने वाले राक्षस की मूर्ति रावण ग्राम में एक तलैया के किनारे पर पड़ी हुई है। मानव इस वक्त काल भैरव बना हुआ है। यह मूर्ति भी रावण ग्राम के अन्दर है। काल भैरव नंगा क्यों है ? परिस्थितियों के कारण। पूर्ति के लिये भिक्षा पात्र हाथ में है। पूर्ति होने पर शासन करता है कृपाण हाथ में है। तीसरे हाथ में जो एक मानव का सिर है वह अपना स्वार्थ और दूसरे का विनाश बतलाता है। कुत्ता खून पी रहा है। हमारी नीति भ्रष्टाचार कर खून चूसने की बन गई है। डमरू हाथ में मदारी का प्रतीक है। हम तमाशा दिखा रहे हैं। हमारे हृदय पर पड़े सर्प छल कपट के प्रतीक हैं। मुंडमाल क्रोध, मान, माया, लोभादि की प्रतीकात्मक है। ऐसा कौन मानव है जो इस बात से बचा हुआ है ? पूर्वाचार्यों ने जो मूर्तियां

निर्माण कराई उनसे शिक्षा लेना चाहिये। इसलिये भारत में वह देवता के रूप में आराध्य माने गये हैं।

शिलालेख (राम घाट) विदिशा, वेत्रवती तट

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

भिल्लस्थानमिति प्रसि नगरं, देशेष्युचात्युत्तमम् ।
श्रीमद्वेत्रवतीतटे द्विजघटे, रामानि रामोदेवटे ॥
तत्रेवाति मनोहरैस्याति वस्यन्न मघट्टाभिधं ।
तस्मिन् न्दरमन्दिरे विरचितं, शंभोः प्रियं मुक्तिदं ॥१॥
सीताराम-प मधुपो, पम्येन दामोदरस्यो ।
रस्येनछनमन्दरायविलसन्नात्मा सत्कीर्तिना ॥
कृत्वा मंत्रिवरं सहाय सुहृढं श्रीलालबा ।
रात्त शंकरपादकंज युगलेह त्रंहिजाया हरात ॥२॥
चुन्नीलाल धनीपणे र रिपोः पूजार्यमाज्ञापिते ।
पुत्रायाशुर मेगभक्तिदयतः प्राणाहिचन्दस्यवै ॥
उपासद्धपसगत शुभ कर सद्धर्म शालेयुतं ।
कर्पूरोघधिनाथ कालि सहृशं खंडं पवोयेरिव ॥३॥
विशेष कुमिदं प्रोक्तं केवलं सांव वर्णनं ।
सवोसेषरूढ़ द्रुति श्रुति रघाह सादर ॥४॥
कर्ता कारयिता चैव स्थानं मुनिश्च पूजकः ।
द्रव्याणि चान्यर्घार्किचित् सर्वं शिवमयं स्मृतं ॥५॥
रामाकनाग भुयुक्तेवत्सरे माधवे सिते ।
द्वाद्धगो भार्गवो पेते प्रतिष्ठास्यव्यद्योनवीत ॥६॥

श्री अनन्तेश्वर जी की स्थापना संवत् १८९३ शाके ९५६ मिती वैशाख सुदी १२ शुक्रवार शुभं भवतु मंगलं।

भावार्थ—भेलसा नामक प्रसिद्ध नगर में बेतवा नदी के किनारे मुनि और भव्य धर्मप्रेमी जिज्ञासुओं की आत्मा को शांतिदायक पूजा का स्थान भगवान राम जानकी (राम सीता) एवं

राधा कृष्ण, तथा शिवालय का निर्माण कराकर मूर्तियों की प्राण प्रतिष्ठा कराई ऐसे श्री घननन्दराय जिनकी सत्कीर्ति करने में सहायक मंत्री श्री लालबाघ, चुन्नीलाल जिनके पुत्र भगवतभक्ति में दत्तचित्त हैं इस मन्दिर घाट और धर्मशाला की प्राणप्रतिष्ठा कराने के पश्चात् भार्गव समाज के पंडित को पूजा पाठ के निमित्त सुपुर्द किया।

वेत्रवती नदी के बहाव के नीचे की ओर एक बैराबाबा नामक घाट है। घाट पक्का बना है। घाट के ऊपर एक हनुमान जी का सुन्दर मन्दिर है और एक धर्मशाला सेठ देवीदास सूरजमल महेश्वरी की बनवाई हुई है। यह घाट भी लगभग १०० या १२५ वर्ष पूर्व का निर्माण किया हुआ प्रतीत होता है। इसमें कोई निर्माणकर्ता का लेख नहीं है।

पूर्व शासकों की अक्षुण्ण अहिंसा और वर्तमान के शासकों की अहिंसा का

अन्तर-प्रदर्शन का एक चित्रपट

१—सूचना पत्र

मिसल क्रमांक २७-०-३१ / २००१ मिसल क्रमांक ११-०-३१ / २००३

कार्यालय सूवात जिला भेलसा

विषय—बेतवा नदी में शिकार का निषेध के सम्बन्ध में

बनाम—राजमल जैन मड़वैया विदिशा (भेलसा)

जर्ये हाजा आपको सूचित किया जाता है कि यदि जो प्रार्थना पत्र भेलसा निवासियों की ओर से आपके द्वारा प्रस्तुत हुआ था उसके सम्बन्ध में कष्ट दिया जाता है कि यदि आप मछली का शिकार नदी बेतवा में रंगई पुल तक न की जाने बावत मुमानियत चाहते हैं तो कृपया ट्रेसिंग पेपर वास्ते ड्राइंग नक्शा कार्यालय तहसील में प्रस्तुत करें। हे वि०

हस्ताक्षर—(मराठी)
३०-१-५०
असिस्टेन्ट माल

हस्ताक्षर (अंग्रेजी) अधिकारीगण
३०-०

ट्रेसिंग पेपर हस्ते श्री रामजल जी मड़वैया से प्राप्त हुआ तो वास्ते मुरत्तिब पता तहसील में क्रमांक १२२३ माखाना १ भेजा गया।

७-२-५०

हस्ताक्षर अंग्रेजी ९-२-५०
नम्बरान नदी बेतवा २४००

वाटर वर्क्स १८॥ २
११॥ २

३९९
३९९
१। २

रामघाट
८॥। २

महल घाट
२३९४ — २३१६

महल घाट ——————— चरणतीर्थ ———

२८ ४ १

पुतली घाट के सामने से कच्चे पुल मोजा रंगई के नम्बरान

५ से १४ | १५ १६ | ४७ | १५१ १५१

१ २ ६,३ | १०॥। १ १ २

९-८ | ७ ७। ४ ५। ४ १०

---

१ से नम्बर २ | २२ चोर घाट तक

—— ——

१ १

मदन खेड़ा के नम्बरान — १ — व १४ है। दौलतपुरा के नम्बरान ४ है

——

१

२—सूचना पत्र

आम खेड़ा के नम्बरान भट्टों से भोंर घाट तक

१ से २ । १२ तक

---

१ १—३ १

७॥ १ २९। २

रंगई भोंर घाट से पुतरी घाट के सामने तक

श्रीमान प्रेसीडेन्ट ओकाफ कमेटी

परगना भेलसा

विषय—

चाराब[illegible]ी बेतवा नदी के दोनों किनारे शिकार निषेध के सम्बन्ध में

निवेदन है कि गजट दिनांक ३-११-३४ सफा क्रमांक ९२५-९२६ में बेतवा नदी में शिकार नहीं करने के सम्बन्ध में आदेश प्रसारित हुए हैं। उसमें क्रमांक २४०० लगायत २३१६, २ भेलसा से ४८, १ दाऊद का पुरा तक शिकार की मुमानियत की गई है। इस फासले के अन्दर रंगाई पुल नहीं आता है बस प्रार्थना है कि रंगई पुल तक सरहद कायम फरमाई जावे। दिनांक २७-११-४२

अर्जी फिदवी

वासिन्दगान कस्बा भेलसा

मिसल क्रमांक ५, ३१

८२ गवर्नमेन्ट

हस्बुल हुक्म कौंसिल आलिया ग्वालियर गवर्नमेन्ट तारीख ८-८-१९३४ ई० हर खास व आम को आगाह किया जाता है कि नदी बेतवा में घुवघटा से दाऊद पुरा तक नदी बेतवा में तथा बेस नदी में से त्रिवेणी के आगे तक दोनों नदियों के दोनों किनारों पर व फासले लम्बाई सवा मील व चौड़ाई में किनारे से दो-दो जरीब तक शिकार खेलने की मुमानियत की जाती है। अगर इसकी कोई खिलाफवर्जी करेगा तो वह मुस्तेजब सजा हस्ब दफा २८६ मजमुआ ताजीरात ग्वालियर संवत् १९८२ होगा ।

सूवा (जिला भेलसा)

❋

जमीमा ग्वालियर गवर्नमेंट गजट तारीख २० फरवरी सन् १९३२ ई०

होम डिपार्टमेन्ट

सेक्सन ओकाफ

मि० नं० ८०/८५ १७ ओकाफ

सरक्यूलर नं० ३ संवत् १९८८

अक्सर देखने में आया है कि मुमानियत शिकार की बावत जो सिफारिशें व नकशे वगैरह सूवा साहब की तरफ से महकमें हाजा में मौसूल होते हैं, वह ना मुकम्मिल होने की वजह से उनकी तकमील कराने में बहुत वक्त जाया होता है। और मुआमले भी वक्त पर तय नहीं पाते हैं। लिहाजा इस दिक्कत और रफा करने की गरज से हस्बुल हुक्म कौंसिल आलिया तारीख २३-८-३१ ई० यह स्टेंडिंग फार्म जर्ये सरक्यूलर हाजा जारी किया जाता है कि आयन्दा अगर मुमानियत शिकार की बावत कोई शिकार की सिफारिश की जावे तो फार्म मुसलिका हाजा के कलमों की खानापूरी पूरी तौर पर करके मय नकशे दो दो परती के भेजने की पावन्दी रखी जावे ।

सदाशिवराव पंवार
होम मेम्बर

फार्म मुताल्लिक इस्तदुआ मंजूरी मुमानियत शिकार ।

१- मुमानियत शिकार की किस मुकाम पर जरूरत है ।

२—मुकाम मजकूर मुतर्वरिक किस वजह से माना जाता है, और कौन लोग उसको मुतर्वरिक मानते हैं ।

३—मुकाम मजकूर पर मुमानियत शिकार होने बावत किन लोगों की ख्वाहिश या दरख्वास्त है।

४—जिस मुकाम पर मुमानियत शिकार की ख्वाहिश है उस मुकाम का कायदा स्केल में ट्रेसिंग क्लाथ पर बना हुआ नकशा दो परती इस फार्म के साथ नत्थी किया जावे । और उसमें

मुकामात मन्दिर घाट वगैरा बाकायदा दिखावे जावें। और जिस कदर हिस्से में मुमानियत शिकार की जरूरत है वह हिस्सा सुर्खी से बताया जावे।

५—जिस कदर हिस्से में मुमानियत शिकार की जरूरत है। उसकी लम्बाई और चौड़ाई और सिम्त के हृद हुकूक के कुदरती निशानात का भी इजहार किया जावे।

६—अगर मुमानियत शिकार में किसी शख्स, अशखास या किसी फिरके के लोगों को उज्र हो तो वह उजरत क्या है और वह काबिले मानने के हैं या नहीं, अगर नहीं तो किस वजूहात से, यह बतलाया जावे।

दायरा तारीख २९-१०-१९३४

रजिस्टर नंबर ८८२
———
२९-१०-१९३४

२४१०
मि० नं० ५
———
८९

३१ फे० नं० १७

सेक्रेट्री ओकाफ डिपार्टमेन्ट ग्वालियर गवर्नमेन्ट	कहून

रा०

सूबा साहब

जिला भेलसा । ग्वालियर गवर्नमेन्ट

मुकाम मोती महल तारीख २६-१०-३४ ई० संवत १९९१

वि० वि०

व मामले मुमानियत शिकार वाके भेलसा रंगई पुल से त्रिवेणी घाट तक परगना भेलसा जिला भेलसा।

आपकी जानिब से जर्ये पत्र नं० ५०२ तारीख २२-७-३३ नकशे हुदूद दाखिल होकर मामला हाजा कौंसिल आलिया में पेश किया जाकर पर हस्ब हुक्म कौंसिल आलिया तारीख ८-८-३४ हुदूद नदी वेतवा में नम्बर २४०० भेलसा से नं० २०३० दाऊदपुरा तक व बेस नदी में नं० १४८ से ३२२ त्रिवेणी के आगे तक दोनों नदियों के दोनों किनारों पर व फासले लंबाई सवा मील व दोनों किनारों पर चौड़ाई दो दो जरीब तक शिकार खेलने की कतई मुमानियत की जाती है।

अगर इसकी कोई खिलाफ वर्जी करेगा तो वह मुस्तेजिब सजा दफा २८६ मजमुआ ताजीरात ग्वालियर संवत् १९८२ होगा।

एक परत नक्शा बाद दस्तखत जनाब प्रेसीडेन्ट साहब वापिस किया जाता है। मौके पर मुमानियत शिकार की बाबत एक शाईन बोर्ड में मुमानियत शिकार और हुदूद की इबारत कन्दा कराई जाकर लगाया जावे और हुदूद पर चीरे नस्ब करा दिये जावें।

महकमे हाजा से नोटीफिकेशन वास्ते इशायत प्रेस को भेजा जा रहा है।

हे वि० हस्ताक्षर अंग्रेजी

मा० १ सेक्रेट्री

ब० प्र० औकाफ डिपार्टमेंट

१६-१०-१९३४

महकमे सूबात जिला भेलसा

नोटिस

बनाम- हर खासो-आम

ब मामले मुमानियत शिकार वाके भेलसा रंगई पुल से त्रिवेणी घाट तक
परगना व जिला भेलसा

हस्बुल हुक्म दरबार हर खास व आम को जर्ये हाजा आगाह किया जाता है कि हुदूद नदी बेतवा में नं० २४०० भेलसा से नं० २३३० दाऊदपुरा तक व बैसनदी में ३४८ से ३२२ त्रिवेणी के आगे तक दोनों नदियों के दोनों किनारों पर चौडाई दो दो जरीब तक शिकार खेलने की कतई मुमानियत की जाती है।

अगर कोई शख्स इसकी खिलाफवर्जी करेगा तो वह मुस्तेजिब सजा दफा २८६ मजमुआ ताजीरात ग्वालियर संवत् १९८२ होगा।

फक्त तारीख मि० नं० ५
———————३१
८९

✠

सांकल कुआ के शिलालेख की मूल-प्रतिलिपि

श्री गणेशाय नमः। श्री भद्रावती नाम नगर्यां नर्मदा उत्तर भागे विक्रमार्क समयातीत १८४४ कु——नर्मदा दक्षिण भागे श्रीमन्नृपति शालिवाहन शके १७०९ प्लवंगा———सनक्षत्रे शिवयोगे तद्दिनेराजेश्री गपुजा नन्दराव क्षे—— निवासिना कूपः कृतः गंगा सागराभिधान प्रतिष्ठितं धर्मार्थकाम मोक्षाणां शुभं——कारीगर सुगर सिलावट।

भावार्थ—

इस शिलालेख से यह स्पष्ट होता है कि इस नगरी विदिशा का नाम भद्रावती पूर्व में

था और यह भी स्पष्ट है कि इस नगरी से नर्मदा नदी दक्षिण भाग में है और इस कुयें का नाम गंगासागर है। निर्माता का नाम अस्पष्ट है अक्षर टूट जाने से।

नीम तालाब का शिलालेख —

यह बन्द बहुक्म हुजूर श्रीमन्त सरकार महाराजा माधवराव साहिब सिंधे आलीजा बहादुर दाम मुल्कहू व अहतमाम सीगे आबपाशी तैयार हुआ। संवत् १९५० सन् १८९४।

सिंधिया शासन की अहिंसा

जमीमा ग्वालियर गवर्नमेंट गजट, ता० ९ अगस्त १९४१ ई०

डिपार्टमेंट आफ ला एन्ड जस्टिस

मि० नं० १८९ का० मुत०
——
९६

करेक्शन स्लिप नं० १६ ता० ६ अगस्त १९४१ ई० मुताल्लिक मजमुआ ताजीरात रियासत ग्वालियर संवत् १९८२ मजमुआ ताजीरात रियासत ग्वालियर संवत् १९८२ को दफा २८७ के दूसरे पैराग्राफ की मौजूदा इबारत के बजाय हस्बजैल इबारत कायम समझी जावे। और अगर कोई शख्स खरीद व फरोख्त गोश्त मादा गाय या नर गाय करे या इन जानवरों के गोश्त को फरोख्त करने की नियत से या खाने के स्तेमाल में लाये जाने की नियत से अपने कब्जे में रखे तो उसको दोनों किस्मों में से किसी किस्म की कैद की सजा दी जा सकेगी। जिसकी म्याद २ साल तक हो सकती है या जुर्माने की सजा या दोनों सजायें दी जायेंगी।

गोविन्दराव कृष्णराव शिन्दे
मिनिस्टर फार ला एण्ड जस्टिस

अदालत डि० जज भेलसा

नं० मु० ४८
——— इ० फौ०
९९

सरकार जर्ये कस्टम डिपार्टमेंट
बनाम
मुनीर शाह फकीर सा० चौपड़ा

शासन की चोरी से काटने के लिये ले जाते पकड़ा दिनांक ८-११-४२ और ३ माह कच्ची जेल भुगतने के पश्चात् ४ रु० जुर्माना कर छोड़ा गया।

गिरफ्तार कुनिन्दा
राजमल मड़वैया, विदिशा

अदालत सुप्रिन्टेन्डेन्ट कस्टम एण्ड एक्साईज
जिला विदिशा

मि० नं० ७५ / ९९   २ / ७

दैनिक हिन्दुस्तान दिनांक १७-१२-४२

श्री बामनराव जी रेवाड़ी कर [illegible] कस्टम पोष्ट भेलसा व श्री गोपाल सहाय सुप्रि० पुलिस भेलसा की सहायता से मुहब्बतसिंह कानि० नं० ५८ दिनांक १७-१२-४२ द्वारा पीपलखेड़ा की हाट में से जाते हुए ११ कसाइयों को सरहद्दी पर गिरफ्तार कराया था जिनके पास बिना रवन्ना या चालान के ५ बैल १ पड़ा गिरफ्तार किये थे जिसकी ता० पेशी २७-८-४३ अदालत डि० सवजजी भेलसा में थी यह अपराधी जुर्म नं० ८४ कस्टम एक्ट २ व ११ के तहत गिरफ्तार हुये थे यह बैरसिया इलाका भोपाल के रहने वाले थे। खेमचन्द्र खंगार चौकीदार बेंवची का भी सहयोग रहा था इस समय गोविंद गोपाल सायरदार ने बड़ी सहायता दी थी। चिट्ठी नं० ८१। १७-१२-४२। आबक क्र० १०५३४ / २५-५-४३ मि० नं० ७५ / ९९ । २ / ७ मुकदमों में कामयाबी मिली और २५ ग्वालियर राज्य से पुरस्कारादि भी प्राप्त हुये। यह थी सिंधिया शासन की अहिंसा।

चरण तीर्थ घाट

आपा खंडेराव जी सूबा भेलसा ने अपने शासनकाल में स्मृतिरूप इस घाट का निर्माण कराया। और बीच नदी में विशाल शिवालय निर्माण कराया यह हैं। उनकी धार्मिकता और भगवत् भक्ति का आदर्श। जो व्यक्ति धर्मात्मा नहीं वह प्रभुता प्राप्त कर भी पशु के तुल्य है। (धर्मेण हीना, पशुभिः समानाः)

मन्दिर के पीछे दक्षिण दिशा की ओर एक चबूतरे में दिगम्बर जैन धर्म की मूर्तियां हैं जोकि विजय मन्दिर की निकली हुई हैं जो जैन धर्म और हिन्दू धर्म के समन्वय की द्योतक हैं।

शिलालेख

दक्षिण दिशा में एक चबूतरे पर एक पत्थर में सती लेख है।

अथ श्री विक्रमादित्य राज्य संवत् १८४१ शाके १७०६ मिती मगसिर सुदी १३ बुधवार ता दिन सती नदी धर्म भागवत वेद परस्त पं० सूबे जी पारासर गोत्र भार्गव बूलचन्द्र जी तस्य पत्नी पतिव्रत परायण श्री वाकीलद्य वारा सरग पनकि श्री तिनकी आज्ञा से ये वह सावत सिंघ मुण ने चोंतरा गत बनवायो शुभं भवतु।

माहेश्वरी बल्लभ कुल संप्रदाय

इस सती के पूर्व दिशा की ओर एक शिखर बन्द शिवालय है। इसके दरवाजे के बाहरी ओर दो खंभे हैं जिनमें प्रति वर्ष कार्तिकी पूर्णिमा के दिन प्रातःकाल दीपक भी जलाये जाते हैं और मेला भरता है।

इस मन्दिर के नीचे एक छोटी मढ़ी बनी हुई है जो बल्लभ ल संप्रदाय महेश्वरी समाज की है और महेश्वरी समाज इसकी पूजन आदि करते हैं।

सीढ़ियाँ

इस मन्दिर के पीछे दक्षिण की ओर विदिशा के पुराने मार्ग पर चाऊ काट कर जो सीढ़ियाँ बनवाई गई हैं वह अग्रवाल जाति के रत्न श्री गिरधारीलाल जी जो लवाईगरी का कार्य करते थे गरीब परिस्थिती के धर्मात्मा सज्जन थे इनके कोई संतान नहीं हुई और धार्मिक भावना के कारण अपने जीवनकाल की स्मृति में जनकल्याण को मार्ग की कठिनता को सरल बनाने की हुई और जिसे लगभग सं० १९८५ के बनवाई थीं।

चरणतीर्थ के जाने का पुल

अचानक कभी कभी वर्षाकाल में चर्णतीर्थ पर दर्शनार्थी बाढ आ जाने से कई दिनों तक मन्दिरों पर रुक जाया करते थे क्योंकि यह मन्दिर नदी के बीच में है। विदिशा निवासी पं० मूलचन्द्र जी जटाधारी ने सतत् प्रयत्न कर प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत मध्य भारत शासन-काल में श्री मुख्य मन्त्री बाबू तखतमल जी से माघ शुक्ला ८ रविवार संवत् २०१२ दिनांक १९ फरवरी सन् १९५६ को सम्पन्न करवाया। सीढियों से लगा हुआ ही यह पुल है।

चरणतीर्थ घाट के चबूतरों पर

चरण पादुका में शिलालेख मिती फूस सुदी ८ संवत १९७० खुदा हुआ है।

द्वितिय चरणपादुका लेख

शंकरलाल माली भोपाल निवासी ने अपने पूज्य पिता जी की स्मृति में जेठ वदी ४ सं० १९९४ में निर्माण कराये।

श्रमण संस्कृति और चरणतीर्थ

चरणपादुका के उत्तर की ओर एक चीरे में जैन मूर्ति के भग्नावशेष में एक लेख में सं० के अंक टूट चुके हैं अन्तिम अंक ३२ वर्ष फूस सुदी १० वि० घोल्हण प्रणमति नित्यं लाल रंग के पाषाण में उत्कीरित है। इससे स्पष्ट है कि किसी श्रवण संस्कृति के स्नातक जिनधर्मावलंबी ने श्रमण आचार्य के सदुपदेश से मूर्ति का निर्माण कराकर प्रतिष्ठा कराई हो।

इश्तहार

आपा श्री खंडेराव जी के मन्दिर पर एक शिलालेख में लिखा है, वह निम्न है—रामघाट से त्रिवेणी घाट तक बेतवा नदी के दोनों किनारों पर शिकार खेलना, बुरे कपड़े धोना, मुर्दों की राख डालना मना है। मि० नं० ३-७४-१७

रूपनारायण दरसूवा, भेलसा।

चंदेल वंशी राजपूतों का प्रभुत्व

यवनों के आक्रमण के पूर्व क्षत्रियों ने अपनी वीरता का दुरुपयोग किया। एक दूसरे को लूटता था। जब मुगलों का आक्रमण हुआ और मुगल इन राजपूतों के यहां आश्रित होकर रहे इनकी फूट और प्रतिक्रिया को देखा तो वह इन्हीं राजपूतों के पथ प्रदर्शक बने और मुगलों ने इस प्रांत में अपनी राजधानी कायम कीं। जैसे भोपाल, कोरवाई, पठारी, हैदरगढ़-बासौदा और भेलसा (विदिशा) विदिशा में रायसेन दरवाजे के अन्दर जो मसजिद है उसमें यह लिखा है—

बनाई मसजिद दरवाजा शहर जीविद मिरजा हुसेन दर शहर हाकिम व अदद खुशरो साहब कुरान शुद के शहराज अदल वजून गुलिस्ताने शुद वजी वजह दस्त संयदी याकूत जो जनमसाल तारीख तमाइश बनाई मसजिद खुदराज मन्न शुद खुरूखशा खातिर निशाब शुद।

हिजरी १००० रौत कजशाह लोदकिन मंजा। सं० २०२० इस मय है और हिजरी सन् १३८३ है इसलिये इसे ३८३ वर्ष हुये।

इस समय इन चंदेल वंशी राजपूतों का दौर दौरा अच्छा खासा था। ग्वालियर महाराजा ने इन्हें जागीरदार बनाकर सम्मानित किया और हुकूमत सिंधिया नरेश की रही। इन्होंने चरण-तीर्थ पर मन्दिर और धर्मशाला में सुन्दर सुन्दर जालियों की एक धर्मशाला बनवाई जो अधूरी हैं इनके अभाव में वंशज विपरीत मार्गी मद्यपी कर्तव्यहीन और अयोग्य मंत्रियों के कारण न बनवा सके और अपने गौरव को खो दिया।

गणतन्त्र राज्य में विलीन यह जागीरें हो गईं। जिन राजपूतों ने अपनी मान मर्यादा को स्थित रखने के लिये जीवनाहुति दी थीं वह आज भी सूर्य के समान चमक रहे हैं। वह इस प्राचीन सांस्कृतिक वैभवयुक्त कलामय मूर्तियों में आज भी चिरजीवी हैं। जिनकी न्यायपरायणता और वीरता सदैव जीवित रहेगी।

जाकी जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान।
याते यश संचय करहु, लोग करें सन्मान ॥१॥

पूर्व वीर क्षत्री और वर्तमान क्षत्री में अन्तरप्रदर्शन

जिनकी आंखन तें रहे, वर्षंत ओज अंगार।
तिनके वंशज झेंपते, दृग झांपत सुकुमार ॥२॥

रहे रंगत रिपु रक्त से, समर केश निरवार।
तिनके कुल अब हीजड़े, काढ़त मांग संवारि ॥३॥

धारत हैं रण भूमि जे, अरि मुंडन को हार।
तिनके कुल के करत अब, सरस सुमन सिंगार ॥४॥

रह्यो सदा जिन हाथ को, यार एक हथियार ।
लखियतु अब तिन करन में, रमन-बाल ।.तहार ॥५॥
झूमत हैं अंह मस्त ह्वै, सहज सूर दिन रैन ।
लटक लजीले छैल तहं, मटकि नचावत नैन ॥६॥

निर्जीव राजपूत

दलित शीस पैं बाँधिकैं, रजपूती की पाग ।
कियो निलज ? नट-लों तऊ, बल-विक्रम को स्वांग ॥७॥
तुम रजपूतन में कहाँ, रजपूती की आस ।
प्रमदा-मदिरा-माँस के, भये आजु तुम दास ॥८॥
कुल में दाग लगाय धिक, बन्यो फिरत रजपूत ।
गरि-गरि गिरयो न गरभ तें, कादर क्लीव कपूत ॥९॥
मजबूती तो कहुँ नहीं, है सब काम निकाम ।
कहिवे कों बस रहि गयो, रजपूती को नाम ॥१०॥
कहा तुम्हें तलवार सों, है सब सूखी शान ।
मूंठ सुनहरी चाहिये, और मखमली म्यान ॥११॥
कुल कलंक कादर कुटिल व्यभिचारी बिन लाज ।
करत दुष्ट दावा तऊ, रजपूती को आज ॥१२॥
चाटत जग-पग स्वान ज्यों फिरत हिलावत पूंछ ।
बनत कहा अब मरद तें, यों मरोरिकैं मूंछ ॥१३॥

धिक्कार

जो देखत तुव भगिनी के, खेंचत पामर केश ।
जानि परत या बाहु में, रह्यो न बल को लेश ॥१४॥
रे निलज्ज ! जिनके अछत, अरिहिं झुकायो माथ ।
अब तिन मूंछन पैं कहा, पुनि पुनि फेरत हाथ ॥१५॥
निज चोटो बेटोन की, सके राखि नहिं लाज ।
धिक-धिक दाढ़ी मूंछ ए, धिक धिक दाढ़ी आज ॥१६॥

भखत माँस मदिरा पियत, ताकत परतिय द्वार ।
धिक तेरो जीवन मरन, लंपट चोर लवार ॥१७॥

मरि हैं नहिं कबहूं कहा, धसत न जो रण मांझ ।
उपज्यो कूख कुपूत तें, रही न क्यों विधि ? बांझ ॥१८॥

भाज्यो पीठ दिखाय यों, धस्यो न जूझन मांझ ।
तो सम कादर जनन तें, भलि क्षत्रानी बांझ ॥१९॥

अयोग्य नरेश

अपने ही तनु की न जो, तुम पैं होत संभार ।
झूठ मूठ फिरि बनत क्यों, प्रजा-पाल-रखवार ॥२०॥

या वसुधा को भाग भरि, भोगत भुज मजबूत ।
कहा भोगि है भूमि ए, कादर कूर कपूत ॥२१॥

जगत का मिथ्यात्व

परखतु जीवन जौहरी, प्रान-रत्न जहं गूढ़ ।
ता सांचे संसार को, कहत असांचो मूढ़ ॥२२॥

जा जग की रोटीन तें, सूझत अलख अनंत ।
मिथ्या ताको कहत ए, निलज निठल्ले सन्त ॥२३॥

विविध

करै जाति स्वाधीन जो, सांचो सोइ सपूत ।
यों तो कहुँ केते नहीं, कायर कूर कपूत ॥२४॥

जिन समशेरन तें कबों, कटे दुवन सिर हाय ।
तिनतें काटत घांस तुम, अब हंसिया गढ़वाय ॥२५॥

मतवारे सब ह्वै रहे, मतवारे मत मांहि ।
सिर उतारि सत धर्म पै, कोउ चढ़ावत नांहि ॥२६॥

चूसि गरीबनु को रकत, करत इन्द्र सम भोग ।
तउ गरीब परवर उन्हें, कहत अहो ए लोग ॥२७॥

बिन हूनी लागी बढ़ें, बल बीरज की मांग ।
छैल चिकनियां हू रचै, धीर वीर के स्वांग ॥२८॥
नहिं चाहत साम्राज्य सुख, नाँहि स्वर्ग निर्वाण ।
जन्म जन्म निज धर्म पैं, हरषि चढ़ावो प्रान ॥२९॥
भये न जो पढ़ि सत्य व्रत, सबल सूर स्वाधीन ।
तो विद्या लगि बाद धन, समय शक्ति व्यय कीन ॥३०॥

वीरों के आभूषण

पेश कब्ज दृढ गुर्ज त्यों, बरछो बाँक कटार ।
हैं आभूषण वीर के, तुपक तीर तलवार ॥३१॥

प्रकृत वीर

औसर आवत प्रान पै खेलि जाय गहि टेक ।
लाखनु बीचि सराहिये, प्रकृत वीर सो एक ॥३२॥

स्मशान

मातु पितु दारा भ्रात, भगिनी सुता औ सुत ।
इनके ममत्व भूलो, भ्रम के भंवर में ॥३३॥
हाटक के हर्म्य हय, हाथी नहिं साथी ह्वे हैं ।
संपदा अखूट, रहि जैहै धरी घर में ॥३४॥
चुम्रोकाल कल्ला, लगते ही शीस ढल्ला लेखि ।
छल्ला हू रती को, कोऊ छांड़ि है न कर में ॥३५॥
हल्ला राम नाम सत्य; मांचि हैं महल्ला वारे ।
फूंकि हैं इकल्ला, धरी राखि हैं न घर में ॥३६॥

विश्राम घाट-स्मशान भूमि

चन्देल वंशी राजपूतों के इस मन्दिर से लगा हुआ एक मन्दिर और भी था। जो गिरा हुआ क्यों पड़ा है? उसका उल्लेख यह है कि -

एक तो यह प्राय: डांका डालने का कार्य करते थे इस कारण इनकी मनोवृत्ति दूषित थी। और दूसरी बात यह भी थी कि अन्यायोपार्जित द्रव्य से विपरीत भावनाओं से प्रजा त्रसित थी।

ऐसे ही प्रसंग में एक मंत्रवादी से संघर्ष हो जाने पर उस मंत्रवादी ने घोषणा कर अपना चमत्कार इस मन्दिर पर बता कर गर्व को दूर किया था। उसी समय से इन राजपूतों का सितारा गिरता ही गया। इसी के पीछे पूर्व दिशा की ओर स्मशान भूमि है। वहाँ पर विदिशा के नगरसेठ श्री धनराज जी श्वेताम्बर जैन की धर्मशाला बहुत ही मजबूत बनी है।

लकड़ी के टाल हेतु दान

विदिशा के नगर निवासी दिगम्बर जैन धर्मपरायण दानवीर सेठ सिताबराय लक्ष्मीचन्द्र जी परवार ने सिंघई मोतीलाल जी जुगराज वालों के स्मरणार्थ आषाढ शुक्ला ३ श्री वीर निर्वाण संवत २४६४ विक्रम संवत १९९५ दिनांक ३०-६-१९३८ ई० को निर्माण करा कर सेक्रेट्री नगर-पालिका विदिशा के द्वारा चालू करवाया था, किन्तु इसकी दशा अब शोचनीय है।

दो चबूतरे श्मशान में

श्री सुन्दरलाल जी हीरालाल जी ताम्रकार भेलसा ने अपने पिता श्री जवाहरलाल जी की व श्री माता जी की पुण्य स्मृति में वि० सं० १९५५ में समाधि का चबूतरा निर्माण कराया था। इनके वंशज श्री अशर्फीलाल जी व चम्पालाल जी के सुपुत्र पुरुषोत्तमदास हैं।

छतरी

सेठ विरदीचन्द जी की धर्मशाला से लगी हुई नौलक्खी की ओर सेठ सूरजमल जी लछमनदास जी महेश्वरी की है। इनके वंशज भी हैं।

औघड़ का मन्दिर

इस मर्घट में व्यंतरादिक के बड़े कांड होते रहते थे, जनता बड़ी दुखी थी और यहीं एक मन्त्रवादी साधु जिसे औघड़ कहते थे स्मशान में ही पड़ा रहता था। कभी कभी नगर में भिक्षार्थ आजाया करता था। किसी एक दाता माता ने अचानक ही मकान की दूसरी मंजिल से दान देने को इशारा किया तो साधु ने तत्काल अपना भिक्षापात्र वहां तक पहुँचा दिया। इस चमत्कार से इस साधु की अधिक मान्यता बढ़ गई और उसने उस भिक्षा के द्रव्य से इस मन्दिर का निर्माण कराया और मर्घट को उसकी प्राणप्रतिष्ठा के समय कील दिया। जिससे व्यंतरादिक के उपद्रव सदैव को समाप्त हो गए। यह थी हमारे देश की मन्त्र-विद्या। साथ ही उस साधु ने नगरवासियों को एक प्रीतिभोज भी दिया; ऐसी जनश्रुति है।

लोभ पाप का बाप

इस भेलसा में संवत १९५९ में अलफखां, खूबाजी, कमालखां मेवाती और नीलगिर बाबा डांका डालने में बड़े प्रवीण थे और उनके नाम पर कई लोग खड़े होकर गिरोह बनाकर डांका डालते थे। उस समय यहां पर थूवड़ों का घना जंगल था और डाकुओं के अलावा जंगली शिकारी पशु भी रहते थे।

उस समय सोने का भाव करीब १५ रुपया तोले का था। एक डाकू ने सोना देना स्वीकार किया और स्थान इस औघड़ के मन्दिर का रखा। सायंकाल के वक्त लेना देना होता था। सोनी जो लोभ के वश ज्यादह तौल लिया करते थे यह बात डाकू को बुरी लगी अतएव एक दिन सोनी जी से रुपया छीन लिया और उनके तराजू बांट छीन लिये और जवान हलक से काट ली ताकि वह बोल न सके और सोनी जी पढ़े लिखे भी नहीं थे जो कि लिखकर ही बता देते। यह था बाप का बाप-लोभ।

घाट का निर्माण

ताम्रकार समाज के कुलगुरु स्वर्गीय श्री उतमप्रसाद जी तिवारी मुरादपुर डि० भेलसा परगना बासौदा की माता जी ने ताम्रकार समाज से द्रव्य संग्रह करके एक घाट का निर्माण सं० १९३५ विक्रमी के लगभग कराया। इस वंश में उनके नाती श्री कुन्जीलाल जी तिवारी हैं।

यह टाल श्री नगरसेठ विर्दीचन्द जी की धर्मशाला में रखा गया है।

श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्द्र जी ने विश्राम घाट पर माता शक्करबाई जी की स्मृति में एक धर्मशाला बनवाई थी। तथा एक मुर्दा घर जिसमें दाह संस्कार होता है टीन शेड मौसिया सेठ सिताबराय जी की स्मृति में बनवाया था। यह सन् १९६६ की नदी की बाढ़ में गिर गये हैं।

चरणतीर्थ के खंडेराव जी के मन्दिर से पश्चिम की ओर सिंघई मोतीलालजी चम्पालाल जी भेलसा का घाट तथा घाट के ऊपर सतिया भी है।

इसी घाट के ऊपर भारती गुसाई का मन्दिर है। इसी से उत्तर की ओर त्रिवेणी का घाट है। घाट के ऊपर एक धर्मशाला है जिसमें प्राय: बन-भोजन हुआ करते हैं। इस घाटके पश्चिम की ओर श्री रामचन्द्र देवालय है। इन दोनों के बीच नदी के मार्ग में प्रानचन्द जी मोतीलाल जैन परवार छोवरमूर कागुल गोत्र खेरुआ ग्राम निवासी की सत्तियां हैं। यहाँ वर्ष में दालबाटी अर्थात् वन-भोजन के लिये जाते हैं।

इसी रामचन्द्र देवालय के सामने नदी पार कर एक ऊंचा सा टीला है जिसे नौलखी कहते हैं। यहां पर भगवान राम वनवास के समय आये थे ऐसी किंवदन्ती चली आ रही है।

इसी नदी बेतवा के नीचे की ओर आमाछावर नामक ग्राम है। वहाँ पर सम्राट अशोक के स्तम्भ के नीचे के भाग थे। ऐसा ज्ञात होता है कि यहां पर कोई विशाल मन्दिर रहा हो। पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री यत्र तत्र मिलती है।

दाऊद पुरा घाट नदी वेतवा के बीच में एक प्राचीन मार्ग था और उस समय का पुल भी बना हुआ है जिस पर पानी अधिक रहा करता है। इसी स्थान पर अनेकों विशालकाय प्रतिमायें नदी के गहरे जल में पड़ी हुई हैं जिनके निकलवाने के लिये शासन से प्रार्थना की गई किन्तु किसी भी शासक ने प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया।

इसी नदी में विशाल बावड़ियाँ भी पूर्वकाल की बनी हुई हैं।

वैस नदी में ऊपर की ओर वैस ग्राम के निकट नदी में भी बावड़ियां बनी हुई हैं। तथा कई जगह स्तंभ भी विद्यमान हैं। यहां पर प्राय: प्राचीन मुद्रायें तांबे चांदी आदि की प्रचुर मात्रा में मिलती ही रहती हैं।

यही प्राचीन वैस नगरी है। इसमें कई मन्दिर धराशायी हुए हैं जिनके अवशेष के साथ साथ भग्नावशेष जो भूगर्भ में छिपे पड़े हैं, अधिकांश तौर पर नींव या गड्ढा खोदने में मिलते हैं।

लखेरे घाट से दक्षिण की ओर एक सड़क के किनारे सरजूदास जी वैष्णवी बैरागी ब्राह्मण का राम जानकी का मन्दिर है जिसका जीर्णोद्धार रामगढ़ के श्री ठाकुर लाल साहब ने कराया है।

वैस नदी के किनारे माता जी का मन्दिर

यह स्थान बैस नदी के किनारे पुल के पास ही है। जिमींदार ग्राम टीला के श्री किशन प्रसाद जी खत्री के सुपुत्र श्री गणपतलाल जी ने इस मन्दिर का जीर्णोद्धार सं० २००५ के लगभग कराया था। यह स्थान प्राचीन विदिशा नगरी का है। इस वर्ष गणतन्त्र राज्य के अन्तर्गत पुरातत्व विभाग केन्द्रीय सेन्टर सर्किल भोपाल द्वारा उत्खनन का कार्य हुआ है।

अन्य घाट

विश्राम घाट से दक्षिण की ओर नदी के किनारे पर एक चबूतरा बना है। यहाँ पर दक्षिणी समाज का स्मशान है। इससे ऊपर की ओर पुल के उस पार बीच नदी में ठाकुर प्रतापसिंह जी ग्राम इमलिया वालों का घाट है। इसी घाट से पूर्व की ओर हीराबाई लश्करनी अग्रवाल सिंहल गोत्री का घाट है। इसके पूर्व की ओर एक भड़भूजे का घाट है। इसके पूर्व की ओर वीरभान अहीर के पुत्र राधेलाल तोपपुरा वालों ने बनवाया है। इसी से लगा हुआ चौरसिया समाज का घाट है। इसी से लगा हुआ कालूराम पटवा का घाट है। तेलियों की पंचायत का घाट है। इसी से लगा हुआ लखेरा समाज का घाट है। इसी से लगा हुआ मूलचन्द लखेरा का घाट है। इसी से लगा हुआ श्री पोकरदास जी मानकचन्द जी माहेश्वरी डांगरा गोत्री नदवाना का घाट और धर्मशाला है। इसके दक्षिण की ओर एक लखेरन की धर्मशाला विक्रम स० १९५५ में निर्माण की गई थी। और उत्तर की ओर एक कसेरन की धर्मशाला है। यह दोनों मातायें विधवा थीं और कोई सन्तान का पता नहीं लगा।

इसके दक्षिण की ओर वीरभान अहीर की धर्मशाला कहते हैं। वास्तव में धर्मशाला और घाट के निर्माण कर्ता श्री ऊंकार जी के सुपुत्र श्री अजुद्दीप्रसाद पाठक हैं जो माह सुदी १५ सं० १९४८ में बनाई गई थी। इसका लेख घाट पर एक तुरसाने में प्राप्त है। बगीचा इसी घाट से लगा हुआ कांकड़े राव वैष्णव समाज के साधु की है और आजकल श्री महन्त मंगलदास जी जो धर्मज्ञ और उदार पुरुष के अधिकार में है। इनकी उदारता प्रशंसनीय इसलिए है कि यह ग्रामों से भिक्षावृत्ति करके लाते हैं और आगन्तुक अतिथि साधुओं को आहार दान देते हैं। इन्होंने एक मन्दिर तथा साधुओं को विश्राम के लिये धर्मशाला भी बड़ी लम्बी चौड़ी बनवाई है।

घाट और धर्मशाला

इसी बगिया से लगा हुआ एक बगीचा धर्मशाला और घाट श्री हरदेव जी हरनारायण अग्रवाल का है ।

दानियों का पतन

इसके ऊपर की ओर पन्नालाल जी भैयालाल जैन सर्राफ की भूमि और बगीचा है । दुःख है कि विधवायें तो घाट और धर्मशालायें बनवा सकती हैं किन्तु अभागी जैन समाज के द्रव्य का सदुपयोग न हो सका । पूर्व में जलयात्रा का उत्सव भजन कीर्तन, गोट आदि लखेरे घाट पर होती थी किन्तु समाज के कर्णधारों ने उसको बन्द कर दिया जो कि प्रभावना का एक अंग था ।

पुतली-घाट

यह स्थान वर्तमान विदिशा नगर से लगभग दो मील पश्चिम दिशा की ओर वेत्रवती नदी का एक घाट है । इस नदी में से पूर्व-पश्चिम की ओर मढ़वाई ग्राम पर से सांची को मार्ग जाता है । पूर्वकाल में राजमार्ग होना सम्भव है ।

इधर वेत्रवती और उदयगिरी के पश्चिम की ओर बैस नदी है । इन दोनों नदियों के दोनों किनारों पर सिंधिया राज्यवंश के शासन काल में रंगई के पुल से त्रिवेणी संगम से एक मील आगे दाऊदपुरा तक ब फासले दो दो जरीब के मछली की व अन्य पशुओं की शिकार करना कतई निषेध था, जिसके नंबरान इस पुस्तक में मय आदेशों के उल्लिखित हैं । ऐसा क्यों था ?:—

इसलिये कि यह प्राचीन विदिशा हिन्दुओं और जैनियों का परम पवित्र तीर्थस्थान रहा है । यह एक महान ऐतिहासिक क्षेत्र है इसके भूगर्भ में तथा नदी के अथाह जल में प्राचीनकाल की मुद्राएं, मूर्तियां, शिलालेखादि मिलते ही रहते हैं । यह अपनी प्राचीनता की साक्षी दिया करती हैं यही एक प्रमाण है ।

जीवदया की परम्परा हिन्दू संस्कृति में धार्मिक भावना का प्रतीक भारत में माना गया है ।

पुतली घाट से राजमार्ग होना इसका प्रतीक यही है कि यात्रियों के आवागमन में धर्मप्रेमी और श्रद्धालुओं को आत्मशुद्धि और मन की पवित्रता के लिये दर्शन पूजन जो कि मानव में नवधा भक्ति होना परमावश्यक है तथा श्रावक के छह कर्म बतलाने की सूचक हैं । सुविधा के लिये बीच नदी में एक बड़ी भारी चट्टान पर दो प्रतिमाएं कायोत्सर्ग जिन्हें खड्गासन ध्यान मुद्रा में उत्कीरित हैं यह प्रतिमाएं भगवान भरत और बाहुबली जी की हैं । जो कि पुतली के नाम से विख्यात हैं । इसी कारण से पुतली घाट नामांकित हुआ है ।

यह भगवान भरत और बाहुबलि कीहैं । इसका तर्कपूर्ण उत्तर यह है कि दोनों भाई भगवान ऋषभदेव के पुत्र थे जोकि भागवत ग्रन्थ में आठवें अवतार माने गये हैं और जैनियों के यहां प्रथम तीर्थंकर हैं । इनका चिन्ह बैल है और भगवान शंकर का वाहन बैल है । भगवान ऋषभदेव ने कैलाश पर तपस्या की है और भगवान शंकर जी ने कैलाश पर तपस्या की है । वे युग के

आदि में कल्पवृक्षों के लुप्त होंने पर असि, मसि, कृषि आदि की शिक्षा देने से आदि ब्रह्मा, विष्णु और महादेव कहे गये हैं।

भगवान भरत जी का शरीर बाहुबलि जी से कुछ छोटा था। इनके हाथ घुटने के ऊपर थे। सिर पर सर्प फण इसलिये था कि यह चक्रवर्ती थे जो दबदबे का सूचक है।

भगवान भरत ने बाहुबलि को नमस्कार न करने पर युद्ध किया था। भरत जी ने बाहुबलि से पराजय पाई किन्तु राज्यवैभव झगड़े का मूल कारण जान भावों में वीतरागता आई। अन्त में बाहुबलि ने तपस्या करना ही सर्वोपरि समझा था। इसका प्रमाण श्रवणबेलगोल में आज भी विद्यमान है कि संसार में इतनी बड़ी बाहुबलि जी की प्रतिमा के समान अन्य प्रतिमा नहीं है। इनके हाथ घुटनों से नीचे हैं। यह दोनों ही प्रतिमायें दिगम्बर जैनियों की हैं।

यह भरत चक्रवर्ती अपने राज्यसिंहासन पर आरूढ़ थे। भगवान बाहुबलि जी को यह शल्य थी कि मैं भरत के राज्य में तपस्या कर रहा हूं। इस शल्य के कारण केवल ज्ञानउत्पन्न न होने से देवों का आसन कंपायमान हुआ। देवों ने अवधिज्ञान से यह जाना कि भगवान बाहुबलि को केवलज्ञान शल्य के कारण नहीं हो रहा है। जिस प्रकार से सूक्ष्म फांस की पीड़ा शरीर को कष्ट-दायक होती है।

फांस तनक सी तन में साले,
चाह लंगोटी की दुख भाले।

देवों ने भगवान भरत के समक्ष यह सन्देश पहुँचाया तो भरत जी तत्काल वहां आये और नमस्कार कर कहने लगे भगवन्! इस भूमि पर अनन्तानन्त भरत हो चुके हैं, यह किसी एक की होकर नहीं रही। इतना भगड़ा भरत बाहुबलि का किस लिये था ? वह केवल इस बात का कि मैं बड़ा हूँ तू मुझे आकर नमस्कार कर; तो उत्तर बाहुबलि जी ने दिया था कि जिस तीर्थंकर का तू पुत्र है उसी का मैं भी, इसमें न कोई बड़ा है और न छोटा। सच है, अहंकार मनुष्य का पतन करता है। १२ वर्ष तपस्या करने के बाद बाहुबलि को केवलज्ञान हुआ। भरत जी को वस्त्र उतारते ही केवलज्ञान हुआ था।

विदिशा महिमामय क्यों है ?

विदिशा नगर की प्राचीनता क्यों है और यह प्राचीन नगर कैसे सही माना जाय ?

इसका उत्तर केवल यही है कि-यशस्वी प्रतिभाशाली विदिशा नगरी में भगवान शीतलनाथ के तीन कल्याणक हुये। भगवान राम का वनवास के समय आगमन हुआ। भगवान कृष्ण के तीन युगल भ्राताओं का लालन पालन अलका नाम वैश्य के यहां हुआ। भगवान नेमिनाथ का आगमन समवशरण के साथ सांची पर हुआ। कृष्ण के भ्राताओं को लेने के लिये। तीस जैनाचार्य पट्टाधीश यहां पर हुये जिनका समस्त शास्त्रसंग्रह मुगलकाल में भस्मीभूत कर दिया गया।

सम्राट चन्द्रगुप्त को प्रथम बार आचार्य भद्रबाहु जी द्वारा उपदेशामृत मिला। जिनधर्म स्वीकार किया। अशोक ने नगरसेठ की लड़की से शादी की और उसकी स्मृति में भगवान

नेमिनाथ के समवशरण की रचना खुदवाई। जो चिरकाल तक जीवित रहेगी।

लोहाचार्यों ने बाममार्गियों से शास्त्रार्थ का लोहा लिया था। समन्तभद्राचार्य ने बाम-मार्गियों से लोहा लिया। आचार्य श्रीमद् भट्टाकलंकदेव ने ग्यारसपुर विदिशा और निकटवर्ती क्षेत्र में भ्रमण करके बौद्धों को पराजय दी।

सांची पर बुद्धिवर्द्धक सांकेतिक भाषा में जो कथायें मूर्तियों में संकेत करके बतलाई हैं उनमें अद्भुत ज्ञान छुपा हुआ है।

हमारी जैन समाज धनाभिमान के वशीभूत हो संशोधनकर्ताओं को अपमानित करती हैं और अपने आपको बनिये कहते हैं वह वास्तव में बनिये नहीं बिगड़िये हैं। मैं उन महानुभाव समाज और शासन के अधिकारी वर्ग का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने मुझे सहयोग नहीं दिया, सेवाओं का लाभ नहीं लिया, अपमानित किया। मैं उन लोगों को महानता इसलिये देता हूं कि यदि वह मुझे घृणा की दृष्टि से न देखते तो मेरे जीवन का उत्थान वास्तव में न मालूम किस ओर जाता। मुझे आज यदि उत्थान दिया है तो विरोधियों ने, मैं उनकी बन्दना करता हूँ।

आचार्यों ने दुर्जन की बन्दना सबसे प्रथम और सज्जन की पीछे इसी लिए की है—

पहिले दुष्ट प्रणामिये; पीछे सज्जन सोय।
जैसे पहिले सोंचिये, पीछे मुखड़ा धोय॥

सज्जन दुर्जन दोय, ये उपकारी एक से।
यह चिर जीवें दोय, वह उपकृत वह दोषहर॥

इसलिये—

निन्दक नियरे राखिये, आंगन कुटी बनाय।
बिन साबुन बिन नीर के, निर्मल होत स्वभाव॥

निन्दक मेरा ना मरे, मैं ही मरूं कबीर।
निन्दक का मुख सोंधनी, निर्मल करत शरीर॥

आज भारत में चारों ओर हमारी मूर्तियां चोरी जा रही हैं। उसका उत्तरदायित्व पुलिस अधिकारी, जिले के समस्त अधिकारी, पुरातत्वाधिकारी नीचे से ऊपर तक के समस्त अधिकारियों पर ही है जिन्होंने अपने आस्तीन में सांप पाल रखे हैं। लेखक के अनुभव, लगन, उत्साह, ज्ञान का लाभ स्वयं भी नहीं लिया और न किसी को लेने दिया। यही देशद्रोहिता, संस्कृतिद्रोहिता, धर्मद्रोहिता है। यह बात भी सत्य है कि गुण की परीक्षा अवगुण से और बिना तुलना किये नहीं होती।

हमें गुणावलोकी होना अनिवार्य है। देव, राक्षस, वनस्पति, पशु, पक्षी आदि प्रत्येक वस्तु

हमारी गुरु है। जिस प्रकार से श्री दत्तात्रय स्वामी के २४ गुरु थे। तो हमारे लिये जिस वस्तु से ज्ञान मिलता है वही हमारी उपकारदाता गुरु है।

दाऊदपुरा घाट पर बीच वेतवा नदी में विदिशा का प्राचीन गौरव महाराजा कर्ण और उनकी पत्नी की विशालकाय प्रतिमा

यह सभी को ज्ञात है कि महाभारत के पूर्व पांडवों को वनोवास की यातनायें भुगतना पड़ी थीं। और यह भी भली प्रकार से ज्ञात है कि महाराजा कर्ण का दान प्रसिद्ध है। उनकी दान मुद्रा, मुखाकृति, शरीर की विशालता, गले का रत्नहार, हाथों के आभूषण, सिर के जटाजूट वस्त्राभरणादि की वेशभूषा आदि से सम्पन्न एक मूर्ति नदी वेतवा में वर्षों से आड़ी पड़ी हुई थी। जिसका सिर का भाग शरीर से पृथक था और दाहिने हाथ की मुट्ठी का भाग टूटा हुआ था तथा इसकी लम्बाई १२ फुट ६ इंच, मोटाई ३ फुट और चौड़ाई ४ फुट है। इसे यक्ष की मूर्ति के नाम से पुकारते हैं और पत्नी को यक्षी कहते हैं। इस मूर्ति के तीन टुकड़े थे। कमर से ऊपर का भाग कमर से घुटने तक और घुटने से नीचे का भाग जिसको मिलाकर ८ फुट लम्बाई ३ फुट चौड़ाई और २ फुट मोटाई लगभग होगी, इसकी भी कर्ण के समान दानमुद्रा मुखाकृति गले और हाथों के आभूषण, सिरके बालों की कलाकृति और वस्त्राभरणादि बड़े ही मनमोहक हैं, जो इस समय शासकीय संग्रहालय विदिशा में रखी हुई हैं।

यह नदी वेतवा के ५ फुट गहरे जल में पड़ी हुई थीं, जिन्हें शिकारी प्रायः दाने बाबा के नाम से पुकारते थे।

इन्हें नदी में से निकालने के लिये श्रीमान् कलेक्टर साहब वि० व० ओक शासन कर रहे थे उन्हें सूचना लेखक राजमल मड़वैया पुरातत्व अधीक्षक विदिशा ने दिनांक १७-६-५२ को ट्रेक्टरों के द्वारा निकलवाकर विश्रामगृह पर पं० जवाहरलाल जी नेहरू के प्रधानमन्त्री भारत सरकार के प्रथम बार विदिशा में पदार्पण के समय खड़ी कराई गई थी।

और इस सम्बन्ध में पुरातत्व विभाग से मनियार्डर नं० ५२८ दिनांक १२-२-५६ द्वारा पारितोषिक रु० ५० प्राप्त हुए थे।

इस प्रकार की अनेकों आश्चर्यजनक कलामय वैभवयुक्त मूर्तियों की जानकारी राजमल मड़वैया को है। किन्तु विभाग इस सम्बन्ध में उदासीन है और राजमल मड़वैया की सेवाओं का लाभ लेकर मध्यप्रदेश शासन के गौरव की वृद्धि इसलिये नहीं चाहते कि उनका जो स्वार्थ निहित है उस पर बड़ा भारी आघात पहुंचता है। तथा व्यापार जो चल रहा है उसकी रोक थाम नहीं करना चाहते, और न विनाश कार्य को रोकना ही चाहते हैं। इस कारण उद्देश्य की पूर्ति के लिये शासकीय अधिकारों की मांग के लिये प्रार्थनायें की किन्तु विभागीय क्लर्कों का सम्बन्ध स्वार्थ लिप्सा के वशीभूत होने से अधिकारीवर्ग को अपनी श्रेणी में मिलाकर शासन की कीर्ति पर कालिख लगाई और इसी का परिणाम है कि आज पुरातत्व विभाग उन्नति के शिखर पर नहीं पहुँच सका। इस उद्देश्य की पूर्ति के उपलक्ष में यह पुस्तिका लिखने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ है। अन्धे चार प्रकार हैं जिनमें तीन अन्धे भयंकर घातक हैं किन्तु जन्मान्ध किसी को आघात नहीं पहुँचाता।

जन्म अन्ध कामान्ध नर, और महामद धार ।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार ॥

विजय मन्दिर और स्वामी समन्तभद्राचार्य

पाठक यह समझ गये होंगे कि शमशुद्दीन अल्तमश ने बिदिशा का विजय मन्दिर जो कि १०५ गज ऊंचा और आधा मील लम्बा व चौड़ा था नष्ट किया था। इस समय सन् १२३३-३४ था। जब सुलतान अल्तमश ने बड़ी फौज लेकर मालवा पर हमला किया। इस भेलसे के किले पर अधिकार किया। इस युद्ध का वर्णन इतिहासकार लेखक मिन्हाजुद्दीन ने 'तबकाते नासरी' में लिखा है मुसलमानों ने एक मन्दिर को तोड़ डाला जो १०५ गज ऊंचा था। और यह मन्दिर ३०० वर्ष में बना था। जो नौवीं या दसवीं शताब्दी का मालूम होता है। इस मन्दिर को शोभा अपूर्व थी जबकि खिलजी सुलतान जलालुद्दीन फीरोजशाह दिल्ली के तख्त पर बैठा था। उस समय उसके भतीजे ने बादशाह से आज्ञा लेकर अकारा का गवर्नर अलाउद्दीन था सेना लेकर आया और भेलसे को लूटा। और लूट का माल सुल्तान को दे दिया।

विजय मन्दिर में एक चौखंभे पर शिलालेख

इस शिलालेख में जो लिखा है उसकी मूल प्रति निम्न प्रकार से है—

सिद्धम् । वि———रणस्य—प्र—साक्षत्———पति———कलियुगे———भुवि———चादि पत्वां—यादि भावि वियुक्तां कु स्थामि जिनेन्द्रैः स्थावरहत्वर संसिद्धि पदस्य लब्धिः ॥ १ ॥ इति महाराजाधिराज परमेश्वर श्री नरवदेवस्य निर्वाणान्तरायस्य परनारी सहोदरस्य चर्चिकाख्या समाख्याता देवी सर्व जनप्रिया । यस्याप्रसादमात्रेण लेभेः संसारयोगिनां ॥२॥

कृतिरियम् ठक्कुरस्तपटसुत ठक्कुराणीजास सुत ठक्कुर सीमादेवस्य परनारी सहोदरस्य द्विजस्य माथुर वंशजस्य मंगलं महामोढान्वये महतं श्री देवराजः प्रणमति नित्यं ॥३॥

इस शिलालेख में तीन श्लोक हैं जिनका भावार्थ स्पष्ट है कि यह आचार्य समंतभद्र की बादशाला रही है और बाममार्गियों से इन आचार्य ने वाद विवाद का लोहा लिया था। और यह भी स्पष्ट है यहां २६ आचार्य पट्टाधीश हुये हैं। सर्वप्रथम श्लोक में ऊपर की लाइन के कुछ अक्षर टूट गये हैं। फिर भी जो अक्षर शेष हैं उनको पढने से स्पष्ट है कि सिद्धों को नमस्कार किया है। भावों की विरक्तता को स्थापित रखते हुये जिनेन्द्र को नमस्कार किया है जिन्होंने मोक्षलक्ष्मी जैसी लब्धि प्राप्त की है। यह प्रथम श्लोक का भावार्थ है ॥१॥

तत्पश्चात् मनुष्यों में देवस्वरूप निर्वाण पद प्राप्त करने वाले ऐसे परमेश्वर जो महाराधिराजों द्वारा पूजनीय ज्ञानान्तराय को दूर करने वाली स्व-पर का बोध नारियों-भाइयों में तत्वचर्चा कर समानता का मार्गदर्शन कराने वाली सम्पूर्ण मनुष्यों को प्रिय ऐसी सरस्वतीदेवी

जिसके प्रसादमात्र (आशीर्वाद) से योगी जनों को संसारसागर से पार उतारने का लाभ मिलता है। यह दूसरे श्लोक का अर्थ है ॥२॥

महामोढाम्नायी माथुर वंशी ठाकुर सोमादेव जिनकी दो ठकुराणी उनके पुत्र श्री देवराज नित्यप्रति प्रणाम करते हैं।

आचार्य समन्तभद्र के आगमन के सम्बन्ध में जो श्लोक आया है वह स्वामी समन्तभद्र और विदिशा का है।

बिजय मन्दिर की कोठली में शिलालेख

इस शिलालेख में पशु, पक्षी और मनुष्यों की उत्कृष्ट आयु का प्रमाण दिया है। मूल श्लोक निम्न प्रकार है—

> नाग लावक पुंसि विंशति शतं, द्वात्रिंशद् श्वे समाः।
> पंचोन्मीलित विंशतिः खरमायागा माहिषु सेक मुक ॥
> मेषच्छागमृगेषु षोडष दश द्वाम्यां सहृत्व व्रजे निर्णीतं भुवि।
> सर्वदेव कृतिना सत्कीर्तिनायुः परम् ॥

भाव एवं शब्दार्थ

शब्द	अर्थ	शब्द	अर्थ	शब्द	अर्थ
द्वात्रिंशद्—	३२	अश्व—	घोडा	नाग—	हाथी
लावक—	लवा पक्षी	पुंसि—	पुरुष	विंशति शतं—	१२०
समाः—	वर्ष	पञ्चोन्मीलितविंशतिः—	२५ रखे या मिलावे	खर—	गधा
गो—	गाय	महिष—	भैंस		

यानी २५ में से एक वर्ष कम करके सेक मुक्त—गधे की संख्या में से एक कम करके आयु जाना।

मेंढा १६, बकरा १०, हिरन १२ या १८, द्वाम्यां सह-स्व व्रजे=कुत्ता पिछला १०। मिलाकर १२ वर्ष कुत्ते की आयु जाना। श्री सर्वदेव पंडित जोकि बड़े कीर्तिवान थे उन्होंने यह परम आयु निर्णय की।

इसी शिलालेख की पुष्टि में वाराहमिहर आचार्य के वृहज्जातक ग्रन्थ के आयुर्दाय अध्याय में निम्न श्लोक हैं—

> समाः षष्टिर्द्विघ्ना मनुज करिणां पंच च निशाः।
> हयानां द्वात्रिंशद् खर कर भयोः पंचक कृतिः॥
> विरूपा सात्वायुः वृष महिषयोः द्वादश शुनाम।
> स्मृतं छागादीनां विशक सहिताः षट् च परमं॥

अन्वय— मनुज करिणां द्विघ्नाः षष्ठिः समा; पंच च निशाः।
च हयानां द्वात्रिंशद् समाः खर कर भयोः पंचक कृतिः ॥समाः॥

वृष महिषयोः विरूपा सा आयुः, शुनाम द्वादश समाः ।
छागादीनां दिशक सहिताः षट् समाः च आयुः परमं स्मृतं ॥

मनुष्य और हाथियों के परम आयु के प्रमाण को दुगुना ६० अर्थात् १२० वर्ष और पांच दिवस ।

घोड़ों की परम आयु ३२ वर्ष खर, करम (ऊंट) पांच गुणित पांच योग २५ पंचक वर्ग-पंचक कृति पांच गुणा पांच अर्थात २५ वर्ष ।

रूप--एक। सः--वह। वह का अर्थ २५ जो पहिले बताया है यानी वि--कम; २५ में से एक कम २४ वर्ष वृष यानी बैल-भैंस की आयु। शुनाम--कुत्ता की आयु १२ वर्ष। बकरा--भेड़ आदि की परम आयु १६ वर्ष दिशक सहिता षट समाः १० और ६ जानना ।

उदयपुर (चटुवा) गेट के पास प्राप्त शिलालेख में नागरी लिपि संस्कृत भाषा पंक्ति २४ में विष्णु मन्दिर के निर्माण का उल्लेख है। तथा मालवा के परमारों का विस्तृत विवरण वंशवक्ष दिया हुआ है।

भा० सू० सं० १६५७ ग्वा० पुरा० विभाग रि० सं० १९७४ सं० १०३ अन्य उल्लेख भाग १ पृष्ठ २२२ इस प्रशस्ति के अनुसार परमार वंशवृक्ष उपेन्द्र राज उसका पुत्र सीयक उसका पुत्र वाक्पति, उसका पुत्र बैरिसिंह बज्रट (द्वितिय) उसका पुत्र श्रीहर्ष जिसने राष्ट्रकूट के राजा खोट्टिग को हराया था। उसका पुत्र वाक्पति द्वितीय जिसने त्रिपुरी के युवराज को हराया। उसका छोटा भाई सिन्धुराज उसका पुत्र भोजराज और फिर उदयादित्य इनके द्वारा दिये गये दान का एक शिलालेख उसमें विजय मन्दिर के निर्माण (भेलसा) विदिशा जो आज यवनों की ईदगाह बनी हुई है। और केन्द्रीय पुरातत्व विभाग के अधिकार क्षेत्र में है। (इसका एक शिलालेख के अवशेष भाग मड़वैया संग्रहालय विदिशा में रखा हैं) उसमें निम्नांकित उल्लेख हैं--

रायसेन के जैन मन्दिर का शिलालेख

श्री संवत १८२१ फाल्गुन मासे कृष्ण पक्षे तिथौ एकादश्यां शनिवासरे अथ देवालय प्रतिष्ठितं श्री मूल संघे सरस्वती गच्छे बलात्कार गणे श्री कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये भट्टारक श्रीमंतर्द्धकीर्ति गुरूपदेशात् तिष्ठति नरेसे मगधदेसे मछोयढ़ रायसेन राजे श्री नवाब फेजमुहम्मद वा विजये तस्य मन्त्री दगे श्री किसोरसिंह वा किलेदार श्री हुसेनखां जीतस्यभयेज्येवासि जाति परिवार बावामूंत श्री शाह नन्दराम वा भामीबाई उदो तस्य पुत्र नृपो ज्येष्ठ पुत्र समाचन्द्र दश झगाराम वा गोपाल मति परि पुत्रादि खुशालचन्द्र वा मानकचन्द्र जी वा फभेतेचन्द्र जी वा सर्व परिवार को रक्षा करि देश विदेश के रक्षा करु देवा के प्रसाद से बलवीर्य राजस्य बृद्धिभवति भवति कल्याण भवति हिन्दु व मुसलमान को कसम है जो यो ऊपर बुरी नजरां करे सो सौगंध है देह की बुरीकाष्ठा तें मोजे हीन की पंडित समान नाथ जी। (अन्दर दरवाजे के ही ऊपर लगा है)

अध्याय – 13

३१-जैनाचार्य और स्वामी समन्तभद्र

पंक्ति नं० (१) कमलसि (२) दुः श्रीमदुदये (३) भाइल्लस्वामी श्री यमदि (४) तरथगति तीव्र किरणं नु भाद्र (५) विजय नृणांव्छ दिष्यातदियुत (६) भाइल्लस्वामयरणंय वालयइव कले (७) हवती भविभावहु वदिताउन्य कन्यस्वभवल (८) स्येमधोधाधिव्य धिव्यय ननय दारिद्रविघु (९) यि उमल ना-तरति मेयीत्वव्छोल्येव (१०) भाइल्ल स्वामी विविध विधुराती हरवः [य रोग] (११) ती क मतिक दरिद्र य द व्यंयज रमजर साधु वि (१२) कर नृविश्वो विधिः यस्य भाइल्ल स्वामी ह (१३) इयं तव्यःमहिणहु वदय मन्दाह्मलि (१४) तिय दुतष इति चद्रलयदेवोत्छ (१५) भाइल्ल स्वामि हत भवि य (१६) कल्टछग्रग्टवर क्यबुकषेपुरं रिछत्य (१७) जनं त इदम्न विल स्फुटतिभत्तवाय-स्थनिय (१८) तं य भाइल्लस्वामी नित्ययत्यह (१९) विधुवभुग्वोव्याग्रीलाद उतस्य पदवी (२०) मह्मीचोत्यु पद माधंघयत्थ न (२१) नतिप्रवि।

इस लेख का आशय यह है कि—(इस लेख के दो टुकड़े प्राप्त हुये हैं और इसके कुहिस्से के अक्षर न होने से पूर्ण शब्द पढ़े नहीं जा सकते किन्तु जो भाव मिल सका वह निम्न प्रकार से है)

सिद्धों के चरण कमलों में नमस्कार करते हुये चन्द्रप्रभु के देवालय में सूर्य के समान देदीप्यमान किरणों वाले दिगम्बर जैन साधु स्वामी समन्तभद्र जिन्होंने सप्त तत्व नव पदार्थों का वर्णन कर पापों का नाश करने के मार्ग का जन्म, जरा, मरण के रोग रूप दारिद्र का नाश करने के लिये ब्रह्मा समान हैं। मोक्षरूपलक्ष्मी के मार्ग को दिखाने वाले साधु है। मैं उनकी नितप्रति वन्दना करता हूँ।

यह मन्दिर परमार वंशी क्षत्रियों के द्वारा ही निर्माण कराया गया था। यह कदमपुरी जिसे वर्तमान में कदवाया कहते हैं जोकि गुना जिले में है। स्वामी समन्तभद्र ग्रन्थ लेखक पं० जुगलकिशोर जी मुख्तार प्रकाशक जैन ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय हीराबाग पोष्ट गिरगांव बम्बई प्रकाशन २५ जुलाई प्रथम संस्करण। (मंगाकर देखिये)

स्वामी सामन्तभद्र क्षत्रियकुलभूषण कदम्ब, गंग, पल्लव राजघराने के राजपुत्र थे। इन्हीं वंश के कितने ही राजा वर्मान्त नाम को लिये हुये हो गए हैं। कदम्बों में से शांतिवर्मा नाम का भी राजा हुआ है।

कदम्ब वंशी राजा शांतिवर्मा और सामन्तभद्र दोनों एक ही व्यक्ति थे। पृ० ९-१० देखिये।

वंश-परिचय

स्वामी सामन्तभद्र के पुत्र का नाम मृगेश वर्मा पौत्र का रवि वर्मा प्रपौत्र का हरि वर्मा

और पिता का नाम काकुत्स वर्मा था, क्योंकि काकुत्स वर्मा मृगेश वर्मा और हरि वर्मा के जो दानपत्र अथवा जैन संस्थाओं को दिये हुये हलसी और वैजयन्ती के मुकामों पर पाये जाते हैं इनसे इस वंश परम्परा का पता चलता है। कदम्बवंशी राजा प्रायः जैनी ही हुए हैं। और दक्षिण देश वनवास के राजा हुए हैं। शुभचन्द्राचार्य ने आपको भारतभूषण वादीवाग्मी कवि और गमक लिखा है। इन स्वामी समन्तभद्राचार्य के सम्बन्ध में जैन सिद्धांत भास्कर आरा के ऐतिहासिक मुखपत्र भाग १ किरण १ जुलाई से सेप्टेम्बर १९१२ पृष्ठ ५९ में स्वामी जी का चमत्कार--दिल्ली के तख्त पर फीरोजशाह तुगलक ने अपने मन्त्री राघो और चेतन मंत्रवादियों द्वारा लगभग सं० १४०३ में दिल्ली के राज्य सिंहासनाधिरूढ़ हो भारत की भाग्य डोर हाथ में ले ली। अपने राज्य शासन काल में सभी धर्मों की परीक्षा करने लगा अन्यान्य धर्मों के साथ साथ जैनियों को भी अपने धर्म की परीक्षा देने की आज्ञा मिली परन्तु उस समय उत्तर भारत में जैनियों के गुरु अथवा विद्वान न थे, जो उनसे शास्त्रार्थ कर सकते। इसलिए बादशाह से छह महीने का अवकाश माँग कर दुखित हृदय जैनी गुरू की खोज में दक्षिण देश को गये। (भद्दिलपुर भूपाल के नजदीक जोकि आजकल भेलसा नाम से प्रसिद्ध है वहीं सब लोग आये। वहीं से महासेन नाम के आचार्य को वहाँ (दिल्ली) ले गए। महासेन स्वामी ने दिल्ली के बादशाह के दरबार में आकर राघो-चेतन नामक विख्यात दो राज्यमान्य विद्वानों को शास्त्रार्थ और मन्त्र विद्या में पराजित कर वहां बड़े प्रभाव के साथ जैन धर्म की ध्वजा फहराई। उस समय की बादशाही सनदें अभी तक कोल्हापुर के भण्डार में हैं। उसी समय से भट्टारकों की गद्दी वहां स्थापित हुई और ये लोग राजगुरु माने गए। इन लोगों को बादशाह ने वस्त्र धारण कराया और अनेक बादशाही खिल्लत छत्र चमरादि और पट्टस्थ की बत्तीस उपाधियां दे बड़े सम्मान के साथ इनका गौरव बढ़ाया। इस समय में भी हमारे जैनाचार्यों ने अनेक ग्रन्थ रचकर धर्मरक्षा की। परन्तु इसके बाद रक्षा करने में जब आचार्यों को अत्यन्त कठिनाई जान पड़ने लगी तब उन्होंने इन धर्म ग्रन्थों की रक्षा का एकमात्र उपाय समझा और उन लोगों ने बड़े परिश्रम के साथ जहां जैनियों का समूह था वहाँ उनके घरों की कोठरियों में और जहां भट्टारकों का मठ था वहाँ तहखाने में रख कर सुरक्षित किया और लोगों को यहां तक मना कर दिया कि किसी को इसकी जरा भी सूचना न मिलने पावे। नहीं तो यह भी बची बचाई धार्मिक तथा ऐतिहासिक सामग्रियाँ नष्ट हो जावेंगी।

उपर्युक्त समय में जब जैनधर्म-विद्वेषी अन्य धर्मावलंबी राजा तथा विद्वानों के कारण लाखों ग्रन्थों का नाश हुआ तब हमारे महर्षियों ने तथा पूर्व पुरुषों ने धर्म की हानि होती हुई देख अपनी जान पर खेल कर जैनधर्म को ग्रन्थ-रक्षा द्वारा बचाया। अंग्रेजी शासनकाल में सबों की स्वाधीन धर्म-जागृति के समय में भी हमारी मूर्खता से जैन धर्मावलंबी उसी परम्परा को निभाते हुए, शास्त्रों को तहखाने में सड़ाते हुए संसार में भावी धार्मिक उन्नति तथा पवित्र जिनवाणी माता के प्रचार का मार्ग रोक रहे हैं। देखिए जैन सिद्धांत भास्कर, जैन सिद्धांत भवन आरा द्वारा प्रकाशित फरवरी सन् १९१३ अप्रेल से जून भाग १ किरण ४ इस अंक में यह बतलाया गया है कि मध्य प्रदेशांतर्गत राजधानी भोपाल के अंचल में विदिशा नगर वेसनगर जिसे भेलसा, भद्दलपुर भद्रावती, आलमगीरपुर, विदिशा आदि नाम रहे हैं जिनमें इस विदिशा का कितना

भविष्य उज्वल रहा है। यहाँ पर २९ जैन आचार्यो के पाठ पर बैठने का समय विक्रम के राज्याभिषेक से लिया गया है। पृष्ठ ७८ नन्दी संघ की पट्टावलि के आचार्यों की नामावलि जिसे इंडियन एन्टीक्वेरी में प्रकाशित किया है। उसकी प्रतिलिपि यहां लिखते हैं—

(१) भद्रबाहु द्वितिय ४ (२) गुप्तिगुप्त २६ (३) माघनन्दी ३६ (४) जिनचन्द्र ४० (५) कुन्दकुन्दाचार्य ४९ (६) उमास्वामि १०१ (७) लोहाचार्य १४२ (८) यश:कीर्ति १५३ (९) यशोनन्दी २११ (१०) देवनन्दी २५८ (११) जयनन्दी ३०८ (१२) गुणनन्दी ३५८ (१३) वज्रनन्दी ३६४ (१४) कुमारनन्दी ३८६ (१५) लोकचन्द ४२७ (१६) प्रभाचन्द्र ४५३ (१७) नेमचन्द्र ४७८ (१८) भानुनन्दी ४८७ (१९) सिंहनन्दी ५०८ (२०) श्रीवसुनन्दी ५२५ (२१) वीरनन्दी ५३१ (२२) रत्ननन्दी ५६१ (२३) माणिक्यनन्दी ५८५ (२४) मेघचन्द्र ६०१ (२५) शांतिकीर्ति ६२७ (२६) मेरुकीर्ति ६४२ (२७) श्रुतकीर्ति १०७९ (२८) भावचन्द्र १०९४ (२९) महाचन्द्र १११५ (३०) माघचन्द्र ११४०।

यह ३० उपयुक्त तीस जैनाचार्य दक्षिण देशस्थ इस भद्दिलपुर जोकि सांची रेलवे स्टेशन है। यहां भगवान नेमिनाथ का समवशरण कृष्ण जी के ३ युगल भ्राताओं को लेने आया था। उस स्मृति में सम्राट अशोक से जैन धर्मानुयायी सेठ के कन्या के विवाहोपलक्ष में निर्माण कराया था। इस सांची पर बौद्ध धर्मावलंबियों का अधिकार जैनों की उपेक्षावृत्ति से हुआ और राज्य शासन ने दर्शकों से टेक्स वसूल कर व्यापार बना लिया है। पूर्व जैनाचार्यो ने बनाया और वर्तमान जैनियों ने खोकर अपनी यशस्वी प्रतिष्ठा पर कालिमा लगाई। इस प्रकार से ३० जैनाचार्य पट्टाधीश यहां हुये। भारतवर्ष का सबसे प्राचीनतम क्षेत्र विदिशा है। इसके साथ १०वें तीर्थंकर भगवान शीतलनाथ की यहाँ जन्म नगरी रही, ३ कल्याणक हुए। तृतिय कल्याणक महोत्सव पूर्व दिशा में २२ मील दूरी पर ग्यारसपुर पर तपकल्याणक हुआ। यह भी जैनियों का अनुपम तीर्थक्षेत्र है। यहां पर भी दर्शनीय जैनमन्दिर प्राचीनकाल के पहाड़ियों की चोटियों पर बने हुए हैं। दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी को इस ओर ध्यान देना चाहिए। तथा स्थानीय जैन समाज का प्रथम कर्तव्य है कि ऐसे क्षेत्रों को विकाश में लाकर स्याद्वाद की दुंदुभी बजती रहे।

भगवान नेमिनाथ के आने का और ३ युगल भ्राता कृष्ण के पालन का प्रमाण महापुराण उत्तरपुराण पृ० सं० ४८३ श्लोक सं० ३८५ में देखिये इस महापुराण में निम्नांकित श्लोक आया है—

दिविजो नैगमषीख्यो भद्रिलाख्य पुरेलका ।
वणिकसुतायानिक्षिण्य पुरस्तातत्सुतान मृतान ॥

भावार्थ:—सुदृष्ट नामा सेठ जिनकी धर्मपत्नी का नाम अलका रेवती नामा धाय थी। सेठानी के मृतक पुत्र होते थे। जब उन्हें श्मशान भूमि में ले जाते थे तो उन्हें देव गण देवकी के युगल पुत्रों को वहां रखते थे तो उन्हें वहां जीवित बालक मिलते थे। वह सेठानी के प्रसूतिगृह में रख कर पालन पोषण करते थे। और मजे की तो बात यह थी कि सेठानी के भी युगल बालक ही होते थे किन्तु यह गुप्त बात सेठानी को जाहिर नहीं होंने देते थे।

इसी प्रकार से युगल मृत बालक देवकी के प्रसव गृह में रख दिये जाते थे जिन्हें देखने

श्री वसुदेव जी इस भद्दिलपुर नगर में आये थे और उन बालकों को गुप्त रूप से देखकर वासुदेव नगर जहां पर श्री वसुदेव जी ने अपने स्थान ठहरने का रखा था उस स्थान का नाम जनता ने वासुदेव नगर रखा किन्तु वह नगर वर्तमान में गंजबासौदा के नाम से प्रचलित है।

जन्मे जब गाया नहीं, मरे न रोया कोय।

बीच दशा सुख भोगते, नारायण पद होय ॥

आपको यह भली प्रकार से विदित है ही कि—कृष्ण जी का जन्मकाल संकटकालीन स्थिति में हुआ। क्योंकि मामा कंस ने देवकी का प्रसवगृह अपने जेलखाने में रखा था। और लालन पालन माता यशोदा जोकि एक ग्वालन थी उसके यहां हुआ था। इसलिए जन्म के गीत नहीं गाये गए। और अन्तिम अवस्था में जब द्वारिका में आग लगी तो उन्हें द्वारिका का मोह त्याग कर वन में आये प्यास लगी भाई बल्देवजी पानी लेने गये उसी समय व्याधे ने आकर बाण मारा जिससे कृष्णजी का शरीर छूट गया। इसका उल्लेख बड़ोह-पठारी के शिलालेखों में भी है। यहां पर भी प्राचीनकाल की एक गडगासन प्रतिमाओं की चौबीसी बड़ी मनोहर बनी हुई है। अद्वितीय दर्शनीय स्थान है। इन पर भी तीर्थक्षेत्र कमेटी को ध्यान देना आवश्यक है।

पश्चात इन तीन युगल भ्राताओं के लेने हेतु गिरिनार पर ५६ दिनों तक भगवान नेमिनाथ छद्मस्थ रहकर केवल ज्ञानी हुये। और यहां विदिशा में उन्होंने अपना प्रथम उपदेश यादवों को सांची पर दिया। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण दरवाजों में उत्कीर्ण शिल्पकला है जोकि महाराजा अशोक के श्वसुर और उनकी रानी असंघमित्रा जिनके पुत्र व पुत्री संगमित्रा थी और वह बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ विदेशों में गये थे। सम्राट अशोक के विवाह समय की वर-वधू की प्रतिमायें और स्तंभादि भी प्राप्त हैं जो जंगलों में अस्तव्यस्त दशा में हैं के द्वारा यह तोरण द्वार बनवाये गये थे। यह जैनाचार्यों की सूझ बूझ और धर्मप्रचार की पद्धति थी। देखिये—

गिरिनार गौरव-लेखक बाबू कामताप्रसाद जी जैन अलीगंज एटा के पृष्ठ २७ पर।

द्वारका भस्म क्यों हुई ?

धर्मचक्र के प्रवर्तन के लिये आये हुये भगवान नेमिनाथ ने देवकी के छह युगल पुत्रों को धर्मोपदेश देकर दीक्षित किया और मुनि संघ में सम्मिलित कर विहार किया।

कृष्ण जी ने भगवान नेमिनाथ से पूछा था कि क्या यादव वंश इसी प्रकार से सदैव रहेगा ? तो भगवान ने अपनी दिव्यध्वनि में कहा था कि आज से १२वें वर्ष पश्चात द्वीपायन मुनि के कोप से और यादवों के मदिरापान के कारण द्वारिका में आग लगेगी और केवल कृष्ण और बल्देवजी के सिवाय कोई नहीं बचेगा और तीर की ओर संकेत कर कहा कि इस तीर के द्वारा जरतकुमार के हाथ से मृत्यु का कारण बनेगा। बारह वर्ष बीते, वही दिन आया जो भगवान ने कहा था, वही हुआ।

भगवान की वाणी झूठी बनाने के लिये द्वीपायन मुनि ने अज्ञात वास लिया। जरतकुमार ने बाण को घिस कर समुद्र में फेंका उसे मछली निगल गई। मछली धीवर ने पकड़ ली। उसके पेट में बाण निकला उसने पुनः उसी बाण को तैयार कर लिया। और उस बाण को धीवर से जरतकुमार ने छीन लिया। इधर मदिरा बनने वाले पदार्थ जंगलों में फिकवाना प्रारम्भ किया वर्षा प्रारम्भ हुई यत्र यत्र गड्ढों में पानी भर गया उन्हीं में वह मादक पदार्थ सड़कर मदिरा बन गये। ग्रीष्मकाल आया। प्यास से कंठ सूखने लगे। यादव लोग वनों में से वनक्रीड़ा करते निकले और द्वीपायन मुनि को देखकर कहने लगे—अरे इस मूर्ख के दर्शन हो गये, इससे तो द्वारिका में आग लगेगी आदि अश्लील शब्द कहते हुए अपमानित करते उन्हें पत्थरों से पूर दिया। अन्त में उसी समय कुत्ता आया उसने उनपर पेशाब करदी इससे मुनि के क्रोध का ठिकाना नहीं रहा। उनके बांये कंधे से एक जलता हुआ अग्नि का पुतला निकला और उसने द्वारिका में घूम कर आग लगादी। नगर में हाहाकार मच गया। जहाँ पानी से बुझाते थे वहाँ पानी तेल की भांति जलता था और कोट के किवाड़ वज्र की भांति लग गये कोई बाहर जा अपना जीवन नहीं बचा सका। केवल कृष्ण और बलदेव जी ने मुनि से अपराध की क्षमा याचना की विनती की तो उन्होंने दो अंगुली से संकेत करके कह दिया कि तुम दोनों ही बचोगे और वही हुआ। यह साक्ष्य हरिवंश-पुराण जिनसेनाचार्य कृत ३५ वां सर्ग अरिष्ट नेमि का चरित्र वसुदेव ने अतिमुक्तक मुनि के मुख से सुनकर परम हर्षित भये। पृष्ठ ३२६ समवशरण आने धर्मोपदेश देने त्रय युगल पुत्रों को मुनिव्रत धारण करा कर साथ ले जाने के सम्बन्ध में पृष्ठ ४७३ पर उल्लेख है।

महापुराणान्तर्गत उत्तर पुराण पूर्व ७१ अध्याय २४ पृष्ठ ५३१ पर श्रीमद् गुणभद्राचार्य विरचित अनुवादक पं० लालाराम जी आगरा चावली प्रकाशक श्री श्रुतभण्डार व ग्रन्थ प्रकाशन समिति फलटण, जिला उत्तर सतारा श्री वीर निर्वाण संवत् २४८१ देखिये।

भद्रिलाख्य पुरे देशे मलये ८ जनि रेवती सुदृष्टि श्रेष्ठिना श्रेष्ठा श्रेष्ठिनी सालकाख्य वर्द्धि ॥ २९३ ॥ प्राक्तनाः षट् कुमारांश्च यमीभूस्तव त्रयः तदानीमेव शक्रस्य निदेशात्कंसतो भयात् ॥२९४॥ ते नैगमर्षिणा नीताः श्रेष्ठिन्यास्त्वलकाख्यया। वर्द्धितादेवदत्ताश्च देवपालोनुस्ततः ।२९५। पृष्ठ ॥ ५३२ ॥

शीतलाख्य जिनाधीश तीर्थे धर्मे विनंक्ष्यति।
भद्रिलाख्यपुराधीशो नाम्नामेघरथो नृपः ॥३०३* ॥
प्रेयसी तस्य नन्दाख्या भूतिशर्मा द्विजाग्रणीः।
तस्यासीत्कमला पत्नी मुंडशाला यनस्तनयोः ॥३०४॥

भावार्थ—रेवती का जीव मलयदेश के भद्रिलपुर नगर के सेठ सुदृष्टि के अलका नाम श्रेष्ठ सेठानी हुई है। छहों राजपुत्रों के जीव-१ देवदत्त, २ देवपाल, ३ अनीकदत्त, ४ अनीकपाल,

* शीतलनाथ तीर्थंकर के बाद जब धर्म का विच्छेद हुआ था तब भद्रिलपुर नगर में राजा मेघरथ राज्य करता था ॥ ३०३ ॥

(५) शत्रुघ्न (६) जितशत्रु क्रमशः देवकी के गर्भ में आये। कंस के जेलखाने के अन्दर जन्म लिया। कंस के डर से इन्द्र की आज्ञा से नैगमर्षी नाम के देव ने उन पुत्रों को उठाकर अलका नाम की सेठानी के घर पर रख दिया इसलिए अलका ने ही उन पुत्रों का पालन किया। वे छहों भाई नई अवस्था में ही जिनदीक्षा धारण कर आहार के लिये नगर में आये थे इसलिए उन्हें देख कर उनमें तेरा (देवकी का) पूर्व जन्म का चला आया स्नेह उत्पन्न हो आया है ॥ २९७ ॥

भगवन-नेमिनाथ को वैराग्य का कारण

भगवान नेमिनाथ जी कृष्ण जी के लघु भ्राता थे और यदुवंश में उनका जन्म हुआ था। भगवान नेमिनाथ एक दिन फाल्गुन मास में जलक्रीड़ा के लिये गये हुए थे। वहां भावज सत्यभामा ने भगवान नेमिनाथ के वस्त्र भिगो दिये। जब वस्त्र बदले और भीगे वस्त्रों को निचोड़ने के लिये भावज सत्यभामा की ओर संकेत किया तो उसने बड़े गर्व के साथ उत्तर दिया कि मेरे पति ने अनेकों शत्रुओं का मान मर्दन किया है और शंखध्वनि की है। आप अपना बल दिखाइये। यह सत्यभामा के अभिमान युक्त बचनों को सुनकर लज्जा के कारण कुछ न कह कर आयुधशाला में जा नाक के स्वर से शंखनाद कर दिया जिससे कृष्ण भयभीत होकर निमित्त ज्ञानियों को बुलाकर राजनीति पर विचार करने लगे। चतुर रुकमणी ने वस्त्र निचोड़ कर सुखा दिया। निमित्तज्ञानियों ने बतला दिया कि नेमिनाथ राज्य नहीं करेंगे। वह वैराग्य धारण करेंगे। इनके वैराग्य का कारण पशुवध के लिये घिरा होना होगा।

बस अब क्या देर थी, जूनागढ़ के राजा उग्रसेन की राजकुमारी राजुल के साथ सगाई का दस्तूर बड़े ठाटबाट के साथ किया गया और ब्याह की तैयारी हुई। जब बारात जा रही थी तो कृष्णजी ने भगवान नेमिनाथ को वैराग्य हो और यह विवाह न करने पावें और गिरनार पर जिनदीक्षा ले लेवें, इस हेतु उन्होंने पशुओं को एक कठघरे में घेर रखा था। जब भगवान नेमिनाथ ने इस आनन्द के उत्सव में उन पशुओं को बन्दी बना देखा तो वह कृष्णजी से पूछने लगे दादा यह क्यों बन्द किये गये हैं? तो दादा मौन हो गये और सारथी तत्काल बोल उठा कि यह पशु आपके विवाह में मारे जावेंगे। और इनका माँस आये हुये माँसाहारी महमानों को पका कर खिलाया जावेगा। भगवान नेमिनाथ ने उन मूक पशुओं की चीत्कारमय प्रार्थना को सुनकर उन्होंने तत्काल रथ को रोका और उन पशुओं के बंधन को खोला और उन पशुओं से क्षमा माँगने लगे कि मेरे एक जीव के विवाह में अनेकों जीवों का विध्वंस हो। ऐसे जीवन और विवाह को धिक्कार है। और तत्काल ही उनको वैराग्य हुआ। बारह भावनायें भाते ही लौकांतिक देव पालकी लेकर आये। भगवान ने तत्काल कंकणादि तोड़ कर फेंक दिये और पालकी में सवार हो गये। जब देव पालकी उठाने लगे तो मनुष्यों ने पालकी उठाने से उन्हें रोक दिया। और कहा कि हम

उठावेंगे। तदुपरांत यह निर्णय हुआ कि देवों को मोक्ष नहीं होता। मनुष्य पर्याय धारण कर ही मोक्ष होता है इसलिये पहिला अधिकार मनुष्यों को पालकी उठानें का है। और मनुष्यों ने पालकी उठाई। पश्चात् देवों ने वह पालकी शेषावन के अन्दर पहुंचा दी। वहां भगवान ने केशलुंचन कर ध्यानमुद्रा धारण की।

इधर राजुल की एक दासी जो चतुर थी वह भगवान नेमिनाथ को रथ से उतरते देख कर दौड़ आई थी और उसने समस्त बात को सुनकर राजुल को समस्त वृतान्त कह सुनाया। राजुल यह वृतान्त सुनते ही कि मेरा पति वैराग्य धारण कर गया, तत्काल ही बेहोश होकर भूमि पर गिर पड़ी। शीतोपचार के पश्चात् जब मूर्छा हटी तो वह भी गिरनार पर जाने लगी। पिता ने बहुतेरा समझाया कि तेरा विवाह किसी दूसरे राजकुमार से कर देंगे। किन्तु राजुल ने स्वीकार नहीं किया और यह बताया कि मेरा साथ नौ भव से है। और विवाह को ठुकरा कर गिरनार पर पति के पास ही आर्यिका की दीक्षा लेकर तपस्या करने लगी। यह है आदर्श जिसे जैनाचार्यों ने शास्त्ररूप में लिख कर जैनसंस्कृति को जीवित रखा है। हमारे अन्य इतिहासकारों ने कभी जैन ग्रन्थों को नहीं देखा और यदि देखा भी है तो उसे प्रकाश में लाने से छिपाया ही जिससे जनसाधारण को सत्य जानकारी से वंचित रहना पड़ा। मध्य भारत का इतिहास पृष्ठ १८४ पर जो चित्र प्रिन्ट किया है, जोकि विदिशा में ही मिला था। जिसे बौद्ध स्तूप की बाढ़ के नाम से पृष्ठ ३२७ पर है। इस बात का स्पष्टीकरण देता है कि भगवान नेमिनाथ की जब बारात पहुँची थी जूनागढ़ के राजा उग्रसेन की लाड़ली राजकुमारी राजुल से विवाह करने के लिये तो भगवान नेमिनाथ क्या देखते हैं ?

एक कठघरे में वनखण्ड के पशु हिरण, चीतले, सामर, रोज, खरगोश आदि बन्द हैं। बस क्या था, भगवान के अवधिज्ञान में यह सब झलक ही रहा था कि मेरे भाई ने मेरे लिये यह जाल बिछाया है। भगवान कृष्ण से पूछते हैं—

भगवान ने पूछा कर चीत्कार,
मचा क्यों दादा हाहाकार ?

तो कृष्ण जी चुप हो गये क्योंकि वह क्या उत्तर देते ?

किन्तु सारथी ने तत्काल ही उत्तर दिया कि—आपके विवाह में आये हुये क्षत्रियगण को जो भोजन दिया जावेगा उसमें इनका मांस भी होगा।

भगवान कहते हैं मुझे धिक्कार है कि मैं संसार के भोगों को भोगूं और यह निरपराध वन में विचरने वालों का जो मुंह से कुछ कह नहीं सकते मारे जावें यह अनर्थ एक मेरे कारण को लेकर होवे यह कदापि नहीं होगा। बस देर क्या थी। भगवान नेमिनाथ ने उन पशुओं के पास जाकर मुक्त कर दिया और उनसे क्षमा याचना करने लगे। यह थी पूर्ण की अहिंसा।

अब चित्र पर आइये।

चित्र में देखिये, ऊपर की ओर पशु कठघरे में बन्द हैं नीचे रथ में भगवान नेमिनाथ बैठे हैं उनके सिर पर छतरी लगी है। एक चंवरधारी सेवक चंवर सिर पर ढोर रहा है। सारथी रथ हांक रहा है। कृष्ण जी पीछे बैठे हैं।

इस प्रकरण के गूढ़ रहस्य का स्पष्टीकरण किसी भी विद्वान ने किसी भी इतिहास की पुस्तक में उल्लेख नहीं किया किन्तु पक्षपात के साथ उस जैन सांस्कृतिक साहित्य को जितना मिटाने की कोशिश की वह आपके सामने ही साक्ष्यस्वरूप प्रस्तुत है।

अब आप विदिशा और पद्मावती के नागवंशी राजाओं के संबंध में देखिये कि उन्हीं के मुद्राओं से यह साक्ष्य मिलता है कि यहाँ इनका राज्य काल रहा है। जिनमें जैन तीर्थंकर, आचार्य, साधु, आर्यिका, पशु, पक्षी, वृक्ष, मेंढ़क, मछली, आदि के चित्र दिये हैं। वह इस बात को साक्षी देते हैं कि यह शरीर पांच तत्व का पुतला है। समस्त संसार इस मानवशरीर में ही है। जिन्हें भी वर्तमान इतिहासकारों ने नहीं समझ पाया है। उसका स्पष्टीकरण हमने यथाशक्ति अपनी अल्पबुद्धि के अनुसार समझाने की कोशिश की है।

यहां इस प्रान्त में जैनाचार्य शिवनन्दी और वीरसेन पट्टाधीश हुए हैं। देखिये मध्य भारत इतिहास पृ० १८९ पंक्ति १८। हमारा उन ऐतिहासिक विद्वानों से नम्र निवेदन है कि वह यह बतावें कि जैन सांस्कृतिक मूर्तियां जो कि जैन मूर्तियों के साथ साथ उत्कीर्ण कराई गई हैं उनका किस उद्देश्य से निर्माण कराया गया था और उनके आसन वाहन, शस्त्रास्त्र इत्यादि जो प्रतीकात्मक चिन्ह बतलाये हैं इनका कभी अपनी लिखित पुस्तकों में उल्लेख किया है और यह भी बताने का कष्ट करें कि उनका मानव जीवन से क्या सबंध है और हमें इससे क्या ज्ञान प्राप्त करना चाहिये ? उसका कहीं भी उल्लेख नहीं किया जिसे जैनाचार्यों ने मूक भाषा में मूर्तिरूप देकर जीवित रखा है जिसका हमारे भारतीय संस्कृति के दुश्मन अनधिकार पूर्ण अधिकार कर व्यापार कर रहे हैं। यह है हमारी अनभिज्ञता और फूट। उपेक्षा, असहयोग, और विद्वेष की भावना कभी भी फलवती नहीं होती। पूर्व में जैनाचार्य यह प्रतिज्ञा करते थे कि हम पहिले (संख्या प्रमाणित कर) जैन बना लेंगे तभी आहार को आवेंगे। अब तो उसके विपरीत ही होता जा रहा है। संयम, सेवा, साधना और सुशिक्षा समाप्त हो गई। इसी का दुष्परिणाम है।

पट्टाधीश आदि की नामावलि

अब आपकी सेवा में यह बताना आवश्यक समझते हैं कि उज्जैन में भी १८ अठारह जैनाचार्य पट्टाधीश हुए हैं।

(१) महाकीर्ति ६८६ (२) विष्णु नन्दी ७०४ (३) श्रीभूषण ७२६ (४) शीलचन्द्र ७३५ (५) श्रीनन्दी ७४९ (६) देशभूषण ७६५ (७) अनन्तकीर्ति ७६५ (८) धर्मनन्दी ७८५ (९) विद्यानन्दी ८०८ (१०) रामचन्द्र ८४० (११) रामकीर्ति ८५७ (१२) अभयचन्द्र ८७८ (१३) नरचन्द्र ८९७ (१४) नागचन्द्र ९१६ (१५) नयनन्दी ९३३९ (१६) हरिनन्दी ९४८ (१७) महीचन्द्र ९७४ (१८) माघचन्द्र।

चार आचार्य (बुन्देलखण्ड) के पट्टाधीश हुए स्थान चन्देरी में। (१) लक्ष्मीचन्द्र १०२३ (२) गुणनन्दी १०३७ (३) गुणचन्द्र १०४८ (४) लोकचन्द्र १०६६।

कुण्डलपुर (दमोह) जिला सागर मध्य प्रदेश में हुए पट्टाधीश बारह-जैनाचार्य।

(१) ब्रह्मनन्दी ११४४ (२) शिवनन्दी ११४८ (३) विश्वचन्द्र ११५५ (४) हृदिनन्दी ११५६ (५) भावनन्दी ११६० (६) सूरकीर्ति ११६७ (७) विद्याचन्द्र ११७० (८) सूरचन्द्र ११७६ (९) माघनन्दी ११८४ (१०) ज्ञानन्दी ११८८ (११) गंगकीर्ति ११९९ (१२) सिंहकीर्ति १२०६।

ग्वालियर में होने वाले १४ चौदह जैनाचार्यों की पट्टावलि।

(१) हेमकीर्ति १२०९ (२) चारुनन्दी १२१६ (३) नेमिनन्दी १२२३ (४) नाभिकीर्ति १२३० (५) नरेन्द्र कीर्ति १२३२ (६) श्रीचन्द १२४१ (७) पद्मकीर्ति १२४८ (८) बर्द्धमानकीर्ति १२५३ (९) अकलंकचन्द्र १२५६ (१०) ललितकीर्ति १२५७ (११) केशवचन्द्र १२६१ (१२) चारुकीर्ति १२६२ (१३) अभयकीर्ति १२६४ (१४) बसन्तकीर्ति १२६४। अंतिम भट्टारक हरिश्चन्द्र जी को गणतन्त्रराज्य में गोली से मार डाला यह नेत्रविहीन १९१३ में जीवित ...... थे।

नोट:—इन्डियनववेरी की जो पट्टावलि मिली है उसमें उपर्युक्त चौदह जैनाचार्यों का पट्ट पर ग्वालियर में बैठना और होना लिखा है किन्तु वसुनन्दी श्रावकाचार में इनका होना चित्तौड़ में भी लिखा है पर चित्तौड़ के भट्टारकों की अलग भी पट्टावलि है जिनमें ये नाम नहीं पाये जाते। सम्भव है कि ये पट्ट ग्वालियर में ही हों। इनको ग्वालियर की पट्टावलि से मिलाने पर निश्चय होगा। चित्तौड़ की पट्टावलि नीचे दी जाती है।

अजमेर में होनेवाले ५ पांच जैनाचार्यों की पट्ट पर बैठने होने की नामावलि (१) प्रख्यात-कीर्ति १२६६ (२) शुभकीर्ति १२६८ (३) धर्मचन्द्र १२७१ (४) रत्नकीर्ति १२९६ (५) प्रभाचन्द्र १३१० में हुए।

तीन जैनाचार्य पट्टाधीश दिल्ली में हुए हैं।

(१) पद्मनन्दी १३८५ (२) शुभचन्द्र १४५० (३) जिनचन्द्र १५०७

चित्तौड़ में होने वाले १६ जैनाचार्य पट्टाधीशों की नामावलि।

(१) प्रभाचन्द्र १५७१ (२) धर्मचन्द्र १५८१ (३) ललितकीर्ति १६०३ (४) चन्द्रकीर्ति १६२२ (५) देवेन्द्रकीर्ति १६६२ (६) नरेन्द्रकीर्ति १६११ (७) सुरेन्द्रकीर्ति १७२२ (८) जगतकीर्ति १७३३ (९) देवेन्द्र-कीर्ति १७७० (१०) महेन्द्रकीर्ति १७९२ (११) क्षेमेन्द्रकीर्ति १८१५ (१२) सुरेन्द्रकीर्ति १८२२ (१३) सुखेन्द्रकीर्ति १८५९ (१४) नयनकीर्ति १८७९ (१५) देवेन्द्रकीर्ति १८८३ (१६) महेन्द्रकीर्ति १९३८।

नागौर के २६ भट्टारकों की नामावलि

(१) रत्नकीर्ति १५८१ (२) भुवनकीर्ति १५८६ (३) धर्मकीर्ति १५९० (४) विशालकीर्ति १६०१ (५) लक्ष्मीचन्द्र (६) सहस्रकीर्ति (७) नेमिचन्द्र (८) यशकीर्ति (९) भुवनकीर्ति (१०) श्रीभूषण (११) धर्मचन्द्र (१२) देवेन्द्रकीर्ति (१३) अमरेन्द्रकीर्ति (१४) रत्नकीर्ति (१५) ज्ञानभूषण (१६) चंद्रकीर्ति (१७) पद्मनन्दि (१८) सकलभूषण (१९) सहस्रकीर्ति (२०) अनन्तकीर्ति (२१) हर्षकीर्ति (२२) अनन्त-कीर्ति (२३) हेमकीर्ति यह आचार्य १९१० माघ शुक्ला द्विविया सोमवार को पट्ट पर बैठे।

इनके बाद क्षेमेन्द्रकीर्ति हुए इनके पट्ट पर मुनीन्द्रकीर्ति हुए और अब नागौर की गद्दी पर श्री कनककीर्ति महाराज विराजमान हैं।

बाममार्गी शिलालेख

संवत् १३२० वर्षे वैशाख सुदी ३ गुरौ अद्ये श्री तउल स्वामी देवपुरे अक्षयसिंह देव राज्ये पदाधिपक पं० मदनसिंह व श्रेयनिमित्तक प्तकापदेवी भानुमती द्रविषु प्रदत्रयोनदादाति तस्य भावहसो जत्राति माता गर्दभो जनाति।

इस शिलालेख के नीचे एक चित्र घोड़े का बना हुआ है और वह घोड़ा एक स्त्री से संभोग करता बताया है। जिसका षट्मत् पर जैनाचार्य श्री समन्तभद्राचार्य ने बाद का लोहा लिया और विजय पाई, इसलिये वह लोहाचार्य कहलाये। विवेकी ध्यान देवें।

बाममार्गियों का उपदेश था कि सुरापान करने वाला सीधा स्वर्ग को जाता है। उस समय इन जैनाचार्य श्री समन्तभद्राचार्य जोकि क्षत्रिय कुल के एक कदम्ब वंशी राजा शान्तिवर्मा जिनका नाम था राज्य का परित्याग कर जैन आचार्य हुये और इन्हीं अग्रवाल समाज के राजा दिवाकर को जैनधर्म की दीक्षा दी। माथुर गच्छ का हम ऊपर वर्णन कर चुके हैं। जिस सम्बन्ध में एक शिलालेख स्वामी समन्तभद्र द्वारा उल्लिखित विजय मन्दिर के एक खंभे पर उत्कीर्ण है जो माथुर वैश्यों से सम्बन्धित है। माथुर वैश्य जाति इस ओर ध्यान देवे कि पहिले हम कौन थे और अब क्या हैं। हम किस ओर बहे जा रहे हैं।

विजय मन्दिर में एक कोठली के अन्दर एक शिलालेख और लगा है जिसमें मनुष्य हाथी, घोड़ा, ऊंट, बैल, भैंस, कुत्ता, बकरा, भेड़ की उत्कृष्ट आयु का प्रमाण हैं। उसे भी देखिये। यह वह जातक पृष्ठ ६४ आयुर्दाय में उल्लेख हूँ। बाराह मिहर जैनाचार्य ने लिखा है इनका लिखा एक सामुद्रिक शास्त्र भी प्राप्त हुआ है।

गोलापूर्व जैन समाज की वंशावलि एवं गोत्रावलि—

(१) इन्द्र महाजन (२) कनकपुरिया (३) कपासिया (४) करैया (५) कहारिया (६) कोंनिया (७) खड़ेरे (८) खाग (९) खुदेले (१०) खैरानियां (११) गन्धर्प:गन्धकार (१२) गड़ौले (१३) गुबारिहा (१४) गोदरे (१५) गोरिहा (१६) गुगौरिया (१७) चन्देरिया चांदेलीय (१८) चारखेरे (१९) चौंसरा (२०) छत्रेले (२१) छोकड़े छोड़कटे (२२) जतहरिया (२३) जुझौतिया (२४) टीका के रावत (२५) टैटवार (२६) तिगैले (२७) दण्ड धार (दण्डकार) (२८) दुगैले (२९) द्विज महाजन (३०) दरगैंया (३१) घना (३२) धमोनयां (३३) नाहर (३४) निर्मोलक (३५) पचरसे (३६) पटारिया (३७) पटौरिया (३८) पड़ेले (३९) पतरिया (४०) पिपरैया (४१) पंचरत्न (४२) पचलोरे (४३) पैंथवार (४४) पपौरहा (४५) प्रेमपुरिया (४६) फुसकेले (४७) बड़घरिया (४८) बदरौठिया (४९) बनोनया (५०) बेरिया (५१) बचैया (५२) बोदरे (५३) बिलबिलया (५४) भरतपुरिया (५५) भिलसैयां (५६) मरैया (५७) मझगैयां (५८) मेघवार (५९) रस (६०) राधेले-रहदेले, रांघेलीय (६१) रौतेले (६२) सनकुटा (६३) सपेले (६४) साधारण (६५) सांधेले-सांधेलीय (६६) सिरसपुरिया (६७) सोनी (६८) सौंधनी (६९) सोंरया (७०) सरखड़े (७१) सौतिया (७२) सपोलिहा (७३) शेखर (७४) हीरापुरिया (७५) लखनपुरिया (७६) थवोलिया।

अग्रवाल समाज और महासेन

अग्रवाल जैन समाज जिन्हें आचार्य स्वामी समन्तभद्र अपर नाम महासेन लोहाचार्य जिन्होंने काष्ठा संघ स्थापित किया। माथुर गच्छ, पुष्कर गण, हिसार पट्ट और लोहाचार्याम्नाय प्रचलित किया था, उस समय नवीन काष्ठासंघ ने आहार दान रोग समाप्ति। बाद दिया था।

यह लोहाचार्य जी दक्षिण देश भद्दलपुर जिसे वर्तमान में भेलसा नाम से परिवर्तित किया गया और विदिशा नाम से पुकारा जाने लगा जो मध्य प्रदेश की राजधानी के निकट ३२ मील पूर्व दिशा में है सांची यहां नेमिनाथ भगवान का समवशरण आया था और रचना सम्राट अशोक के द्वारा उन्हीं के स्वसुर जो जिनधर्म के पालक थे, उपदेश से विवाह में प्रतिज्ञा कराई थी निर्माण कराया है। इसी के ५ मील पूर्व में विदिशा है। यहां का जो किला बना हुआ था उसे नगरपालिका विदिशा ने अवैधानिक तौर पर विध्वंस किया। यह किला आचार्य स्वामी समन्तभद्र की बादशाला को जो कि १०५ गज ऊंची आधा मील लंबी आधा मील चौड़ी थी, जिसे बादशाह शमशुद्दीन अल्तमश ने विध्वंश किया था जिसमें माथुर गच्छ जहां वर्णन किया है। यहां एक शिलालेख में माथुर वंश का वर्णन आया है। इन्हीं लोहाचार्य ने अग्रोहे के निकटवर्ती हिसार में पहुँचे वहां इन्हें असाध्य रोग हुआ था जिससे वे मूर्छित हो गये थे वहां के श्रावकों ने उनको सन्यास मरण स्वीकार कराया था। इसके बाद कर्म से स्वभावत: लंघन होने के कारण त्रिदोष पाक होने से आप निरोगी हो गये थे। निरोगी होने पर जब होश हुआ तो इन्होंने भ्रमरी वृत्ति (भिक्षावृत्ति) से आहार करना विचारा। पीछे संघ ने उनसे कहा कि महाराज! हम लोगों ने आपको रुग्णावस्था तथा मूर्छितास्था में यावज्जीवन आपसे सन्यास मरण की प्रतिज्ञा करवाई है और आहार भी परित्याग कराया है। अत: यह संघ आपको आहार नहीं दे सकता। यदि आप नवीन संघ स्थापित कर कुछ जैनी बनावें तो वहां आप आहार कर सकते हैं। तथा वे लोग दान दे सकते हैं। तत्पश्चात् प्रायश्चितादि शास्त्रों के प्रमाण से उक्त वृतान्त सत्य जान लोहाचार्य जी वहां से विहार कर अग्रोहे नगर के बाह्य स्थान में पहुंचे। वहां एक बड़ा पुराना ईंटों का पजाया-ढेर था जो बहुत ऊंचा था उसी के ऊपर बैठ कर ध्यान निमग्न हुए। अनभिज्ञ लोग अद्वितीय साधु को वहां आये हुए देख कर दूर से ही बड़े आदर के साथ प्रणाम करने लगे। मुनि महाराज के आने की धूम सारे नगर में फैल गई। हजारों स्त्री पुरुष इकट्ठे हो गये। कारण विशेष से एक वृद्धा श्राविका भी किसी दूसरे नगर से आई थी। यह भी नगर में महात्मा आये हुए सुन उनके दर्शनों के लिये वहां आई। यह वृद्धा (बुढ़िया) दिगम्बराचार्य के वृत्तान्त को जानती थी इसलिये ज्यों ही इसने महात्मा को देखा त्यों ही समझ गई कि ये तो हमारे श्री दिगम्बर गुरु हैं बस क्या देर थी धीरे धीरे वह उस ईंटों के ढेर पर चढ़ गई और मुनि महाराज के निकट जाकर बड़ी विनय के साथ नमोस्तु नमोस्तु कह कर यथा स्थान बैठ गई। मुनि महाराज लोहाचार्य जी ने भी धर्मवृद्धि कह कर धर्मोपदेश दिया। यह घटना सबों ने देखकर बड़ा ही आश्चर्य मानकर अहो भाग्य इस बुढ़िया का कि ऐसे महात्मा इससे बोले। अब सब मुनिमहाराज के निकट उपस्थित हुए। मुनि महाराज ने सभी को श्रावक धर्म का उपदेश दिया। उपदेश सुनने के साथ ही सब का चित्त व्रत ग्रहण करने के लिये उतारू हो गया। पहिले अग्र वंशीय राजा दिवाकर ने अपने कुटु-

स्त्रियों के साथ श्रावक धर्म को स्वीकार किया । और पीछे इनके देखा देखी सवा लाख अग्रवालों के घर जैनी हो गये । पहिले छान कर पानी पीना, रात्रि में भोजन नहीं करना और नित्य प्रति देव दर्शन करना तीन मुख्य व्रत जैनियों के बतलाये गये ।

जल छानन निशि तज अशन, जैनी चिन्ह हैं तीन ।
प्रति दिन दर्शन जो करै, सो जैनी परवीन ।।

इस संघ की पट्टावलि अन्यत्र प्रकाशित है। इस संघ के पट्ट पर उस समय से लेकर आज तक बराबर अग्रवाल जाति के ही भट्टारक अभिषिक्त होते जाते हैं ।

यह वर्णन जैन सिद्धान्त भास्कर काष्ठासंघ उत्पत्ति पृष्ठ १२-१३-१४ किरण ४, सन् १९१३ से लिया गया है । जिन्हें संदेह है वह देख सकते हैं ।

अब आपके समक्ष अग्रवाल जाति के गोत्र जो कि संख्या में १७।। हैं जो कि ३ गोत्र पर-वारों में भी मिलते हैं कास, बासलऔर गोयल । इस अग्रवाल जाति के इतिहास लेखक सत्यकेतु विद्यालंकार हैं । मुद्रक देहली कमर्शियल प्रेस चांदनी चौक देहली है ।

अम्बाला कमिश्नरी, हिसार जिला में अग्रवालों की संख्या सबसे अधिक है । अग्रोहा में अग्रवालों का विकास हुआ है । अग्रवालों की अच्छी बड़ी संख्या जैन-धर्म की अनुयायी है । जैन अग्रवालों को सरावगी कहते हैं । पंजाब और दिल्ली में जैन अग्रवालों की संख्या विशेष है ।

—: दानवीर महाराजा कर्ण :—

जो १२।। फुट लम्बी मूर्ति कुबेर की नदी बेतवा से राजमल मड़वैया ने निकलवाई थी और प्रचार श्रीबाबू तखतमल जी के सुपुत्र का नाम सन् १९५२ के चुनाव क्षेत्र में जिय प्राप्ति के लिये प्रकाशित किया गया था और जिस पर डायरेक्टर पुरातत्व बिभाग ग्वालियर ने भूल स्वीकार की है निकलवाई थी वह मूर्ति कुबेर की नहीं है किन्तु महाराजा कर्ण की है। इस संबंध में यह प्रमाण मिलता है कि महाभारत के इस प्रकरण में पृष्ठ ५९ पर अग्रवाल जाति के इतिहास में अध्याय चौथा अग्रवाल जाति की उत्पत्ति में यह वर्णन आया है कि महाभारत के समय राजाकर्ण हस्तिनापुर से दिग्विजय प्रारम्भ कर पश्चिम की ओर विजय यात्रा करते हुए विविध राज्यों को विजय किया । उन राज्यों में से अनेक गणराज्य थे। राजा कर्णद्वारा विजय किये गये गणराज्यों में से अन्यतम आग्रेय गण भी था जो रोहतक और मालवगणों के बीच में स्थित था। प्राचीन भारतीय इतिहास में माल-वगण बहुत प्रसिद्ध था। सिकन्दर के यूनानी ऐतिहासिकों ने भी इसका उल्लेख किया है। संस्कृत साहित्य में अन्यत्र भी अनेक स्थानों पर इसका जिक्र आता है। यह मध्य पंजाब में स्थित था। रोहतक गण का वर्तमान प्रतिनिधि स्पष्ट रूप से रोहतक है । हस्तिनापुर के पश्चिम की तरफ विजय यात्रा करते हुए कर्ण ने पहिले रोहतक को जीता, फिर आग्रेय को और फिर मालव को ।

यह उल्लेख इस बात की पुष्टि करता है कि महाराजा कर्ण का यहां आना सिद्ध होता है और यह मूर्ति जो कि वर्तमान में शासकीय संग्रहालय में विद्यमान है और इसके साथ जो भी मूर्तियां एकत्रित की गई हैं और संग्रहालय निर्माण की योजना आदि सब का श्रेय इस पुस्तक के लेखक को मिलना चाहिये था किन्तु शुभ कार्यों में बाधायें अवश्य आती हैं। शासन में कोई भी व्यक्ति इस रुचि का नहीं मिला और जिस वृक्ष को जिस प्रकार का फलता फूलता वृक्ष बनाना था मन की मनमें लेखक के रहगई। और श्रीमान् इतिहास के विद्वान श्री, वि० श्री० वाकणकर साहब भारतीय भवन के आग्रह से लिखने का कार्य प्रारंभ किया जो कि आज आपके समक्ष यह पुस्तक के रूप में सेवा प्रस्तुत है।

भारत के सम्राटों की विशेषतायें थीं सहनशीलता, होने से राजनीति विशारद निःस्वार्थी त्यागी पवित्र हृदय आचार्यों को अपने मंत्री पद पर नियुक्त करते थे। जिससे राज्य के रीति रिवाज नियमों और प्रथाओं के अनुसार शासन भली प्रकार से चल सके चलाये थे। किन्तु वर्तमान गणतन्त्र राज्य में विपरीतता देखने में आती जा रही है। जिस प्राचीन भारत में घी, दूध की नदियां बहती थीं वहां घी, दूध के वृक्षों को राज्य शासकों ने सिल्लीखाने बना करके खाया और रहा सहा है उसे भी नेश्तनाबूद करने पर उतारू हैं गो बध बन्द नहीं करते समस्त भारत में हिंसा की बाहुल्यता बढ़ती जा रही है। आहार बिहार में काफी परिवर्तन आ गया है।

खान पान का चित्र पर पड़ता अमिट प्रभाव।
जैसा शुद्ध अशुद्ध हो, वैसे बनते भाव ॥

जितने भी शासक बनते हैं केवल पांच वर्ष के लिये और वह भी कौन जो हीन वर्ण के हैं जिनके वंशजों ने जीवन भर नगर की सफाई की मैला फेंका, जो मासाहारी रहे, जिन्होंने रात दिन डांके और चोरियां कीं, जिसमें लेश मात्र भी दया का नाम नहीं; जिन्हें केवल पैसा ही मां बाप है। जिन्हें उत्तम पदार्थ दर्शनों को भी प्राप्त नहीं होते थे जिन्हें आज जलेबियां भी मुख में गड़ती हैं करकरी लगती हैं ऐसे लोग शासन की न्यायपूर्ण गद्दी पर राज्यारूढ़ अपने छल-बल से प्राप्त कर बैठ जाते हैं।

राज्यों ने कभी व्यापार नहीं किया। राज्य का व्यापार प्रजा के हाथों में रहता था। प्रजा में सेठ लोग अपने धन का सदुपयोग विपत्तिकाल में राज्यों को दिया करते थे। जैसा कि महाराणा प्रताप को विपत्तिकाल में भामाशाह ने दिया था।

दूरदर्शिता

श्रीमन्त माधवराव जी सिंधिया के शासन काल में एक प्रस्ताव यह आया था कि एक नगर सेठ के घर की खाना तलाशी लेना है और वह भी पुलिस के द्वारा।

तो उत्तर में श्रीमन्त स्वर्गीय महाराजा ने अपनी दूरदर्शिता और पूर्वापर विचार कर उत्तर दिया कि यदि मैं आज्ञा देता हूं तो यह पुलिस के लोग हर एक की तौहीन करेंगे और अपना घर भरेंगे दूसरों की इज्जत आबरू धूल में मिला देंगे किन्तु आज भारतीय शासन में ऐसा

न्यायप्रिय शासक देखने में नहीं आता। सब पंचवर्षीय योजना लेकर आते हैं और अपनी मनमानी करके अपने भारत के भविष्य पर विपत्तियों के नये नये बादल टैक्स, कानून के छोड़कर भारतीय भविष्य की सन्तति के लिये गहरी खाई खोदकर चले जा रहे हैं। इसका मानव जीवन पर क्या प्रभाव पड़ेगा ? धर्म कर्म समस्त बिगाड़ा जा रहा है। शिक्षा का प्रचार अधिक है किन्तु वह शिक्षा धार्मिक नहीं हैं। किसी भी व्यक्ति से पूछिये जो एम. ए. की डिग्री प्राप्त है तो उसे भी अर्थ लगाना नहीं आता, वह अर्थ विपरीत ही लगाता हैं। कहते हैं सर्प काटता है उसके खाने से आदमी मर जाता है। ध्यान दीजिये और क्रोधी, स्वार्थी, कामी पुरुष जो विषयासक्त है वह भी भयंकर है इसलिये कि विषधर का अर्थ सर्प से है और विष का धारने वाला पुरुष का शरीर विषयों से बना हुआ है और विषयों की ही पूर्ति में रात दिन लगा हुआ है इसलिये विषधर (सर्प) है और मणिधर सर्प उससे भी अधिक भयंकर विषैला है इसलिये कि उसके पास एक मणि जो वेश कीमती है जिसके प्रकाश में वह विचरण करता फिरता है और देखता समझता है। वह है ज्ञान। ज्ञान मनुष्य मात्र का तृतिय नेत्र है जो शिवजी के मस्तक पर बतलाया है।

परख सकती नहीं रतनों को, हर इन्सान की आँखें।
दिखाई ब्रह्म क्या देवे, जो न हों ज्ञान की आँखें॥

इन शासकों को केवल स्वार्थ व अपने शारीरिक सुखों का ही ध्यान है परमार्थ की ओर लेश मात्र नहीं। इसलिये यह उस ज्ञान मणि के संसर्ग का दुर्बुद्धि के कारण दुरुपयोग करते हैं। हृदय में विशालता और आदर्शमय जीवन का लक्ष्य नहीं है। यही पतन का मुख्य कारण है।

ज्ञान का करें गलत उपयोग, [illegible] हैं ऐसे लोग।

यह बात जहां तक मान्य है वह आपके समक्ष है। इसलिये यह ज्ञान का दुरुपयोग करने वाले अधिकारी वर्ग मणिधर सर्प से कम नहीं हैं। विवेकी ध्यान देवें। क्या यह बात असत्य है ? क्या ऐसे पुरुष प्रजा, राज्य शासन, शिक्षा, धर्म, समाज-सेवा, कर सकेंगे ? उन्हें तो अपनी कुर्सी कायम रखना है।

राजनीति की चासनी मुंह लागै इकबार।
लगी रहत धुन उसी की जीत होय या हार॥

और यह विजय पाते हैं फूट से। आप समझते हैं कि फूट नाम का फल क्या शिक्षा देता है :—

खेत में उपजै सब कोई खाय, घर में आवे घर बहिजाय।

यह नेता गण आपस में एक दूसरे के दोष देखते हैं किन्तु सन्मार्ग प्रदर्शक नहीं हैं। जिस घर में फूट हो क्या वह घर सरसब्ज हो सकता है ? कदापि नहीं। इस पर कवियों ने निम्नांकित दोहे कहे हैं—

गुल तो क्या हार तक न बचा हाय लूट से ।
भारत का बाग उजड़ गया आपस की फूट से ।।
फूट ऊपजे जौन कुल, सो कुल वेग नशाय ।
युग बांसन की रगड़ ते, सगरो वन जरिजाय ।।
गुलों को गुल लगे खाने, अरे सैयाद क्या करना ।
जहां बेदर्द हाकिम हो वहाँ फरयाद क्या करना ।।

वही हमारे राज्यशासन के अधिकारियों की है । भारत का भविष्य खतरे से खाली नहीं है । पूर्व में खान पानादि के संबंध में बड़ा विचार करते थे । और आज कल संयम नियम खान पानादि का कोई भेद भाव नहीं रहा ।

पर का झूठा अन्न जल ना गह महा अभक्ष ।
पर काढ़त ही श्वांस तें रोग होत प्रत्यक्ष ।।

तपेदिकादि रोगों में वृद्धि क्यों होती जा रही है ? क्योंकि हमने संयम नियम को तिलांजलि दे दी है । सभी की जूठी प्यालियों में खाते और पीते फिरते हैं । एक दूसरे के रोग के कीटाणु एक दूसरों को लग जाते हैं और उसका दुख भोगना पड़ता हैं ।

कुलानि जातिः श्रेणीश्च गणान् जान पदान् अपि ।
स्वधर्म चलितान् राजा विनीय स्थापयेत् पथि ।।

याज्ञवल्क्य स्मृति १, ३६०

जाति जानपदान् धर्मान् श्रेणिधर्मांश्च धर्मवित् ।
समीक्ष्य कुलधर्मांश्च स्वधर्मं प्रतिपादयेत् ।।

मनुस्मृति ८ ४१

भारतीय आचार्यों ने स्वधर्मः (आत्मीय धर्मः) वस्तुस्वभावो धर्मः के पालन करने में दृढ़ रहने पर अधिकाधिक ज्ञानवर्द्धन पर शास्त्र लिखे हैं । और बोध कराया है । वही एक शासन और विश्व के लिये उपयोगी है । इसकी परीक्षा मगध के महाराजा उपश्रेणिक ने अपने पुत्र श्रेणिक जिन्हें बिम्बसार कहा है । यह भगवान महावीर स्वामी के मौसिया थे । यह विवरण श्रेणिक चरित्र में पूर्णरूप से पढ़ने पर मिलेगा ।

अग्रवालों के १८।। गोत्र

अग्रवालों में विवाह के अवसर पर निशान, नगाड़ा छत्र, चंवर जो कि राज्यचिन्ह माने गये हैं पुराने अग्रेय राज्य का स्मारक है प्रयोग में लाते हैं । संस्कृत ग्रन्थ अग्रवैश्य-वंशानुकीर्तन में पूरे अठारह गोत्रों की सूची दी गई है, जो निम्नलिखित है :—

(१) गर्ग (२) गोइल (३) गावाल (४) वात्सिल (५) कासिल (६) सिंहल (७) मंगल (८) भंदल (९) निगल (१०) ऐरण (११) धेरण (१२) ढिगल (१३) तित्तल (१४) मित्तल (१५) तायल (१६) गोभिल (१७) गवन (१८) तुन्दन (१९) मित्तल। गवन आधा गोत्र हैं इसलिये १८॥ गोत्र हैं।

१ जिस प्रकार से परवारों में विवाह के समय स्वयं का और मामा का गोत्र बचाया जाता है उसी प्रकार से इन्होंमें और अन्य समाजों में भी बचाया जाता है।

ब्राह्मणों के आठ गोत्रः—

(१) विश्वामित्र (२) जमदग्नि (३) भारद्वाज (४) गौतम (५) अत्रि (६) वशिष्ठ (७) काश्यप (८) अगस्त्य।

राजा अग्र की सत्रह रानियाँ थीं उनके नाम निम्न प्रकार से हैं—

(१) मित्रा (२) चित्रा (३) शुभा (४) शीला (५) शिखा (६) शान्ता (७) रजा (८) चरा (९) शिरा (१०) शची (११) सखी (१२) रम्भा (१३) भवानी (१५) सरसा (१६) समा (१७) माधवी। माधवी इनमें पट्ट रानी थी।

अग्रवाल जाति के इतिहास में यह बात बतलाई है कि इनके यहाँ अश्वमेघ यज्ञ होते थे और उसमें घोड़ों का हवन किया जाता था। यह परम्परा वाममार्गी ब्राह्मणों ने चलाई थी जिस सम्बन्ध में एक पाषाण पर एक शिलालेख नहीं किन्तु विदिशा नगर में किले के चारों ओर ४ शिलालेख इस सम्बन्ध में प्राप्त हैं जिनमें एक शिलालेख मड़वैया संग्रहालय विदिशा में मौजूद है जो किले की दीवार में लगा था और वह एक मुल्ला जी को पत्थरों में नगरपालिका ने बेचा था। उसमें वह उनके हाथ पड़ा और उन्होंसे राजमल मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक विदिशा को मिला।

मत्स्य वराह का रागी और वीतरागी दर्शन

सांकेतिक चिन्ह तथा भावदर्शन

मछली—मछली वराह के सिर पर क्यों संकेत की है? भगवान वीतरागदेव ने जो सदुपदेश दिये हैं, उन्हें आचार्यों ने शास्त्रों में लेखबद्ध किया है, किन्तु मूर्तिकला के द्वारा उन्हें और भी स्पष्ट कर दिया है। जिस जीव ने इस संसार में जन्म लिया है वह सुख चाहता है और दुःखों से डरता है। इस पर श्री दौलतराम जी ने छहढाला में कहा है।

जे त्रिभुवन में जीव अनन्त, सुख चाहें दुख तें भयवन्त।

उक्त चित्र में संकेतों द्वारा निम्न भाव प्रदर्शित किये गये हैं:—

बाराह का मानव शरीर—मानव शरीर को आचार्यों ने संसार सागर कहा है जिसमें मन मछली है। मछली मध्य कमल के ऊपर चित्रित है। अनेक प्रकार के भोगों में लिप्त कामी पुरुष विषयों में आनन्द मानता है। जब कि बाराह (शूकर) अपवित्र वस्तु में आनन्द मानता है।

त्रिकमल—१ मोक्ष, २ चंचल मन, तथा ३ माया की ओर संकेत करता है; वह माया—

दोहा—

धरा कनक अरु कामिनी, ये हैं कडुवी बेल ।
बैरी मारे दाव दे, यह मारें हंस खेल ॥

लक्ष्मी—लक्ष्मी का सांकेतिक चिन्ह कमल है । सांसारिक भोगोपभोग वस्तुएं विना लक्ष्मी द्रव्य, अर्थ, जिसे व्यवहार के रूप में रुपया पैसा धन, लक्ष्मी कहते हैं । जिसकी सहायता से सांसारिक भोग भोगे जाते हैं और यही भोग रोग के कारण बनकर संकटापन्न की स्थिति उत्पन्न करते हैं । मछली की पूंछ के नीचे की ओर जो कमल अंकित है वह मोक्ष लक्ष्मी को ही संकेत करता है ।

वीतरागी पुरुष चारों पुरुषार्थ सम्पन्न होते हुये भी भुजंग के समान भोगों को मान कर त्याग देते हैं । जबकि रागी पुरुष उन्हें दांतों से पकडता है । जो कि इस चित्र में अंकित कर दर्शाया है ।

त्रिकमल नाल—यह कमल नाल लक्ष्मी; काल, मृत्यु; को आमन्त्रित करती है । काल एक सर्प के रूप में जहां पर बताया है उसे पांच फणका इसलिये माना है कि पंचेन्द्रिय जनित विषय कषायादि इस त्रिकमल से लिपटे हुये हैं । यह मृत्यु को संकेत करते हैं ।

शंख—वाराह मूर्ति और विष्णु के हाथ में जो शंख पकड़ा हुआ बतलाया है वह:—

फटो पेट दरिद्री नाम, उत्तम घर में वाको ठाम ।
श्री को अनुज विष्णु को सारो, पंडित होय सो अर्थ विचारो ॥

को संकेत करता । क्योंकि हम अपने गुरुओं अनुभवी विद्वानों, माता और पितादि की दी गई शिक्षा को मान्यता नहीं देते हैं । अपने पेट की गोपनीय बात को बाहर निकाल देते हैं । यह शंख और महाशंख कहा जाता है । हम अपनी शक्ति का दुरुपयोग करते हैं, सांसारिक भोगों में आनन्द मानते हैं, गुरुओं की शिक्षा को ठुकरा देते हैं इसलिये हम शंख हैं ।

उल्लू—विष्णु की पत्नी लक्ष्मी और उनका वाहन उल्लू इसलिये है कि लक्ष्मी चंचला है वह स्थिर नहीं रहती । जिसके पास यह पहुँच जाती है वह इन्हीं में तल्लीन हो जाता है । लक्ष्मी, विद्या, शक्ति, वैभव, राज्याधिकार, बहु कुटुम्ब और यौवनावस्था जिसके पास है क्या क्या अनर्थ नहीं करता है ! मूर्खतापूर्ण कार्य करने वाले को क्या उल्लू से संबोधन नहीं करते ।

गधा—मूर्खता पूर्ण कार्य करने वाले, और संसारिक गृहस्थी के भार से लदे हुए मानव को तथा विषयासक्त मानव मानव को प्राय: क्या गधा नहीं कहते, इसी कारण से रावण के सिर पर गधा का संकेतात्मक चिन्ह बताया है ।

अग्नि—अग्नि चार प्रकार की है—कामाग्नि, क्रोधाग्नि, जठराग्नि, चिन्ताग्नि जो निरन्तर जलाती रहती है। और यह प्रज्वलित लक्ष्मी के ही कारण से होती है। इस लक्ष्मी के चार बेटे हैं।

दोहा—

लक्ष्मी के सुत चार हैं, धर्म अग्नि नृप चोर।
जेठे को आदर नहीं, तीन करें फड़फोर॥

यह लक्ष्मी सांसारिक भोगों को भोगने के लिये अति आवश्यक है। और आज इसी के पीछे मानव निंद्य से निंद्य कार्य कर बैठता है। यह एक माया है, इस पर यदि विजय पाई तो केवल वीतरागी पुरुषों ने।

माया ठगनी ने ठगा यह सारा संसार।
पर माया जिसने ठगी, तिनको बहु बलिहार॥

बाम कन्धे पर माया रूपी स्त्री बैठी है—जो पुरुष विवेकवान हैं और वीतरागी जिनके परिणाम हैं, वह इसके चक्कर से बचने का उपाय कर लेते हैं। क्यों?

विषय त्याग वैराग है, समता कहिये ज्ञान।
सुखदाई सब जीव को, यही भक्ति परमान॥

बाराह की चार भुजायें—दाहिने प्रथम हाथ में पकड़ी हुई कमलनाल पंचेन्द्रिय जनित विषय और पांच पापों को और द्वितिय हाथ जांघ की ओर संकेत किया है जिसकी अंगुलियां नीचे की ओर पतन का संकेत करती हैं क्योंकि भोग भुजंग के समान हैं इस प्रकार से संकेत किया गया है।

बाम भुजायें—इस ऊपर के हाथ में जो चक्र बतलाया है वह वाराह जो कि—विष्णु का अवतार माना गया है उसे प्रत्येक मानव स्वयं में दृष्टि डाल कर देखे तो नारी एक माया है। मानव विषय भोगी है, विषयों की दाता नारी के चक्कर में फंसा हुआ है। चक्र के बीच में जो अंगुलियां फैली हुई बतलाई हैं वह पांचों इन्द्रियों की ओर संकेत करती हैं। जिस प्रकार से मक्खी को मकड़ी अपने जाल में फंसा लेती है। विषयान्धी मानव फंसा हुआ है।

चतुर्थ बाम हाथ में शंख--शंख मानव की मूर्खता को संकेत करने का प्रतीकात्मक चिन्ह है। क्योंकि सद्गुरुओं द्वारा हमें जो भी ज्ञान प्राप्त होता है तथा हमें अनुभवी ज्ञान द्वारा सद् शिक्षायें प्राप्त होती हैं उन्हें हम शंख की भांति अपने पेट में न रख कर बाहर फेंक देते हैं। और विषय भोगादिक में ही सुख मान लेते हैं। जब हमारी इन्द्रियां वृद्धावस्था में शिथिल हो जाती हैं पुत्र, स्त्री, आज्ञाकारी नहीं होते हैं उस काल हमें पूर्व योवन काल की घटनायें स्मरण हो जाती हैं। फिर विचार करते हैं कि:—**कहां गये वे दिन मूरख बोल, कर कर विविध कलोल।**

मानव शरीर का बाराह मुख क्यों—बाराह मुख काम को संकेत करता है।

मानव के दोनों पैर – जिस प्रकार से सिंह अपनी देदीप्यमान कीर्ति, और तेजस्वी प्रतिभा द्वारा विश्व के प्रांगण में इच्छित वस्तु प्राप्त कर लेता है और चिरकाल तक पूर्व महा पुरुषों की परम्परा को जीवित रखता है, इसी प्रकार यपि आप प्रत्येक अंग के संकेतों पर यथोचित रूप से दृष्टि डालें तो आपको यह जानकारी स्पष्ट रूप से प्राप्त हो सकेगी ।

गले में रत्नहार – सम्यक्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक्चारित्र यही तीनों रत्न हैं।

विकसत सब गुण शील में, शील सुगुण की खान ।
शीलहीन नर नारि के, सब गुण धूल समान ।।

आचार्य संबोधन :—

आग लगी है बृक्ष को, जलने लागे पात ।
तू क्यों जले है पंखिया, पंख हैं तेरे साथ ।।

मानव एक वृक्ष है और उस पर श्वासा हंस पक्षी है – मानव का शरीर एक बृक्ष है इसमें काम, क्रोध, और चिन्ता की अग्नि लगी हुई है सांसारिक भोगों को भोगने के लिये । आचार्य कहते हैं अय हंस ! जब तेरे पास ज्ञान के पंख हैं तो क्यों नहीं उड़ जाता है ? अर्थात् तू विषयों का त्याग क्यों नहीं करता है ।

जो विषया संतन तजी, मूर्ख ताह लिपटात ।
ज्यों नर डारत बमन सो, श्वान स्वाद सों खात ।।
यही भोग रोग के कारण हैं, तृष्णा को सदा बढ़ाते हैं ।
कामाग्नि में जल कर प्राणी, अपने प्राण गमाते हैं ।।

पक्षी (हंस) का उत्तर –

फल खाये इस बृक्ष के, गन्दे कीने पात ।
अब यह मेरा धर्म है, जल जाऊं इसके साथ ।।

इस मानव बृक्ष के सुपुत्र मीठे फल यश हैं जो दान के रूप में माने गये हैं। वह चार प्रकार का है ।

दान औषधि पुण्य यश कर, बचे वृष धन प्राण हैं ।
जग में शिरोमणि नर वही, जो देत जीवन दान हैं ।।

विवेकपूर्ण ज्ञान इसके पत्र हैं । जो साहित्य के रूप में अमर बनाते हैं ।

अन्धकार है वहां जहां आदित्य नहीं है ।
है वह अन्धा देश जहां साहित्य नहीं है ।।

हमारी दुर्बुद्धि कुपुत्र है जो हमें रात दिन माया के जाल में फंसाकर चिन्ता की ज्वाला में जलाती रहती है।

पुष्प माल—पुष्पमाल जो मानवकृति वराह के गले में घुटनों तक डली हुई है, विजय को संकेत करती है।

विषय त्याग वैराग है, समता कहिये ज्ञान।
सुख-दाई सब जीव को, यही भक्ति परमान॥

हाथ, गला, कान के आभूषण—

सत्य कण्ठ भूषण कहा, कर का भूषण दान।
शास्त्र श्रवण भूषण सुभग, कहत जिनागम कान॥

ज्ञानियों के लिये सोने, चांदी के आभूषण आभूषण नहीं हैं, किन्तु उन्हीं का आभूषण ज्ञान है जिसे कोई छीन नहीं सकता है।

रत्न—व्यवहारिक और जीव के उपयोगी रत्न तीन ही हैं।

पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि, जलमन्नं सुभाषितं।
मूढ़ः पाषाणखण्डेषु, रत्न संज्ञा विधीयते॥

यही तीन रत्न जीवधारियों के लिये नितान्त आवश्यक हैं—

मधुर मनोहर सत्य युत बचन बोलिये नित्य।
अक्षर कम अरु अर्थ बहु, जो नहिं होय अनित्य॥

मत्स्य वाराह का प्रत्येक अंग एक अनोखी शिक्षा देता है। यह सूझ बूझ जैनाचार्यों की है। जैन मन्दिर और निकटवर्ती अन्य हिन्दू और वैष्णव मन्दिरों में घनिष्ट सम्बन्ध है। केवल दोष हमारे इन नेत्रों का और समझ का ही है। कोई अन्तरंग से देखता है कोई बाह्य अंग से। केवल यही भेद है। इसे स्वयं समझें और दूसरों को समझाने का प्रयास करें। इसका स्पष्टीकरण आचार्यों के उपदेशामृत से और राज्याश्रय एवं दानियों के सहयोग से मूर्तिकला में जो अनोखा ज्ञान भर दिया है वस्तुस्थिति की साकारता पाषाण में किस प्रकार दर्शायी है इसे ज्ञानी जन ही भली प्रकार से ज्ञानवर्द्धन के उपयोग में ला सकते हैं। आज के युग में ऐसे अपूर्व पुरातत्वीय वस्तु कला का विनाश कार्य पुरातत्व के दुश्मनों द्वारा होता जा रहा है। इस विनाश से बचाइये।

विदिशा लेटरी

महाकालेश्वरके ज्योतिर्लिंग से विभूषित भगवान कृष्ण को गुरु भूमि कालिदास के मेघ को प्राणंच्युत करा देने वाली वत्सराज और विक्रमादित्य का राजस्थान धर्म, अर्थ, काम मोक्ष, वैभव,

और विलास की क्रीड़ाभूमि विशाल अवन्तिकापुरी का महत्व तो इस प्रदेश में अन्यतम है ही, परन्तु पुराणों, एवं जैन साहित्य और बौद्ध ग्रन्थों में वर्णित वैश्य नगरी विदिशा का महत्व भी प्राचीन भारत के मान चित्र पर भी नहीं है। आज के मध्यप्रदेश को राजनीति के क्षेत्र में गौरवान्वित करने वाला राजधानी के मध्य तथा राज्यान्तर्गत छुपा हुआ पुरातत्वीय ऐतिहासिक संग्रह ही है। भोजपुर, समसगढ़, कुराना, महलपुर पाठा, सांची विदिशा आदि इसी के अंग हैं। सांचो और विदिशा का प्राचीन काल से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। यह पर्वत काकनाम या काकनाद बोट से भी प्रसिद्ध था।

प्राचीन विदिशा का विस्तार बहुत अधिक था। वह उस दशार्ण देश की राजधानी की मुख्य नगरी थी। जिसमें तलवारों की तीक्ष्ण धार बनाई जाती थी आज वैस नामक ग्राम वैश्यों के निवास का पूर्व में स्थान रहा है उदयगिरी पर्वत और सांची इसी के अङ्ग थे।

महर्षि यमदग्नि और परशुराम भार्गव के सिरोंज के निकट लैटेरी नामक ग्राम में छोटी और बड़ी मदागन है। यमदग्नि के पिता का नाम शतविन्दु और माता का नाम श्रीमती था, स्वभाव के अत्यन्त ही क्रूर थे उन्होंने अनेकों ग्रन्थों का पठन किया। बहुत अच्छा बोलने वाले थे। बुद्धि विपरीत वितण्डावाद उत्पन्न करने में प्रवीण थे। कुमारावस्था में माता मर गई, इष्ट जनों से विरह और अपमान सौतेली माता के तिरस्कारित वचनों का प्रहार सह नहीं सके और वह तपस्वी बन गये। पैर ऊपर सिर नीचे पंचाग्नि तपते हुये तपस्या करने लगे। उस देश का राजा दृढ़ग्राही और हरि वर्मा नामक ब्राह्मण १८ पुराणों के अर्थ करने में पारगामी था। यह ब्राह्मण अजामेध, अश्वमेध यज्ञ जिसमें बकरे, घोड़े मारे जावें, क्रियाकाण्ड करने वाला था बड़ा ही उन्मत्त और अभिमानी था, सोमवल्ली के पत्तों को ढूंढ़ रहा था और यज्ञादि कर्म करने में बहुत ही चतुर था। निमित्त कारण पाकर राजा दृढ़ग्राही ने जैनेश्वरी दीक्षा ले ली और ब्राह्मण तपश्चरण कर आयु के अन्त में मरकर ज्योतिषी जाति के देवों के विमानों में देव हुआ। और राजा सम्यग्दृष्टी देव सौधर्म स्वर्ग में बड़ी ऋद्धिधारक देव हुआ।

जिस तपस्या में हिंसा हो साध्य की सिद्धि नहीं हो सकती है। जो वेद हिंसा के उपदेशों से भरे हों कल्याणकारी नहीं होते। इस प्रकार उन देवों में परस्पर वार्ता होकर दोनों देव परीक्षा के लिये पृथ्वी तल पर आये और यमदग्नि की आलोचना व परीक्षा करने के लिये वे दोनों देव चिड़ा व चिड़िया बन गये राजा का जीव देव ज्योतिषी देव जो चिड़िया बना है बड़ी उत्सुकता के साथ उन मुनि की मूछों में घोंसला बनाकर रहने लगे। कुछ समय बीत जाने के बाद माया से चिड़ा के रूप में बना हुआ सम्यग्दृष्टि देव चिड़िया के रूप में बने हुये ज्योतिषी देव से कहने लगा कि हे प्रिये! मैं किसी दूसरे वन में जाता हूँ। अपनी चोंच से चावलों के कण लाकर जल्दी ही लौटूंगा तब तक मेरी आज्ञा से तू यहां ही रहना।

चिड़ा की यह बात सुनकर चिड़िया ने कहा कि हे कान्त! तेरे लौटने का मुझे विश्वास नहीं है। क्योंकि जब मनुष्य पर-स्त्रियों के द्वारा रुक जाते हैं तब वे अपनी स्त्रियों का स्मरण तक नहीं करते।

चिड़िया—यदि आपके हृदय में लौटने की इच्छा ही है तो हे प्रभो ! मुझे सौगन्ध दे जाइये। आप यह निश्चय रखें कि विना सौगन्ध दिये मैं आपको कभी नहीं जाने दूंगी ।

चिड़ा—यदि मैं लौटकर न आऊं तो मुझे हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह इन पांचों पापों को करने वाले अथवा जुआ खेलना, मांस खाना, शराब पीना, वेश्या सेवन करना, शिकार खेलना, चोरी करना आदि सातों व्यसनों के सेवन करने वालों को और गो हत्या, बाल हत्या, मुनि हत्या, आदि घोर हिंसा करने वाले मनुष्यों को जो पाप लगता है वह मुझे लगे या बहिन बेटी के साथ व्यभिचार करने वालों, रात्रि में अशुद्ध भोजन, वगैर छना जल पीना, दावानल अग्नि में जलना, दूसरों की निन्दा करना इनमें जो पाप लगे वह मुझे लगे, इन सब सौगन्धों में से जो तुझे पसन्द हो वही सौगन्ध मैं तुझे दे सकता हूँ ।

चिड़िया—हे नाथ ! इन सौगन्धों में से मुझे कोई पसन्द नहीं है । इससे कुछ अधिक सौगन्ध देनी चाहिये ।

चिड़ा—हे प्रियतमे ! तेरे मनमें जो सौगन्ध हो उसी को कह डाल । तेरा विश्वास करने के लिये मैं तुझे वही सौगन्ध दे जाऊंगा ।

चिड़िया—अच्छा है नाथ ! आप मुझे यह सौगन्ध दीजिये कि यदि मैं लौटकर न आऊं तो इस जमदग्नि मुनि की जो होनहार गति है वह मुझे प्राप्त हो ।

चिड़ा—इस सौगन्ध को छोड़कर और जो तेरी इच्छा हो सो कह ।

चिड़िया—और कोई सौगन्ध नहीं लेना चाहती ।

चिड़ा-चिड़िया दोनों की इस बात को सुनकर जमदग्नि क्रोध से संतप्त हो गया । उसके दोनों नेत्र रूपी कमल लाल हो गये । उसने अपने दोनों हाथों से उन चिड़ा व चिड़िया दोनों पक्षियों को बड़ी कठोरता से पकड़ लिया और क्रूरता से वह उन दोनों को मारने के लिये तैयार हो गया । परन्तु वे दोनों पक्षी उसके हाथ से छूटकर देवों के रूप में उसके सामने आ खड़े हुये ।

इस प्रकार से दोनों पक्षियों को देव रूप में खड़े देखकर जमदग्नि ऋषि को बड़ा आश्चर्य हुआ । और उसने उन दोनों देवों से कहा कि तुम दोनों कौन हो और तुमने किस कारण से मेरे तप की निन्दा की है ।

जमदग्नि की बात सुनकर वे दोनों देव कहने लगे कि आप क्रोध न करें क्योंकि जिस प्रकार छाछ से दूध नष्ट हो जाता है उसी प्रकार इस क्रोध से आपकी सज्जनता नष्ट हो जायगी । हम दोनों देव हैं, आप जो तपस्या कर रहे हैं अशुद्ध, अज्ञानतापूर्वक की जा रही है । यही समझाने के लिये आये हैं जो दुर्गति का कारण है ।

हे जमदग्नि ! तू कुमार अवस्था से ही ब्रह्मचारी है इसलिये तेरे कोई सन्तान नहीं है । जो मनुष्य सन्तान का घात करने वाला होता है उसे नरकगति के सिवाय क्या हो सकता है ?

सून सदन संतान बिन, दिशा बन्धु बिन सून ।
विद्या सूनो बिन पढ़े, सरव सून धन ऊन ॥

जिसके पुत्र नहीं उसकी कोई गति नहीं । उसे स्वर्ग नहीं मिल सकता । हे मूर्ख ! क्या तूने यह ऋषियों का वाक्य नहीं सुना जो तू व्यर्थ ही कायक्लेश कर रहा है ? इसलिये सबसे पहिले तू किसी कन्या के साथ विवाह कर, उससे सन्तान उत्पन्न कर, फिर शुद्ध तपश्चरण धारण कर । यह कहकर वे दोनों देव उस यमदग्नि ऋषि से कहने लगे कि स्त्री के ग्रहण करने में कोई दोष नहीं है ।

जमदग्नि उन देवों की बात को यथार्थ मानकर कामदेव से पीड़ित हो भ्रष्ट बुद्धि किसी कन्या के साथ विवाह करने के लिये तैयार हो गया ।

आचार्य कहते हैं कि मिथ्यात्व के वशीभूत कुतप, जीव को संसार समुद्र में ही पटकने वाला है । विद्वान पुरुषों का मन, वचन, काय की शुद्धिपूर्वक १८ दोषों से रहित जिनेन्द्र भगवान का ध्यान करना चाहिये ।

यह वर्णन सुभौम चरित्र में जमदग्नि को तपश्चरण च्युत होने का पृष्ठ ३४ पर मिला है ।

परशुराम और इन्द्रराम राज्यलाभ वर्णन

जमदग्नि देवों का उपकार मानकर तपश्चरण छोड़कर अज्ञानतापूर्वक विचारने लगा । मुझे कन्या किस प्रकार प्राप्त होगी । मैं बूढ़ा, कुरूप, तपसी, दरिद्री हूँ मुझे ऐसा कौन राजा है जो गुणों से परिपूर्ण अपनी पुत्री दे देगा । उसे स्मरण आया कि कुंजपुर में पारत नाम राजा मेरा मामा है उसकी सौ कन्या हैं वह मेरा पहिले का सम्बन्धी है मुझे अपनी कन्या दे देगा । कन्या मिलने के लोभ से जमदग्नि भानजा अपने मामा के पास चला गया ।

वहां के राजा पारत ने अपनी बहिन के पुत्र जमदग्नि को आया जान उसे वस्त्राभूषणादि से सुसज्जित सम्मानित किया । उच्चासन पर बिठा हाथ जोड़कर नमस्कार कर पूछा आपका शुभागमन कैसा हुआ ? हे स्वामिन् ! आपके पधारने से मैं और मेरा घर तथा नगर पवित्र हो गया ।

मामा के इस प्रकार विनयपूर्वक वाक्य सुनकर वह निर्लज्ज, देवों द्वारा ठगा हुआ और मोह से अत्यन्त मोहित जमदग्नि कहने लगा हे मामा ! मुझे कन्या दो ।

कानों को अत्यन्त कडुवे, निन्दनीय जमदग्नि के वचनों को सुनकर राजा पारत विचारने लगे । यदि इसे कन्या न दी गई तो श्राप देगा । डर से अत्यन्त दुखित हृदय राजा पारत ने उस सभा में कह दिया कि मेरे सौ कन्यायें हैं । उनमें से जो तुझे चाहेगी उसी उत्तम कन्या को मैं तुझे दे दूंगा । उस राजा को डर से इस प्रकार कहना ठीक ही था । क्योंकि भयभीत मनुष्य क्या नहीं कर डालता अर्थात् सभी कुछ कर डालता है ।

सज्जन लोग भानजे को पूज्य समझते ही हैं। और यदि भानजा मुनि व तपसी हो जाय तो फिर कहना ही क्या है। सुवर्ण सदा अच्छा लगता है, उसमें सुगन्धी और हो जाय तो फिर कहना ही क्या है!

कामान्धो जमदग्नि ऋषि इस प्रकार अपने मामा पारत की आज्ञा लेकर उन कन्याओं के समीप पहुँचा, परन्तु नंगे फिरने वाले उस ऋषि को देख कर सब कन्यायें भयभीत हो गईं।

उस समय जमदग्नि का रूप भूत, अध जले मुर्दे के समान जान पड़ता था। उसका एक दांत मुंह से बाहर निकला हुआ था। तपश्चरण से उसका शरीर जल रहा था। उसका मुंह कौऐ के समान काला, सिर के बाल सुअर के समान कठोर थे, आंखें अन्दर को बैठ गईं थीं। ऐसे उस जमदग्नि को विकराल स्वरूप देखकर वे सकल कन्यायें दशों दिशाओं में भाग गईं।

जमदग्नि ऋषि मन में विचार करते हैं कि मैं दोनों ओर से ही भ्रष्ट हो गया, न कन्या ही मिली और न तपश्चरण ही निर्दोष रहा। इस प्रकार चिंता रूपी पिशाच के जाल में फंस लज्जा के कारण आर्तध्यान से दुखी हृदय ने उसी समय धूल में खेलती हुई एक अकेली कन्या को देखा। उसे देख कर वह प्रसन्न हुआ और उसके समीप पहुंच कर एक केला देकर कहने लगा कि यह तेरे बदले में भेंट है। इसे ले। वह कन्या इशारे को समझ ही नहीं सकती थी वह केवल उस केले को लेना चाहती थी इसलिये उसने अपना हाथ फैला दिया और कहने लगी लाओ लाओ दो। सो ठीक ही है, क्योंकि लोभ तो सब जीवों के ही रहता है।

उस कन्या को प्रसन्न होते देख कर जमदग्नि ने कहा कि यदि तू मुझे वरण करले तो तुझे में यह केला दूं। सो ठीक ही है, क्योंकि समय के अनुसार जो कार्य को समझ ले वही पण्डित गिना जाता है।

वह कन्या कुछ जानती तो थी नहीं इसलिये उसने कह दिया कि यह केला मुझे दो, मैं तुम्हीं को अपना बर बनाऊंगी, मुझे और मनुष्यों से क्या प्रयोजन। उसकी यह बात सुनते ही उस भयंकर कामान्धी जमदग्नि ने उसी समय उस कन्या को गोदी में उठा लिया और राजा से जाकर कह दिया कि यह कन्या मुझे बरना चाहती है।

जमदग्नि की यह बात सुनकर राजा पारत का हृदय बहुत दुःखी हुआ। उसके श्राप से डर रहा था इसलिये उसने वह कन्या उसे दे दी। एक वस्तु के जाने पर सब कुशलतापूर्वक बच जाय सो उसे दे देना ही चाहिये। सो ठीक ही है।

जो लोग तपस्या को छोड़कर विषय सुन्दरी को ग्रहण करते हैं वह मूर्ख बहुमूल्य अनेक वर्णों के रत्नों को बेचकर कांच ग्रहण करते हैं।

उस समय जमदग्नि की पद पद पर चारों ओर निन्दा हो रही थी। उन सबको सुनता हुआ वह जमदग्नि, जिस प्रकार राहु चन्द्रमा की एक कला को ले जाता है, उसी प्रकार वह कन्या को लेकर वन में चला गया।

वह कन्या रेणु—'धूल' में खेलती हुई मिली थी इसलिये उसका नाम रेणुका रक्खा। और गन्धर्व विधि से उसके साथ विवाह कर लिया।

यह मनुष्य चाहे घर छोड़ वन में चला जाय, चाहे दीक्षा धारण करले, किन्तु विशुद्ध सम्यग्ज्ञान के बिना किसी को भी मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती।

जमदग्नि के मामा पारत की सर्वांग सुन्दरी राजपुत्रियों ने तिरस्कारित किया परन्तु कामसे पीड़ित तपसी ने धन धान्यादि से रहित एक टूटी फूटी झोंपड़ी बनाई। और उसी में वह उस रेणुका के साथ भोगोपभोग सेवन करता हुआ रहने लगा। पूर्ण यौवनावस्था रेणुका की प्रारंभ हो गई, स्तनों के भार से अलस्याई रहने लगी

मूर्ख के पांच लक्षण—

मूर्खस्य पंच चिन्हानि, गर्वो दुर्वचनं तथा।
क्रोधस्य हठवादश्च, परवाक्येष्वनादरः॥

भावार्थ:—मूर्ख के पाँच लक्षण हैं १ गर्व करना, २—कुवचन बोलना, ३—क्रोध करना, ४—हठ करना, ५—और दूसरों के वचनों का अनादर करना।

अंधे चार प्रकार :—

जन्म अन्ध कामान्ध नर, और महामद धार।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार॥

भावार्थ—जन्म का अन्धा तो किसी का अहित नहीं करता किन्तु शेष तीन अहित करते हैं। १—काम से पीड़ित को इच्छित वस्तु न मिलने पर, २—अष्ट मदी। १—पितृ मद, २ मातृ मद, ३—रूप मद, ४—ज्ञान मद, ५—धन मद, ६—बल मद, ७—तप मद, ८—प्रभुता मद, यह आठ मद हैं।

और तीसरा स्वार्थान्ध यही महान प्राणघातक होते हैं। जब एक ही विनाश का कारण है तो यदि चारों मिल जाँय तो क्या कोई शेष रह जाता है ? नहीं।

ईर्षा मद अविवेकता निर्दयता धन जान।
बहु अनर्थ इक ही करे, चारों मौत समान॥

जमदग्नि के पास भी चार मद निम्न थे। १—राज्य कुल में जन्म, २—मामा का राजा होना, ३—कुसंगति से तपस्या से विचलित होना। ४—और अविवेकपूर्ण ज्ञान। यह चारों ही अनर्थ कारक योग थे।

जिनका देवमन्दिर के समीप निवास (१) पुजारी देव मन्दिर में ही निवास करें (२) दीक्षा धारण कर उसे छोड़ देवें (३) जो विधवा आदि ५ प्रकार की स्त्रियों से उत्पन्न हुआ हो (४)

दया रहित कन्दमूलादि अभक्ष आहार विहार और बगैर छना जल पीने वाला (५) जमदग्नि तपस्वी में यह सभी बातें प्रायः प्राप्त थीं।

कामी क्रोधी लालची, इन से भक्ति न होय ।
भक्ति करै कोई शूरमा, जाति वरण कुल खोय ॥

भावार्थः—संतानोत्पत्ति के लालच के कारण काम और काम की पूर्ति न होने से क्रोध तथा क्रोध में तपस्या की समाप्ति अर्थात् यह पतन के मुख्य कारण हैं।

यह सब प्रमाण दया रहित क्रोधी स्वभाव, और तपस्वी का होना, किंवदन्ति परंपरागत निर्जन वन में झरना तथा कुण्ड-गुफायें-देव मन्दिर यह सभी बातें लेखक ने अनुसंधान कर स्वयं की दृष्टि से देख कर तथा और भी कई चिन्ह—**मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल के अंचल में विदिशा जिले के अंतर्गत सिरोंज के निकट लैटेरी** नामक ग्राम **व उसके वनखंड में जमदग्नि आश्रम के नाम से प्रसिद्ध स्थान प्रमाणित** होता है।

यमदग्नि ने रेणुका के साथ यौवनमद में केलि करते कुछ समय बीत जाने पर दो पुत्र उत्पन्न किये। वे दोनों ही पुत्र राज्य लक्षणों से सुशोभित थे। उनमे प्रथम पुत्र का नाम परशुराम और दूसरे का इन्द्रराम था। वे दोनों ही भाई बड़े बड़े बलवान, योद्धारूपी पर्वतों को नाश करने के लिये वज्र के समान प्रतापी थे। यौवनावस्था को प्राप्त होते ही समयानुकूल गुण रूपी सम्पत्तियों से वीरत्व की कलाओं से चन्द्रमा के समान शोभायमान हैं। ७२ कलाओं के ज्ञाता शस्त्र एवं शास्त्र विद्या में निपुण अपने प्रताप से संसार को वश में करने वाले थे। वे दोनों भाई सूर्य चन्द्रमा के समान दैदीप्यमान सद्वृत्त अर्थात् गोल लम्बी किरणें धारण करते हुए सदृश वे दोनों भाई लम्बी भुजाओं को धारण करते थे। यह दोनों बालक ३२ शुभ लक्षणों से सुशोभित थे। और २१ बार राजवंशों के नाश करने वाले थे। सब लोग उन्हें मान्य समझते थे। उनकी आज्ञा का कोई उलंघन नहीं कर सकता था।

जमदग्नि और रेणुका दोनों ही स्त्री पुरुष दोनों पुत्रों के साथ काल यापन कर रहे थे कि रेणुका के शुभोदय से बड़े भाई तपोनिधि अरिंजय नाम के मुनिराज अपनी बहिन रेणुका को देखने पधारे। अकस्मात आये हुये मुनि रूप में देखकर प्रसन्न हुई। और प्रसन्नता पूर्वक नेत्र बिन्दुओं से चरण प्रक्षालन कर समक्ष में बैठ गई और अपनी घर में खाने, पीने, रहने, वस्त्राभूषणादि के अभाव में दुखित हूँ काल यापन कर रही हूँ आपके सत्कार में असमर्थ हूँ।

मेरे वंश परम्परा में बड़ी बहिनें राजाओं की रानियाँ हैं परन्तु जिस प्रकार विष का परित्याग किया जाता है उसी प्रकार से पूर्व जन्मान्तर के अशुभ कर्मोदय से उद्योग रहित बूढ़े दरिद्र भिक्षुक से संस्कार हुआ है। आपके द्वारा विवाह के उपलक्ष में कुछ भी द्रव्य नहीं दिया गया इसके लिये अब कुछ इच्छानुसार दान दीजिये जिससे कि मेरा दरिद्ररूपी रोग नष्ट हो जाय।

यदि मेरे ऊपर पिता के समान ही भाई की कृपा न हो तो भी ये दो भानजे तो पूज्य ही हैं। कम से कम इनको अनुकूल दृष्टि से तो देखिये।

दीनता से भरी हुई बहिन की बात सुनकर अरिंजय नामक मुनि को हृदय में दया उत्पन्न हुई। बहिन को धर्म धारण कराने के लिये उससे कहने लगे। हे भद्रे! हे कल्याण करने वाली! इस संसार में सच्चे देव, गुरु, शास्त्र तीनों ही रत्नत्रय कहलाते हैं तीनों का विश्वास करना व्यवहार सम्यग्दर्शन है। इसके प्राप्त होने से जीव दुर्गति में नहीं जाता, दरिद्री नहीं होता, स्त्री पर्याय धारण नहीं करता, नपुंसक नहीं होता, भवनवासी व्यन्तर ज्योतिषी इन तीनों अधम देवों में उत्पन्न नहीं होता। तिर्यंचों में जन्म नहीं लेता, कुरूपी रोगी नहीं होता और संसार में जितने भी दुःख के कारण हैं उनमें किसी में भी उत्पन्न नहीं होता। मद्य, मांस, मधु, बड़, पीपल, गूलर, अंजीर, पाकर इन पांच उदंबर फलों का त्याग करना गृहस्थों के आठ मूलगुण कहलाते हैं। हे भद्रे! तू इन आठ मूल गुणों के साथ साथ सम्यग्दर्शन को धारण कर।

जुआ खेलना, मांस खाना, शराब पीना, शिकार खेलना, चोरी करना, वेश्या सेवन करना, और परस्त्री सेवन करना यह सप्त व्यसन कहलाते हैं। हे बहिन! इनका भी तुझे त्याग कर देना चाहिये।

असत्य भाषण करना, चोरी करना, बाह्य और अभ्यंतर दोनों प्रकार का परिग्रह लोभ के वश एकत्रित करना और शीलव्रत को नहीं पालना यह सब पाप कहलाते हैं। रात्रिभोजन; विना छना हुआ पानी, कन्दमूल भक्षण करना, धर्म के स्वरूप को न जानना पापों का संचय करना है। यह सब त्याग करने योग्य हैं।

हे बहिन! इस समय तुझे काललब्धि प्राप्त हुई है। इसलिये तू स्वर्ग के सुख देने वाले निर्दोष ऐसे इन श्रावकों के आचरणों को ग्रहण कर। क्योंकि इस संसार में काललब्धि की प्राप्ति होना ही अत्यन्त कठिन है।

रेणुका ने उन मुनिराज के कहे अनुसार सब व्रत धारण किये। तथा उन व्रतों के धारण करने से उन मुनिराज के हृदय में बहुत ही सन्तोष हुआ। सो ठीक ही है, क्योंकि इस संसार में अपने वचनों की सिद्धि होने पर किसको सन्तोष नहीं होता है?

जिनके हृदय में उन व्रतों की रक्षा करने का वात्सल्य उत्पन्न हुआ है ऐसे उन मुनिराज ने अपनी बहिन के लिये इच्छानुसार फल देने वाली एक कामधेनु नाम की विद्या दी। विद्या से बनी हुई इस कामधेनु को मारने के लिये यमराज भी समर्थ नहीं हैं। औरों की तो बात क्या? इस कामधेनु का प्रभाव इससे बढ़कर और क्या हो सकता है। अब उस रेणुका के घर इच्छानुसार मन की सब अभिलाषायें पूर्ण होती थीं। सो ठीक ही है। क्योंकि व्रतों के पालन करने से स्वर्ग की सम्पदायें प्राप्त होती हैं फिर भला कामधेनु का मिल जाना कौन आश्चर्य की बात है!

किसी भिखारी के हाथ में दिया हुआ रत्न किस प्रकार ठहर सकेगा। अथवा जिसको कोई बुरा भयानक रोग हो रहा है। ऐसे रोगी के पेट में पथ्य किस प्रकार ठहर सकेगा! यह विचार

भी मुनिराज के हृदय में उत्पन्न हुआ। इन्हीं विचारों के अनुसार उन मुनिराज ने उस कामधेनु को सुरक्षित रखने की इच्छा से उस बहिन के लिये मन्त्र से सिद्ध किया हुआ एक फरसा भी दिया। सो ठीक ही है क्योंकि आपत्ति किस समय आती है यह किसी को भी मालूम नहीं होता ॥७९॥ होनेहार को कोई टाल नहीं सकता। इस प्रकार से उपदेश कर अरिंजय नामा मुनिराज अपने बहिन तथा बहनोई को आशीर्वाद के वचन कहकर प्रसन्न किया और फिर वे ईर्या-पथ शुद्धि के द्वारा अपने यथायोग्य स्थान को चले गये।

उन मुनिराज ने जो अपनी बहिन के लिए कामधेनु और फरसा दिया इसमें विद्वान् पुरुषों को, विचारशील पुरुषों को कुछ अधिक विचार नहीं करना चाहिये। क्योंकि यदि किसी सर्प को कोई निर्दयी मनुष्य मारता हो तो क्या दयालु पुरुषों को उसकी रक्षा नहीं करनी चाहिये? अवश्य करनी चाहिये। जमदग्नि और रेणुका को जो वह कामधेनु मिल गई थी और उससे जो शरीर को पुष्ट करने वाला, रसीले और उत्तम पदार्थ प्राप्त होते थे उससे वे दोनों ही अपने पुत्रों का पालन पोषण रक्षण करने लगे।

इसी बीच में काल के द्वारा प्रेरणा किया हुआ अयोध्या नगरी का राजा सहस्रबाहु अपने पुत्र कृतवीर के साथ उसी वन में आया। आये हुये सम्बन्धि अतिथियों को देखकर जमदग्नि के हृदय में उनके ठहराने और आदरपूर्वक भोजन कराने की इच्छा प्रकट हुई। यही विचारकर उसने अपनी स्त्री से कहा कि तेरे पुण्य कर्म के उदय से तेरे घर बड़े पाहुने आये हैं। इसलिये तू उनके लिये भोजन की सामग्री तैयार कर ॥८८॥

जमदग्नि की यह बात सुनकर रेणुका ने बाहर निकलकर कहा कि हे प्रिये! आप तो बड़े विद्वान् हैं फिर भला आपने यह कैसी बात कही! हम तो भिक्षुक हैं। राजा महाराजाओं को आदर सत्कार कर भोजन देना हमारे लिये उचित नहीं है। घर में रहने वाले गृहस्थ और विना घर के वन में रहने वाले मुनि विशेष दाता और विशेष पात्र गिने जाते हैं। अर्थात् गृहस्थ सदा दाता रहता है और मुनि सदा पात्र रहते हैं। न तो मुनि कभी दाता बन सकता है और न गृहस्थ ही कभी पात्र बन सकता है। यदि इसके विपरीत विधि की जायगी तो उसका फल भी विपरीत ही होगा। यदि अनुक्रम से अनुकूलतापूर्वक विधि की जायगी तो उससे होने वाला कार्य व फल भी अनुकूल ही होगा।

सहस्रबाहु का भोजन

आप वर्णाश्रम के अनुसार गुरु हैं। आपको योग्य अन्न पानादि भी गृहस्थों के गृहण करने के योग्य नहीं हैं। इसलिये आप इस आग्रह को छोड़ दीजिये। शास्त्रों में लिखा है कि देव द्रव्य और गुरु द्रव्य से जो सुख सेवन किया जाता है उस धन से कुल का नाश होता है और मरने पर भी नरक यातनायें भोगता है। यह छह मतों के शास्त्रों का कथन है। इस प्रकार रेणुका ने अमृत के समान हित करने वाले और पथ्य वचन कहे परन्तु जमदग्नि ने एक न मानो और राजा का निमन्त्रण करने के लिये वह चला ही गया सो ठीक ही है। क्योंकि जिस पुरुष को कोई रोग होन हार होता है तब उसकी रुचि मुख का स्वाद और प्रकृति भिन्न प्रकार की हो ही जाती है।

अनेक राजा महाराजा जिसे नमस्कार करते हैं, ऐसा वह जमदग्नि ऋषि राजा सहस्रबाहु के समीप पहुंचा, उसकी प्रदक्षिणा दी और उसके सामने खड़े होकर याचना की कि आज आप सब लोग मेरे घर भोजन करने के लिये पधारें।

जमदग्नि की यह बात सुनकर राजा सहस्रबाहु हंसा और हंसकर कहने लगा कि क्या आप भिक्षा भोजन ले आये है ? जो हमें भोजन करावेंगे।

इसके उत्तर में जमदग्नि ने कहा आपके पधारने के प्रभाव से सब भला ही होगा। इसलिये आप सबके साथ आकर भोजन करें।

जमदग्नि ने इस प्रकार की विनय, नम्रता, और आदरपूर्वक राजा को निमन्त्रण दिया और अपने घर लाकर आसनों पर पंक्ति रूपसे बिठाकर सबको भोजन कराया ॥१९॥

जमदग्नि ने राजा सहस्रबाहु को भोजन कराने के लिये अनेक प्रकार के पकवान तैयार कराये थे। दूध की खीर, घी आदि के तले हुए अनेक प्रकार के पदार्थ, स्वादिष्ट साग, गरम गरम पुए, लाडू, सुगन्धित चावल, तथा इक्षुरस के पदार्थों का सम्मानपूर्वक भोजन कराया। भोजन करते हुए राजा के हृदय में विचार और आश्चर्य उत्पन्न हुआ कि राजा महाराजाओं के घर भी भोजन किया, ऐसी सामग्री नहीं मिलती है, फिर भला तपोवन में रहने वाले तपस्वियों के घर में ऐसी सामग्री कहाँ से आई ? इसमें कोई कारण अवश्य है इसे ढूंढ़ना चाहिये। मालूम होता है यह सामग्री किसी देव की प्रसन्नता से प्राप्त हुई है। भोजन करने के बाद सहस्रबाहु के पुत्र कृतवीर ने एकांत में बैठकर अपनी माता की छोटी बहिन मौसी रेणुका से अपने मनकी सब बात पूछी।

जमदग्नि की मृत्यु कृतवीर द्वारा और कामधेनु हरण

दया परिणामी रेणुका उस कृतवीर की दुष्टता को नहीं समझ सकी इसलिये उसने कामधेनु विद्या प्राप्त होने आदि के सब समाचार कह सुनाये। सरल हृदयी मानव धूर्त मानवों के भेदभाव को नहीं समझ सकते। उस रेणुका ने आरम्भ से अन्त तक विद्या प्राप्त होने के सब समाचार कह सुनाये और फिर कहा कि मेरे घर में जो यह सब सामग्री दिखाई देती है वह सब कामधेनु का प्रभाव है। यह सुनकर अत्यन्त कृतघ्न वह राजकुमार कृतवीर उस कामधेनु को लेने के लिये तैयार हुआ तथा जिसकी मृत्यु समीप आ रही है। राजा सहस्रबाहु के समान चतुर मनुष्य की बुद्धि भी विपरीत हो जाती है। कहा है—विनाशकाले विपरीतबुद्धिः—देखो ब्राह्मण की कामधेनु गाय को हरण करने का उद्यम करने वाले राजा सहस्रबाहु का बहुत बुरा ही पराभव हुआ था।

तदनन्तर वह राजकुमार कृतवीर जमदग्नि से कहने लगा कि आप तो बहुत बुद्धिमान हैं। आप जानते हैं कि भोजन करने के बाद उत्तम दक्षिणा भी दी जाती है। यह न्याय सब जगह फैला हुआ है। यदि यह अयोग्य है तो मैं आपको स्त्री की बहिन का लड़का हूँ। इसलिये मैं आपसे इस गाय को मांगता हूं। कृतवीर की यह बात सुनकर रेणुका ने कहा कि ये तपसी हैं। और वर्णाश्रम की अपेक्षा से गुरु हैं इसलिए याचना करना ठीक नहीं है क्योंकि गुरु और तपसी से याचना करना पाप का कारण है। किन्तु उस दुष्टहृदय कृतवीर ने रेणुका के वचनों को नहीं माना और क्रोध से कहने लगा—

हे रेणुका ! संसार में जो बहुमूल्य धन होता है वह राजाओं के ही योग्य होता है; कंदमूल खाने वाले तपस्वियों को ऐसी गाय से प्राप्त सामग्रियों का उपयोग करना कभी योग्य नहीं है। यदि कोई गधा दाखों को खाता हो तो ऐसा कौन पुरुष है जो उसे न रोके !

इस प्रकार कहकर और सामने खड़े खड़े रुदन करते हुए जमदग्नि को बड़ी शीघ्रता से मारकर राजकुमार कृतवीर जबर्दस्ती उस गाय को लेकर अपने घर को चला गया।

अथानन्तर:—जमदग्नि के दोनों पुत्र परशुराम और इन्द्रराम दाभ दूब आदि सामग्री लेकर वन से घर को आये। आकर उन्होंने देखा कि पिता के प्राण निकल गये हैं और वे किसी के द्वारा मारे गये हैं।

उन्होंने अपनी माता को देखा। माता शोक से दुखी हो रही थी, अपना पेट पीट रही थी और हा देव ! हा देव ! कहकर रो रही था। इस आश्चर्य करने वाली घटना को देखकर दोनों भाइयों ने पूछा कि क्या बात है। शोकातुर उस रेणुका ने राजा सहस्रबाहु के आने के समाचार और पति के मार देने के, उनको भोजन कराने के, कामधेनु के हरण करने के समाचार सब कह सुनाये।

उनको सुनते ही स्वाभाविक पराक्रम को धारण करने वाले उन दोनों भाइयों के हृदय शोक रूपी कीले से फट गये। वे दोनों ही शोक से व्याकुल हो गये और जलते हुए क्रोध से लाल हो गये। १२१। ५०

॥ श्री ॥ दिनांक १४-८-६८ राजभवन

पुरातत्व-विनाश का उत्तरदायी कौन है ?

आदरणीय श्रीमान् राज्यपाल महोदय,

मध्यप्रदेश शासन-भोपाल ।

विषय—मध्यप्रदेशान्तर्गत सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, पुरातत्वीय, राष्ट्रीय सम्पत्ति के विनाश का उत्तरदायित्व मध्यप्रदेशीय एवं केन्द्रीय पुरातत्व विभाग के अधिकारी एवं केयर टेकर पर है । क्यों ?

श्रीमान् जी,

उपरोक्त विषय में निवेदन यह है कि शासन ने जिन्हें संरक्षण के लिये अधिकार दिये हैं, क्षेत्र कार्य करने के लिये दिया है वह हैं संचालक उप संचालक, व प्रधान लिपिक, केअर टेकर, आदि क्यों ?

उत्तरः—इन्हें जिन स्थानों को सुपुर्द किया, अधिकार दिये उन स्थानों की इन महाशयों ने अपनी **स्वार्थलिप्सा के कारण कोई रजिस्टर में ऐन्ट्री नहीं की है,** इस लिये कि **विदेशियों को मूर्तियाँ ऊँचे दामों में बेचकर स्वार्थसिद्धि** कर सकें। यह अधम कृत्य एक बड़े पैमाने पर हो रहा है । इनके साक्ष्य श्रीमान् के समक्ष मय फायलों के अवलोकनार्थ साथ लाया हूँ ।

इस दुष्कृत्य का पता कैसे लगा ?

१-प्रार्थी विदिशा का मूल निवासी है और कई कलाओं से रुचि रखने वाला आर्टिस्ट धार्मिक व्यक्ति है । नाम राजमल मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक के नाम से प्रख्यात हुआ है । प्रार्थी ने एक संग्रहालय निर्माण के लिये विदिशा नगर, तथा राजधानी भोपाल और रायसेन में संग्रहालय निर्माण हो शासन के पुरातत्व विभाग प्रान्तीय और केन्द्रीय स्तर पर तथा मंत्रालयों में पत्र प्रेषित किये हैं । जिनके उत्तर जो प्राप्त हुए हैं कुछ संलग्न हैं ।

प्रार्थी को विभागीय अधिकारी श्री हरिहर विट्ठल त्रिवेदी उप संचालक पुरातत्व विभाग म० प्र० शासन भोपाल ने जो कि वर्तमान में रिटायर हो चुके हैं मार्गदर्शक के पद ५०-३-८० के ग्रेड में नियुक्त किया था ।

और २१ मास तक आदेश क्र० ८५९ दि० १९-७-५७ से दि० ३१ मार्च सन् १९५९ तक शासकीय स्तर पर रहकर कार्य किया है। विदिशा के अन्दर कोई पुरातत्वीय संग्रहालय नहीं था। विदिशा जिले में अनेकों स्थान ऐतिहासिक पुरातत्व के भण्डार भरे पड़े हैं, जिनकी सूची प्रार्थी ने उप संचालक को प्रस्तुत की है और मौके भी दिखाये हैं। नियुक्ति के समय ४० मूर्तियां और १७५ ताम्र एवं रजत मुद्रायें जो कि शासन के लिये प्रार्थी के द्वारा दी गई हैं, उन्हें विभाग के अधिकारी श्री उप संचालक महोदय ने गदरबूद किया, हड़प जाने और शासन के संग्रहालय में न रखने पर विनाश-कार्य को न देख सकने पर वैमनस्य बढ़ा और शासकीय पत्र मासिक एवं साप्ताहिक में आवक एवं जावक करके इनकी सेवा में प्रस्तुत किये और वरिष्ठ अधिकारियों तक पहुंचाये जिनका समाचार पत्रों में निरन्तर प्रकाशन भी होता रहा है। अवलोकनीय है, रिकार्ड साक्षी है।

२-नगरपालिका द्वारा विदिशा के पुरातत्व का विनाश हो रहा था। प्रार्थी ने आवेदनपत्र प्रस्तुत किये हैं और यहां तक कि यह क्षेत्र प्रार्थी के ही सतत् प्रयत्नों से मय नकशे के ग्वालियर गजट दि० २० दिसम्बर सन् ४७, भाग १ पृ० १५६५ पर प्रकाशित है, प्रेषित कर विनती की थी किन्तु वैधानिक कोई कार्यवाही संरक्षण सम्बन्धी नहीं की। किन्तु जिलाध्यक्ष महोदय ने एक आदेश मेरे सतत् प्रयत्न करने पर आदेश क्र० १५८१४ दि० १८-९-५७ को प्रस्तुत किया है। इस सम्बन्ध में प्रार्थी ने सतत् प्रयत्न किये हैं। इसी का प्रतिफल है कि विदिशा में संग्रहालय बन सका। जब बढ़ता हुआ प्रान्तीय सूर्य का उदय उपसंचालक न देख सके तो प्रार्थी को जाल में फंसाने के लिये ५००) रु० मूर्तियां बेचकर मांगे गए। प्रधान लिपिक जगमोहन सारस्वत पुरा० विभाग द्वारा इसकी शिकायत भ्रष्टाचार विभाग में प्रार्थी ने आवेदन पत्र ३ फर० सन् ५७ को शासकीय सेवा में रहते हुये ही की है, जिसका उत्तर पत्र क्र० १०२६।२०६।५७, २ भोपाल दि० ६ फर० ५७ को प्राप्ति का आया और न्याय में पक्षपात इसलिए किया कि जिसकी शिकायत उसी के पास भेजी गई और दबा दी गई, क्योंकि स्वार्थ पर धक्का लगता था।

इस सम्बन्ध में विनाशकारियों के षड़यन्त्र बढ़े और प्रार्थी ने संचालक महोदय को पत्र लिखा जिस पर कोई ध्यान नहीं दिया और प्रार्थी नया रंगरूट होने, जालफरेब न जानने और किसी का सहयोग न मिलने से इन लोगों ने एक वातावरण खड़ा किया और दि० २७ मार्च सन् ५९ को आदेश क्र० ६८२ द्वारा सेवामुक्त कर दिया, किन्तु बिना नोटिस दिये और बिना अपराध को लगाकर। सम्बन्धित प्रकरण में प्रार्थी ने धारा ८० का नोटिस सी. पी. सी. का दिया जिसका उत्तर आज तक प्राप्त नहीं हुआ और बाद में प्रार्थी ने रजि० क्र० ६२९ दि० १२-१-५९ श्री चीफ सेक्रेट्री महा० म० प्र० शासन भोपाल। क्र० ६३० दि० १२-१-५९ मुख्य मन्त्री महोदय म० प्र० शासन भोपाल। क्र० ६३२ दि० १२-१-५९ संचालक पुरातत्व विभाग हरिहर विट्ठल त्रिवेदी भोपाल को और क्र० ६३१ दि० १२-१-५९ को इनके षड़यन्त्र विनाशकारियों के सम्बन्ध में तथा शासकीय सम्पत्ति हड़पने के सम्बन्ध में दिये हैं। जिनका परिणाम यह हुआ कि प्रार्थी ने विदिशा में जो संग्रह बिना शासन के द्रव्य खर्च किये इतना बड़ा संग्रहालय बनाकर दिया यह है प्रार्थी की लगन, उत्साह कार्य करने की क्षमता। और एक ओर देखिये कि:—

३-दिनांक २३ जून सन् ६८ को विदिशा जिले के सतपाड़ा थाने से कागपुर ग्राम के संरक्षित

क्षेत्र से ४ मूर्तियां चोरी गईं हैं जिन्हें व्ही० के० बाजपेई और पुरातत्व विभाग के एक गिरोह ने जो कि धर्म की आड़ में चोरी मूर्तियों की करता आ रहा है वह है हिन्दुस्तान चेरिटी ट्रस्ट बिड़ला मन्दिर भोपाल बिड़ला ब्रदर्स प्राइव्हेट लिमिटेड भोपाल का चीफ रेजीडेन्ट आफीसर आर. एन. बाजपेई शिमला रोड सिव्हिल लाइन भोपाल की जीप द्वारा यह चोरी की गई है। तथा इस व्यक्ति को शासन ने एक लायसंस श्री उप सचिव श्री व्ही० बी० विल्लोरे शिक्षा विभाग म० प्र० शासन भोपाल के नम्बरी २२४४ । २०४३ । १०.१० । सी० सी० दि० ७ जुलाई सन् ६० को बिड़ला मंदिर भोपाल में संग्रहालय निर्माण के लिये मूर्तियां भोपाल क्षेत्र के आस पास की अरक्षित स्थानों की संग्रह करने की अनुमति दी थी किन्तु इस व्यक्ति ने नौकरों के द्वारा मूर्तियाँ उठवाईं और विदेशियों को बेचीं। इसी कारण से आज तक बिड़ला मन्दिर पर मूर्तियों का संग्रह नहीं हो सका। कागपुर की मूर्तियां मंगवाई हैं।

इसी काल में एक कार द्वारा देवराजपुर से भी २ जैन मूर्तिकां चोरी से उठवाई गईं हैं।

इस प्रकार से पुरातत्व विभाग के अधिकारी और पूरा स्टाफ मूर्तियों के चोर और विनाशकारी एवं अपराधी वेतनभोगी हैं इन्हें सांस्कृतिक निधियों की सुरक्षा, संग्रह, मध्य प्रदेश शासन के गौरव और धार्मिकता से कोई संबंध नहीं है।

इसी प्रकार से बड़ोह के मन्दिर केन्द्रीय पुरातत्व विभाग ने क्यों लिये कि इनका कोई रजिस्टर जिनमें मूर्तियां लिखी हों नहीं रखा है और इन लोगों की यही चाल है कि आज तक यह इस प्रकार से चोरियाँ मूर्तियों की करते आये हैं और करते जा रहे हैं।

इस सम्बन्ध में प्रार्थी ने निरन्तर शासन का ध्यान आकर्षित किया और आज भी करता ही जा रहा है।

भोपाल की राजधानी में कोई पुरातत्वीय संग्रहालय नहीं हैं, ऐसा क्यों ? प्रार्थी की योजना को यदि श्रीमान् जी योगदान देवें तो प्रार्थी १ ही वर्ष में एक विशाल संग्रहालय बनाकर देने की क्षमता और पुरुषार्थ रखता है, किन्तु उन स्थानों की सूची अब इसलिए देने में असमर्थ हैं कि यह पुरातत्व विभाग और कर्मचारी विश्वास के पात्र नहीं हैं।

यदि श्रीमान् अपने राज्य शासन काल को चिरजीवी बनाना चाहते हों, अपनी भारतीय संस्कृति पर गर्व और गुमान हो, तो प्रार्थी अरबों रुपयों का अमूल्य एवं अप्राप्त पुरातत्वीय वस्तु-कला संग्रह लोकोपकार के लिये अपनी समिति के माध्यम से निर्माण कर सकता है। प्रार्थी ने एक विदिशा का वैभव नाम पुस्तक लिखी है और प्रार्थी ने वर्षों से मूर्तियाँ चोरी जा रहीं हैं इसके दीवालों पर बोर्ड लिखे हैं जो साक्ष्य के लिये बिड़ला मन्दिर की कटन में लिखे जनता अव-लोकन करती है और प्रार्थी के नाम से शासक वर्ग भी सुपरिचित है। क्या सेवा ली जा सकती

है ? तो प्रार्थी अपने पुरुषार्थ, लगन, उत्साह, क्षमता का प्रत्यक्ष प्रमाण श्रीमान् जी के समक्ष रख कर अपनी विद्या, बुद्धि, कला को संसार में चिरजीवी बनाने का जिज्ञासु एक विद्याविलासी छात्र है ।

४—प्रार्थी का एक निजी पुरातत्वीय संग्रहालय भी विदिशा में है जिसे इस संग्रहालय में विलीन कर सकता है ।

५—प्रार्थी के पास २-४-५ हजार ताम्र एवं रजत मुद्राओं और विभिन्न भाषाओं के शिलालेखों आदि के अवशेष भी हैं । जिनका अवलोकन भू० पू० राजपाल महोदय ने भी किया और उनके रिमार्क दर्शक पुस्तिका में हैं ।

६—प्रार्थी की विशेषता यह है कि प्रार्थी प्रत्येक मूर्तिका विश्लेषण मानव जीवन से तुलनात्मक रूप से करता है जिसे कोई पी० एच० डी० लंदन रिटर्न नहीं कर सकता है । यदि है तो परीक्षा के लिये समक्ष में खड़ा करके परीक्षा लेकर योग्यता का लाभ शासन जनता को क्यों नहीं लिया जावे ? ऐसी प्रार्थी की प्रार्थना है ।

अन्त में प्रार्थी का निवेदन है कि बडोह की मूर्तियों के विनाश के लिये उन अपराधियों को कड़ी सजा दिलाई जावे और प्रत्येक मूर्तिका फोटो लिया जावे रजिस्टर में ऐन्ट्री कराई जावे, एक रजिस्टर केअर टेकर को दिया जावे, ताकि जनता समय समय पर देख सके । एक दर्शक पुस्तिका रखी जावे । एक कम्प्लेन बुक रखी जावे तथा इनका रिकार्ड एक मार्गदर्शिका के तौर पर प्रकाशित कराया जावे और जनता को सुविधापूर्वक रखने के लिये प्राप्त हो सके । १४-८-६८

विनीत प्रार्थी—
राजमल मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक
विदिशा

जिला विदिशा (म० प्र०) बड़ोह के दि० जैन बन मन्दिर की खड्गासन चौबीसी का विनाश !

[जैनमित्र में प्रकाशित लेख दि० १९ दिसम्बर १९६८, वर्ष ७० अंक ८ से]

क्या भारत दि० जैन समाज, मालवा प्रांतिक सभा और कमेटियाँ इस ओर ध्यान देंगी ?

बड़ोह और पठारी—

यह दोनों ही ग्राम एक दूसरे से घनिष्ट सम्बन्ध पूर्व से रखते आये हैं । और आज भी बदस्तूर हैं । यह क्षेत्र मध्य रेलवे कुल्हार और बामौरा से लगभग १३ मील के फासले पर है और बसें आती जाती हैं ।

पूर्व में यह बड़ा भारी नगर रहा है। जैनियों की भी बड़ी भारी जनसंख्या को बतलाता है। वर्तमान के ऐतिहासिक पुरातत्वीय खण्डहर, भग्नावशेष साक्षी दे रहे हैं। नवाबी जुल्मी शासनकी कृपा से जैनियों पर संकट आया और समाज के न रहने पर बीरान हो गया। वर्तमान में २० घर जैन के हैं। पठारी पूर्व में एक स्टेट रही है। विध्वंस कार्य बड़ोह के मन्दिरों का हुआ है।

बड़ोह की आबादी वर्तमान में ५०० जनसंख्या की होगी। यह पूर्व में ग्वालियर राज्य का सीमा क्षेत्र रहा है। बड़ोह और पठारी के बीच में एक तालाब हैं उत्तर को ओर, दक्षिण की ओर भी एक तालाब है। उसके बीच में एक गड़रमल मन्दिर है जिसकी शिखर में कायोत्सर्ग लगभग ४ फीट की प्रतिमा जैनत्व को बता रही हैं। इसकी मूर्तियों का विध्वंस और चोरी भयंकर रूप में हुई है। तालाब की पार के ऊपर जिन्हें हिन्दू मन्दिर कहते हैं वह है बाराह मन्दिर जो कि चारों पुरुषार्थों का प्रतीक है। विष्णु मन्दिर एक शक्ति का प्रतीक है। दशावतार मन्दिर अवतारी पुरुष का प्रतीक है। देखिये—

भगवत्जिनसेनाचार्य ने सहस्रनाम स्तोत्र में कहा है—'दशावतार निर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर' और हनुमान जी का मन्दिर शुभोपयोग का प्रतीक है। कोली का मन्दिर ज्ञानपिपासुओं के लिये निर्माण कराये गये थे। तालाब के किनारे पर एक सभा मण्डप है जो कि स्वाध्याय भवन है। जिसे १६ खंभी कहते हैं।

इसी सोलह खंभी सभा मण्डप के निकट में बन मन्दिर जिसे बनका देवालय कहते हैं, विद्यमान है, इसमें २४ तीर्थंकरों की, २४ कोठरियों में कायोत्सर्ग सुन्दर प्रतिमायें हैं। इनमें से कुछ मूर्तियों को आततायियोंने स्वार्थवश व्यापार के लिये सिर काटे हैं। एक पत्थर पर सं० ११३० खुदा हुआ मिला है, बाहर का दरवाजा छोटा है और अन्दर बड़ा भारी चौक और सभा मण्डप हैं। मूल नायक की प्रतिमा का अभिषेक सीढ़ी लगाकर ही होता था। प्रतिमा १५ फीटके लगभग होगी इस मूर्ति की नाक भी काट ली गई है। इस मन्दिर को पुरातत्ववेत्ता ८ या ९ वीं शताब्दी का बतलाते हैं। यदि समाज इस ओर ध्यान नहीं देती या तीर्थक्षेत्र कमेटियां पुजारी आदि का प्रबन्ध नहीं करती तो यह करोड़ों रुपयों की इमारत का सर्वनाश हो जावेगा और हो ही गया है। जो कुछ भी बचा है उसकी रक्षा में समिति को हाथ बटाना चाहिये।

शिल्पकलामें खजुराहो की तरह किन्तु बीतरागी भावों के ही कारण इसमें धार्मिकता प्रधान है। विलासिता की अपेक्षता वीतरागता की तुलना में श्रेष्ठ होने से इस मन्दिर को बड़ा देहरा के नाम से ख्याति प्राप्त हुई है। ऐसे अनुपम पूज्य और प्रातःस्मरणीय प्रतिमाओं की तोड़फोड़ की अभी हाल ही में जो भयंकर घटना आततायियों मूर्तिभंजक एवं धर्म और समाज तथा पुरातत्व के दुश्मनों द्वारा घटी है उस सम्बन्ध में जो अपराधी (विनाशकर्ता) छैनी हथौड़े और तोड़ी गई मूर्तियों सहित पकड़े गये हैं और जिनकी जमानतें न्यायालय बासोदा ने ली हैं। वह निम्नांकित हैं।

नं० (१) भजना काछी केअर टेकर, जो कि पुरातत्व विभाग का शासकीय कर्मचारी है और बड़ोह के इसी मन्दिर की रक्षा के लिये है। यह कभी भी शासकोय सेवा में नहीं रहा। सम्भवतः इस केअर टेकर का स्वार्थवश सम्बन्ध अन्य अपरमार्थियों से है। नं० (२) गोपाल व नं०

(३) कृष्ण जाति का सुनार है। ये दिल्ली के व्यापारी हैं। राजस्थान के रहने वाले हैं। मूर्ति के विध्वंस और चोरी सम्बन्ध में गोलाकोट के मन्दिरों में मूर्तियां तोड़ते वह लोग खनियाधाना वालों के द्वारा पकड़े गये थे और इन्हें पिछोर न्यायालय से सजा भी हुई थी। इन्होंने गुरीलागिरि व बूढ़ी चन्देरी के मन्दिरों की मूर्तियों की चोरी के सम्बन्ध में मुंगावली न्यायालय से सजा पाई है। इन लोगों से सम्बन्ध होने के कारण ४ दिन तक इस दुर्घटना की रिपोर्ट पुलिस में नहीं की। जब जनता ने मजबूर किया तब कहीं रिपोर्ट की गई है।

इस केअर टेकर के पास कोई दर्शक पुस्तिका, कम्पलेन्ट बुक, चार्जलिस्ट अथवा अन्य कोई आवश्यक सामग्री नहीं है।

निश्चयात्मक रूपसे इसमें बड़ा भारी गेंग कार्य इसलिये कर रहा है कि प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक निधि को समाप्त कर ईसाइयत लाना चाहते हैं यह प्रतिक्रिया चल रही है। इस कार्य में बतरा कं० व अन्य कम्पनियाँ गुप्तरूपसे कार्य रही हैं।

नं० (४) पठारीका रियाजखाँ (५) उस्मानखाँ (६) नरेन्द्रकुमार पाठक (शासकीय अध्यापक है) (७) ओमप्रकाश गौड़ (यह वक्सनेटर है) (८) लक्ष्मणसिंह बागड़ी (पत्थर फोड़ने का कार्य करने वाला एक कारीगर है) (९) बाबूलाल जोगी (कारीगरी और गुप्तचर है) ये मूर्तियाँ तोड़ने, चोरी करने अनधिकृत तौर पर मन्दिरों में चोरी करने के लिये जाने के अपराध में मय माल के व हथियारों के गिरफ्तार किये गये हैं। इन्हें जमानत पर रिहा किया गया है।

नं० (१०) खलीलखां (११) गनीखां व नं० १ गोपाल व नं० २ कृष्ण यह लोग फरार हैं। इन लोगों ने जैन और हिन्दू धर्म को व सांस्कृतिक निधि को बडी भारी हानि पहुंचाई हैं।

संभवतः शासन ने अपराधी भजना को सस्पेन्ड इस लिये न किया हो कि उससे और अप्रेक्षित जानकारी मिल सकती हो।

नं० (१२) वह गाडीवाला है जो कि मूर्तियां व अन्य सामग्री जो चोरी गई है गाड़ी में रखकर किराये पर ले जाता था तथा तोड फोड आदि की समस्त जानकारी आदि रखता था वह भी फरार है।

वर्तमान समय में पुरातत्वीय सामग्री की रक्षा हेतु अधिक सतर्कता की अपेक्षा आवश्यक है और इस सम्बन्ध में केवल शासन के भरोसे रक्षा उचित नहीं है। इस ओर स्थानीय समाज, धार्मिक पुरातत्व, अनुसंधान, नगर और तीर्थक्षेत्र कमेटियों को अपनी ओर से एक चौकीदार की नियुक्ति करना आवश्यक है।

प्रार्थी (लेखक) इस पुरातत्वीय सांस्कृतिक अपूर्व और अमूल्य अप्रप्त निधियों की सुरक्षा; संग्रह और संग्रह और संग्रहालय-निर्माण के लिये समाज, शासन का ध्यान २५ वर्ष पूर्व से आकर्षित करता आ रहा है। ध्यान न देकर उपेक्षा करने का ही यह परिणाम है।

समितियों को आवश्यक है कि बची हुई निधि की सुरक्षा के लिये जनता में और समाज में जागृति उत्पन्न करें। यही एकमात्र उपाय हो सकता है।

बड़ोह और पठारी में जैन समाज के लगभग २० घर हैं जिन्हें धार्मिक या पुरातत्वीय, कोई रुचि नहीं है। उन्हें कमाने खाने, पेट भरने से ही फुरसत नहीं है। इस मामले में वे अंगूठा छाप हैं।

पठारी पहाड़ की चोटी पर बसा है। पठारी और बड़ोह के बीच में एक तालाब है। बड़ोह पठारी से लगभग १॥ मील के ही अन्तर से पहाड़ी के किनारे पर बसा हैं। पठारी यह एक मुस्लिम स्टेट रही है। इस ग्राम ने बड़े बड़े उतार और चढ़ाव देखे हैं। सन् १९५६ के पूर्व यह स्टेट गणतन्त्र राज्य में विलीन करली गई और विदिशा जिले में मिला ली गई है यह विदिशा जिले का सीमा क्षेत्र पूर्व से ही रहा है।

इसकी ऐतिहासिकता यह है कि यहां पर एक विशाल जिनालय-शिखरबन्द जिसके बीचमें पहाड़ी पर ही एक कुआ बना है। मन्दिर बड़ा भारी पत्थरों का बना हुआ जिसमें बड़ो बड़ो पत्थर की छतें खम्भे और कलाकृतियों से शोभित हैं। इसको संस्कृति लगभग ६०० वर्ष पुरानी मिलती है।

जैन मन्दिर में भगवान् आदिनाथ की १२ फुट की कायोत्सर्ग प्रतिमा सांगोपांग है जिस पर सम्भवत: सं० १६९२ फाल्गुन वदी ७ बुधे श्री मूलसंघे सरस्वतीगच्छे कुन्दकुन्दाचार्यान्वये भट्टारक श्री पद्मनन्दी देवा: तत्पट्टे भ० गुणकीर्तिदेवास्तत्पट्टे जसकीर्तिदेवा: तत्पट्टे रत्नकीर्तिदेवा: शहंशाह पातिशाह शाहजहाँ राज्ये अष्टशाखे तत् गोहिल गोत्रे सं० सरपंच नरसिंह पांडे तत्पुत्र शाह राहोत्भार्या रुकमनी तत्पुत्र सा० हल्के भार्या-रत्नदेव तत्पुत्र मगनीराज नित्यं प्रणमति चौ० रामचन्द्र बघोरा सं० खुदा है।

अष्टशाखे इस बात को प्रमाणित करती है कि परवार दिगम्बर जैन धर्मावलंबियों ने इस मन्दिर का निर्माण और प्रतिष्ठा कराई हैं और इस प्रांत व ग्राम और निकटवर्ती देहाती क्षेत्रोंमें परवार दि० जैन लोग ही बसे हुये हैं।

यदि श्रीमान् और धीमान् लोग एक पुजारी की व्यवस्था कर देवें तो इस क्षेत्र के जिनालय की रक्षा सम्भवत: हो सकती है।

आशा है कि उचित व्यस्था के लिये दान की रकम या मन्दिरोंसे करने की कृपा करेंगे। ऐसा मेरा सुझाव है।

भगवान आदिनाथ की मूर्ति के अतिरिक्त पठारी के जिनालय में दो काले पाषाण की मूर्तियां सं० १४७१ में भट्टारक रत्नकीर्ति द्वारा प्रतिष्ठा कराकर विराजमान की गई थीं तथा इसके अतिरिक्त लगभग ९३ मूर्तियां छोटी बड़ी करके और हैं। लगभग ५० तांबे पीलल के यंत्र जिन पर भट्टारक एवं गृहस्थों की परम्परा संवत् आदि खुदा हुआ है। इससे यहां के इतिहास संशोधन की भी सहायता मिल सकती है। कुछ हस्तलिखित ग्रन्थ भी हैं जिनकी प्रशस्ति से भी शोध-कार्य भली प्रकार से हो सकना असम्भव नहीं है।

ग्राम के मध्य भाग में भीमगदा नामक एक लगभग ४० फुट लम्बा मानस्तंभ है जिसे रुगडध्वज भी कहते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि सौधर्म इन्द्रने इन्द्रभूति गौतम गणधरके मानभंग

के लिये निर्माण कराया हो। जिसके देखने से विद्याभिमानियों का मान चूर चूर होजाता है। यह भी एक जैनियों की कीर्ति का प्रतीक जैनाचार्यों के उपदेशामृत से जैन शासकों द्वारा निर्माण कराया गया था जिसका प्रमाण इसके शिलालेख से भली प्रकार मिलता है। स्तंभ निर्माण की परंपरा केवल जैन समाज में ही प्रचलित है।

इस मानस्तंभ को राष्ट्रकूटवंशी राजा परवल (परवार) ने अपनी विजय की स्मृति में चैत्र शुक्ला ६ सं० ९१७ में निर्माण कराया था।

स्तम्भ के अग्र भाग पर चार हाथियों की मूर्तियां काल की प्रतीक संकेत रूप में इसलिए बतलाई हैं कि जिस प्रकार हाथी भूमंडल पर बड़ा है उसी प्रकार से काल (समय) बड़ा बलवान है। काल (दिन-रात) के चार-चार पहर हैं उसी प्रकार से हाथी के चार चार पैर हैं। यह प्रतीकात्मक चिन्ह पूर्वाचार्यों ने संकेत किया हैं। सभी को काल ने खाया, तुझे भी काल खायेगा।

दूसरा भाव-राजा परवल के पितामह जेजा के बड़े भाई ने कर्णाटक राज्य के हाथियों की सेना के सेनापति जो कि हजारों की संख्या में थे परास्त कर पराजय देकर लौटाया था और राज्य प्राप्त किया था, उस काल की स्मृति में हाथी की मूर्तियाँ स्तम्भ के ही अग्र भाग पर स्थापित कर संकेत किया है जो शिलालेख स्तम्भ पर खुदा है उसके सातवें श्लोक में निम्न उल्लेख है—

जित्वा विविक्त करिघटा प्रभुतरा, कर्णाट भट सहस्त्रणी।
प्रथुलाटाख्य राज्यम् लब्धम् यस्याग्र जेना जो॥

स्तम्भ का शिलालेख शताब्दियों से आततायियों के आक्रमणों का शिकार बना रहा है और अब भी बना हुआ है। सर्दी गर्मी, बर्षात् के कालचक्र की बात ही क्या कहना है, सर्वथा अपाठ्य सा हो गया है।

जनरल कनिंघम ने ए. पी. ग्राफी इंडियामें इस शिलालेख को प्रकाशित कराया है। शिलालेखकी भाषा साहित्यिक एवं प्रौढ़ है। इस प्रशस्तिके रचनाकार हर्ष कवि थे। कविकी लेखनी इस बातको प्रमाणित करती है कि स्तम्भके निर्माता जैन शासक ही थे। जैसा कि २६ वें श्लोकसे सिद्ध होता है।

हर्षेण पद्यैः रचिता प्रशस्तिः।
मुक्तः फलालि श्रियमातनोति॥

प्रशस्तिके पद्योंका तुलनात्मक अध्ययन करनेसे ज्ञात होता है कि शिशुपाल वधके लेखक और माघ कवि समकालीन हों ऐसा कवियों का कहना और लिखना है। हर्ष कवि की इस प्रशस्तिको सूत्रधार साहिलने इस स्तम्भ पर अपना परिचय दिया है। जो ३१ वें श्लोकसे स्पष्ट होता है।

उत्कीर्णा सूत्रधारेण साहिलेन स्फुटकाक्षरा।
चित्रांग वागव्यप्रवर्णना सरस्वतीव भासते॥

स्तम्भ जीर्णशीर्ण होता जा रहा है। इसके निकटमें कई दर्शनीय व ऐतिहासिक प्राचीन स्थापत्य कलाके सुन्दर महत्वपूर्ण एवं शिक्षाप्रद स्थान विद्यमान हैं।

इन निर्जीव प्रस्तरखण्डों में सांकेतिक रूप से कलाकृतियों में प्रतिमा ज्वारभाटों की भांति उमड़ रही हैं।

भारतीय जैन संस्कृतिको पूर्व जैनाचार्यों ने जीवन प्रदान किया है और मनोवैज्ञानिक धर्म प्रचार की एक अद्वितीय प्रणाली थी। आध्यात्मिक-बौद्धिक ज्ञानका एक मार्ग दार्शनिकरूप से समाज और संस्कृति के लिये युग युगों तक चिरंजीवी रखने के लिए इन्हें निर्माण कराया था। वर्तमान और भावी सन्तति इसके लिए इनकी चिर-ऋणी रहेगी।

—राजमल जैन मड़वैया-विदिशा, (म. प्र.)

अध्याय – १५

१—ग्यारसपुर में १० वें तीर्थंकर भगवान शीतलनाथ की तपोभूमि
२—श्रीमद् भट्टाकलंक देव द्वारा बौद्धों की पराजय
३—दर्शनीय स्थल-ग्यारसपुर।

ग्यारसपुर

ग्यारसपुर इस विदिशा से २२ मील उत्तर-पूर्व २३—४०—उत्तर ७८—९—रेखा पर स्थित है। यह दर्रे पर स्थित है जिसमें से होकर मालवे से बुन्देलखंड का प्राचीन मार्ग था। इस पर तेरहवीं शताब्दी में मालवे के परमारों का अधिकार था। यहां पर एक गढ़ी है जिसमें एक बावड़ी है। पहाड़ी पर एक मालादेवी नामक विशाल जैन मन्दिर है जो भारत के मालवा प्रान्त के चार दर्शनीय चीजों में से एक यह भी अद्वितीय स्थान है।

—: चार दर्शनीय स्थल :—

(१) ग्यारसपुर की मालादेवी (२) उदयपुर का देहरा।
(३) माचलपुर की बावड़ी (४) भोजपुर के खंभ॥
यह चारों ही स्थान मध्य-प्रदेश में स्थित हैं।

ग्यारसपुर में दर्शनीय स्थल (१) मालादेवी का जैन मन्दिर (२) बाजरा मठ (यह भी जैन मन्दिर है) (३) अठ खंभा संदेहात्मक है (४) झूला (५) मान सरोवर ताल (६) ढेंकीनाथ (७) मैदोंन (८)।

(१) मालादेवी का जैन मन्दिर:- पहाड़ी को काट कर बनाया गया है। यह वह स्थान है जहाँ भगवान शीतलनाथ १० वें तीर्थंकर के दो कल्याणक गर्भ और जन्म का इस विदिशा में हुआ था और जिस समय वैराग्य हुआ तो देवगण तप कल्याणक के लिये पालकी यहीं लाये थे। भगवान शीतलनाथ का प्रथम उपदेश यहीं हुआ था। तथा बौद्धों के घातक चक्र का भण्डाफोड़ आचार्य भट्टाकलंक देव ने यहीं किया था। जिसका इतिहास निम्न प्रकार से है:-

यहां के राजा की दो रानियां थीं। एक जैन धर्मावलंबी और दूसरी बौद्ध धर्मावलंबी उनकी यह प्रतिज्ञा थी कि पहिले हमारे धर्म का रथ निकले, किन्तु उस समय बौद्धों की राज्य सत्ता और प्रमुखता अधिक थी। जैनाचार्यों का अभाव था। उस काल भट्टाकलंक देव का जन्म हुआ इनके लघु भ्राता का नाम निष्कलंक था। यह दोनों भाई नालंदा विश्व विद्यालय में भेष बदल कर बौद्ध

धर्म के अध्ययन हेतु गये। उन्हें एकबार आचार्य जो भी बता देते थे वे जीवन भर नहीं भूलते थे और निष्कलंक दोबारा पढ़ने पर किसी प्रकार यह दोनों भाईयों को वहां के आचार्य ने बन्दी बना लिया और प्रातः काल इन्हें फांसी होना थी इसलिये यह सत खंड़े पर कैद कर सायंकाल रखे गये किन्तु धर्मरक्षार्थ उपाय सोच यह एक खिड़की के मार्ग से अर्द्धरात्रि के समय छत्री के द्वारा जमीन पर आगये और भागना शुरू किया। जब प्रातः काल कैदी न मिले तो शोर मचादिया और चारों ओर सैनिकों को उनका सिर काटलाने का आदेश देकर राजा ने आचार्य के आदेशानुसार भेज दिया। यह भागते जा रहे थे कि भानु उदय हुआ और कुछ धूल उड़ती दिखाई दी। यह ग्राम के निकट पहुँच चुके थे। वहां के एक रजक (धोबी) का लड़का कपड़े धोने जा रहा था कि उसने पूछा कि तुम कैसे भाग रहे हो। घबड़ाहट में कहा कि शत्रु दल आ रहा है, जो सामने दिखता है उसका सिर काट लेते हैं। यह सुनते ही वह धोबी का लड़का उन्हीं के साथ भागा। इधर दोनों भाईयों ने आपस में बिचार किया कि आपसे अधिक लाभ हो सकता है अतएव आप इस तालाब के कमल पत्र में छुप जावें, मैं आगे जाता हूं। यदि जीवित मिला तो पश्चात् मिलूंगा। अब दोनों निष्कलंक और धोबी का लड़का भागते घुड़सवार जल्लादों ने इन दोनों बालकों को देख कर घोड़े बढ़ाये और इन दोनों बालकों के सिर काट लिये। और सिर लेकर निर्भय होकर वापिस हो गये। पश्चात् भट्टाकलंक देव तालाब से निकल कर इस ग्यारसपुर के एक बटवृक्ष के नीचे दोपहरी के समय विश्राम कर रहे थे कि रानी के सिपाही ने आकर इन्हें जगाया। इधर रानी के साथ क्या घटना घटी इस ओर भी ध्यान दीजिए।

रानी का जब संघर्ष अधिक बढ़ा और बौद्धाचार्य संघश्री ने अपने मांत्रिक अभिमान पर एक शत इसलिये रखी कि न जैनाचार्य होगा न मैं हार सकता हूं। जैनाचार्य का अभाव था रानी जिनालय में जाकर अपनी प्रतिज्ञापूर्ति के लिये अन्न और जल का उस समय तक को त्यागकर दिया जब तक बाद में विजय न मिल जावे। तृतिय दिवस चक्रेश्वरी देवी ने आकर कहा रानी मानसरोवर के किनारे बटवृक्ष के नीचे महान् धुरंधर विद्वान श्री भट्टाकलंक देव आये हैं वह तेरे इस संकट का निवारण करेंगे। अतएव देवी के कथनानुसार सिपाही भेजा और कहा गुरुवर आपका ही नाम भट्टाकलंक देव है। इस प्रकार अपरिचित स्थान में नाम स्मरण करने वाला परिचित कौन है ऐसा विचार कर पूर्ण परिचय प्राप्त कर कहा चलो। जिस समय रानी के समक्ष पहुंचे और समस्त कारण जानकर प्रथम ही बाद की भेरी बजवाई गयी और तिथि नियुक्त की गई। बाद प्रारंभ हुआ। जनता बाद सुनने आई किन्तु बाद दो प्रश्नों में ही समाप्त हो गया। उस समय संघश्री ने कहा बाद अभी समाप्त नहीं हुआ पुनः होगा। अतएव संघश्री ने अपने मंत्रबल से घड़े के अन्दर तारादेवी की स्थापना करके कहा मैं पर्दे की आड़ में से बाद करूंगा। यह बात श्री आचार्य अकलंक देव ने स्वीकार कर ली, इसलिये कि वह कलंक रहित निर्मल स्वभावी थे। अतएव पर्दे की आड़ में से ६ माह तक बाद हुआ और आचार्य अकलंकदेव को यह आश्चर्य हुआ कि यह मेरे सामने ठहरने की सामर्थ नहीं रखता फिर क्या कारण है ? बिचार करने लगे उस समय चक्रेश्वरीदेवी प्रकट हुई और उसने एक उपाय इन्हें बताया कि देव एक बार कह कर उसकी पुनरावृत्ति नहीं करते। आप उसे पुनः पूछेंगे तो उत्तर नहीं मिलेगा। देवी भाग जायगी जो तुम्हारे से बाद कर रही है। वही हुआ। आचार्य ने पुनः पूछा, उत्तर न मिलते ही राजन् के सम्मुख कहा कि कोई उत्तर नहीं

मिल रहा है। बाद समाप्त किया जाता है और रानी की प्रतिज्ञा की पूर्ति की जावे। उस समय इस मालादेवी के जैन मन्दिर की प्रतिष्ठा अकलंकदेव स्वामी द्वारा की गई और यहां मन्दिरों के निर्माण कराये गये। जिनेन्द्र भगवान का रथ चलाया गया। यह विवरण संक्षिप्त में लिखा है।

(२) बाजरा मठ :—इसका नाम बाजरामठ क्यों पड़ा ? इसलिए कि १५वें तीर्थंकर श्रीधर्मनाथ हैं और उनका चिन्ह् बज्रदण्ड है। ऐसे धर्मधुरंधर तीर्थंकर का जहाँ निवास वह मठ कहलाता है। और बज्र का अपभ्रंश बाजरा है। अथवा यों कहना भी निरर्थक न होगा कि जिस प्रकार से बाजरा अनाज लघु धान है इसी प्रकार से यह मन्दिर लघु होने से भी बाजरा कहना अन्योक्ति नहीं।

काम क्रोधादि तो नष्ट हो सकते हैं किन्तु आत्मा का निर्मल स्वभाव धर्म जो दयामय है नष्ट नहीं हो सकता। वह बज्र के समान है इसलिए जैनाचार्यों ने जो नामोल्लेख किया बड़ी दूर-दर्शिता से किया है। समझना मनन करना ही आवश्यक है। और इस मंदिर के तीन दर्वाजे हैं जिन पर कला में मूर्तियां उत्कीर्ण की हैं उनके अन्दर भी गूढ़ रहस्य छुपा है तथा इसके अन्दर देखिये जैन तीर्थंकारों की वही मूर्तियां विद्यमान हैं जिनका उल्लेख यथागुण के अनुसार किया है। यह धर्म क्षत्रिय वीर पुरुष ही धारण करते थे और यही कारण था कि जितने जैन तीर्थंकर हुए वह क्षत्रियों में से ही हुए हैं कोई बनियों में से नहीं। बनियों ने तो उस धर्म को अपनाया है और रक्षा की है जिसके लिये कुछ लोग जो अनसमझ जैसी बात करने वाले तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं यह उनकी सर्वथा भूल है। उसे यदि कायरता भी कहें तो बुराई इसलिये नहीं होगी कि :—

कुव्वत थोड़ी रोष घनेरा, यह लक्षण पिट जाने का।
आमद थोड़ी खर्च घनेरा, यह कारण मिट जाने का॥

चूंकि कायर पुरुष कमजोर होता है। उसे कमजोरी कहो या भूल अथवा अपराध। उसे मनुष्य छुपाने की कोशिश करता है किन्तु छुपती नहीं, इसकारण ईर्षाग्नि में रात दिन जलता रहता है कहा है :—

जलन की साधना संसार में सस्ती नहीं होती।
मधुर मुस्कान की कीमत, चुकाते अश्रु के मोती॥

इसलिए विद्वद्जन सम भावों से बुराइयों को छोड़ते हुए सद्गुण ग्रहण करेंगे।
यह है बाजरा मठ का संक्षिप्त इतिहास।

—: अठखंभा :—

इसे आठ खंभा ८ खंभे होने से कहते हैं। यह वास्तव में ८ खंभे सभामंडप के हैं शेष पिछला भाग नष्ट किया जा चुका है जो अति महत्वपूर्ण था इसमें विशेषता यह है कि इस में शिव-पार्वती का परिवार और संसार की दशा का चित्रण मूर्तिरूप देकर संबोधित किया है जिसका इतिहास शिव जी के इतिहास में देखिये। यह कला खजुराहे की कला से मिलती है। इसमें खंभों

पर शिलालेख भी हैं जो परमार वंशी क्षत्रियों की परमारी भाषा के द्योतक हैं। इसमें निर्माणकर्तादि का परिचय है। यह सड़क के ही किनारे पर है। इस कला से ज्ञात होता है कि यह भी जैन मन्दिर ही था।

✕

कटारमल (कालभैरव) ग्यारसपुर जिला विदिशा (म० प्र०)

कामी क्रोधी कृपण खल, भिक्षुक व्यसनी जान।
इनके हृदय दया नहीं, हो कितनी ही हान ॥

इस प्रतिमा की लंबाई ८ फुट चौ० ४ फुट मो० २ फुट है। यह स्थान मोहनपुर के नाम से विख्यात है।

इस प्रतिमा के सामने के दृश्य में मूल प्रतिमा भैरों की है जो कि कटारमल कही जाती है और इसकी पूजा हरिजन जाति जो कि चमार कहे जाते हैं करते हैं। इस प्रतिमा के सिर पर सप्तफणी सर्प है जो कि सात वार रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि तथा सप्त व्यसन जुआ खेलना; मांस खाना, मदिरा पान करना, वेश्या सेवन करना; शिकार खेलना, चोरी करना; परस्त्री सेवन करना इन सातों पापों का जिसे व्यसन लग जाये को संकेत करती है। बार, प्रहार को कहते हैं।

यह सातों ही काल मृत्यु को आमंत्रित करने के संकेत हैं। जिन्हें अध्यात्मवादियों और महापुरुषों और विद्वानों ने हेय मानकर त्यागने का ही उल्लेख पुराणों में किया है।

इन सातों में आततायियों की यदि वक्र दृष्टि हो जाय तो केतु ग्रह और यह युद्ध करने में प्रवीण होने से अपने सिर की परवाह न करने वाले होने से राहु ग्रह इस प्रकार से नव ग्रहों को धारण करने वाला भी कहते हैं इन नव ग्रहों की वक्र दृष्टि भयकारक ही होती है। इस प्रतिमा के चित्र में नव खाने इसी उद्देश्य को लेकर किये हैं कि यह नवग्रह भी हैं।

सिर पर सर्प क्रूर स्वभावी जिसके काटने का तो मन्त्र और औषधि मिल सकती है किंतु क्रूर और दुष्ट स्वभावी की न कोई दवा है और न मन्त्र ही है।

गुण और दोष हर वस्तु में होता है। गुणवान गुणों को ग्रहण करते हैं और आततायी कुसंगति में फंसा हुआ प्राणी दोषों में अभी तक आनन्द मानता है तब तक उसे कोई जबरदस्त कोई सद्गुरु बाल्मीकि ऋषि को जिस प्रकार से प्राप्त हुआ था, दुष्कृत्यों को नहीं छोड़ता है। और न त्यागता ही है।

यह प्रतिमा उस समय का संकेत करती है। कमर की घन्टारों से घन्टारों के जिस प्रकार नाद से जागृति मिलती है उसी प्रकार से उसके विषयोन्मत्त कुकृत्यों से सतर्कता मिलती है।

यह प्रतिमा नग्न इसलिये है कि यह राग के वशीभूत है क्योंकि इसके कमर से घुटनों तक मुंडमाल दाहिने हाथ की ओर नारी प्रतिमा को संकेत करती हुई है तथा इसके एक हाथ

में क्रूरता का प्रतीक मानव का सिर कटा हुआ हाथ में है जिसका खून कुत्ता पी रहा है और दूसरे हाथ में कृपाण है हिंसक भाव को बताती है।

नारी पुरुष के आधीन है क्योंकि:—

पलित जानवर भार्या, नौकर बंधुआ सोय।
पराधीन इतने रहें रंच न सुख इन होय॥

इनको सुख नहीं होता है। इस भैरों की प्रतिमा के कानों में विषैली बातों के सुनने का संकेत कानों में सर्प है। जिस प्रकार से वर्तमान मानव को विषयों का रोग लगा है। शासन का प्लान परिवार नियोजन से है। शासन इस दिशा में अरबों रुपया व्यय कर रहा है किन्तु जब तक संयम नहीं रखा जाता है सब व्यर्थ है।

विषय भोग यह चर्म रोग है, सुखी न जीवन कोई।
सफल प्लान परिवार नियोजन, संयम बिन ना होई॥
विषय भोग का रोग लगा है, दानव वृत्ति छाई।
हो निदान अरु रोग चिकित्सा, संयम माँहि बताई॥

विषयों के रोगी में निर्दयता होती है वह गुण और कला धर्म, शील, विद्या, तप, दान से वंचित रहता है। वह वेश्या सेवन करता है। उसे अनेक प्रकार की गर्मी, सुजाक त्यादिक रोग घेरते हैं, उन्हें कुष्ट रोग का सामना भी करना पड़ता है। वह चाहे जाति का ब्राह्मण ही क्यों न हो—

ब्राह्मण हुआ तो क्या हुआ, गले में डाला सूत।
ज्ञान दया दोनों नहीं, रहा भूत का भूत॥

ऐसा व्यक्ति अभिमानी, अहंकारी होता है और सभी जनता के सामने आंख का कांटा बन जाता है।

अति कठोर ऊंचो अधिक, मानयुक्त जिह बोल।
सो जन सब संसार की, लेत शत्रुता मोल॥

उसके पास न्याय नाम की कोई वस्तु नहीं रहती है और न अपनी प्रजा का दुख-सुख देखता है और न प्रजा को अपने पुत्रवत ही मानता है। राजा उसे कहते हैं जो—

दुख सुख परजा को लखै, सुत सम पाले ताह।
धर्म न्याय सब को करै, राजा कहिये ताह॥
है राज्य की शोभा प्रजा, राजा प्रजा का दास है।
राजा प्रजा में भेद हो तो, सर्व सत्यानाश है॥

ऐसे मानव जो कि विषयी हैं वह:—

रहते गुणों से तो सदा, हम लोग कोसों दूर हैं ।
पर लोक में अपनी प्रशंसा चाहते, भरपूर हैं ॥

क्योंकि उन्हें विषय तृष्णा होती है और वह वैतरणी नदी है:—

क्रोधो यम राजाश्च, तृष्णा वैतरणी नदी ।
विद्या काम दुग्धा धेनुः, संतोषो नंदनं वनं ॥
तृष्णा वैतरणी नदी, क्रोध पाप का कोष ।
कामधेनु विद्या कहिये, नन्दन वन संतोष ॥

महावीर किसे कहते हैं:—

जो पाले दीन दुखियों को, उसे धनवीर कहते हैं ।
मुसीबत में सबर करले, उसे बलवीर कहते हैं ॥
बचाये लाज सतियों की, उसे रघुवीर कहते हैं ।
जो जीते अष्ट कर्मों को उसे महावीर कहते हैं ॥

यह कटारमल की मूर्ति नग्न क्यों है ? इसलिये कि यह राग नंगा है, राग में—रंग में लवलीन रहने वाला लक्ष्मीवान कृपण व्यक्ति; व्यसनों में धन को पानी की तरह बहाने वाला मांस मदिरा का सेवन करने वाला; और भीख माँगने वाला, इनके दया नहीं होती है । इस बात को इस कटारमल की मूर्ति का चित्र स्पष्ट कर रहा है।

इस मूर्ति के लक्षण देखिये कि बांये हाथ में भिक्षापात्र हैं । क्योंकि इस भिक्षापात्र का ध्येय घर घर फिर कर जनता से वोट मांगना और एन पर अनेक प्रकार के संकट उत्पन्न करने वाले कानूनी दाँव पेंच से टैक्सों के बंधन में बांधना जिसका वर्णन हम विदिशा वैभव के पृष्ठ ११ पर कांग्रेसी राज्य के उन्नति के आंकड़े में कर चुके हैं । देखें ।

बांये नीचे के हाथ में स्वामिभक्त सेवक कुत्ता एक कटे हुए सिर का खून पी रहा है । यह किसका सिर है ? जनता का आज का शासक वर्ग अथवा कोई ऐसा विभाग है जिसमें भ्रष्टाचार न हो ? स्वयं भ्रष्टाचार करते हैं और उनकी आड़ में उनके मातहत और वरिष्ठाधिकारी भ्रष्टाचार करते हैं उन्हीं से ही बंधे हुए मन्त्री गण हैं को संकेत करता है ।

दाहिने हाथ नीचे वाले में कृपाण है यह कृपाण व्होटों की भिक्षा को लेकर पांच वर्ष के लिये शासनारूढ़ होने को संकेत करता है । क्योंकि चुनाव क्षेत्र में हजारों रुपया जो खर्च किया जाता है उसकी पूर्ति कहां से की जावे । वह इसी भ्रष्टाचार से पूर्ति होती है । जो कल भीख मांगते थे जिनके घर में भोजन का भी ठिकाना नहीं था वह आज कोठियां ताने और साठ-सत्तर हजार की कारों में बैठे फिरते हैं कहां से आती हैं ? एक तो हुकूमत और दूसरे भ्रष्टाचार । सैंया भये कोतवाल अब डर काहे का ।

चौथा दाहिना हाथ कहता है कि देखो भाई मैं तो एक मदारी हूं। तमाशा दिखाता हूं। इसकी मजदूरी में इस प्रकार से तमाशा दिखाकर लेता हूँ।

यह मूल प्रतिमा जो सन्मुख है स्पष्टरूप से कह रही है। यह है नंगा रागी। जो कि समस्त सांसारिक भोग सामग्री होते हुए भी तृष्णा के वश कहता है कि मुझे दो क्योंकि उसे विषय भोगों के भोगने का स्वार्थ लगा है जैसे वर्तमान शासनाधिकारी जनता से सहायता के नाम पर झोली खोल कर मांगने के लिये आते हैं। नंगा ही भीख मांगता है और नंगे ही भिखमंगे होते हैं और इन्हीं के दया नहीं होती है।

दूसरे राग का परित्याग करने वाले नंगे वीतरागी पुरुष जो कि—महान योगी परम तपस्वी अध्यात्म ज्ञानी हैं उनके क्या लक्षण हैं, क्या अन्तर है? देखिये वीतरागी नंगे पुरुष कितने उदार, दानी, सब जीवों पर करुणा और दया से जिनका हृदय सदैव भीगा रहता है। वह गुरु कहलाते हैं—

गुरु कारीगर सारिखा, टांची वचन विचार।
पत्थर से प्रतिमा करे, पूजा लहै अपार॥

✷

रावण—और रावण ग्राम

जो चित्र आपकी सेवा में प्रस्तुत किया जा रहा है वह काल्पनिक नहीं है। अपितु यह मूर्ति ७॥ फुट लम्बी २ फुट चौड़ी और ३ फुट मोटी है। जहाँ पर रावण की पाषाणमूर्ति विद्यमान है वह तालाब का किनारा है यह मूर्ति जमीन में आड़ी पड़ी हुई है। अनुश्रुति यह है कि यदि इस मूर्ति को खड़ी करते हैं तो गांव में आग लग जाती है। इसका यह स्पष्ट उत्तर है कि जो व्यक्ति कुमार्ग में लग जाते हैं उन्हें चिन्ता की अग्नि में जलना प्रारंभ हो जाता है।

दूसरी अनुश्रुति यह है कि कोई भी मांगलिक या सामाजिक कार्य प्रारंभ के पूर्व रावण की पूजा की जाती है। यह बात भी इससे स्पष्ट है कि दुर्जन को पूर्व में ही नमस्कार किया है। यदि हम इस प्रकार की भूल करते हैं तो अनेकानेक व्याधियां संभवतः आती ही हैं।

रावण ग्राम विदिशा से लगभग १६ मील विदिशा अशोकनगर रोड-हिनोतिया ग्राम से पश्चिम-उत्तर के कोने में लगभग ५ मील जिला विदिशा टप्पा-शमशाबाद में विद्यमान है। भारत में यह सर्व प्रथम ग्राम है जहां रावण की पूजा होती है और रावण वही व्यक्ति है जिसके परिणाम सांसारिक भोग भोगने की आकांक्षा रखते हैं।

भोग व्यसन सुख ख्याल में, दई मानुष गति खोय।
ज्यों कपूत खा तात धन, विपदा भोगे सोय॥

क्षणभंगुर नाशवान शरीर से ममत्व रखने वाले विषयभोगी को पूर्व आचार्यों ने मूर्खता-पूर्ण कार्य करने वाले को गधा कहा है और ऐसी ही प्रथा भी है। जिसका प्रतीक गधा रावण के सिर पर संकेत कर बताया है।

भारतीय वसुन्धरा पर जब-जब जिन महापुरुषों ने जन्म लिया वही अवतारी महापुरुष अपनी कला कृतियों, चरित्रों, मनोवैज्ञान; आध्यात्मिक, ऐतिहासिक, सामाजिक जीवन के उतार चढ़ाव और संघर्षों की भविष्य वाणी को कलाकृतियों में चतुर्मुखी प्रतिभा द्वारा मार्गदर्शन कराती हुई अनेकानेक मूक कथाओं को विद्वद् समाज के समक्ष प्रर्शित करती हैं।

इस प्रकार की अनेकानेक प्रतिमायें नदी और निर्जन स्थान, और खंडहरों में मिली हैं। जिनमें अध्ययन करने पर आत्मीय और पारमार्थिक जीवन की झांकी का सारभूत रहस्य दर्पणवत् ज्ञाननेत्र के सामने झलकने लग जाता है। और जिसे भावी संतति के अनुकरणीय समझ कर ही भारतीय जैनाचार्यों की परंपरा को जीवित रखने के प्रयास से यह सेवा विद्वद् समाज के समक्ष प्रेषित कर रहा हूँ।

अब कृपया आप देखिये और अपने जीवन तथा वर्तमान शासन से तुलना भी कीजिये कि जो गधे के मुख के नीचे चार मुख और बतलाये हैं वह क्या हैं ? वह है क्रोध मान, माया और लोभ। इसमें माया के वशीभूत मानव लोभ में फंस जाता है। जोकि मध्य में बतलाया है वह है लोभ पाप का बाप।

लोभ पाप को बाप है, क्रोध क्रूर यमराज।
माया विष की बेलरी, मान विषम गिरि राज॥

क्रोध, मान, माया और लोभ यह दुर्गम पर्वत हैं। इन पर संयमी पुरुष ही चढ़ सकता है। सतोगुणी पुरुष ही विष्णु अर्थात् प्रजा की रक्षा करने वाला है।

लोभ पाप में नहिं फस्यो, लगे न मन्मथ बाण।
क्रोधानल में नहिं फंस्यो, सो नर विष्णु समान॥

इन चारों के नीचे जो चार मुख बतलाये हैं वह हैं चार पुरुषार्थ। किन्तु जो मध्य में प्रधान मुख कामान्धता को बतलाता है और उस मुख में मृगी की विषयेन्द्रिय दबी हुई है वह काम वासना की प्रतीक है। प्रत्येक मानव इस पंचायती राज का रसास्वादन कर रहा है यानी पूर्ण रूप से भ्रष्टाचार पर उतारू है। यह कामवासना का प्रतीक है।

यह कामी पुरुष राज्यलक्ष्मी को कामिनी, जिसे मृगनयनी; अर्थात् नारी की मान्यता देकर प्रतीक बताया है कृपया ध्यान देकर पूर्णरूप से अवलोकन कीजिये।

इस मृगनयनी की टांगे यह नरभक्षी रावण जो कि पुरुष, सिंह मृग का शिकारी है। उस शिकार के लिये अपने दोनों हाथों से इस राज्यलक्ष्मी रूप नारी मृगी की टांगें पकड़े है जिसका संकेत पूर्व आचार्यों ने समाजवाद, और कुर्सी का ममत्व प्रतीकात्मक रूप से बतलाया है। प्रत्यक्ष देख लीजिये। प्रत्येक राज्याधिकारी प्रजारूप नारी का प्रत्येक पहलू से शिकार करता ही जा रहा है। जिस आतंक से समूचे भारत में खाद्य सामग्री पर राशन वितरण में प्रचुर मात्रा में भ्रष्टाचारियों का ही बोल बाला है। "भ्रष्टाचारी राज में शासक गण को चैन, रिश्वत के व्योपार की सीधी खुल गई लेन।" पूर्व राज्यों ने अपनी प्रजा पर इस प्रकार के अत्याचार और अन्याय नहीं किये जिस प्रकार से वर्तमान में किये जा रहे हैं। ध्यान रहे :—

जब अन्याय और अत्याचारों का अन्त आता है तो विनाशकाले विपरीतबुद्धि भी हो जाती है। जैसा कि राजमाता को मृगनयनी मानकर शिकारी रावण ने शिकार का तीर मारा हैं। किन्तु विदुषी नारीरत्न सिंहबाहिनी दुर्गा के रूप में अवतरित हुई हैं। जिनकी आठ भुजायें हैं। जिनके ८ प्रतीक क्रमश: समझिये।

(१) प्रथम हाथ में सर्प--विषयोन्मत्त रावण काम के वशीभूत कामरूप सर्प जिसके सिर पर शरीर से लिपटा हुआ बतलाया है। काल के अर्थ निम्न हैं:-सर्प, समय, सिंह, हाथी, मृत्यु, अवधि। जो कि बार का अर्थ आक्रमण से है। जो सात फण का है खाने के लिये जीभ लपलपा रहा है। बार का अर्थ सात बार से है जो क्रमश: रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र; शनि से है। यह कालरूप हमारे सिर पर सर्प बन कर खाने को बैठे हैं।

(२) दूसरे हाथ में चक्र है:—चक्र का आशय नारी से है। जिस प्रकार से पृथ्वी गोल है, पृथ्वी पर रत्न पैदा होते हैं जो रत्नों की दात्री माता है। कामासक्त मानव इसे भोगने की लालसा से इसके चक्कर में फंस जाता है। यह माया है और माया तीन प्रकार की पूर्वाचार्यों ने बतलाई है वह क्रमश:—

धरा, कनक, अरु कामिनी, ये हैं कड़वी बेल।
बैरी मारै दाव दे, ये मारै हंस खेल॥

आशय यही है कि जिस प्रकार से यह बसुन्धरा रत्नों को उत्पन्न करने वाली माता है उसी प्रकार से नारी भी हमारी माता है। जो कि पुत्र व पुत्री रत्न की जन्मदात्री है।

इसलिये नारी के सर्वांग अंग, प्रत्यंग, आभूषण, वस्त्रादि सभी गोल इसलिये हैं कि जो जीवधारी इसके प्रसंग में आ जाता है उसका छुटकारा पाने वाले विरले संयमी वीर पुरुष ही होते हैं।

एक कनक अरु कामिनी, ये दो जग को खांय।
देखत ही ते विष चढ़ैं, मरैं नरक ले जाय॥

इसका नाम दौलत क्यों है? इसलिये कि जब यह माया या महा माया हमारे हृदय मंदिर में आ विराजती है तो हम सीना तान कर चलते हैं, और जब इसका वियोग आता है तो हमारी कमर टूट जाती है। इस प्रकार से इसमें दो लते हैं। इसलिये इसका नाम दौलत पूर्वाचार्यों ने नामांकित किया है।

इस महामाया ने सभी देव और दानवों पर आक्रण किया है। यदि बच सके हैं तो केवल वही बचे हैं जिन्होंने संयम धारण कर शरीर से भी ममत्व नहीं रखा है ऐसे विरले दिगम्बर साधु हैं।

कामेन विजितो ब्रह्मा, कामेन विजितो हरिः।
कामेन विजितो शम्भुः, शक्रः कामेन निर्जितः॥

(३) **तीसरा हाथ**--दुर्गा का इस बात का प्रतीक हैं कि इसके हाथ में दुधारा नामक शस्त्र हैं। उस शस्त्र का आशय यह हैं कि ज्ञानीजन, विद्वत्‌समाज, जो चतुर हैं जिन्हें चतुरानन ब्रह्मा की श्रेणी प्राप्त हैं वह इसका सदुपयोग :—

दानाय लक्ष्मी, सुकृताय विद्या, चिन्ता परब्रह्म-विनिश्चयाय ।
परोपकाराय वचांसि यस्य, वंद्यस्त्रिलोकी-तिलकः स एकः ॥

और मूर्ख कामी पुरुष इसका दुरुपयोग इस प्रकार से करता हैं जिस प्रकार से इस राज्य लक्ष्मी का भोग वर्तमान शासन काल में किया जा रहा हैं। यह क्षणभंगुर ५ वर्ष के जीवन काल में भोगने के लिये प्राप्त किया गया हैं। यह भलाई और बुराई पुण्य और पाप नेकी और बदी आपके समक्ष मौजूद हैं :—

पण्डित मूरख दो जने, भोगत भोग समान ।
पण्ड़ित समवृति ममत विन, मूरख हरष अमान ॥

(४) **चौथे हाथ में त्रिशूलः**—इस बात का बोध कराता हैं कि यह मानव शरीर रत्नों का पिटारा हैं। इसके अन्दर १४ रत्न छुपे हैं। इसी मानव शरीर में देव और दानव भी हैं। जो लक्षण और प्रतीकात्मक चिन्ह देव और दानवों में मिलते हैं यदि आप गहराई से दृष्टि डालेंगे तो आप स्वयं अपने आपको कुछ समझ सकेंगे कि वास्तव में मैं कौन हूँ, इस मानव शरीर धारण करने का क्या महत्व हैं ? और मैं यह क्या भला और बुरा कर रहा हूँ ?

इन महान रत्नों से विभूषित शरीर का हम क्या उपभोग करते हैं ?

धन भोगों की खान है, तन रोगों की खांन ।
ज्ञान सुखों की खांन है, दुःख खांन अज्ञान ॥

इन पांच वर्षों के बाद हमारी क्या गति होगी ? इस बात को जानता हुआ भी कामी राक्षसी बृत्ति धारक प्राणी अपने तन, मन; वचन का दुरुपयोग करता है। इसे बिद्वत्ता कहें कि मूर्खता ?

इस बात का बोध हमारी माता दुर्गा अपने त्रिशूल तीन-कांटे से उस राक्षस का बध कर रही हैं। वह है सम्यक् दर्शन, सम्यक्ज्ञान सम्यक् चारित्र।

(५) **पांचवें हाथ में** जो तलवार बतलाई है वह हुकूमत, अधिकार, तथा प्रभुत्व को बतलाती है। और इस बात का ज्ञान कराती है कि :—तीन चीजें तीव के बगैर नहीं ठहरतीं, ।

(१) इलम बगैर बहस के (२) हुकूमत बगैर दबदबे के (३) माल बगैर तिजारत के। बस समझ लीजिये कि हमारे वर्तमान शासकों ने अपने छल, बल, कपट, से जनता को विश्वास दिला कर जो घातक प्रहार जनता पर किया, जिससे आज पूरा भारत हा-हाकार कर रहा है आप के समक्ष साक्ष्य स्वरूप विद्यमान है। यह है इनकी इल्मी लियाकत का नमूना। (२) क्या कभी काठ

की हुंडी दुबारा चढ़ सकती है। उत्तर मिलेगा नहीं। तो क्या कभी कठोरता से विजय मिल सकती है ? कठोरता बिकृत साधन है।

जन्म अन्ध कामान्ध नर, और महा मद धार।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जगमें अन्धे चार ॥

इसे आंखों वाली सरकार कहें या अन्धी सरकार ? जो कि अपनी प्रजा के साथ न्याय के बदले में कठोरता से विजय प्राप्त करने के लिये दबदबा जमा रही हैं और हुकूमत कर रही हैं सत्य हैं ?

(३) जो व्यापार सरकार के द्वारा किया जारहा है वह क्या प्रजापालन की दृष्टि से उचित है ?

जो धन जुरे अनीति को, वर्ष दशक लो खाय।
वर्ष दशक के बाद में, जरा मूल से जाय ॥

इसलिये भावी भारत का भविष्य खतरे से खाली नहीं है। क्या यह असत्य है ?

आप देखिये आपके घर में हुकूमत किसकी ? आपकी नारी की। और आपके घर की यानी भारत की हुकूमत किसके हाथ में ? प्रधान मंत्राणी इन्दिरा गांधी अखिर एक नारी ही तो है।

(६) **छठवां हाथ है :**—इसका आशय यह हैं कि प्रजा आखिर सरकार की पुत्रवत् है। जब पुत्र भूख और प्यास से पीड़ित है और भूख प्यास से जान बूझ कर जब मछली की तरह तड़फाया जाता है तो स्वभावत: वह बालक उद्दण्डता करता है। इसमें दोष किसका ? माता का। माता अपने दोषों को छुपाकर जो घातक प्रहार करने को ५ वें हाथ में तलवार लिये बतलाई है वह हुकूमत की प्रतीक है किन्तु यह जो छटवां हाथ ढाल का बतलाया है वह इस बात को प्रमाणित करता ह कि प्रजा मेरीं पुत्रवत है मुझे इसकी रक्षा करना है और प्रजा पर की गई इस गन्दी और अन्धी नीती का सर्वनाश चाहती है। जैसा कि हमारे भारत में महारानी लक्ष्मीबाई और दुर्गा वती कमलावती ने अपने जीवन की आहूती प्रजा पालन में देकर चतुर्मुखी कीर्ति प्राप्त की है और वर्तमान में आज हमारी राजमाता विदुषीरत्न ने अपनी प्रजा के हितों में बाढ़ पीड़ितों की सहायता करने में, और अनेक प्रकार के जन हितेषी कार्यों में दान देकर इस माया का परित्याग किया है जो अपनी प्रजा को पुत्रवत मानकर संकट कालीन स्थिती का सर्वनाश करने के लिये, राक्षसी वृत्ति से टक्कर लेने के लिये समस्त राज्यों में श्रेष्ठ और विजय प्राप्त करने वाली वीरांगना माता विजया राजे सिंधिया आपकी सहायता के लिये रक्षा के लिये ढाल रक्षा की लेकर आप पर साया करने आई है किन्तु उन्हें सहयोगी साथ न देवें तो उस माता का क्या अपराध है ?

७-सातवें हाथ में घंटी है :—यह इस बात को प्रमाणित करती है कि अब गाफिल निद्रा का परित्याग कर सतर्क होजा। अब तेरा काल आ गया हैं। काल का अर्थ समय से और मृत्यु से भी। जो हमें अपने कर्तव्यों के पालन करने को जाग्रत करता है।

८-आठवें हाथ में शंख है, क्योंकि—मानव अपनो विषयोन्मतता में उन्मत्त कामांधो

कालरूप हाथी की तरह जो दिन और रात हैं। ऐशो आराम में रत रहकर समय का सदुपयोग नहीं करता। यह नहीं जानता कि इसके ऊपर भी कालरूप सिंह मेरा विदारण करने को उद्यत है ऐसा नहीं जानने वाला पढ़ा लिखा विद्वान भी भयंकर विषैला विषधर नहीं तो क्या है? क्या अपनी भूल मान लेना विद्वत्ता और बडप्पन नहीं है तो क्या है? शंख हमारी मूर्खता का प्रतीकात्मक चिन्ह है।

अब देखिए इस रावण का बड़ा पेट क्यों है? और गणेश जी का बड़ा पेट क्यों है?

इसका उत्तर यह है कि गणेश जी अपने पेट में गुणों का संचय करते हैं। और राक्षसी वृत्ति वाले रावण के वंशज दोषों को।

कमर क्यों कसी है।

इसे भी समझिये कि मेरी यह राजलक्ष्मी (कुर्सी) प्राण प्यारी कहीं कोई छीन कर न ले जावे क्योंकि हमारे कर्म तो खोटे हैं। यह हमारे हाथ से छिन जायगी। इसलिये न्याय से तो हम इसका भोग नहीं कर सकते। इसलिये जो हमें बोट नहीं देते हमारे विरोधी हैं इनका निर्दयता-पूर्वक बदला नहीं लिया जायेगा। किसी प्रकार से भी जीवित नहीं रह सकते। यह माया है। जर जोरू, जमीन, झगड़े की जड तीन।

बन्धुवर! आप यह भली प्रकार से जानते ही हैं कि राजलक्ष्मी का भोगने वाला सिंह पुरुष ही होता है। जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों ही पुरुषार्थ का साधन करता है। जो व्यक्ति धर्मात्मा है:—

धर्मात्मा का निर्धन जीवन, विज्ञों ने उत्तम सदा कहा।
पर पापी धनी पुरुष का जीवन, भला किसी ने नहीं कहा॥

जिनका धार्मिक जीवन है संयम और नियम पूर्वक न्याय नीति से अर्थोपार्जन करते हैं आप जानते हैं कि—

धन भोगों की खांन है, तन रोगों की खांन।
ज्ञान सुखों की खांन है, दुःख खांन अज्ञान॥

द्रव्य क्यों एकत्रित किया जाता है? इसलिए कि—

विपति नाश हित जोड़ धन, धन से पालो नारि।
नारि और धन से सदा, निज रक्षा कर यार॥

शरीरं व्याधिमन्दिरं। शरीर रोगों का घर है।

देह धरे को दण्ड है, सब काहू को होय।
ज्ञानी भुगते ज्ञान से, मूरख भुगते रोय॥

ज्ञान यह मानव का तृतीय नेत्र है—

परख सकती नहीं रतनों को, हर इंसान की आँखें ।
दिखाई ब्रह्म क्या देवे, जो ना हों ज्ञान की आँखें ।।

यदि ज्ञान नेत्र से देखेंगे तो आत्मीय सुख का अनुभव हो सकेगा । और सांसारिक भोगों को निष्कण्टकरूप से भोगेगा । ऐसा पुरुष ही महापुरुष कहलाता है । और अन्त में राज्य वैभव को बिजली की भांति क्षणभंगुर मानकर और राज्यवैभव को त्याग कर भगवान के रूप में पुजने लग जाता है ।

अर्थोपार्जन कर विषयों की लालसा करने वाला कामीपुरुष सदैव जनता की आंखों में कांटों की तरह चुभता रहता है । उसे डाकिनी खाने लग जाती है । वह ६ है ।

तृष्णा चिन्ता दीनता माया ममता नारि ।
ये षट् डाकिनि पुरुष की, पीवत रुधिर निकार ।।

सिंहमुख इसलिए है कि सिंह पुरुष ही अपनी इच्छित वस्तु प्राप्त कर सकता है । वह दो प्रकार एक शुभरूप और दूसरा अशुभरूप ।

ज्ञान दान गुण शील तप, विद्या धर्म सुजान ।
इन विन नर पशुरूप है, विचरत भू विन मान ।।

और जो कामी पुरुष हैं वह—

कुत्ता कातिक मास में, तजत भूख अरु प्यास ।
तुलसी विषयी नरन को, बारहुं कातिक मास ।।

इस प्रकार से रावण की व्याख्या का चित्रण श्रीमंत पूज्य राजमाता विजयाराजे सिंधिया के कर-कमलों में दिनांक २९ अप्रेल सन् १९६८ को गुना के उपचुनाव में सादर समर्पित किया । गया था ।

वादिचन्द्र सूरि कृत

ज्ञान सूर्योदय नाटक की

एक साकारता ।

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र देवगढ़--ललितपुर उ. प्र. में २० भुजी अनुप्रेक्षा

जिन शासन देवी-माता अम्बिका के प्रत्येक हाथों का परिचय ।

पूर्व काल में जैनाचार्यों ने अपने विवेकपूर्ण ज्ञान और ज्ञान नेत्र से मानव मात्र के कल्याण कारी जैन साहित्य को जो साकारता दी है वह हैं २० भुजी जिनशासनी देवी माता अम्बिका। कहती है सौ सुनो ।

(चौबीसा)

तन तरवर सों सघन दुःख के, हिंस्र पशुन सों मांचा है ।
दुधि--जल--दिन सूखो, आशा की, निकट जलन मय बांचा है ॥
नाना कुनय मार्ग सौ दुर्गम, यह भव बन गुरु वांचा है ।
यामें पथदर्शक शरण्य इक, जिन शासन ही सांचा है ॥

मन—कुछ जीवन का भी उपाय है।

अनुप्रेक्षा—ज्ञान रूप गरुड़ ।

हे मन—इस अपवित्र शरीर में प्रमोद क्यों मानता है। देख कहा है कि :—

रुधिर--मांस--रस--मेदा--मज्जा, अस्थि--वीर्यमय अशुचि अपार ।
घृणित शुक्र औ रज से उपमा, जड़ स्वरूप यह तन दुखकार ॥
इसमें जो कुछ तेज कान्ति है, समझ उसे चेतन्य विकार ।
इससे मोद मानना इसमें, सचमुच लज्जाकारी यार ॥

भ्रम में क्यों पड़ा हुआ है ?

ज्ञान सूर्योदय माता अम्बिका की मूर्ति का रहस्य ।

मोहादिक भाव सब उपाधिरूप नेतक के, दुखदाई जान वृथा चित्त न भ्रमाइये ।
ज्ञानादिक भाव ते तो आप ही के स्वभाव, तिनको हितकारी जान चित्त को रमाइये ॥
जिनवानी जोर विना ज्ञान की ना शक्ति कछू, तातें जिनवानी बिना परी बागमाइये ।
ताके अनुसार ध्यान धारि मोह को विडारि, केवल स्वरूप होय आप में समाइये ॥

—श्री भागचन्द्र कवि ।

जैन आचार्यों ने अहिंसामय धर्म को वाममार्गी मांस भक्षी, निर्दयी, राक्षसी वृत्ति के धारक स्वार्थ एवं जिह्वालोलुपी कामी जनों को, जो कि देवमूर्तियों को जीवों की बलि चढ़ाते और हिंसा करते थे, बुद्धिबल द्वारा लोहा लिया था और उन्हें पराजय दी थी। दूध और पानी को हंस की भाँति राग और वैराग्य के दोनों पहलुओं को दर्पण के समान बतलाया था। देखिये माता अम्बिका अपने सिर पर दोनों हाथों से एक चक्र को पकड़े है। यह कालचक्र है संयमी और असंयमी दोनों के ही सिर पर अनंत काल से छाया हुआ है।

अनुपेक्षा—यह भोला संसार अनित्य पदार्थों को नित्य समझ कर अनन्तकाल से भ्रमण कर रहा है। फिर उसने यह बेचारा पराधीन जीव जिनेन्द्र भगवान के बतलाये हुए आत्मा के चैतन्य चितस्वरूप को कैसे देख सकता है?

(दोहा)

विद्युत वत अतिशय अथिर, पुत्र मित्र परिवार।
मूढ़ इन्हें लखि मद करत, बुधजन करत विचार॥
महा दुखद मरुभूमि में, देख दूर सों नीर।
भोले मृग ही प्यास वश, दौरि सहें बहु पीर॥
चंचल लक्ष्मी वय चपल, देह रोग को गेह।
तो हू इहि संसार में, स्वातम सों नहिं नेह॥

(राग खेमटा)

बतलाओ हे बुधिवान, विधि सों कौन बली॥ टेक॥
अणिमादिक वर महिमा मंडित, सुरपति विभव निदान।
ताको लंकापति ने मारयो, जानत सकल जहान॥ विधि०॥
पुनि तिहि रावण राक्षस को हू, रामचन्द्र बलवान।
पारावार अपार लाँधिके, मस्तक काट्यो आन॥ विधि०॥
किन्तु हाय वे रामचन्द्र हू, रहे न रघुकुल प्रान।
काल कराल व्याल के मुंह में, भये विलीन निदान॥ विधि०॥

इस कालचक्र का प्रतीकात्मक चिन्ह अम्बिका के सिर पर दोनों हाथों से पकड़ने का सूचक है। ज्ञान सू० पृ० ८५-८६।

मेरी आज्ञा में रहें, छहों खंड के भूप।
मो चक्री कों हू ग्रसे, काल महा भयरूप॥

नारायण नरलोक में, महाशूर बलवन्त।
तीन खण्ड आज्ञा यहै, तो हू काल प्रसंत ॥

कालाष्टक, ब्रह्मविलास पृ० १४८

माता भवानी कहती हैं हे जीव :—

विक्रमशाली नर विना, बल निर्बल ह्वै जाय।
सैन्य सहित हू "करन" विर, जय न लही "कुरुराय"

इसलिए राजा मन की दो स्त्रियां हैं, जो नीचे खड़ी घुटनों के यहां हैं। एक कामिनी जिसका संकेत बांयें हाथ नं० ८ में सर्प जिसे विषधर या काम की संज्ञा दी है। पूंछ के द्वारा संकेत किया है कि काम पर विजय किसी ने नहीं पाई। यदि विजय पाई हैं तो केवल वीतरागी महापुरुषों ने, जोकि ऊपर तीन बतलाये हैं दो खडगासन और एक पद्मासन। यह तीनों तीर्थंकर तीन पदवी के धारी हुये हैं। अतएव कामिनी एक तीक्ष्ण धारा है। दूसरे दाहिने हाथ नं० ९ में अग्नि को पकड़ने का संकेत मूर्तिका हाथ यह बतलाता है कि जो दाहिने घुटने के यहाँ एक स्त्री खड़ी दिखाई है वह अग्नि है—यह चिन्ता की ज्वाला है। काम के द्वारा उत्पन्न हुई संतति मोहादिक राग और द्वेष को उत्पन्न करते हैं यह दो धाराओं को ऊपर के दाहिने हाथ नं० २ में एक दोनों और नुकीला शस्त्र संकेत करता है वह ही दोधारा कहलाता है। संकटापन्न स्थिति पैदा करता है। वह है काल की सूचक टेलीफोन की घंटी जिसका संकेत बाँये हाथ नं० २ में संकेत की है कि यह काम और क्रोध की अग्नि दोनों ही अतिशय दुखदायी हैं। इसकी विजय का साधन :—

हाथ नं० ३ दाहना जिसमें एक कुल्हाड़ी है।

यह ज्ञान की सूचक अज्ञानता रूप काठ को काटने के लिए है। विवेकपूर्ण ज्ञान की कुल्हाड़ी है।

(कवित "३१ मात्रा")

कचकलाप जूं का निवास, मुख चाम--लपेट्यो हाड़ समूह।
मांसपिंड कुच, विष्टाविककी पेटी पेट, भरी बदबूह ॥
जघन--जंत्र मलमूत्र झरन को, चरन थंभ तिहि के आधार।
घृणित अपावन कामिनि--तन यों, ज्ञानी लखहिं न यामें सार ॥

मन एक उन्मत्त मतंग है। विषयों की लालसा से स्नेह करता है। पेट में भरी विष्ठा को शूकर और कौए खाने की ही अभिलाषा करते हैं। वीतरागी पवित्र-आत्मा जिसे हंस कहते हैं ऐसे पक्षियों की नहीं। इस प्रकार उत्कृष्ट विचार-बाण से कामदेव को धराशायी कर दिया।

बांया हाथ नं० ३ ढाल, यह क्षमा की है।

क्षमा क्रोध के सम्मुख निर्भय होकर आ गई। किन्तु क्रोध क्षमा को देख कर ललकार कर बोला–अरी क्षमा तू मेरे सामने से हट जा। मैंने तेरा कितने बार घात किया, कुछ स्मरण है ? आज प्रबोध की सहायता से तू क्या वैक्रियिक शरीर धारण करके आ गई ? तो सुन :–

(भुजंग प्रयात)

किती बार जीते नहीं मैं नरेशा, किती बार प्रेरे न मैंने सुरेशा।
किती बार त्यागी तपाये नहीं मैं, किती बार लोप्यो न धर्म यहीं मैं ॥

इस प्रकार कहकर क्रोध क्षमा को मारने के लिए झपटा। उसके भय से क्षमा पलायन करना चाहती थी। त्यों ही शांति ने आकर धैर्य देकर कहा–"माता ! यह डरने का समय नहीं है। तुम किसी प्रकार का भय मत करो।" और फिर हिंसा के सम्मुख होकर कहा–"हिंसा ! आज इन तेजस्वी पुरुषों को देखते हुये इस समर भूमि में मेरे सामने आ। और अपना धनुष हाथ नं० ७ और बाण हाथ नं० ८ बाँया (धनुष बाण) धारण करके उस प्रचंड बल को प्रगट कर, जिसे धारण करके तू मेरी बड़ी बहिन दया को मारने के लिए आई थी। क्या तू नहीं जानती है कि :–

(नरेन्द्र छन्द)

तौलों दुःख शोक भय भारी रोग महामारी है।
अदया अकृत दरिद्र दीनता, अरु अकाल जारी है ॥
तौलों ही विष शत्रु भूत ग्रह डांकनि शांकिनि डेरा।
जौलों विमल बुद्धि बारे नर, जपैं नाम नहिं मेरा ॥

यह हाथ नं० ५ दाहना जिसमें माला को संकेत किया है।

बस यह सुनते ही और शान्ति के हाथ में माला देख कर हिंसा भाग गई। बायां हाथ नं० ५ अंकुश संकेत करता है।

मन उन्मत्त मतंग (हाथी) है। इसे संयम के ही अंकुश से वश में किया जा सकता है। इस लिये अंकुश बांयें हाथ में है।

शरीर रूप विष्णु परिवार

(दोहा)

सत्य माता पिता ज्ञानं, धर्म भ्राता दया सखा।
शान्ति पत्नी, क्षमा पुत्री, येः षट् मम बांधवाः ॥

शरीर रूप विष्णु के शत्रु–

क्रोध मानमाया धरत, लोभ सहित परिणाम।
ये ही तेरे शत्रु हैं, समझो आतमराम ॥

इस चंचल मन ने कामदेव की कृपा से पूर्वकाल में पद्मनाभि ने द्रोपदी के लिये अर्ककीर्ति ने सुलोचना के लिये, अश्वग्रीव ने स्वयंप्रभा के लिए, बड़े बड़े युद्ध किये ।

ब्रह्माजी ने पुत्री सरस्वती के साथ, पाराशर महर्षि ने मछली के पेट से उत्पन्न हुई योजनगंधा के साथ, और व्यास जी ने अपनी भाई की स्त्रियों के साथ रमण किया था, यह सब कामबाण से ही पीड़ित होकर किया था, ऐसा शैवमत में कहा है। कामबाण से आहत होकर सूर्यदेव कुन्ती पर, चन्द्रमा अपने गुरु की स्त्री तारा पर और इन्द्र गौतमऋषि की स्त्री अहिल्या पर आसक्त हुआ था। अतएव हे चंचल मन ! मनुष्य, और देवों के पराजय करने के कारण मैं त्रैलोक्यविजयी विवेकपूर्ण ज्ञानवीर हूँ। और प्रवोधादि के बश करने के लिए तो एक स्त्री ही बस है। यह कौन नहीं जानता कि :—

तबलों ही विद्या व्यसन, धीरज अरु गुरु मान ।
जबलों वनिता नयन विष, पूठ्यो नहिं हिय आन ॥

बाँया हाथ नं० ९ का सर्प अपनी मुंह से कामनी स्त्री की और संकेत करता है कि यह विषधर (नागन) है।

दाहिना हाथ नं० ९ अग्नि को पकड़ने का संकेत करता है कि :—यह कामाग्नि को प्रज्वलित कर चिन्ता की ज्वाला में जीवनभर जलाती रहती है। जो अग्निरूप स्त्री दाहिने और चंवर धारिणी के रूप में खड़ी है संकेत कर रही है।

दाहिना हाथ न० ३ दोधारा, संकेत करता है कि :—

यह काम और कामाग्नि दोनों ही धारायें हैं। और शुभोपयोग में :—दो धारायें यम और नियम का भी बड़ा भारी बल हैं। यह भी धारायें हैं। इस कामने अपने अतिशय प्यारे मित्र सप्त व्यसनों को साथ लेकर युधिष्ठिर को द्यूत व्यसन से, बक राजा को मांस खाने में, यदुवंशियों को मदिरा पान से, चारुदत्त को वैश्या सेवन से, राजा ब्रह्मदत्त को शिकार से, रावण को परस्त्री सेवन से नष्ट किया है। फिर सबके युगपत सेवन से तो ऐसा कौन है जो बचा रहेगा ? इससे हे मन ! तू खेद मत कर ।

कनक तजे कामिनि तजे, तजे जाति को नेह ।
एक मान को त्यागवो, तुलसी दुर्लभ येह ॥

अहंकार कहता है स्वामिन् !

राजा मोह से कहता है। आप आज कुछ चिन्तातुर जान पड़ते हैं। नीतिशास्त्र में कहा है कि, पुरुषों के लिये एक सत्य ही प्रशंसनीय पदार्थ है। पक्ष का ग्रहण नहीं। देखो बाहुबली ने सत्य का अवलम्बन करके भरत चक्रवर्ती को पराजित किया था। सूर्य अकेला है उसके रथका एक ही पहिया है। सारथी भी एक पैर से लंगड़ा है। तो भी प्रतिदिन अपार आकाश से पार जाया करता है। इससे सिद्ध है कि महापुरुषों के कार्य की सिद्धि उनके (सत्व) तेज में रहती है। उपकरणों में

सहायक वस्तुओं में नहीं रहती है। अर्थात् जो सत्ववान (कीर्तिवान-तेजस्वी) होता है, वही अपने अभीष्ट की सिद्धि कर सकता है।

इसके सिवाय आप जिन लोगों को पक्षकार बनाने का प्रयत्न करते हैं, वे स्वयं निर्बल हैं। देखिये, मैं उन सब की कलई खोले देता हूँ। पहले कृष्ण जी को ही लीजिये। बेचारे जरासंघ राजा के पुत्र काल यमन के डर से मारे सैन्य सहित सौरीपुर से भाग कर समुद्र के किनारे आरहे थे। और रुद्र महाराज तो उनसे भी बलहीन तथा शंख हाथ में लिये है क्यों ?' आपने एकबार सारी बुद्धि खर्च करके परमानंद को बरदान दे दिया था कि, तू जिस पर हाथ रखेगा वह तत्काल मर जावेगा। सो जब भस्मांगद ने पार्वती पर मोहित होकर आप ही आप वह कला आजमाने का प्रयत्न किया, तब बेचारे नादिया-गुदड़ी (कंथा)-और पार्वती को छोड़कर भागे और किसी तरह से अपनी जान बचा पाये। ब्रह्मा जी की तो पूछिये ही नहीं। एकबार ईर्षा से इन्द्रका राज्य लेने के लिये आपने वन में ध्यान लगाकर तपस्या करना प्रारंभ किया था। परन्तु इन्द्र की भेजी हुई रंभा तिलोत्तमा ने अपने हाव भाव विभ्रम विलासों से और सुन्दर गायन से क्षण मात्र में तप से भ्रष्ट कर दिया। भला, जब वे स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर सकते हैं; तब दूसरों की क्या सहायता करेंगे ? इसलिये इनका भरोसा छोड़कर अपने सत्व का अवलंवन करना ही समुचित है। मैं अकेला ही उन प्रबोधादिकों के जीतने के लिये बहुत हूँ। सुनिये :—

(वीर सवैया ३१ मात्रा)

मेरे सम्मुख कौन निवाकर, कौन वस्तु है तुच्छ दिनेश।
राहु केतु की बात कहा है, गिनती में नहिं है नागेश॥
सत्य कहूँ हे मोहराज ! नहिं डरूं जरा है कौन यमेश।
केवल भौंहों के विकार से, जीतों मैं सुर सहित सुरेश॥

ऐसे प्रबल काम और क्रोध तथा अहंकार को जीतने के लिये संयम का अंकुश है। जो माता अम्बिका के हाथ में संकेत किया है।

भरत चक्रवर्ती विचार करते हैं कि :—

मैं चक्री पद पाय निरंतर भोगे भोग घनेरे।
तो भी तनिक भये नहिं पूरन, भोग मनोरथ मेरे॥
राज समाज महा अघ कारण, बैर बढ़ावन हारा।
वेश्या सम लक्ष्मी अति चंचल, याका कौन पतयारा॥

यही तो रागद्वेष को पैदा करने वाला दोधारा है। जो द्वन्द मचाता है।

सुव्रत शील संतोष अरु, वर विवेक सुविचार।
तुव बिन सारे विफल हैं, तुही सदा सुखकार॥

ऐसा प्रबोध ने कहा।

दया कहती है— भाग्य उदय सों मनुज के, सुरगन होत सहाय।
तोके उलटे होत है, स्वजन हु दुर्जन राय ॥

प्रभो! मैंने यहां से अयोध्या जाकर प्रातःकाल ही धर्मोपदेश रूपी प्रकाश के द्वारा जगत के जीवों का अज्ञानान्ध उड़ाने वाले श्री अरहंत भगवान का एकचित्र होकर इस प्रकार स्तवन किया।

(प्रभाती)

जगजन अघ हरन नाथ, चरन शरन तेरी।
एकचित भजत नित, होत मुक्ति चेरी ॥ टेक० ॥
होती नहिं विरद चारु, सरिता सम तुव अपार।
जनम मरन अगिनि शाँति, होत क्यों घनेरी ॥ १ ॥
कीनों जिन द्वेष भाव, तुम तें तिन करि कुभाव।
रवि सन्मुख धूलि फेंकि, निज सिर पर फेरी ॥ २ ॥
शिव स्वरूप सुखदरूप, त्रिविध--व्याधिहर अनूप।
विन कारण वैद्य भूप, कीरति बहुतेरी ॥ ३ ॥

बांयें हाथ नं० ४ में ढाल संकेत करती है।

यह ढाल क्षमा की है। विधाता के प्रतिकूल होने पर सुख कैसे मिल सकता है?

जानकी हरन वन रघुपति गमन औ, मरन नरायन को बनचर के वानसों।
वारिधि को बंधन मयंक अंक क्षयी रोग, शंकर को वृति सुनो भिक्षाटन वानसों॥
कर्ण जैसे बलवान कन्या के गर्भ आये, बिलखे वन पांडुपुत्र जुआ के विधानसों।
ऐसी ऐसी बातें अविलोक जहां तहां, बेटो विधि की विचित्रता विचार देख ज्ञानसों॥

क्षमा कहती है बहिन दया का घात करने के लिये हिंसा को भेजा है। ऐसा सन्देश मिला है। इससे मेरा चित्त चिन्ता से व्यथित हो रहा है।

कापालिक धर्म स्मशान की भस्म शरीर से लपेटे हुए हाड़ों की माला का सुन्दर आभूषण बनाये हुये दोनों भुजाओं से आलिंगन करते हुये लाल नेत्र किये हुये भैरव का भक्त अपनी स्त्री से कहता है।

(मत्त गयन्द)

पीजिये प्यारी! मनोहर मद्य, मनोज की मौज बढ़ावत जोई।
खाइये खूब पराक्रमि माँस, जवानी के जोर में उद्धत जोई ॥

गाइये गान अनंग जगावन, वीणा बजाइये आइये दोई ।
बोलिये बात यही दिन रात कि, 'देह से भिन्न न आतम कोई' ॥

क्षमा (ढाल) कहती है, संकेत करती है।

यथार्थ में ये स्व एवं परात्म शत्रु तेरे तत्वों को नहीं समझ सकते हैं। इनके यहां दया का कोई प्रयोजन नहीं है। यह मत केवल इस लोक सम्बन्धी सुख भोगने के लिए बना है। यह तोते के समान तो राम-राम का जप करते हैं परन्तु वैसा मनोज्ञ आचरण नहीं करते हैं। मुख से राम और नेत्रों से रामा का दर्शन करते हैं परन्तु देव की ओर अथवा उनके पवित्र चरित्र और गुणों की ओर नहीं देखते हैं। ऐसे दण्ड से बचने के लिये यह ढाल का संकेत किया है।

बायें तीसरे हाथ में घण्टी काल (समय-टूंक काल) की सूचक है।

तनकंचन का महल है, तामे राजा प्राण ।
नैन झरोखा पलक चित, देखो सकल जहान ॥
यह तन हरियर खेत, तरुणी हिरणी चर गई ।
अजहूँ चेत अचेत, अधचर चरा बचायले ॥

यह शरीर सोने का आत्मा का महल है। श्वाशोच्छवास इसमें राजा है। नेत्र इसकी खिड़कियां हैं और यह शरीर एक खेत है जिसे यौवनवती हिरणी कामिनी तेरे शील (ब्रह्मचर्य) को खाती जा रही है। ऐसे अचरे खेत को श्री अर्हंत भगवान की वाणी जिनशासनी देवी माता अम्बिका उपसर्ग दूर करने को सावधान करती है। दुःख समुद्र का तरंगों से निकल जा।

मृत्युकाल को संकेत करने के लिये यह घण्टी है।

दाहिना हाथ नं० ६ चक्र

(जोगीरासा: नरेन्द्र छन्द)

वज्र अगिनि विष से विषधर से, ये अधिके दुखदाई ।
धर्मरत्न के चोर चपल अति, दुर्गति पंथ सहाई ॥
मोह उदय यह जीव आज्ञानी, भोग भले कर आने ।
जो कोई जन खाय धतूरा सो सब कंचन माने ॥

विषय बिष चक्र अग्नि है। यह धर्मरत्न के चुराने वाले चंचल चोर हैं। प्रवल मोह के उदय से यह अज्ञानी जीव भोगों को भुजंग न मान कर भले ही करके मानता है। और यह भी जानता है कि विषय विष एक खुजली का रोग है। मृत्यु और संकटापन्न स्थिति को उत्पन्न करता है। यह मेरी आत्मा के प्रवल शत्रु हैं, इसलिये :—

बायें हाथ नं० ६ में शंख मूर्खता का प्रतीक है।

जिस प्रकार से शंख का पेट फटा हुआ है उसी प्रकार से विषय लोलुपी को माता अम्बिका का उपदेश इस कान सुना और उसे पेट में न रखकर दूसरे कान से निकाल देना, गुणों का चिंतवन नहीं करना मूर्खता को संकेत करता है।

दाहिना हाथ नं० ८ खड्ग तलवार संकेत करती है।

दाहिने हाथ नं० ८ की तलवार का संकेत ऊपर बताते हैं। तीन पदवी के धारी तीर्थंकरों को जिनकी मूर्तियों के चित्र खड्गासन में दो और पद्मासन में एक है। यह चक्र पुरुषों को संबोधित कर यह प्रमाणित करती है कि शासन इन्हीं का इस भरत क्षेत्र में प्रवर्त रहा है जिनको किसी भी जीव से राग-द्वेष नहीं है। सब के साथ समानता है। वृष का अर्थ धर्म और बैल से भी है। यह शिव जी का बाहन है। शिव का अर्थ कल्याण से है इसलिये कवि दौलतराम जी ने छहढाला में कहा है—

आतम को हित है सुख सो सुख, आकुलता बिन कहिये।
आकुलता शिवमांहि न तातें, शिव-मग लाग्यो चहिये ॥

शिव-मग का अर्थ मोक्ष के मार्ग से है। यहाँ मोक्ष में आकुलता नहीं है। इसी में जहाँ आकुलता नहीं है वहीं सुख है। इसलिए बैल का संकेत किया है और सिंह पराक्रम का प्रतीकात्मक चिन्ह है। यह पुरुषार्थ को संकेत करता है। जो चक्रवर्ती पुरुष है, जिन्होंने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का साधन किया है वही शिव कल्याणकारी हैं। उनमें किसी भी प्रकार का विरोधाभास नहीं है। इसलिए सिंह और बैल दोनों को एक घाट यानी जैनियों का प्रतीकात्मक चिन्ह झंडे में गाय और सिंह को एक ही पात्र में पानी और भोजन करते दिखाया है। हिंसामय धर्म, धैर्य धर्मात्माओं का लक्षण नहीं किन्तु राक्षसी वृत्ति को संकेत करता है।

दाहिना हाथ नं० ७ मशाल संकेत करती हैं।

जाकी जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान।
यातें यश संचय करहु, लोग करें सन्मान ॥

मशाल-कीर्ति की द्योतक है। जिसकी कीर्ति संसार में सूर्य के समान देदीप्यमान है। प्रकाश की सूचक एक मशाल है। वही विश्व का कल्याणकारी पुरुष जीवित है। एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति। कौरवों के सौ पुत्र और पांडु के पांच पुत्र से आप तुलना कर लीजिये।

हाथ नं० २ चक्र संकेत करता है कि :—

चक्र पुरुष ६३ शलाका के पुरुषों की ओर संकेत करता है। यह २४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ प्रतिनारायण ११ रुद्र, १२ बलभद्र जो ६३ शलाका है पुण्य पुरुष हैं उन्हीं की ओर संकेत करता हैं। इस प्रतिमा के चित्र में चेतन, कर्म, और पुद्गल इनका वर्णन माता अम्बिका ने बताया है विशेष विवरण आचार्य वादिचन्द्र सुरि ने ज्ञानसूर्योदय नाटक जो कि जैन ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय बम्बई में छपा है पूरा उल्लेख पुरातत्व अनुसंधानकों को मिलेगा।

हाथ बांया नं० २ जिसमें गदा है ।

गदा शस्त्र यह संकेत करता है कि तीन चीजों के बगैर तीन चीजें नहीं ठहरतीं । (१) विद्या बिना वाद विवाद के, (२) शासन बिना प्रभाव के (३) माल बिना व्यापार के नहीं ठहरता ।

भारत की भविष्यवाणी सम्राट चन्द्रगुप्त के १६ स्वप्न में यह स्पष्ट कर दिया है ।

विदिशा वैभव पृष्ठ १०८ देखिये ।

जो शासक धार्मिक प्रवृत्ति का है न्यायवान है सदाचारी है श्रावक के छह आवश्यक कर्मों का सदैव पालन करता है; परोपकारी और दानी है, विद्याविलासी है, उसी शासक की कीर्ति सदैवकाल चिरंजीवी रहती हैं और वह मरने के बाद भी जीवित रहती हैं । इसका प्रतीक गदा हैं ।

दाहिना हाथ नं० १०

दाहिने घुटने के यहां चक्र अग्नि को संकेत करता है ।

बांया हाथ का नं० १०

बांये घुटने के यहां चक्र काम को संकेत करता है । यह दोनों ही घुटनों के यहाँ बताये गये चक्र संसारचक्र से संबंध रखते है । जिसने संसार के स्वरूप को समझ लिया हैं और त्याग कर तपश्चरण कर मोक्षमार्ग में लग गया वही मुक्त जीव कहलाता है । उसी की दिव्य कीर्ति संसार में चिरजीवी रहती है ।

कामिनी और अग्नि के बीच में ज्ञानरूप गरुड़ है जिस पर कि भगवती अम्बिका बैठी हैं ।

कान में (दाहिने) कर्णफूल कानों का आभूषण है जो शास्त्र श्रवण सद्वचन सुनने के लिये संकेत करता हैं और बांये कान में जो शंख हैं वह मूर्खता को संकेत करता है कि मानव तूने गुरुओं के मुख कमल से सुनी वीतराग वाणी को इस कान सुना और दूसरे कान से निकाल दिया, मनन नहीं किया, मूर्खता की है, को संकेत करता है ।

मस्तक पर तृतीय नेत्र ज्ञान का हैं । हे मानव ! तू विवेकपूर्ण ज्ञान के नेत्र से देख । यह भाव हमें इस मूर्ति के दर्शन से अनुसंधान किये हैं ।

विद्वद् समाज से अनुरोध है कि किसी भी प्रकार को मूर्ति को आप जिसका कि किसी विद्वान ने भाव न समझ पाया हो कृपया उसका हस्तचित्र भेज कर पूरी जानकारी प्राप्त करें ।

इति दिनांक ३०-१०-६८

[लेखक-राजमल मड़वैया-पुरातत्व अन्वेषक विदिशा (म. प्र.)]

✵

विदिशा नगर के अनोखे जैन कवि पं० खूबचन्द्र जी जैन परवार का

वंश-परिचय और साहित्य

अक्कलसार ग्रन्थ

(दोहा)

अष्टादश की साल में, अन्त छियालिस सार।
माघ वदी द्वादशी को, कही खूब परवार ॥

अक्कलसार ग्रन्थ के लेखक श्री खूबचन्द्र जी दिगम्बर जैन परवार जाति के रत्न थे। तत्कालिक समय में श्रीमन्त महाराजा दौलतराव जी सिंधिया ग्वालियर नरेश थे। विदिशा नगर का पूर्व नाम भद्दलपुर, भद्रावती, भिल्लन-स्वामिन, भेलसा, आलमगीरपुर रहे। इनके राज्य काल में पिंडाराशाही विक्रम सं० १८८३ में आपसी फूट कलह, विद्वेष एवं स्वार्थवश डांके कशी राहजनी और लूट पाट अधिक होती थी। रेल, तार, टेलीफोन आदि की कोई सुविधा नहीं थी। ऐसे संकटकाल में आपने एक कवित्त लिखा था:-

(कवित्त)

मूरख मों-जोरी करे, कहो तो गाली देत।
अन्धा नाचे खोय में, चोर बलैयां लेत ॥
चोर बलैयां लेत, बहुते फिर खुशी जो मानें।
जे अज्ञानी मूढ़, आप जो डेढ़ सयाने ॥
कहें खूब तज संग, चूहे पै बिल्ली घूरत।
ज्ञानी थोड़े रहें, बहुत से होंय जे मूरख ॥

(फूट)

सांझे फूटी ढोल जो, फूटी ताल की पार।
फूट कुटुम्ब में जब भई, होते हैं जब ख्वार ॥
होते हैं जब ख्वार, फौज में फूट बुरी है।
हो आपस में बैर, चलत तलवार छुरी है ॥
कहें खूब जे फूट, मूठ को कोई न मांजे।
कान आंख गये फूट, बुरी फूटी है सांझे ॥

इस प्रकार से अक्कलसार ग्रन्थ में श्री खूबचन्द्र जी ने अक्कल बुद्धिमत्ता की बातों का उल्लेख कविता, छन्द्र, सवैया, सोरठा आदि में उल्लेख किया है। यह ग्रन्थ हस्तलिखित और अप्रकाशित है।

अक्कलसार ग्रन्थ जैसे हजारों शास्त्र तो आलमगीर ने जलवा कर भस्मीभूत कर दिये। जो कि ३० जैनाचार्यों का शास्त्रभंडार था यह आचार्य पट्टाधीश इस विदिशा के हुये हैं। दर्पण के समान ज्ञान के प्रकाश को विकसित करने वाले थे जो गुण और दोषों का बोध कराते थे। कुछ परवार दिगम्बर जैन मन्दिर में भी है। ग्रन्थों के अप्रकाशितता के कारण निम्न हैं—

मन्दिर में पंचायती द्रव्य है किन्तु मूर्खतापूर्ण स्वार्थबर्बता चरम सीमा तक पहुँच चुकी है। न तो सत्ताधारी कुछ परमार्थ के काम करते हैं और न दूसरे गरीब जैन बन्धुओं या अन्यों के उपकार में ही लगाते हैं।

व्यवस्थापकों ने खजाने पर अधिकार जमा रखा है। मन्दिर के ट्रस्ट का रजिस्ट्रेशन क्यों नहीं हुआ ? इसलिये कि पुराने हिसाब का स्पष्टीकरण होगा और समस्त पोल खुलेगी। सालाना हिसाब देना पड़ेगा। स्वार्थपूर्ति के लिये एक मीटिंग दिनांक २४-८-१९३५ को स्थान – श्री दिगम्बर जैन मन्दिर स्टेशन माधवगंज पर बुलाई गई। और व्यवस्थापकों ने इस मीटिंग में यह तय किया कि बड़े मन्दिर में कोई बारी विधान न करे, सालाना पत्रज में कोई द्रव्य न देवे। आवश्यकता-नुसार दर्शन करे।

मन्दिर जी की उन्नति और धर्मप्रभावना के एक अंग (पर्यूषण पव में) पूजा विधान करने वालों के घर घर जाकर विधान की सामग्री को चंवर, छत्र, निशान, छड़ी आदि लेकर सामूहिक जनसमुदाय के साथ जाते थे। उस प्रथा को सदैव को बन्द कर दिया।

लोकोपकारी सुकृतकार्य गरीबों की सहायता; सहानुभूति, मन्दिर की व्यवस्था, पंचायती न्याय पद्धति; समाज सुधार व अन्य नूतन धार्मिक जीवदया, पुरातत्व संरक्षणादि के लिये कोई ध्यान नहीं है। यही कारण है कि आज मूर्तियां हर जगह तोड़ी जा रही हैं। अपने घर की सामग्री को शासन में घुसे विध्वंसकों को सुपुर्द कर सदैव के लिये समाप्ति करने का उत्तरदायित्व लिया है। इस आशय का श्री स्वर्गीय सिंघई मूलचन्द्र जी के हाथ का पत्र मिला है। जिसमें दिनांक ७-९-३५ है।

आज भी ठाकुर भेरोंसिंह जी की हवेली की दीवाल में नाला के ऊपर ७-८ फुट लम्बी भगवान पार्श्वनाथ की खडगासन प्रतिमा दबी हुई है। सभी को दिखाई भी जा चुकी है। किसी का ध्यान उस ओर नहीं है। यहां पर पूर्व में एक बड़ा भारी जिनालय था और उसकी गट्टी बनाई गई। यह है श्रीमानों का सांस्कृतिक प्रेम !

समाज के कर्णधारों के प्रतिभाशाली कार्य—

दिगम्बर जैन समाज विदिशा की पूर्व से यह परम्परा रही है कि—समाज के लावारिसों का माल (चल-अचल सम्पत्ति) राज्य में नहीं जाती थी और उसका उपयोग समाज के गरीब

बन्धुओं के लिये सहायतार्थ देने की सुविधा रही है। जिससे संस्था भली प्रकार से चल सकती थीं। बन्द कर दिया है।

और जो इतिहास से भरी हुई अपूर्व सामग्री धातु की कलापूर्ण को जिसकी वर्तमान में बड़ी कीमत मिल सकती थी स्वार्थपूर्ति के लिये चन्द कागज के लोभ में पानी की तरह बहा दिया।

लावारिसों के मकान दुकान, खंडहर; अचल संपत्तियों का हड़पना, वर्तमान में मन्दिर की जायदाद कितनी और किसके अधिकार में है, उन्हों से मन्दिर को क्या आय है? कोई वार्षिक रिपोर्ट पूर्व से आज तक प्रकाशित कर जनता के समक्ष नहीं लाई गई है। क्या कारण है? वह है स्वार्थ।

द्रव्य का सदुपयोग सामाजिक उत्थान, अनाथों विधवाओं, और बेरोजगारों को आजीविका से लगाने, उनकी शिक्षा, स्वास्थ रक्षा, साहित्य प्रकाशन में जीवदया आदि धार्मिक कार्यों में धर्मानुकूल संस्थाओं के संचालन में जैसा होना चाहिये व्यय नहीं किया जाता है। और न यह भी बताया जाता है कि कितना द्रव्य ध्रुव फंड में जमा है? कितना वार्षिक व्यय हो रहा है!

श्रीमान सज्जन स्वयं के दोषों को छुपाते हैं दूसरों को दोषी बनाकर बहिष्कृत कर चकाचक लड्डू खाने के लिए दावतें लेकर अपनी मनमानी पंचायतों पंच फैसले करते हैं और सदैव को विधर्मी बनाकर लाखों रुपयों का नुकसान करते हैं तथा जन, और धन से हाथ धो बैठते हैं। एक नमूना :—

श्री नत्थूलाल जी जैन परवार विदिशा निवासी की सुपुत्री श्रीमती रज्जीबाई जी प्रधान अध्यापिका शाला विदिशा को १ लाख रुपये की चल और अचल सम्पत्ति को अन्याय और अत्याचारों से खो दिया जिसे बालकदास बैरागी ने खून कर हड़प ली।

तथा श्री छब्बीलाल जी परवार की धर्मपत्नी श्रीमती पूनाबाई जी, श्री कालूराम जी की सुपुत्री गजरीबाई, सिंघई छुट्टीलाल जी की धर्म पत्नी जिज्जाबाई जी इनके कत्ल हुए, कुर्की कराई, यह विधवायें थी। यह है जैन समाज के दानवीरों की दानवी। और देखिये :—

लेखक के काका जी श्री भगवानदास जी पुत्र श्री बंशीधर जी जैन मड़वैया भेलसा निवासी ने निजी निवास गृह अन्दर किला कार्तिक चौक का विद्या दान में परिषद के समय हाईस्कूल की स्थापना के समय दिया था। जिस दानकी रसीद नहीं दी और उस मकान को बेच डाला। जिस उदार दानी समाज में ऐसे धर्मात्मा बड़ी लंबी पूजन करने वाले हों जिनके पास केवल :—

ईर्षा मद अविवेकता, निर्दयता घुन जान।
बहु अनर्थ इक ही करे, चारों मौत समान।।

यह चारों ही हों तो क्या? वह समाज उत्थान पा सकेगी? कदापि नहीं। समाज से चन्दा वसूल करना, ध्रुव फंड बनाना, मोहरे मिलाना भूखे को भोजन नहीं देना; अपमानित करना, तथाकथित समाजसुधारक नेताओं का काम है। यह लेखक के साथ अनुभव में लाई गई घटनाओं को तुलनात्मक रूप से समाजसुधारकों को मार्गदर्शन कराया है। यही एक पतन का कारण है।

खामबाबा-हेलिओदर स्तंभ, विदिशा

शिलालेख—देव देवेस वासुदेवस गरुड़ध्वजे संस्थापितः।

अन्य कारितं इय [हे]लिओवरण तकशिलाकेन यवनदूतेन आगतेन॥

इस शिलालेख की भाषा ब्राह्मी है, बोली प्राकृत है। स्तंभ पर लिपि उत्कीरित है। यह खामबाबा के नाम से विख्यात है। धोवर (भोई) मछली के शिकारी इसको पूजन करते हैं। और इसे आराध्यदेव मानते हैं। इसे विष्णु के मन्दिर के सामने हेलिओदर ने खड़ा कराया था। जैन संस्कृति में इसे मानस्तंभ कहते हैं। गरुड़ ज्ञान को कहते हैं। ध्वज राज्यचिन्ह माना जाता है। इससे यह सिद्ध है कि ज्ञानीजन जो योगीपुरुष हैं वह मत्स्यावतारी कहलाते हैं, चूंकि उन्होंने मनरूपी मछली पर विजय पा ली है। चंचल मन पर विजय पाने वाला ही वीर पुरुष होता है। और उसकी सुगंधि विश्व के प्रांगण में फैल जाती है।

वह मरने के पश्चात् भी जीवित रहता है। ऐसा तक्षशिला का रहने वाला ग्रीक जाति का वीर पुरुष, पंजाब के अंतिलिखित नाम के ग्रीक राजा की तरफ से मध्य प्रदेश के भागभद्र राजा के पास वकील था। उसने भागवत धर्म स्वीकार किया था।

यह खंभा स्तंभ २ हजार वर्ष से भी अधिक पुराना है। ईसा से १२० वर्ष पूर्व का बना है। इसका जीर्णोद्धार श्रीमंत महाराजा माधवराव जी सिंधिया ग्वालियर के आदेशानुसार पुरातत्व विभाग के अंतर्गत श्रीमान डायरेक्टर एम० बी० गर्दे के द्वारा सं० १९७७ में हुआ।

यह मन प्रधान मन्त्री है—

अभिमानं सुरापानं गौरवं घोररौवरं।
प्रतिष्ठा शूकरी विष्टा, त्रयं तिक्त्वा सुखी भवेत्॥

इसलिए वीतरागी पुरुष रक्षामन्त्री हैं—

विन कषाय के त्यागतें, सुख नहिं पावें जीव।
ऐसे श्री जिनवर कही, वाणी माँहि सदीव॥

अवतार १० हुये हैं, उनमें मत्स्य अवतार प्रथम है। नौ चीजें चंचल होती हैं—

मन मर्कट मधुकर मरुत, मत्त मानिनी मीन।
मा अरु मन्मथ ये नवों, चपल मकार प्रवीन॥

जिस प्रकार से मछली दुर्गंधित है उसी प्रकार से राक्षसी वृत्ति धारकों का भी मन दुर्गंधित है। हिंसक वृत्ति के धारी, मांसाहारी, शिकारी धीवर लोग होते हैं। भावों में शुद्धता आने पर एक ग्रीक जाति के वीर पुरुष ने भागवत धर्म स्वीकार किया, उसका यह स्मारक आज हजारों वर्ष तक चिर स्मृति बतलाता है। और एक ओर हमारे पुण्य कार्यों में रोड़े अटकाने वाले रिश्तेदार; पिता पुत्र का नाता रखने वाले गहरी चोट देते हैं। उनकी दानवीरता जोकि पृष्ठ ३०८ से संबंधित है ध्यान दिलाता हूँ। जबकि विदिशा में मेवातियों द्वारा डाके डाले जाते थे। उनका एक साकार चित्रण—

लावनी

माह दिसम्बर है संवत उनसठ, जिला भेलसा में अवनी है।
सोर हुआ बागियों का ज्याबह, महाराज ने भेजी छावनी है ॥
एक किस्म का था जोर उनका, न कोई बस्ती में आवे जावे।
अगर चपल भूला कभी जो निकला, तो अपनी खिस्ता खाल करावे ॥
थी नाकेबन्दी इन्हों के हरदम, न कोई भेदों को उनके पावे।
जिधर को लूटे उधर को जावे, रिया को हरदम पै दम सतावें ॥
शहर मुहम्मद अली सूवा थे, वो तो बागियों से बच गये।
कहां गये लश्कर गये, कानिस्टबिल सब मिल गये ॥
नहीं हुआ इन्तिजाम जब तक, और जिलों की आई पुलिस।
भेलसे की ले गये, दूसरे जिले भेजे गये ॥
धावा दिया जंगीर जुवट ने हाय कहें मेवातनी हैं।
जोर हुआ बागियों का ज्याबह, महाराज ने भेजी छावनी है ॥
सुनो बागियों के नाम मुझ से, नामी गिरामी भी इसमें आया।
अलफ खां खुवाजू कमाल खां ने, गोल मेवातियों का बनाया ॥
कड़ोरी मेंना दलीप हलका और गंगा कोरी कोरण का जाया।
नोम गर बाबा और चांद खां ने धनोरा पठारी में गुल मचाया ॥
इनके लिये सरकार ने भेजा गया इश्तहार को।
जो करेगा मुखबरी वह पायगा इनाम को ॥
इस गोल में थे कई बड़े बड़े मेवसी,
शोर गुल ज्याबह हुआ, जिन्होंने काटी नाक को ॥
धावा दिया जंगीर जुवट ने हाय हाय कहें मेवातनी हैं।
जोर हुआ बागियों का ज्याबह, महाराज ने भेजी छावनो है ॥
जिला भेलसा के दिन फिरे, जब सूवा बाजीराव साहब आये।
माशूक अली सुप्रिन्टेन्डेन्ट भी साहब साथ आये ॥
तो कोशिस इन बागियों की साथ लाये।
सरदार खां अलावक्स, यह दोनों मुखबिर ही आप आये ॥

इनाम पायगा वो ही जो आके इन बागियों का पता बलाये।
हो गया सोर देखो बागी थे सो छुप गये ॥

मेवातनी और बच्चे जेल में भेजे गये। दूसरा इन्तिजाम जब तक हो गया। बागियों के सिर कटे सूबा साहब को दिखलाये गये। भेलसा के चारों रस्तों पर देखे टंगे सिर मेवातनी है। जोर हुआ बागियों का। इस घटना को अधिक समय नहीं हुआ है, देखिये पृष्ठ ३०८ से क्रमशः।

卐

दानवीरों की दानवीरता

प्राचीन जैन और हिन्दू धर्म की मूर्तियों का जहाँ भंडार था वहां पर गिट्टी बनाई जा रही थी, उसकी रक्षा के लिये लेखक ने प्रयत्न किया और कुचला गया। इसी पर यह पुस्तक लिखी गई।

विदिशा नगर का पूर्व नाम भेलसा था। इस नगर में रायसेन निवासी श्रीमान् सेठ छोटेराम जी परवार गरीब घर के थे, जो बैल लाद कर बंजी भोंरी करके उदर-पोषण किया करते थे। इनके एक पुत्र श्री सितावराय जी नामक थे। इनकी सगाई श्रीमती शक्करबाई जी से हुई और श्री सितावराय जी का भविष्य पलटा। और मेवातियों से इनका व्यापार शुरू हुआ। द्रव्य संचय हुआ। कुछ धर्म कार्यों में लगाया, बेदी बनवाई, वेदीप्रतिष्ठा कराई, भोज्य दिया, सराफी की दुकान खोली, समाज में व अन्य लोगों में सम्मान पाया। किन्तु भोगने वाली सन्तान का अभाव रहा। सेठ सितावराय जी बीमार हुए और भेलसा के हास्पीटल में उनका अंत हो गया। और वह घर ले जाये गये। वहाँ से इनकी अन्तिम यात्रा की तैयारी हुई।

श्रीमती शक्करबाई जी दो बहिनें थीं। उनके दो पुत्र थे। बड़े भाई छुटकनलाल जी और छोटे (श्रीमंत सेठ) लक्ष्मीचन्द्र जी जो लेखक के सगे मौसिया (दोनों भाई) थे। श्रीमती शक्करबाई जी ने इन्हें गोद इसलिये लिया कि वह इनके यहां बरसों से रहते आये, पले पुसे थे, सारा कारभार सम्हालते थे। यह उत्तराधिकारी बनाये गये।

इधर बाबू तखतमल जी और सेठ राजमल जी बड़जात्या ने दि० जैन परिषद का अधिवेशन भेलसा में कराया और उसमें हाईस्कूल की स्थापना को ५० हजार का दान घोषित करवाया। उसमें जनता का भी सहयोग मिला और १ लाख का चन्दा हो गया। नाम सितावराय लक्ष्मीचन्द्र जैन हाई स्कूल रखा गया।

पुरातत्वीय सामग्री धातु निर्मित जो पुरातत्व की दृष्टि से बेशकीमती थी वह पानी की तरह बहा दी गई।

अब देखिये १६७२५ ० रुपयों का दान—

परिषद के समय हाई स्कूल की स्थापना और अन्य दान	३५००००)
धर्मशाला की स्थापना एवं निर्माणकार्य लागत द्रव्य	१०००००)

जैन मन्दिर माधवगंज विदिशा की स्थापना लागत द्रव्य	५०००)
जैन कन्या माध्यमिक शाला	४००००)
जैन कालेज	६०००००)
जैन औषधालय	२५००००)
जैन छात्रवृत्तियाँ	६५०००)
परवार सभा छात्र वृत्तियां	५०००)
जैन साहित्योद्धारक फंड	३०००)
स्मशान घाट धर्मशाला शेड	१५०००)
दो गावों में पाठशाला भवन को मकान खरीद कर दिये	२०००)
उदयगिरी गुफाओं के जीर्णोद्धार के दान में	३०००)
शासकीय चिकित्सा भवन के लिये शल्य चिकित्सार्थ टेवल	२०००)
गणेश वर्णी पाठशाला को आधा व्यय	प्रति मास १००)
गोपाल दि० जैन विद्यालय मोरेना को दान	२०००)
महावीर जी में महिलाश्रम को	१५००)
जैन साहित्य प्रकाशन-अध्यात्मवाणी आदि में	५०००)
जैन छात्रावास	१०००००)
जैन मिडिल स्कूल	१०००००)
देवगढ़ के जैन मन्दिर व मानस्तंभ जीर्णोद्धार	२०००)
टोटल—	१६७२५००)

श्रीमन्त सेठ जी की दान की यह राशि सराहनीय है।

शिव-ताण्डव

भारतीय प्राचीन संस्कृति में प्रायः भगवान शंकर को सभी पूजते और मानते हैं। किन्तु यह नहीं जानते कि भगवान शंकर की प्रतिमा मानव से क्या कह रही है। वह हमें ऐसा कौनसा अद्भुत प्रसाद ज्ञान के रूप में देती हैं जो हमारे मानव जीवन को सार्थक बनाती हैं! और भगवान शंकर ने ताण्डव नृत्य क्यों किया और इसका मानव जीवन से क्या सम्बन्ध है? जिसके ४ खाली हाथ क्या करते है? शेष ८ हाथ सांकेतिक चिन्ह पकड़े हैं।

भगवान शंकर कहते हैं कि देखो मेरी १२ भुजाओं का क्या कहना है ? दाहिना हाथ नं० १ ऊपर की ७ शिक्षाओं की ओर संकेत करता है। दाहिना हाथ नं० २ में वेद हैं और सर्प की पूंछ पकड़े हैं।
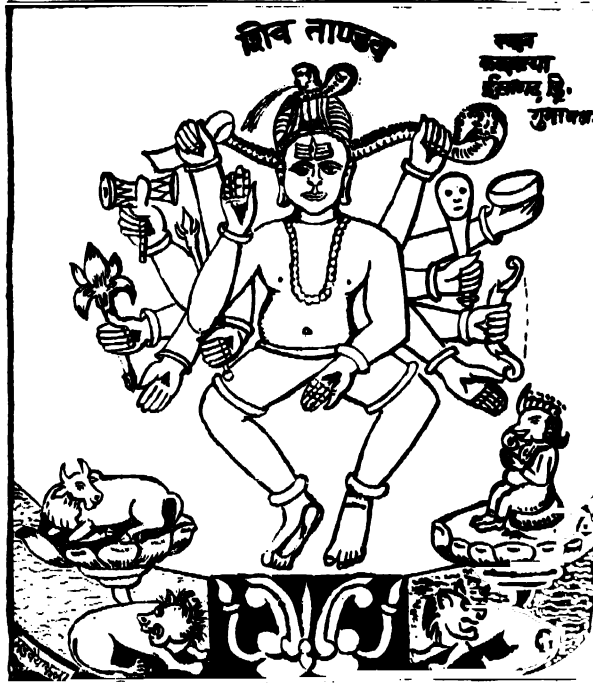
भावार्थ—हाथ में वेद मानव के विद्याभ्यास की ओर संकेत कर कहता है कि आप विद्याभ्यास के द्वारा ज्ञानोपार्जन कर नाना प्रकार के सुख, वैभव और आत्मरक्षा कर सकते हैं, किन्तु मूर्ख मानव और पशु दोनों ही अविवेकता के कारण न स्वात्मानुभव प्राप्त कर सकते हैं और न आत्मरक्षा ही कर सकते हैं।

सर्प की पूंछ पकड़ने का अभिप्राय: यह है कि देवों ने पूंछ इसलिए पकड़ी है कि राग, द्वेष और कषाय यह काल: (मृत्यु) को आमंत्रित करते हैं। यह शीघ्र ही छूट जावें। जिससे जन्म और मरण का भय समाप्त हो जावे। आत्मकल्याण कर सकें।

मस्तक पर तृतीय नेत्र विवेकपूर्ण ज्ञान का सूचक है। कि बिना बिचारे कोई काम मत करो।

प्रथम ही जो सोच करके बात है कहता नहीं।
वह बिना लज्जित हुये संसार में रहता नहीं॥

मस्तक पर त्रिपुंड:—

रजो गुण ब्रह्मा, तमो गुण शंकर, सतो गुण विष्णु अर्थात् अहं ब्रह्मास्मि-मैं ही ब्रह्मा हूं।

शिवोऽहं-मैं ही शंकर हूं। अहं विष्णुः मैं ही विष्णु हूं। कैसे ? यह बात पूर्व में समझाई गई है। (देखिये पृ० ८४, ६२, ६५)

दोनों चर्मचक्षु कहते हैं -

इन नयनन का यही विशेख, मैं तोय देखूं तू मोय देख।
देखत देखत इतना देख, मिट जाय दुविधा रहि जाय एक॥

तन कंचन का महल है, तामें राजा प्राण।
नैन झरोखा पलक चित, देखो सकल जहान॥

पुद्गल परमाणुओं का पिंड यह मानवशरीर महल के रूप में नाशवान है। इसमें चैतन्य स्वरूप आत्मा जो कि—

नर-तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान।
इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावें धीमान॥

को संकेत करता है। पुद्गल नाशवान वस्तु से राग विषय भोगों को भोगने में आनन्द और वियोग में दुख मानकर द्वेष करता है। शुभ पुण्योदय से संयोग में सुख और वियोग में पापोदय से चिंतित अर्थात् हर्ष और विषाद मानता है। जिसे हे भव्य तू अपनी इन चमड़े की आंखों से देखता है, को संकेत करती है। वह आंख तो दूसरी है—

परख सकती नहीं रत्नों को हर इंसान की आखें।
दिखाई ब्रह्म क्या देवे, जो न हों ज्ञान की आखें॥

सिर पर जटाओं में सर्प क्यों लिपटा है—

यह मृत्यु-काल को बतला रहा है कि तेरी मृत्यु इन विषयों के कारण इन सात वारों में है जो तेरे सिर पर कालरूप बनकर छाये हुये हैं।

जटाओं से गंगा का बहना:—

यह एक वाणीरूपी गंगा है। यह अथाह है। इसकी गहराई का किसी ने पता नहीं लगा पाया है। इनका सदुपयोग विवेकी मानव ही कर सकता है। मूर्ख मानव इसका दुरुपयोग करता है। इन सातों संकेतों को यह एक हाथ जोकि खाली है और ऊपर को संकेत कर रहा है।

हाथ नं० ३--दाहिना जिस हाथ में डमरू है। मानव इस संसार में एक रास्तागीर के तौर पर खेल तमाशा करने वाला मदारी है जोकि थोड़े से काल में संसार के लोगों को अपनी शुभ और अशुभ रूपलीला क्रियाकलाप दिखा कर चला जाता है, को संकेत करता है।

दाहिना हाथ नं० ४--में कमल संकेत करता है कि (कमल लक्ष्मी का द्योतक है।)

या लक्ष्मी के काज तू, करत अनेक उपाय।
सो लक्ष्मी संग ना चले, काहे भूल्यो भाय॥

धन क्यों एकत्रित किया जाता है? इसलिये कि—

विपति नाश हित जोड़ धन, धन से पालो नारि।
नारि और धन से सदा, निज रक्षा कर यार॥

अन्यायोपार्जित धन पर आचार्य कहते हैं -

जो धन जुरे अनीति को, वर्ष दशक लों खाय।
दशक वर्ष के बाद में, जरा मूल से जाया॥

यह लक्ष्मी मरने के बाद साथ नहीं जाती केवल यश ही मानव को अमर बनाता है।

जाकी जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान।
यातें यश संचय करहु, लोग करें सन्मान॥

धर्मात्मा का निर्धन जीवन विज्ञों ने उत्तम सदा कहा—पर पापी धनी पुरुष का जीवन, भला किसी ने नहीं कहा। को संकेत करता है।

हाथ नं० ५ जो खाली है ओर वृषभ-बैल की ओर संकेत कर कहता है-कि वृष का अर्थ बैल और नन्दि तथा धर्म से है, क्योंकि धर्म—

धर्महिं एक सुमित्र है, जो छोड़त नहिं साथ।
मरन समय या काय संग, छोड़ देत सब हाथ॥

इसलिए धर्म कहता है कि-बड़ा कौन है—

दया धर्म हिरदै बसै, बोले मीठे बैन।
तिनको ऊंचे जानिये, जिनके नीचे नैन॥

मरना भला है उसका, जो अपने लिये जिये।
जीता है वह जो मर गया, संसार के लिये॥

बाण का हाथ नं० ६ कहता है कि-हे भव्य तुझे तो नैन बाण लगा है।

बाण लगे तो काढ़िये, कीजे कोटि उपाय।
नैन बाण जो हिय धसे, सो नहिं काढ़यो जाय॥

इस पर तू विवेकपूर्ण ज्ञान का बाण ध्यान रूप धनुष पर चढ़ा जोकि बांये हाथ नं० ४ में हैं को संकेत कर रहा है। जोकि क्रमश: नैनबाण, कामबाण और वचनबाण हैं इन पर संयम रख। इनका ही पकड़ना तेरे लिये हितकर है। यह वर्णन दाहिने अंग का है।

बामांग–वर्णन

बांया हाथ नं० १––संसार का विषय भोगी मानव कामरूप सर्प को पकड़े है।

बांया हाथ नं० २––विषय भोगों के लिये कन्या को याचना करता है तथा स्वार्थ वासनाओं की पूर्ति के लिये तथा व्होट मांग कर राज्याधिकार प्राप्त कर हर्षोन्मत्त होकर गाता और नाचता तथा दूसरों को व उनके साथ रासलोला करता है को संकेत करता है। भिक्षा पात्र द्योतक है।

बांया हाथ नं० ३ जिसमें मुंड लिए है। सांसारिक भोगों के लिये नारी को ओर संकेत करता है।

बांया हाथ नं० ४ धनुष –सांसारिक भोगो मानव का ध्यान संसार के भोगों की ओर है यही कारण है कि वर्तमान शिक्षा में सप्त व्यसनों को प्रधानता दी जा रही है। ओर गांधी जी की अहिंसा आदि पर अथवा उसकी आड़ में विषयी मानव अपनी मनमानी करता जा रहा है। स्वयं के नैतिक स्तर की ओर नहीं देख रहा है। क्या इसे उन्नति का पथ कहेंगे ? नहीं।

बांया हाथ नं० ५–जोकि खाली हैं और गणपति जी को ओर संकेत कर रहा है कि हे भव्य ! तेरा ध्यान जैसा विषयों को ओर है वैसा अपने चैतन्य स्वरूप पवित्र आत्मा की ओर नहीं है। गणपति कौन हैं ?

गणमानव के शरीर की इन्द्रियां हैं और उसका पती चैतन्य स्वरूप आत्मा हैं जोकि इस मानव शरीर का स्वामी ब्रह्म है को संकेत करता है।

बांया हाथ नं० ६–जोकि खाली ओर नीचे दाहिने पैर की ओर संकेत कर कहते हैं कि तेरा अधःपतन हो रहा है क्योंकि तुझे धार्मिक अभिरुचि नहीं है। तू सज्जन पुरुषों के बीच बैठ कर धार्मिक शिक्षा प्रदज्ञान जिससे तुझे सत्संग का लाभ मिल सके योगसाधना नहीं करता है। इसलिए तेरा पतन अवश्य है। यह शिव जी का ताण्डव नृत्य मानव के जीवन में किस प्रकार से छुपा हुआ है। विद्वद् समाज समझे मनन करे और भविष्य की सन्तानों को मार्गदर्शन कराकर शिक्षा के माध्यम को उन्नति के शिखर की ओर ले जावें, आशा है।

स्वामी-समन्तभद्राचार्य की मूर्ति-

...र्कण्डेय ऋषि के तथा शंकर के रूप में

यह प्रतिमा हमें एक श्वेत पाषाण पर उत्कीरित संगमरमर की मालियों के मार्कण्डेय के मन्दिर मोहल्ला तलैया में देखने का शुभावसर मिला।

इस प्रतिमा के दर्शनावलोकन, अध्ययन और अनुसंधान से यह पता लगा कि यह प्रतिमा स्वामी समन्तभद्राचार्य की है।

इसके प्रमाण

सोमनाथ शिवालय जोकि बेलूर तालुके के रामानुजाचार्य के मन्दिर के अहाते के अन्दर सोमनाथ मन्दिर की छत में लगे एक शिलालेख पाषाण पर उत्कीरित है लगा है। यह शिलालेख कनड़ी भाषा में है। इसका उल्लेख शिलालेख नं० १७ ई० सी० व्ही० में है और स्वयम्भू स्तोत्र स्वामी समन्तभद्र परिचय जो श्री पं० जुगलकिशोर जी मुख्तार द्वारा दिल्ली से प्रकाशित है। पृष्ठ ९९ में आचार्य की सफलता के सम्बन्ध में लिखा है, मिलता है।

यह सभी विद्वानों, धर्मप्रेमी जिज्ञासुओं को विदित है कि स्वामी समन्तभद्राचार्य को भस्म व्याधि हुई थी और उसकी क्षुधा शांति राजा शिवकोटी बनारस के शिवालय के पुजारी बनकर रहे ?। मन के प्रसाद द्वारा हुई थी। और राजा शिवकोटी को अपने तपस्या के चमत्कारिक योगबल द्वारा जिनधर्म का उपदेशामृत पान कराकर ही जिनदीक्षित किया था। इसका उल्लेख मंगलाष्टक गुर्वावली में निम्न प्रकार है—

> स्वामी समन्तभद्र मुनिवर सों, शिवकोटी हठ कियो अपार।
> बन्दन करो शम्भु पिंडी को, तब गुरु रच्यो स्वयम्भू भार॥
> बन्दन करत पिंडिका फाटी, प्रगट भये जिन चन्द्र उदार।
> सो गुरुदेव बसो उर मेरे, विघ्न हरण मंगल करतार॥

ध्यान देने की क्या यह बात नहीं है कि जैनाचार्यों ने आचार्य स्वामी समन्तभद्र को १ आचार्य २ कवि ३ वादिराट् ४ पंडित (गमक) ५ दैवज्ञ (ज्योतिर्विद) ६ भिषक् (वैद्य) ७ मांत्रिक (मंत्र विशेषज्ञ) ८ तान्त्रिक (तन्त्र विशेषज्ञ) ९ आज्ञा सिद्ध १० सिद्ध सारस्वत क्यों कहा है? इन उपाधियों से विभूषित किया है। देखना यह भी आवश्यक है कि यह प्रतिमा का यहाँ मिलना क्यों? यह क्षेत्र आचार्य स्वामी समन्तभद्र का पूर्व में वादस्थल रहा है। इसलिये इस प्रतिमा का मिलना असम्भव प्रतीत नहीं होता है।

मूर्ति का आकार प्रकार निम्न प्रकार है—

स्वामी समन्तभद्र शिवलिंग की जिलहरी पर शंकर के रूप में चार भुजा धारण कर खड़े हैं। चारों भुजाओं में से एक हाथ में ज्ञान का बाण दूसरे में मनरूप हाथी को वश करने के लिये

अंकुश हाथ में लिये हैं। क्यों गले में सर्प १८ दोष जो जैन शासन में बतलाये हैं उनमें क्षुधा की भस्म व्याधि को संकेत करता है।

शिवलिंग जिलहरी में रखा है। शिवलिंग पुरुष लिंग का द्योतक चिन्ह है। जिलहरी नारी के गुप्तांग की ओर ध्यान दिलाता है। यह मानव शरीर विषयों का धाम अर्थात् घर है। और विषयों को धारण करने से विषधर-सर्प को संकेत करता है। विद्यमान बीस तीर्थंकर पूजन में कहते हैं-

काम-नाग विष-धाम, नाश को गरुड़ कहे हो।

यह स्पष्ट रूप से ज्ञात कराता है।

इस कारण से यह मानवशरीर शिव अर्थात् कल्याण का घर है। राजा शक्तिशाली था। उसने अहंभाव के कारण शिवलिंग पूजन के लिये करोड़ शिवलिंग निर्माण कराये थे इस कारण से शिवकोटी नाम से प्रख्यात थे। इसे कहते हैं यथा नाम तथा गुण। गुणों के अनुसार भारत में नामसंस्करण की प्रथा थी।

शिवालयों में जो शिवलिंग पर नागफण फैलाये है वह काम नाग को और जिलहरी से लिपटा हुआ सर्प कामरूप नागिन को संकेत करता है। और वह राजा शिवकोटी को शक्ति को पकड़ने का भाव प्रदर्शित करता है।

लिंग की आकृति गोल अन्डे के समान है। वीर्य एक जलबिन्दु अर्थात् एक शक्ति है जिसे ब्रह्मचर्य कहते हैं। इस की रक्षा करने वाले ही वीर पुरुष होते हैं। वीर भोग्या वसुन्धरा। जो पुरुष सदाचारी संयमी शीलवान (ब्रह्मचारी) हैं वह देवपुरुष कहलाते हैं। उनकी विश्व में तेजस्वी प्रतिभा के जीवन में किये गये आदर्श चिरजीवी बनाते हैं।

स्वामी समन्तभद्राचार्य के दो हाथों का भाव ज्ञान का बाण और संयम के अंकुश से ऊपर बताया है तीसरा हाथ शिवकोटी के सिर पर रखा है वह बताते हैं कि हे राजन् जैसा तुमने शक्ति: शाली विषय भोगों को पकड़ रखा है ऐसा संयम को पकड़ो। और चौथा हाथ जो शिवलिंग पर रखा है वह बतलाते हैं कि यह सृष्टि की रचना का है किन्तु असंयमी मानव अपनी शक्ति का दुरुपयोग कर पतन की ओर जाता है। यह पंचेन्द्रिय जनित विषय त्यागने ही योग्य हैं। क्योंकि यह राग-द्वेष को पैदा करने वाले दुधारा है। तेरी अटलशक्ति संयम को पकड़ने में लगा।

वर्तमान में परिवार नियोजन का रोग भारतीय हिन्दू समाज को किसने लगाया? किस लिये लगाया? यह बात सोचने और समझने की है।

हिन्दू समाज की जनसंख्या शक्तिशाली न बने, संयमी जीवन द्वारा उत्तम विचारशील पराक्रमी संतति उत्पन्न न हो, कामी पुरुष बनकर अपने ब्रह्मचर्य की रक्षा न कर सकें और अन्य विधर्मी आकर भारत पर अपना साम्राज्य जमा सकें इसलिये यह विधर्मियों का षड़यन्त्र रचा हुआ है, किन्तु इसे राजनैतिक रूप से चलाया गया है साथ में रुपयों का प्रलोभन दिया जाता है किन्तु भारतीयों ने इस ओर लक्ष्य नहीं दिया कि इससे जनता को शारीरिक, मानसिक, आर्थिक कितनी हानि है। अतएव बुद्धिमान जनसंयम का पालन करेंगे और जो विषयों की [illegible] का रोग लगाया गया है, सावधान होंगे।

गणधर-प्रतिमा

यह सर्वविदित है कि विदिशा एक प्राचीन ऐतिहासिक नगरी पूर्वकाल से रही है। इस नगरी ने अनेकों उतार और चढ़ाव देखे हैं।

इसके अंचल और भूगर्भ में अरबों रुपयों का बहुमूल्य अप्राप्त, दर्शनीय अध्ययनीय मानव जीवन को सार्थक बनाने वाला कलामय साहित्य का भंडार भरा पड़ा है। जोकि समय समय पर यत्र तत्र अकस्मात् ही अनजान व्यक्तियों के हाथ उपलब्ध होता है, मूढ़ता और स्वार्थ के वश उसकि महत्व से अनभिज्ञ मूल्यांकन को न समझते हुए उपयोगिता को न समझते हुये स्वार्थ-बर्बरता के साथ विध्वंस करते हैं और विद्वेषमय भावनाओं को अमल में लाते हैं।

इसका उत्तरदायित्व उन जिम्मेदार अधिकारी शासकवर्ग पर है जिनके हाथ में सत्ता है। जो स्वार्थान्ध और विषयलोलुपी हैं।

शिलालेख

पट्ट २ व ३

स्थान—परिचय

निकट भविष्य में ही इस परम पुनीत प्राचीन विदिशा नगरी में बहने वाली बेतवा नदी के किनारे अनेकों टीले हैं जिनको पूर्व में खोदा जा चुका है। कुछ खोदे जा रहे हैं। इनमें कलामय आश्चर्यजनक ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त होती है। इसमें निकली हुई सामग्री बहुतायत से कलक्टर के संग्रहालय में तथा ग्वालियर के गूजरी महल के संग्रहालय में है। किन्तु विदिशा का महत्व क्या शेष रह जाता है, जबकि ऐसी विभूतियां बाहर चली जावें तो यह क्षेत्र श्मशान बना बनाया है।

इसके साक्ष्य स्वरूप यह तीन गणधरों की प्रतिमायें, जोकि भगवान महावीर के ११ गणधरों में से प्रधान गणधर थे। प्रथम गौतम स्वामी थे, यह जाति के ब्राह्मण थे। पूर्ण ब्रह्म के ज्ञाता थे। गो नाम इन्द्रियों का है और तम नाम अंधकार का है। इन्द्रियों के वशीभूत अज्ञानांधकार में फंसे हुए प्राणियों में सद्भावनायें जाग्रत करने के लिये ही इनका नाम यथानाम तथा गुण रखा गया था।

द्वितीय गणधर—

सुधर्माचार्य थे, जिनका प्रथम कर्त्तव्य वस्तु का स्वभाव (धर्म) क्या है ? वह है दयामय जिसे वृष कहते हैं और वृष का संकेत साकार रूप से बैल–नंदी को किया है। जो इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करते हैं वही वीर पुरुष इस वसुन्धरा के स्वामी होते हैं। इसलिये वीर भोग्या वसुन्धरा कहा है। इसलिये द्वितीय गणधर का नाम सुधर्माचार्य संसार में विख्यात है।

तृतीय गणधर श्री जम्बू स्वामी—

यह बात जगत्प्रसिद्ध है कि जम्बू स्वामी बेकुंठे जांय, तालो लगा कुंची ले जांय।

यह भगवान महावीर के तीनों गणधर भिन्न प्रकार के थे। इन तीनों ने तीन लोक, तीन अवस्थायें, तीन रत्नों की ओर संकेत किया है। जो इस मानवजीवन से सम्बन्धित है।

आपने जामुन का रसास्वादन किया है। जिस प्रकार से जामुन का स्वाद है उसी प्रकार से इस संसार का स्वाद है। जिस प्रकार से जामुन का वृक्ष कमजोर होता है, उसकी डाल टूट जाती है, उसी प्रकार से यह मानवशरीर भी नष्ट हो जाता है। जिस प्रकार से जामुन का रंग श्याम है उसी प्रकार से यह मानव शरीर कलंक काजल से भी अधिक काला है। जिस प्रकार से जामुन गोल है पृथ्वी गोल है इसपर अनन्त शासकों ने अपनी करामातें बताईं। अन्त में काल ने इन्हें भी भक्षण किया है। उसी प्रकार से देश काल क्षेत्र के अनुसार अवस्था, स्वभाव, ज्ञान, गुण, रंग, रूप सभी बदल जाते हैं। इस कारण से इस क्षेत्र का नाम जम्बूद्वीप है। मानव शरीर रोगों का घर है। भारत कहते हैं विपत्ति को, यह गोल है, इसी प्रकार से विपत्ति भी गोल है। इसके पांच म्लेक्ष खंड हैं, वह पांचों पाप हैं।

(१) हिंसा (२) झूठ (३) चोरी (४) कुशील (५) परिग्रह। इनकी बात सखियां सप्त व्यसन हैं।

जूआ खेलन मांस मद, वेश्या व्यसन शिकार।
चोरी पर–रमनी–रमन, सातों पाप निवार॥

जो इनका त्याग करता है वह वीतराग धर्म का अनुयायी है। उसी के भाग्य का सूर्योदय होता है, विरक्त हो जाता है। इन जम्बू स्वामी ने इनके त्याग का उपदेश दिया। इनका मोक्ष स्थान चौरासी मथुरा में है। जब यह मोक्ष पधारे तो अपने ज्ञान की चाबी साथ लेकर ताला लगा कर ही गये हैं। इनके समान भगवान की वाणी का खोलने वाला इस भारत में नहीं हुआ।

ऐसे अपूर्व ज्ञान–गरिमा की (गणधरों) प्रतिमायें नदी बेतवा के किनारे पर एक टोले में

हजारीलाल सुनार विदिशा ने टैक्टरों से समथल भूमि करने के लिये चलाये थे उसमें यह प्रतिमायें निकली हैं। इनके शिरश्छेदन किये गये स्पष्ट दिखाई देते हैं। इनकी ब्राह्मी भाषा में प्रशस्ती खुदी हुई है। मूर्ति का निर्माण महाराजाधिराज श्री रामगुप्त के शासनकाल में हुआ। एक प्रतिमा पर आठवें तीर्थंकर श्री चन्द्रप्रभ और नवमें पुष्पदन्त का नाम लिखा है। मूर्तियों की शैली ईस्वी सन् चौथी शता० के अंतिम चतुर्थांश की कही जा सकती है। इन मूर्तियों में कुषाण कालीन ई० पाँचवीं शती० की गुप्तकालीन मूर्तिकला के बीच के युग के लक्षण दृष्टव्य हैं और मथुरा आदि से प्राप्त कुषाण कालीन बौद्ध और तीर्थंकर प्रतिमाओं की चरण चौकियों पर सिंहों जैसा अंकन प्राप्त होता है वैसा ही इन तीनों मूर्तियों पर एक मुख दो शरीर वाले सिंह लक्षित हैं।

प्रतिमाओं का अंगविन्यास तथा सिरों के पीछे अवशिष्ट प्रभामंडल भी अन्तरिम काल के लक्षणों से युक्त है। इनके उत्तर गुप्तकालीन अलंकरण का अभाव है। लिपिविज्ञान की दृष्टि से भी ये प्रतिमा लेख ई० चौथी शती० के ठहरते हैं। इन लेखों की लिपि गुप्त सम्राट चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के उन लेखों से मिलती है जो सांची और उदयगिरी की गुफाओं में मिले हैं।

रामगुप्त के नाम के पहिले उसकी उपाधि 'महाराजाधिराज' दी गई है। इस उपाधि से स्पष्ट है कि वह गुप्तवंशी सम्राट था। इस वंश के शासक चन्द्रगुप्त प्रथम ने सबसे पहिले इस उपाधि को धारण किया। उसके बाद समुद्रगुप्त चन्द्रगुप्त द्वितीय कुमार गुप्त, स्कन्दगुप्त आदि शासकों ने भी यह उपाधि धारण की।

पिछले वर्षों में पूर्वी मालवा के विदिशा नगर में राजमल मड़वैया पुरातत्वान्वेषक ने श्री कृष्णदत्त जो वाजपेयी महोदय को प्रचुरमात्रा में सिक्के दिये हैं। उनमें रामगुप्त के भी सिक्के थे। कुछ सिक्के एरण नामक स्थान जोकि बीना मध्य रेलवे जंक्शन स्टेशन से लगभग ६ मील दूर है उत्खनन में प्राप्त हुये हैं। जिनपर गुप्तकालीन ब्रह्मी लिपि में लिखा है। और गुप्त वंश का प्रमुख चिन्ह गरुड़ की आकृति बनी हैं। इसके ३ प्रकार के सिक्कों पर मिलती है-(१) गरुड़ (२) चन्द्र (३) तारक। पंक्ति के चिन्ह रामगुप्त के सिक्कों पर मिले हैं। इन प्रतीकों का अनुकरण इस वंश के अन्य गुप्त सम्राटों, चन्द्रगुप्त द्वितीय, कुमार गुप्त, स्कन्दगुप्त आदि ने किया है।

ऐसी अपूर्व गणधरों की अप्राप्य प्रतिमाओं की रक्षा के लिए हमारे विदिशा नगर के जिलाध्यक्ष महोदय श्री विष्णु प्रतापसिंह जो क्षत्रिय वीर पुरुष जिलाध्यक्ष महोदय यश के भाजन हैं जिनकी अनुकम्पा से सुरक्षा के लिये तत्काल आदेश प्रदान किया गया है जोकि घटनास्थल पर रेवेन्यू के विभाग के गिर्दावर महोदय एवं पुलिस कोतवाल सा० पुलिस कोतवाली विदिशा को लेखक की ही सूचना पर भेज कर रक्षा की।

और लेखक को हमारे सागर विश्वविद्यालय के अध्यक्ष महोदय प्राचीन इतिहास तथा संस्कृति विभाग के श्री प्रोफे० डाक्टर कृष्णदत्त जी वाजपेयी ने पढ़ा और इसका उल्लेख हितवाद भोपाल दि० १०-२-६९, साप्ताहिक हिन्दुस्तान दिल्ली दि० ३१ मार्च १९६९, और सन्मति सन्देश मासिक पत्र वर्ष १४ अंक ६ माह जून सन् १९६९ के पृ० २४-२५ पर किया है। वे हमारे धन्यवाद के पात्र हैं।

卐

युगल–क्षुल्लक

"विदि॥ वैभव" क्षपटलिक क्षुल्लिकन ११ वीं शताब्दी
मड़कैया संग्रहालय
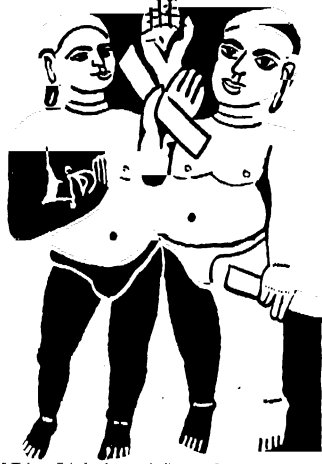
शास्त्र स्वाध्याय से स्वात्मानुभूति जागती, मोक्षलाभ, पुण्य संचय,
विपरीतावस्था में अधःपतन, दर्शक। मड़वैया कला.

विनाश के बादल

यह सर्वविदित ही है कि विदिशा के किले के सर्वनाशक विदिशा नगर के नगरपालिका के पार्षदगण वह हैं जो धर्म की दुहाई देकर चन्द दिन को राजा बनकर अपने भवन निर्माण के लिये, नगर की सड़कों में गिट्टी तुड़वाने की आड़ में कोट की दीवार तुड़वाई है। क्या कभी पुरातत्व विभाग से आदेश प्राप्त किया है?

यह इमारत ग्वालियर गवर्नमेण्ट गजट दिनांक २० दिसम्बर १९४७ भाग १, पृष्ठ १५६५ पर प्रकाशित एज्यूकेशन मिनिस्टर ग्वालियर गवर्नमेण्ट के आदेशों की ओर आकर्षित कर पुरातत्व विभाग के संरक्षण में घोषित किया है।

नगरपालिका के अध्यक्ष महोदय को जिलाध्यक्ष महोदय विदिशा ने आदेश दिया है कि उसमें मकान तथा खुदाई आदि की आज्ञा दी जाने के पहिले पुरातत्व विभाग की अनुमति की आवश्यकता है। वर्तमान में उक्त क्षेत्र में जो दीवार या मकानात बनवाने हेतु आपके कार्यालय (नगरपालिका) द्वारा आज्ञा दी गई है उसके सम्बन्ध में पुरातत्व विभाग से अनुमति ली हो तो इससे इस कार्यालय को अवगत कराने का कष्ट करें। यदि न ली गई हो तो अब ली जावे तथा आज्ञा प्राप्त होने तक काम स्थगित रखा जावे।

खुदाई में जो मूर्तियां निकली हैं वे श्री राजमल मड़वैया (जो पुरातत्व विभाग द्वारा विदिशा में उनके प्रतिनिधि नियुक्त किये गये हैं) को सोंपकर इस कार्यालय को सूचित करने का कष्ट करें।

हस्ताक्षर
कलेक्टर भेलसा

जा० क्र० १५८१४ दि० १८-९-५७
प्रतिलिपि:—

श्री राजमल मड़वैया पुरातत्व विभाग गाईड विदिशा की ओर

हस्ताक्षर अंग्रेजी
कलेक्टर भेलसा

खेद है :—

इस प्रकार का आदेश जिलाध्यक्ष की ओर से अध्यक्ष नगरपालिका को दिया गया किन्तु दुर्भाग्य है कि उक्त क्षेत्र की न रक्षा हो सकी न पुरातत्व विभाग के अधिकारियों ने ध्यान दिया। क्या ऐसे शासक देश के हितचिन्तक हो सकते हैं ? कदापि नहीं।

क्षुल्लक प्रतिमा की प्राप्ति

इस किले की दीवार में अनेकों प्रतिमायें मिली हैं किन्तु उनमें यह एक क्षुल्लक की प्रतिमा का भाग एक देशी पाषाण पर उत्कीरित मिला है और यह प्रतिमा क्षुल्लक की है। और यह कहती क्या है उसे आप ध्यान से देखिये और समझिये।

इसमें दो प्रतिमायें हैं और दोनों के दो दो हाथ हैं। यह चारों हाथों का संकेत क्या है।

दाहिने बाजू की क्षुल्लक प्रतिमा का हाथ हृदय पर है वह है दाहिना हाथ अंगूठा और अंगुली का संकेत उन तीन अंगुलियों की ओर रत्नत्रय का ध्यान दिलाता है जो इनका मनन और चिन्तन करता है वह दूसरे बांयें हाथ की पांचों अंगुलियां पंचाणुव्रत की ओर संकेत कर कहती हैं कि यही हमें मोक्ष में पहुंचा सकती हैं।

द्वितीय क्षुल्लक की प्रतिमा का दाहिने हाथ में एक शास्त्र है। उसकी चारों अंगुलियां चारों गतियों में भ्रमण कराने वाली चारों कषायों की ओर संकेत कर कहती हैं कि यह आत्मज्ञान जाग्रति में बाधक हैं। इसका अनुभव पूर्ण ज्ञान प्राप्त कराने को शास्त्र स्वाध्याय परम आवश्यक है।

द्वितीय बांया हाथ जो नीचे की ओर दिखा रहे हैं जिसमें शास्त्र है यह कहता है कि इस शास्त्र की जो अवहेलना करता है ज्ञानार्जन नहीं करता स्वाध्याय नहीं करता है उसकी अधोगति होती है। दो अंगुलियां जो नीचे की ओर दिखाई हैं वह राग और द्वेष को संकेत करती हैं कि जो मानव या जो जीव राग और द्वेष के वश हैं वह आत्मकल्याण नहीं कर सकते हैं, उनका अधःपतन होता है और उन्हें दारुण दुःख भोगना पड़ते हैं।

महाकीर्ति मुनि और विदिशा

इस परम पुनीत विदिशा नगरी में ३० जैनाचार्य पटाधीश हुए हैं। उनकी पट्टावलि जैन सिद्धान्त भास्कर आरा मासिक पत्र के पृष्ठ संख्या २५१ । यह आचार्य पट्टाधीशों में सर्वप्रथम भट्टारक सं० ६८६ में हुए हैं।

इन श्री महाकीर्ति मुनि की मूर्ति का निर्माणका व वदी ८ को हुआ। इनका यह प्रतिष्ठाकाल का समय है।

प्रतिमा का

स्वस्ति श्री नन्दि देवस्य शिष्यो महाकीर्ति मु वानांपदि संप्राप्य गुण पुन द्वादश विधेन तपसा उतंय सल्लेखना कृत्वा। आराधन । विकाय आनाय को उतः ततः गुणपुत्रस्त्रि तस्य गुरो त प्रनम्र सु ध्यात।

वयनुनामेन मूर्ति निर्मा० करमित। ...मुनिः।

यह महाकीर्ति मुनि दोनों हाथ जोड़े हैं। उनके इन हाथों पर आड़ी पीछी रखी हुई है।

यह प्रतिमा कमलासन पर खड़ी हुई है। इनके सिर पर भगवान की पद्मासन प्रतिमा है। पीछी के भाग की ओर कमंडलु रखा है। पैरों के दोनों ओर कमल-नाल लिये हुये दो कुबेर अर्द्ध पद्मासन बैठे हैं।

वर्तमान मूर्ति स्थान

यह प्रतिमा श्याम पाषाण की है। ३ फुट लम्बी १॥ फुट चौड़ी ६ इन्च मोटी के लगभग है और श्री दिगम्बर जैन मन्दिर परवार साथ बड़ा मन्दिर विदिशा में सेठ सिताबराय जी की वेदी के उत्तर दिशा के आले में रखी है।

दाहिनी ओर—मूर्ति के चारों ओर जो चित्रांकित हैं वह आचार्य भद्रबाहु जी ने सम्राट चन्द्रगुप्त को प्रथम उपदेश उदयगिरी गुफा नं० १ पर दिया था। वह अर्द्ध पद्मासन हैं।

बांयीं ओर—अर्ध पद्मासन में श्री स्वामी समन्तभद्राचार्य उपनाम लोहाचार्य ने लोहांगी पर बाममार्गियों से वाद-विवाद का लोहा लिया था और अपने चमत्कार द्वारा जिनधर्म की रक्षा की थी।

नीचे की ओर जो चित्रांकित है उसमें सुखासन पर बैठे हुये श्रीमद् भट्टाकलंक देव हैं और बाँयी ओर निकलंक देव दोनों भाई नवधाभक्ति करते बैठे हैं। यह प्रतिमा ग्यारसपुर के मालादेवी जैन मन्दिर में शांतिनाथ के चरणों में दोनों ओर बनी हैं।

नोट—किला अन्दर विदिशा में ठा० भैरोंसिंह जी की हवेली में एक खंडहर है, उसमें एक बड़ा मारी जिनालय था जिसमें २४ कोठड़ियाँ निकली थी। बड़े बड़े दरवाजे नक्शीदार थे। यह स्थान भी पुरातत्व विभाग की सीमा का है। इसका एक दरवाजा ठाकुर साहब ने काछी लोगों को बेचा है जोकि नदीपुरा में गनेशमढी के सामने तिराहे के पास है। पुरातत्व विभाग को अपने अधिकार में लेना चाहिये क्योंकि यह अवैधानिक तौर पर बेचा गया है यह पुरातत्व विभाग की सम्पत्ति है। इसी प्रकार से अनेकों ने पुरातत्व विभाग की सीमा के अन्दर बिना पुरातत्व विभाग की अनुमति के मकानात भी बनाये हैं। यह सब अवैधानिक कार्यवाही है। इस क्षेत्र में अपूर्व पुरातत्वीय सामग्री भरी पड़ी है। विशेष वर्णन इस पुस्तक विदिशा वैभव में दिया गया है।

卐

लोहांगी की पहाड़ी, विदिशा

यह पहाड़ी लोहांगी क्यों कहलाती है और कहाँ पर स्थित है? महानुभाव! आप जब रेलवे स्टेशन से उत्तर की ओर देखेंगे तो आपके सामने जो पहाड़ी दिखती है, वही लोहांगी की पहाड़ी है। और इसकी महानता यह है कि—

एक अशोक स्तंभ का शीर्षभाग बहुत बड़ा यहां पर रखा है, जिस पर केन्द्रीय शासन का एक साईन बोर्ड सुरक्षा के सम्बन्ध में भी लगा है। यह शासन के गौरव को सुरक्षा का चिन्ह भी है। शासकीय सम्पत्ति है, विदिशा का गौरव है। इस शीर्षभाग में शेर और हाथी बने हुये थे जो तोड़े गये हैं। क्यों बने थे? एक शंका है।

यह आप जानते ही हैं कि सम्राट अशोक एक प्रतापी और बहादुर सिंहपुरुष व्यक्ति था जिसका इतिहासों में नाम अमर है। उसके बनवाये हुये तालाब, बावड़ी, मन्दिर, स्तम्भ आदि भारत में अनेकों स्थानों पर पाये गये हैं। दूसरी बात- (हाथी क्यों है) यह मन--मतंग है।

इसका उत्तर यह है कि मन को मतंग कहा है जो मन में आया वही करना। मन जिस प्रकार से चंचल है उसी प्रकार से हाथी भी है। नौ ९ चीजें चंचल होतो हैं।

मन, मर्कट, मधुकर, मरुत, मत्त, मानिनी, मीन।
माँ, अरु मन्मथ ये नवों, चपल मकार प्रवीन॥

सम्राट का चंचल मन धर्म की ओर था। उनके स्वसुर जो जैन विदिशा के सेठ थे जिनकी एक सुपुत्री थी उससे सम्राट ने शादी की थी। उसको स्मृति में आचार्य परम्परा को चिरजीवी बनाने के लिये ही यहां पर एक अशोक कीर्ति स्तम्भ निर्माण कराया गया था उसी का यह भाग है। जो आपके समक्ष स्तंभशीर्ष के रूप में विद्यमान है।

सिंह क्यों है ?

सिंह इसलिये है कि वह पुरुषार्थ का प्रतीक है। जो सिंहपुरुष होते हैं वही इस वसुन्धरा के स्वामी होकर प्रजा का पालन करते और विश्व के प्रांगण में चिरजीवी देदीप्यमान कीर्ति द्वारा अमर हो जाते हैं। जैसे सम्राट अशोक का महान कार्य हैं, मानव की पूजा नहीं किन्तु गुणों से ही मानव देव माना गया है और दोषों से मानव राक्षस मानव गया है। इस पाषाण का रंग सफेद और सांची के पत्थरों से मिलता है, जिनपर चित्रकला की गई है। कला बड़ी सुन्दर और मनमोहक है।

अब प्रश्न है कि क्या जैनियों का यहां पर कोई अस्तित्व भी रहा है ? यदि वास्तव में देखा जावे तो यह स्थान जैनियों के गौरव का तीर्थस्थान है। क्यों ? इस शंका का समाधान यह है कि—

यहां पर एक पहाड़ी में जैन पद्मासन प्रतिमा उत्कीरित है। यह दिगम्बर जैन प्रतिमा है। उक्त प्रतिमा हमें प्रमाणित करती है। कि लोहांगी नाम सार्थक है क्यों ? इसका प्रमाण हमें जैन सिद्धांत भास्कर आरा के मासिक पत्र भाग १ किरण ४ अप्रेल से जून तक सन् १९१३ चैत्र से ज्येष्ठ वीर निर्वाण सं० २४३९ के पृष्ठ सं० १०९ में अंडर लाइन करके एक नोट लिखा है—

सन् १२९५ में दिल्ली के राज्य--सिंहासन पर आलमशाह बैठे। उस समय उनके दो मन्त्री जाति के ब्राह्मण थे। यह मंत्रवादी थे। इन्होंने अपनी मंत्रवादिता से आलमशाह पर अपना रुतबा जमा रखा था। आलमशाह को कहा कि मुसलमानों की संख्या बढ़ाने के लिये यह घोषणा करावें कि हिन्दू धर्म वाले और अन्य धर्म वाले अपने अपने धर्म को जीवित रखने के लिए वाद विवाद का लोहा लेवें। हिन्दू धर्म की पुष्टि में तो राघो और चेतन थे ही, किन्तु जैन धर्म की पुष्टि के लिये अभाव था, इसलिये यह संकटकालीन बादल जैनियों पर छा गये।

यह इतिहासप्रसिद्ध बात है कि गुरु गोविन्दसिंह के बच्चे को दीवार में किसने चुनवाया और बस्तर में मध्य प्रदेशांतर्गत राज्य के मुख्य मन्त्री पं० द्वारिकाप्रसाद मिश्र के शासनकाल

में बस्तर महाराजा को महल के अन्दर गोलियों का शिकार बनाया गया था। विपरीतानु-गामी सत्ताधिकारी व्यक्ति क्या अन्धा नहीं माना गया है। क्या स्वार्थी भयंकर अंधा नहीं है ? और एक ओर देखा जावे तो जैनाचार्य भद्रबाहु स्वामी जैसों ने जोकि ब्रह्म के जानने वाले ब्राह्मण थे रक्षा भी की है। जिन्होंने रक्षा की वह देव और जिन्होंने सर्वनाश किया वह दानव कहलाने में शंका का स्थान रिक्त नहीं रखा है।

दिल्ली की जैन समाज में क्षोभ उत्पन्न हुआ और आपत्ति के बादलों ने आ घेरा। दिल्ली की जैन समाज के लोग जैनधर्म की रक्षा के लिए चारों ओर भारत के अन्दर चमत्कारी योगी पुरुष की शोध लगाते हुये इस विदिशा में आये। इन लोगों ने बादशाह से ६ महीने की अवधि मांगी थी उसमें इनके ३ मास विदिशा में आते आते समाप्त हो गये और उस समय पर इस विदिशा नगरी में दिगम्बराचार्य श्री महासेन स्वामी विराजमान थे। उनने अपनी बुलद कहानी श्री आचार्य से कही। उत्तर में आचार्य ने आश्वासन के रूप में अच्छा कहा।

दिल्ली के श्रावकगणों ने इस विदिशा नगरी में जोकि पूर्व में भद्दलपुर नाम से विख्यात थी शेष ३ मास पूरे कर दिये, जब शेष १ दिन रहा तो आचार्य श्री महासेन स्वामी से कहा-गुरुवर ! कल बादशाह के दरबार में हम लोगों को उपस्थित होना है। यदि हम समय पर वहां न पहुंचे तो जैन धर्म जीवित नहीं रह सकता। कल हमारी बादशाह के दरबार में उपस्थिति है। इस बात को आचार्य ने सुनते ही इस लुहांगी पर एक चादर बिछवा दी और कहा कि आप लोग आज यहीं पर सोना।

卐

आचार्य का चमत्कार

आचार्य के आदेशानुसार श्रावकगण इस लुहांगी की पहाड़ी पर बिछी हुई चादर पर सो गये। और आचार्य महासेन स्वामी के तपोबल, योगबल, मंत्रबल द्वारा अपने अपने घरों में श्रावकगण पहुँच गये। और आचार्य महासेन स्वामी श्मसान भूमि में ध्यानमुद्रा में पहुंच गये।

(यह प्रकरण जैन सिद्धांत भास्कर आरा जिसके बारे में हम ऊपर वर्णन कर चुके हैं। देखिये पृ० सं० ११२)

महासेन स्वामी के पहुँचते ही उसी दिन दिल्ली के एक नगर--सेठ के पुत्र को सर्प ने काट लिया था। वह अपनी नव विवाहिता बधू के साथ पलंग पर सो रहा था। नववधू की चोटी पलंग से नीचे लटक रही थी। उस चोटी पर से सर्प ने चढ़ कर काटा था। सेठ--पुत्र को मृतक जान कर स्मशान में लाया गया था जिसमें महासेन स्वामी विराजमान थे।

उक्त स्थान पर महासेन स्वामी को एक अजनबी साधु देखकर लोग उनके पास जा बैठे और नमस्कार किया। महासेन स्वामी ने आशीर्वाद देते हुये पूछा कि आप लोग यहाँ पर क्योंकर आये हैं ?

दर्शकों ने सेठ-पुत्र के सर्प-विष का कारण कहा। आचार्य ने तत्काल कहा कि वह बालक मरा नहीं, किन्तु जीवित है !

यह आश्चर्यजनक बात सुनते ही दर्शक भाग कर सेठ-पुत्र को देखने दौड़ पड़े और चिल्ला कर कहा कि वह लड़का जिन्दा है। वह यह कह ही रहे थे कि वहां पर लड़का सोते से उठा और बातें करने लगा।

यह बात दिल्ली नगर में बात की बात में पहुँच गई। और जब लोग घरों में गये तो घर घर चर्चा महासेन स्वामी की होने लगी।

यह बात उन श्रावकों ने भी सुनी जोकि अपने घरों में पहुंच चुके थे और अपने परिवार से बातें कह ही रहे थे कि महासेन स्वामी के समाचार मिल गये। अपार आनन्द हुआ और आचार्य श्री की जयजयकार होने लगी।

यह संवाद बादशाह तक पहुँच गया। श्रावकगण बादशाह के दरबार में यथासमय उपस्थित होकर कहने लगे-हमारे गुरु महाराज आ चुके हैं। जो आज्ञा हो!

आचार्य दरबार में आमंत्रित किये गये तो राघो और चेतन दोनों मंत्रियों ने उपहास करते हुये कहा कि क्यों साधु! तू कमंडल में मछली क्यों लाया है?

आचार्य ने समझ लिया कि यह मंत्रवादी हैं। महासेन स्वामी ने तत्काल कहा कि अय मंत्रियो! इसमें पुष्प हैं। कमंडलु दरबार में देखा गया तो पुष्प ही निकले। यहाँ पर मंत्रियों का मान भंग हुआ। पश्चात् षट्मत पर वादविवाद हुआ, उसमें भी महासेन स्वामी ने मंत्रियों को पराजित किया और हिन्दू व जैन धर्म की महान रक्षा की और विधर्मी (मुसलमान) होने से बचाया। यह प्रकरण जैन सिद्धांत भास्कर आरा के पृ० सं० ७८ में जहां पर नन्दो संघ की पट्टावलि का उल्लेख है कि महासेन स्वामी दक्षिण देशस्थ भद्दलपुर नाम से विख्यात नगर जिसे वर्तमान में विदिशा नाम से पुकार रहे हैं यह भी प्राचीन नाम है। इसी नगर में विक्रमी सं० १ में जैनाचार्य भद्रबाहु स्वामी द्वि० से सं० ६८२ तक २६ जैनाचार्य पट्टाधीश हुये हैं।

सं० १०७९ में श्रुतकीर्ति, सं० १०९४ में भावचन्द्र, १११५ में महाचन्द्र और ११४० में माघचन्द्र आचार्य हुये।

जिसे भूपाल सी० पी० जोकि वर्तमान में मध्य प्रदेश है नगर के पट्टाधीश हुये हैं। ऐसा जैन सिद्धांत भास्कर में पृष्ठ ७९ पर उल्लेख किया है। यदि शंका हो तो देख लेवें।

महासेन स्वामी का शासकीय सम्मान

अलाउद्दीन और इनके बाद होने वाले सन् १३१५ में दिल्ली के राज्यसिंहासन पर बैठने वाले फीरोजशाह तुगलक ने दिगम्बर जैनाचार्यों को वस्त्र पहिनने के लिये बाध्य किया। उक्त दोनों बादशाहों ने इन जैनाजार्यो की भट्टारकों की ३२ उपाधियां दी थीं जोकि कोल्हापुर और नागौर के भट्टारकों के पास आज भी मौजूद हैं।

लोहांगी नाम की ख्याति क्यों?

इसलिये कि महासेन स्वामी और स्वामी समन्तभद्राचार्य तथा अकलंक देव स्वामी आदि

ने वाममार्गियों से वादविवाद का लोहा लिया। अज्ञानांधकार में पड़ी हुई भोली जनता को सन्मार्ग दर्शन कराया। ज्ञान का दीपक दिखाया। हिंसामय भावनाओं को रोका। वाममार्गियों को पराजय दी। वादविवाद का लोहा लिया था। इस कारण से इस पहाड़ी को लोहांगी कहने लगे। यह संस्कृत में लोहांध्री ही कही जाती है और अपभ्रंश भाषा में लोहांगी।

शंका-निवारणार्थ स्पष्टीकरण

देखिये—अग्रवाल जाति का इतिहास, लेखक डाक्टर सत्यकेतु विद्यालंकार के पृ० सं० ११७ में लोहाचार्यो का वर्णन है।

(१) चन्द्रगुप्त मौर्य के समकालीन आचार्य भद्राबाहु स्वामी (२) महासेन स्वामी, जिनका उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है (३) स्वामी समन्त भद्राचार्य।

स्वामी समन्तभद्राचार्य का वंश परिचय—

विदिशा वैभव के पृ० सं० २४४ में देखिये। इनके द्वारा जो जैन संस्थाओं को दान दिया गया है उनके दानपत्र तुलसी और वेजयन्ती के मुकामों पर प्राप्त हुये हैं। इन दानपत्रों से इनके राज्यवंश का पता चलता है। कदम्बवंशी राजा प्राय: जैनी ही हुये हैं दक्षिण देश के राजा हुये। इनकी गुरुपरम्परा के अनुसार शुभचन्द्राचार्य जोकि योगिराज भर्तृहरि के बड़े भाई थे जिन्हें काका महाराजा भुज ने मार डालने का षड़यन्त्र राज्यलिप्सा के कारण मंत्रियों को आदेश देकर किया था, किन्तु सुयोग्य किसी मन्त्री के द्वारा शुभचन्द्राचार्य को संवाद प्राप्त होते ही वैराग्य उत्पन्न हुआ। इस समय इनकी आयु केवल ८ वर्ष की थी। इनकी तपोभूमि समसगढ़ जोकि भोपाल के निकट है तथा चपावती नगरी जोकि भोपाल राज्य के भयावह जंगली स्थान में रहे हैं।

महाराजा योगिराज की तपोभूमि आशापुरी और भोजपुर शिवालय जोकि भारत के प्रसिद्ध दर्शनीय स्थानों में से हैं रही है।

इन शुभचन्द्राचार्य ने स्वामी समन्तभद्र को भारतभूषण, वादी, वाग्मी, कवि और गमक लिखा है। (देखिये पृष्ठ सं० २४४)

लोहाचार्य के सम्बन्ध में दूसरी शताब्दी का उल्लेख मिलता है और महासेन स्वामी ने अगरोहा (हिसार-पंजाब) में जाकर राजा दिवाकर को जैनधर्म में दीक्षित किया था। इसलिये जैनधर्मानुयायी जैन अग्रवाल हैं और इन श्री लोहाचार्य को अपना गुरु मानते हैं।

लोहा लेने के कारण लुहांगी की पहाड़ी पर उसी काल में पहाड़ी के कोने पर पद्मासनारूढ़ एक जैन प्रतिमा उत्कीर्ण कराई गई थी। इस साकार साक्ष्य के कारण यह लोहांगी की पहाड़ी जैन धर्मावलंबियों की प्रमाणित है।

इस परम पुनीत विदिशा में (श्री नयसेनदेव विरचित) कनड़ी भाषा का गद्य-पद्यात्मक धर्मामृत उत्तरार्द्ध हिन्दी भाषांतरकार और व्याख्याकार आचार्यरत्न श्री १०८ विद्यालंकार देशभूषण मुनि महाराज के पृष्ठ सं० ३४५ में-श्री धनद मुनि ने अवन्ती प्रांत के विदिशा नामक क्षुद्र

नदी (वेतवा की द्वितीय धारा) के किनारे एरण पर्वत पर (श्मसान भूमि लाखनटोल) टीन शेड के बरावरी में-जहां पर एक चबूतरा बना है उसमें एक शिलालेख उत्कीरित है, कमण्डलु और पीछी भी खुदी हुई है। आठों कर्मों को नष्ट करके मोक्षलक्ष्मी प्राप्त की। लिखा है यह क्षेत्र जैन धर्मावलंबियों का तीर्थक्षेत्र है।

विदिशा पर मुगल साम्राज्यों के आतंक एवं उतार-चढ़ाव

ताजुल इकवाल तारीख भोपाल में प्रकाशित प्रकाशन सन् १२८९ हिजरी में लिखा है कि सन् १२२० में अफगानिस्तान से भाग कर भोपाल नवाब दोस्त मोहम्मद खां आये। और फौज में सिपाहियों के पद पर भर्ती हुये। फौज में झगड़ा किया और फौज से भाग निकले। आगरा आकर महाद जी सिंधिया से मिले; उनसे भी झगड़ा किया और भेलसा वर्तमान विदिशा में आये। यह महाद जी सिंधिया को राजधानी का एक जिला था और फारूख नाम का सूबा इसकी देख रेख करता था उसे अपना मित्र बनाया और रास्ते में जो लूट का माल मिला था अमानत के तौर पर रख कर मंगलगढ़ के राजा का सेनापति बन गया और लूटमार करने लगा। राजा मंगलगढ़ सोलंकी राजपूत मर गया था। रानी को माता बनाया और लूट का माल लाकर दिया इससे रानी प्रसन्न हो गई। और धीरे धीरे यह पता लगाया कि यहाँ के राजा शराबी है और लूटपाट करते फिरते हैं। यह लोग घरों को औरतों के सुपुर्द कर जाते हैं। ऐसे ही मौके का लाभ लेना चाहिये। और अपनी राजधानी बनाना चाहिये।

यही सोच कर बैरसिया जो एक कायस्थ सूबेदार के पास था उससे ठेके पर लिया और अपनी हुकूमत प्रारम्भ के लिये अड्डा बनाया। और अफगानियों को बुलाकर एक सेना बनाकर चारों ओर हमले करना शुरू कर दिये।

रानी कमलावती को दुश्मनों ने घेर लिया था। उस समय रानी कमलावती ने नवाब दोस्त मोहम्मद खां से सहायता मांगी। उसने दुश्मन पर अपनी दगाबाजी से विजय पाई उसके उपलक्ष में रानी से अपना मुआवजा मांगा। रानी ने गांव जागीर में देना स्वीकार किया किन्तु यह बात उसे स्वीकार न हुई। उसने रानी को अपनी बीबी बनाना चाहा। किन्तु वीर रानी ने अपने शील की रक्षा तालाब में कूद कर आत्मसमर्पण करके ही की।

इसके पश्चात् किसी ने फारूक से कह दिया कि दोस्त मोहम्मद खां बरेली की लड़ाई में मारा गया। उसने इनका माल सामान जोकि लूट का था जब्त कर लिया। और इधर दोस्त-मोहम्मद खां से कह दिया कि तुम्हारा माल फारूक ने जब्त कर लिया। जब दोस्त मुहम्मद खाँ मांगने गया तो इनकार कर दिया। बस इसी बात पर दोनों में युद्ध हुआ और जम्बार बागरी में फारूक व दोस्त मोहम्मद का एक भाई लड़ाई में मारे गये। पश्चात भेलसा लूटा गया।

अफगानियों ने राज्यों का बटवारा किया। नवाब दोस्त मोहम्मद खां और नवाब सा० कोरवाई, नवाब हैदरगढ़, बासोदा ने रायसेन में लड़ाई हुई। दोस्त मोहम्मद खाँ मारे गये। राज्यों का बटवारा हुआ नवाब कोरवाई, नवाब हैदरगढ़, नवाब मोहम्मदगढ़, नवाब सिरोंज (टोंक) नियुक्त हुये, राजधानियां बन गईं।

रायसेन में जहां पर उर्स भरता है, नवाब दोस्त मोहम्मद खां की कब्र बनाई गई। किन्तु वह दफनाये गये हैं भोपाल के किले में जहां पर हमीदिया हास्पीटल है।

बन गये तो अमीर, मिट गये तो फकीर।
और मर गये तो पीर हैं हो हैं॥

उस समय समाचार प्राप्त करने के लिये टेलीफोन और तार आदि की व्यवस्था नहीं थी भय रहा करता था कि कहीं से हिन्दू राज्य के राजागण पराजय न दे देवें इसलिये हिन्दुओं को दबाने के लिये हिन्दुओं के मकानों के बीच बीच में मस्जिदें बनवाई गईं और यह चौकियां नाम न रख कर मस्जिद नाम रखा गया। हिन्दुओं को मुसलमान बनाया गया। स्त्रियों को अपनी बीबियां बनाया गया। बच्चों के लिये यतीमखाने खोले गये। जो हिन्दू मुसलमान बने उन्हें जागीरदार बनाया गया। इस प्रकार से भोपाल की राजधानी मुगलों के हाथ लगी।

भोजशाला जामा मस्जिद क्यों बनी ?

भोपाल के बीच शहर में जहाँ पर जामा मस्जिद है वह पूर्व में महाराजा भोज की पाठशाला थी और यहीं पर एक विशाल मन्दिर भी था। मन्दिर की मूर्तियां सीढ़ियों में आज भी लगी हुई हैं, जो उलट कर लगाई गई हैं। जोकि दिखाई देती हैं।
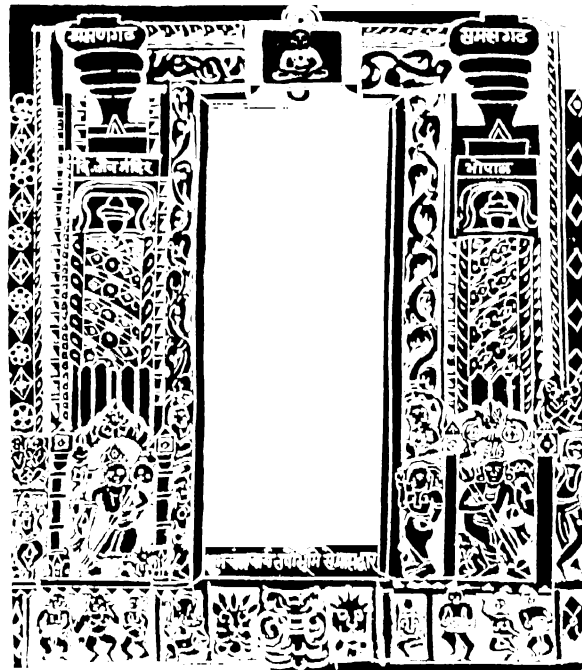
भोपाल के दि० जैन मन्दिर का कलामय भव्य द्वार

मोती मस्जिद भी एक विशाल मन्दिर था। इन स्थानों को पुरातत्व विभाग में लिया जाना अत्यन्त ही आवश्यक है और इस पर शोध कार्य होना अनिवार्य है। इसके सम्बन्ध में जैनियों के चौधरी श्री गुलाबचन्द जी बजाज चौक भोपाल के पास नवाबी शासन की फारसी में सनदें हैं।

भेलसा पर नवाब टोंक का हमला

नवाब टोंक चार भाई थे—(१) आलमगीर जिसके नाम पर विदिशा का नाम आलमगीरपुर रखा गया था (२) अमीर खाँ भेलसे को लूट कर अमीर बने (३) चीतू-जिस प्रकार से चीता शिकारी धोखा देकर शिकार करता है उसी प्रकार से इस भेलसे को लूटा और चीता के द्वारा हो खाया गया (४) करीम खाँ इनका काम भी निराला ही था यह आपस में फूट डालने में बड़े प्रवीण थे, करामाती थे। इन चारों भाइयों ने इस भेलसे को ६ मास तक लूटा और हिन्दुओं को गरम तोपों पर नंगा बिठाया। ३० जैनाचार्यों का शास्त्र भंडार जोकि विदिशा के पट्टाधीश थे जला कर भस्मीभूत बना दिया। विजय मन्दिर का वर्णन पृष्ठ २४१ में किया है। किले के चारों ओर मठ थे। दरवाजा बन्द होने पर यात्रियों को रात्रि विश्राम की सुविधा थी, नष्ट किये जा चुके हैं। उनके चिन्ह मात्र रह गये हैं। वह भी कालांतर में नहीं दिखेंगे।

मेवातियों द्वारा लूटा जाना

ग्वालियर राज्य के महाराजा माधवराव सिंधिया के राज्यकाल में अलक खां, खूवाजी, कमाल खॉ, नीलगिर बाबा इन डाकुओं ने बड़ा भयंकर उत्पात मचा रखा था। प्रजा अत्यन्त दुखी थी। उस समय महाराजा विदिशा में आये थे और डाकुओं को जागीरें देने को कहा था किन्तु वह उद्दण्ड डाकू अपनी आदत से मजबूर थे। अंत में उनके सिर कटवा कर (१) हास्पीटल के किनारे पर पीपल का बड़ा भारी झाड़ था जहां पर बाबू लालताप्रसाद जी श्रीवास्तव सा० ने मकान बनाया है, पीपल के झाड़ पर सिर लटकाया था (२) देवी के बाग में सड़क पर एक बेरी के पेड़ की डाल पर (३) लुहांगी के नीचे पुरानी अस्पताल के पीपल के झाड़ पर (४) लखेरे घाट की इमलियों में, इस प्रकार से चारों दिशाओं में सिर काट कर लटकाने की आज्ञा दी थी, लटकाये गये थे।

उसी समय महाराजा सा० ने उदयगिरी की गुफाओं को देखा था। पुरातत्व की सामग्री एकत्रित कराई थी और ग्वालियर किले में गूजरी महल में पहुँचाई गई।

इतिहासकारों ने मूर्तियों के नाम, काल, स्थानादि का तो परिचय दिया है किन्तु यह उल्लेख नहीं किया कि यह मूर्तियां क्या कहती हैं। कौनसा अनोखा ज्ञान सिखाती हैं। मानव-जीवन से कौनसा घनिष्ट सम्बन्ध है। धार्मिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक का क्या सम्बन्ध है। इनका राजनैतिक क्या सम्बन्ध है। नहीं बताया है। इस कमी की पूर्ति भी अत्यावश्यक है प्रत्येक मूर्ति के अंग, मुख मुद्रा, आसन, वाहन, वेषभूषा और कलाकृतियों में अर्थ निहित हैं निर्माण कराई गई है। यह सूझ बूझ किन किन आचार्यों की रही है यह उल्लेख बाकी रहा है, उसकी पूर्ति का यह सतत प्रयत्न है।

तथा शिलालेख जो भी सर्वत्र मिले हैं उन्हें बारीकी से निष्कपट भाव से नहीं पढ़ा गया। उनकी सही, प्रतिलिपियाँ उनकी अनुवाद शैली, भाषा, लिपियों आदि का उल्लेख नहीं किया। इससे जैन संस्कृति पीछे रह गई है।

जैन समाज ने इस ओर अपनी दृष्टि नहीं डाली। हानि लाभ को नहीं देखा, न समझा। जैनाचार्यों का क्या उद्देश्य रहा है? शास्त्रों में प्रशस्तियां क्या कहती हैं? शिलालेख क्या कहते हैं? इस बात की ओर किंचित भी ध्यान नहीं दिया इस ओर सूना रहे हैं।

मानव शरीर को देव माना है। इन्हीं भावों में देव और इन्हीं के अन्दर राक्षस है। समस्त संसार के पाँच तत्वों, सप्त पदार्थों, सप्त व्यसनों, पांच पापों और पुण्य आदि का विवरण मिलता है। कहते हैं जिसकी सर्वत्र में जैनाचार्यों ने देश, काल, क्षेत्र के अनुसार भूत, भविष्य, वर्तमान काल में घटने वाली घटनाओं का साकार चित्रण मूर्ति रूप निर्माण कराया है। जिनका आज समझना कठिन है। इस प्रकार का कोई साहित्य भी प्राप्त नहीं है, जिससे मानव को पतन से उत्थान का मार्गदर्शन मिल सके।

विश्वविद्यालयों में नये नये रिसर्च तो होते हैं किन्तु इस ओर किसी भी विद्याविलासी का ध्यान नहीं है।

धनीमानी जैन समाज इस विषय में पिछड़ी हुई है। अपने गौरवमय साहित्य, कला की ओर अथवा उसकी रक्षा की ओर किंचित भी ध्यान नहीं दे रही है। शासन के अधिकारीवर्ग जो कुछ कर रहे हैं इस पुस्तक में उल्लेख किया जा चुका है। जो खेद का विषय है।

卐

लुहांगी पर कीर्तिस्तंभ निर्माण की आवश्यकता, सुझाव

लुहांगी पर कीर्तिस्तंभ बनाया जावे। इसके चार पहलू रखे जावें—

(१) प्रथम पहलू में स्थानीय जैनाचार्यों की नामावलि। (२) द्वितीय में क्षेत्र अतिशय गुरु परम्परा दान दाताओं की नामावलि। (३) पर राज्यकाल खाद्य पदार्थों के भाव स्थानीय, निकटवर्ती क्षेत्रों की नामावलि तथा संक्षिप्त परिचय। (४) दान दाताओं का उल्लेख यदि किया जावेगा तो गणतंत्र राज्य की अमर स्मृति सूर्य के समान विश्व के प्रांगण में देदीप्यमान बन सकती है। सम्बन्धित प्रकरण में शासन को कई बार लिखा जा चुका है।

卐

नई शोध

विदिशा में सम्राट अशोक (वर) श्रेष्ठिपुत्री असंघमित्रा (वधू) के वेष में

प्रसन्नता की बात है कि प्रधान मन्त्री जी महोदय भारत सरकार ने दिनांक १२ मई ६३ को लखनऊ में दिये वक्तव्य में बताया है कि हर गांव में संग्रहालय निर्माण किये जांय। अतएव

सबसे प्रथम व्यक्ति व संचालकता राजमल मड़वैया विदिशावासी हैं। यदि पक्षपात और विद्वेषात्मक भावनाओं का त्याग कर सेवा का अवसर प्रदान शासन करे तो मध्य प्रदेश की राजधानी में संग्रहालय निर्माण के लिये समस्त प्रकार की सामग्री अर्पित करने को तैयार हैं। क्या शासन के वरिष्ठाधिकारीगण प्रधान मन्त्री जी के स्वप्न को साकार बनाने के लिये यह सेवा का काम लेना स्वीकार करेंगे ?

सामग्री में मूर्तियां, शिलालेख, ताम्रपत्र, स्तंभ, स्तंभशीर्ष; तोरण द्वार, मुद्रायें, चित्र, हस्तलिखित ग्रन्थ आदि की अनुसंधान एवं संग्रहीत की गई सामग्री समस्त ऐतिहासिक जानकारी के शासन को अर्पित करना चाहता हूं। क्या शासन इस सेवा को स्वीकार करेगा ? यदि स्वीकारिता नहीं देते तो विनाश का उत्तरदायित्व क्या जिम्मेदार अधिकारीवर्ग पर नहीं है ? तो क्या है ?

अभी तक कहा करते थे कि सम्राट अशोक की ससुराल विदिशा में थी, कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं मिला था। अब वह प्रमाण प्रत्यक्ष में चित्र में अवलोकन कीजिये। सम्राट अशोक वर और रानी असंघमित्रा वधू के वेष में खड़ी हैं। वधू वर की प्रतिमा सांची में लगे तोरण द्वार के पाषाण में से है। रंग सफेद लं० ८ फुट चौ० ४॥। फुट मो० १॥ फुट स्थानान्तर करने में कोहनी से कोंचा तक हाथों का भाग टूटा हुआ है। तथा रानी की मूर्ति की लं० ५--३--१॥ क्रमशः है। स्तनों से नीचे और कमर के ऊपर का भाग टूटा है।

कलाकार ने अद्भुत कारीगरी की है जिस प्रकार लेखक अपनी कलम से और कलाकार अपनी कला में मनोवैज्ञानिक भाव भर देता है जिनके अंग प्रत्यंग से जो भाव आदर्शपूर्ण प्रगट हो रहे हैं लेख में पढ़ने का कष्ट करेंगे। और चित्र में लिखी गई कला से मिलान करेंगे।

चित्र–परिचय

सम्राट के चरित्र, वैभव, शक्ति, प्रभा, पुरुषार्थ, उदारता, गुणग्रहता, परोपकार, बुद्धि, विरागता और जीवन के आदर्श को साँचे में ढाल कर अमर बना दिया है। यह सभी जानते हैं कि राज्य लिप्सा के पीछे एक दूसरे का प्राण घातक बन जाता है। अशोक ने भी राज्य लिप्सा पीछे अपने १० बड़े भाइयों का घात किया। लाखों मनुष्यों को मौत के घाट उतार कर विजय की।

मानव की शुभ परिणति देव और अशुभ दानव कहलाती है। जो हिंसा करता है उसे पापी और दानव कहते हैं। यौवनावस्था में मानव अन्धा बन कर, सत्कर्म या दुष्कर्म को नहीं देखता, यौवनावस्था अकेली जब विनाश का कारण बन जाती है।

धन, सम्पत्ति, प्रभुता और अविवेकता यदि सभी जुट जांय तो विनाश के कारण में कौनसी कमी बाकी रह जाती है ? इसी यौवनावस्था में अशोक ने सुखानुभव किया था किन्तु कलिंग विजय में नरसंहार देख कर, शरीर की क्षणभंगुरता का चित्रपट सामने आया, विचारों में विरागता पुण्य प्रकृति ने ला दी और वापिस उज्जैन की ओर प्रस्थान कर दिया।

मार्ग में एक ब्राह्मण का बालक एक ग्राम में अपने पिता से कह रहा था कि पिता जी यदि अशोक मेरी बात सुन लेवे, तो मैं उसे विश्व का एक ऐतिहासिक महापुरुष बना सकता हूँ। किन्तु पिता उसे बुरी तरह से धमका रहा था। और कह रहा था कि वह बड़ा निर्दयी है जिसके वंश के वंश नष्ट कर डाले। क्या तू हमारे वंश का नाश कराना चाहता है ?

यह बात एक किसी गुप्तचर ने सुनी और राजा को रात्रि में घटित ब्राह्मण के पिता पुत्र की घटना सुना दी।

सम्राट ने प्रातःकाल ही अपने दरबार में, उस पिता पुत्र ब्राह्मण को बुलाया। ब्राह्मण भय से कांप रहा था और सिपाही उसे सम्मानपूर्वक दरबार में ले गये। बालक बड़ा साहसी और बुद्धिमान था। अशोक ने रात्रि के समय की वार्ता पूछी, बालक ने निर्भीकतापूर्वक कह सुनाई।

पाठको ! यह वही बालक है जिसने सड़कों पर फलदार वृक्ष, धर्मशालायें, कुयें, बावड़ी, बाग बगीचे, स्तंभ तथा शिलालेखादि बनवाये थे। जो आज हमें यत्र तत्र सर्वत्र प्राप्त होते हैं और अपने वैभव की स्मृति दिलाते हैं।

जब अशोक ससैन्य विदिशा में आये तो गुप्तचरों ने एक वणिक् पुत्री जिसका नाम असंध मित्रा था। रूप, लावण्य, धार्मिक-बुद्धि और पराक्रम की प्रशंसा कह सुनाई। अशोक ने श्रेष्ठि को बुलाया और कन्या की याचना की। श्रेष्ठि यह जानता था कि यह आतातई है, इससे रक्षा करना कठिन है, किन्तु साहस से बिगड़े कार्य भी बन जाते हैं। निर्भीकतापूर्वक श्रेष्ठि मिला और प्रश्न सुनने पर अपनी शर्त के साथ कन्या देना स्वीकार कर लिया।

यह शर्त थी कि यदि तुम दुष्कृत्यों को त्याग कर सत्कार्य करो, और कोई आदर्शपूर्ण कार्य करो, तो मैं आपको अपनी कन्या दे सकूंगा। अशोक ने शर्त स्वीकार कर, सांची पर उस विवाह के उपलक्ष में यह बौद्ध विहार बनवाया।

राज्यवैभव का प्रतीक सिर पर ११ फण का सर्प राज्य के दबदबे का सूचक है। अष्टांग और त्रियोग जिन महापुरुष के न्याय नीति में अवतरित हैं। सिर पर पुण्य कार्यों में भाग लेने के लिये सेहरा (मुहर) जो विवाह समय बांधने की प्रथा है। रत्नजटित धर्मचक्र के सहित बंधा है। जिनका हृदय देवों की भांति नम्रीभूत हैं, सुशोभित है।

विनय दया अरु प्रेम से, जासु हृदय भरपूर ।
नहिं मानुष वह देवता, गहहु तासु पद मूर ॥

कानों में कुंडल, मुख की शोभा, हाथों के आभूषण, पैरों की पवित्रता कब है ?

कान प्रभु गुण जो सुनै, मुख जो प्रभु गुण गाय।
हाथ देय जो दान को, पग जो पर हित जाय॥

तथा- कम कहना सुनना अधिक, ये है परम विवेक।
याही तें विधि ने दये, कान दोय जिभ एक॥

हाथ में कमल लक्ष्मी का द्योतक है। असंघमित्रा के लेख में पढ़िये। यह संसार की अपूर्व वस्तु है, जिसके पीछे मानव बावला घूमता है। गले में रत्नगोप-परोपकार का सूचक है।

आभरण नर देह का, बस एक पर उपकार है।
हार को भूषण कहें, उस बुद्धि को धिक्कार है॥

एक मोती क्या कहता है?

मोती अकेला कान में या नाक में है झूलता।
मल द्वार का सेवन बना, कर जाति की प्रतिकूलता॥

सम्पूर्ण मोती क्या कहते हैं?

जब तक न माला में मिलेगा, वह न उर पर आयगा।
कर जाति का अपमान कोई, मान कैसे पायगा॥

कमर क्यों कसी है? धर्म, न्याय, नीति दया, क्षमा, संतोष--धारण कर सत्कार्य करना और पूर्व में किये गये अशुभ कर्मों की निर्जरा के लिये तथा सत्कार्यों को करने हेतु आगे बढ़ने के लिये कमर कसी है। जिन्होंने अपने राजकीय गौरव को इतिहास के क्षेत्र में चिरस्थाई बनाया है।

जाकी जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान।
यातें यश संचय करहु, लोग करें सम्मान॥

✸

महारानी असंघमित्रा का चित्रपरिचय-

प्राचीन भारत में यथा नाम तथा गुण के अनुसार ही नाम रखने की प्रथा थी। मनोवैज्ञानिक क्या भाव छुपे हैं? कौनसा ज्ञान मिलता है? योगीजनों ने ग्रन्थ के ग्रन्थ लिखे हैं। किन्तु पुरातत्वीय विद्वानों ने अपने अनुसंधानीय पाठ्य पुस्तकों में विवेचन नहीं किया है। जोकि ज्ञानार्जन की दृष्टि से आवश्यक था।

योगीजनों ने सांसारिक विषय-भोग को त्यागने योग्य ही बतलाया है। और कहा है कि—

जो विषया संतन तजी, मूर्ख ताहि लपटात।
ज्यों नर डारत वमन सो, स्वान स्वाद सों खात॥

विषय भोग महान भयंकर सर्प है । परिणामों में अशांति पैदा कर कलह पैदा करने में निपुण है। मन को समुद्र, वाणी को गंगा, चेतन को ब्रह्मा, आत्मा और शरीर को क्रियाओं का कर्ता अर्थात् सृष्टि का रचयिता ब्रह्मा माना है। नारी को नागन विषय की पुतली होने से और क्रूर स्वभाव के कारण सिंहनी भी कहा है। नारी को लक्ष्मी, और लक्ष्मी के चार पुत्र कहे हैं।

लक्ष्मी के सुत चार हैं, धर्म, अग्नि, नृप, चोर ।
बेटे को आदर नहीं, तीन करें भड़ फोड़ ॥

लक्ष्मी, काया में रहने वाली नाड़ी, सांसारिक गृह में रहने वाली नारी का मद शराब की भांति चढ़ता है। इसे दौलत भी कहते हैं। इसमें दो लतें हैं। यह आते ही हंसाती और जाते ही रुलाती है। जिसमें ९ गृह रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि राहु, केतु हैं। विवरण समुद्रमंथन में पढ़ें।

नव युवती के भाल पर लगी हुई सिन्दूर ।
यारो खतरा है यहाँ, रहना इनसे दूर ॥
बिन्दी लाल ललाट पै, दई बाल यह हेत ।
आवत देखें रूप पथिक, खतरा का संकेत ॥

सर्प के काटने की तो औषधि है तथा मंत्र है किन्तु विषय सुन्दरी के काटे की कोई औषधि नहीं है। यह हंस हंस के प्राण लेती है। संगति करने योग्य न होने से इसका नाम असंप्रमित्रा है। स्त्री की पांचों इन्द्रियां खतरे से खाली नहीं हैं। जिस प्रकार पतंगा दीपक पर गिर कर अपने प्राण गवां देता है। उसी प्रकार से मानव विषयों में आत्म समर्पण कर देता है।

जिस प्रकार से मार्ग में खतरे के स्थान पर लाल रंग का वस्त्र, रेल पर गार्ड की लाल झंडी भय का संकेत करती है उसी प्रकार से नारी के सिर पर लगी हुई लाली भय उत्पन्न करती है। जर, जोरू, जमीन झगड़े की जड़ तीन हैं।

नारी के उन्नत स्तन दूध कहलाते हैं। यह मांसपिंड, रक्तादि से भरे होने पर भी कामीजन इन्हें मसलने और छूने में आनन्द मानता है। इसी का नाम समुद्रमंथन है। नारी का शरीर समुद्र है, नारी संसार का कल्पवृक्ष है, विषय भोग नाग हैं। काल हाथी है जो इस संसार को सूंड़ से पकड़ कर चतुर्गति रूप सर्पों के मुंह में डालना चाहता है।

नाग चतुर्गति मुंह फैलाये, काल करी ने खींचा है।
यह संसार वृक्ष है जिसको, सुख आशा ने सींचा है ॥
यौवन पाया धन जन पाया, सभी वृथा है पाना।
अगर नहीं दुनियां के हित में, अपना हित पहिचाना ॥

आचार्य ने [illegible] में कहा है—

नारी जघन रंध्रस्थ, विण्मूत्र मय चर्मणा ।
वाराह इव विड्भक्षी हन्त मूढ़ा सुखायते ॥

नारी के जंघाओं और गुप्तेन्द्रियों के सम्बन्ध में कहा है कि-चर्म से बनी, मल-मूत्र से भरी, रक्तादि बहने वाली नदी के समान घृणायुक्त अपवित्र वस्तु को योगी जनों ने निंदनीय माना है। कामीजन बार बार छूता, संघर्षण करता हुआ आनन्द मानता है। और शूकर अपवित्र वस्तु को खाने में आनन्द मानता है। दोनों के एक ही मार्ग हैं। इसी लिये योगी जनों ने कामीजन को शूकर की समानता दी है। देखिये महारानी असंघमित्रा का बाँया हाथ कमर पर रखा अधो भाग की ओर संकेत कर रहा है। चित्र में दिखाया गया है--यथा नाम तथा गुण के अनुसार निषेध भी कर रही है।

१—सिर पर मुहर, २-मुहर में नाग समुदाय, ३-कमल पांखुरी, ४-बेंदा, ५-बोर। क्रमशः

(१) विवाह सत्कार्य का प्रतीक। (२) राज्यवैभव का। (३) लक्ष्मी का। (४) - (५) सौभाग्य का प्रतीक है। आचार्य कहते हैं—

यदि पाठकगण विचार करेंगे तो जो व्यक्ति शोक रहित है। आत्मीय, बलपराक्रम, बुद्धि, गुणग्राह्यता, व्यवहार, चरित्र, जिनका पवित्र है। अर्थात् जो राग--रहित हैं उन्हीं का नाम अशोक है। जो अन्तिम अवस्था में प्राप्त की है।

इन्द्रियों पर विजय पाने में श्रेष्ठ पुरुष राग परिणति को हरण करने वाले वीतरागी ही हैं। इन्हीं सम्राट अशोक के एक पुत्र महेन्द्र नामक, और पुत्री संघमित्रा दोनों बहिन भाई चन्द्रमा और लक्ष्मी ने अपने भतीजे बुध को साथ लेकर अपनी विवेक बुद्धि से विदेशों में धर्मप्रचार किया था।

General konsulat
der
Bundesrepublik Deutschland
Consulate General
of the Federal Republic of Germany
Gerhard Kunz, Consul
Az : (Bei Antwort bitte aggeben)

Bombay, 8th July, 1969 Indien
"Dugal House", Road No. 3
Backbay Reclamation
Fernsprecher : 29 60 23
Telegrammanschrift :
Consugerma Bombay.

Mr. RAJMAL JAIN MADVRIYA
Archaeological Research Scholar
B H I L S A (M. P.)

REGISTERED
(together with Book)

Dear Mr. Jain maduriya,

On behalf of my wife, Mrs. M. Kunz, I am sending you a copy of a

book 'Monuments and Fountains of Germany' which has English sub-titles as well.

Please accept this book as a small token of appreciation and gratitude from my wife and Mrs. Rustemeyer, whom you so kindly showed the curiosities of your place.

With kind regards,

Yours sincerely,
(G. Kunz)

जर्मनी से पुरस्कृत पुस्तिका के ३ चित्रों का भावदर्शन

जर्मन निवासी श्रीमती महिला रत्न एम कुंज एवं रस्टेमेयर महोदया का शुभागमन विदिशा दिनांक १-७-६९ को मड़वैया पुरातत्व संग्रहालय देखने का अवसर मिला उन्हें भारतीय प्राचीन मूर्तियां क्या कहती हैं यह बताया गया और शासकीय पुरातत्व संग्रहालय विदिशा तथा उदयगिरी की गुफाओं का अवलोकन उनका विश्लेषण मानव जीवन से सुसम्बन्धित अनेक प्रकार के भाव युक्त बताया। इसके उपरांत उन्होंने अपने पतिदेव से मेरा परिचय दिया। इस उपलक्ष में रुचि अनुसार एक पुस्तिका डेन्कमेकर वेबूनेन इन डस्टकलेन्ड माउन्टेन्स् एन्ड फाउन्टेन्स इन जर्मनी लेखक डाक्टर एच० ए० ग्रीफी-टास्टबेर्ग आवशायने नामक पुरस्कृत रजिस्टर्ड पार्सल द्वारा प्रस्तुत की है। यह कोन्सुलेट जनरल आफ दि फेडरल रिपब्लिक आफ जर्मनी गरहार्डकुंज कोन्सल एज। वी एन्टोर्ट विट एन्वेन इन्डियन डुगल हाउस रोड नं० ३ बेक रिलेशन्स फर्नस्पेचर बम्बई नं० २० का मैं अभिनन्दन करता हूं।

(१) पुस्तिका के पृष्ठ संख्या १५५ पर रिंग आफ स्टेचू का मानव जीवन से या राजनैतिक आध्यात्मिक और धार्मिक शिक्षा प्रद क्या सम्बन्ध है।

इसके दोनों हाथ इस प्रकार से हैं जिस प्रकार से हम किसी व्यक्ति को सीने से लगाते हैं। भाव व्यक्त करती है।

यह नग्न मुद्रा में है। इसके दो भाव हैं। नग्न राग भाव को उस दिशा में माना जाता है जैसे कि वर्तमान के नेतागण वोटों की भीख मांगने आते हैं या भिक्षावृत्ति के लोग जो अपने ऐश आराम की वस्तुओं में प्रेम रखते है। दूसरे जिन्हें स्वयं आत्मा का ज्ञान हो गया है कि यह संसार की समस्त वस्तु क्षण भंगुर और नाशवान है यह समझ कर जिन की उदासीन वृत्तियाँ हैं वीतरागी भाव हैं। आत्म चिन्तवन में निरतर लगे रहते हैं जिन्होंने भावों में मलिनता लाने वाले ऐश--आराम की चीजों का त्याग कर एकांत स्थान वन खण्ड में रहना पसंद किया है।

इसका दाहिना पैर आगे की ओर मुड़ा इसलिये है कि वन खण्ड की ओर जाने का संकेत है और सामने वन के वृक्ष भी संकेत कर रहे हैं।

संसार की असारता, पारिवारिक गृह कलह, इन्द्रियों की लोलुपता, अनेकों अनेक प्रकार की सुख सुविधाओं को, आय व्यय में किया जाने वाला द्रव्य अज्ञानावस्था में किया गया कुकर्म का दुष्परिणाम का बोझा गधे के भार से भी अधिक वजनदार है। इसके भविष्य को चिन्तन करने में संलग्न को बताती है।

वृद्धावस्था में शक्ति क्षीण होने पर बुद्धि में विकृति का आना और आत्म चिन्तन करने में बाधाओं का आना विचारता है।

> आयुर्वंक्षयन्ति पश्यतां प्रतिदिनं, यातोक्षयं यौवनं ।
> प्रत्यांयांति गता पुनर न दिवसां कालो जगत भक्षता ॥
> लक्ष्मी तोय रंग भंग चपला विद्युतचला जीवितं ।
> तस्मानमां शरणागतं, शरणदस्त्वं रक्ष रक्षाधुना ॥
> लोभ की इच्छा दम्भबल, काम की केवल नारि ।
> परशु बचन बल क्रोध के, मुनि जन करहिं विचार ॥

वृद्धावस्था में आयु की क्षीणता यौवनावस्था का चला जाना, मृत्यु का निकट आना, बिजली के समान लक्ष्मी का आना और चला जाना, रंग में भंग उपस्थित होना यह सब संकेत–

जो इस चित्र के पीछे खड़ी अर्द्धनग्न स्त्री का चित्र है वह काम की पैदा करने वाली विषय सुन्दरी के लोभ की ओर संकेत पूर्वाचार्यों ने किया है यह लोभ को संकेत कर बुलाती है। और लोभ के कारण ही—

> लोभात्क्रोधः प्रभवति, लोभात्कामः प्रजायते ।
> लोभान्मोहश्च नाशश्च, लोभः पापस्य कारणम् ॥

लोभ के द्वारा काम, क्रोध, मान, माया, लोभ उत्पन्न होते हैं। परिणामों में राग भाव उत्पन्न करते हैं। दुर्बुद्धि का मूल कारण है। ऐसा योगीजन विचार कर लक्ष्मी के त्याग में अपना दाहिना पैर वन की ओर बढ़ा रहे हैं संकेत किया है। इसी कारण से लक्ष्मी का बाहन उल्लू बताया है यह उल्लू बना देती है।

इस नग्न मूर्ति के पीछे लक्ष्मी के (अर्द्धनग्न स्त्री) साथ में जो दूसरी स्त्री बताई है वह सरस्वती है जो हाथ जोड़े हुये है और कहती है "हे नाथ इस चेतन (जीव) की दो स्त्रियां हैं।" एक सुमत, दूसरी कुमत। लक्ष्मी कुमत पैदा करती है और सुमत यशस्वी प्रतिभा और जीव को अमर बनाती है। पुण्य संचय का मार्ग बतलाती है। इसका बाहन सिंह है। जो सिंह पुरुष है वही अपनी इच्छित वस्तु मोक्ष सुख प्राप्त कर सकते हैं।

पूर्वकाल में आचार्य चाणक्य जोकि सम्राट चन्द्रगुप्त के प्रधान मन्त्री थे। उन्होंने अपने लिखित ग्रन्थ हितोपदेश, चाणक्यनीति में स्पष्टीकरण दिया है। थोड़ा वर्तमान स्थिति राजनीति पर भी ध्यान दीजिये।

जो राज्य अपने प्रजावासियों पर अनेकों प्रकार के टकसों का भार गरीब भोली भाली जनता जोकि इस संकटकालीन स्थिति में सपरिवार भूखों मर रही है। टैक्सों के भार से इस प्रकार से लादी जा रही है जो गधे के भी भार से अधिक वजनदार है। इस राज्य में पक्षपात, सभ्यता के साथ डाके डालने वाला व्यक्ति डाकू नहीं किन्तु चतुर माना जाता है। जो अपनी चतुरता के साथ लूटपाट करता है, भ्रष्टाचार करता है, अपने साथ कुत्तों को रखता है, जो निरन्तर जनता का खून पीने वाले चाटने वाले हैं, गृहकलह-फूट डालने में प्रकांड विद्वान हैं साथ रखते हैं। इस चित्र पृष्ठ संख्या १५५ से सुसम्बन्धित पृष्ठ सं० १६३ का चित्र है।

गधे को पीठ पर कुत्ता

प्रत्येक वस्तु में गुण-दोष अवश्य होते हैं। गुणीजन —

गुण वालो संपति लहै, लहै न गुण विन कोय।
काढ़े नीर पाताल तें, जो गुणयुत घट होय ॥

गधा अर्थात् मूर्ख — जो मूर्ख मनुष्य हैं वह गधे की तरह उपरोक्त कथित गधे के भार से लदे हैं। जैसे —

थाक्यो भी बोझ वहै, शीत उष्ण नहिं भान।
संतोषी रहे तीन गुण, गर्दभ ही सो जान ॥

अत्यन्त थक जाने पर भी गधा बोझे को ढोता है। सर्दी और गर्मी का विचार नहीं करता। संतोषपूर्वक जीवन व्यतीत करता है। यह तीन गुण हमें गधा सिखाता है। (चाणक नीति दर्पण २१)

लेकिन वह अपने सिर पर आई हुई विपत्ति को दूर नहीं कर सकता है। इसी प्रकार से जो मानव मूर्ख है वह भी अपने सिर पर आई विपत्ति को दूर नहीं कर सकते हैं। उन्हें प्रायः गधा कहते हैं।

जिस प्रकार से गधा भूख, प्यास, मारन, ताड़न, मानापमान को सहन करता है वही दशा एक मूर्ख मानव को होती है। इसी प्रकार से आज के शासकवर्ग अपनी स्वार्थमय भावनाओं की पूर्ति में, सांसारिक भोगोपभोग सामग्री को एकत्रित करने में जुटे हुये हैं। अर्थात् भार से लदे हुये है, उसे दूर नहीं कर सकते हैं। क्योंकि—

कुत्ता— बहुभोजी स्वल्प सन्तोषी, निद्रारत हुश्यार।
स्वामी सेवक शूर शठ, श्वानहि ते गुण चार ॥

अत्यन्त भूखे रहने पर भी थोड़े पर सन्तोष कर लेना, निद्रा करते रहने पर भी सावधान रहना, अपने स्वामी का सच्चा सेवक होना, शूरवीर (पराक्रमी होना) यह छह गुण कुत्ते से ग्रहण करना चाहिये (चाणक नीति २०)

कुत्ता ऋतु समय ही विषय भोगादि करता है, मानापमान सहता है, मार खाता है, किन्तु मानव इसके बिल्कुल विपरीत है। मानव का जीवन श्वान से भी पतित है, क्योंकि असंयमी है। विषय भोगादि का कोई समय निश्चित नहीं है। विषय भोगादि की भस्म व्याधि का रोग लगा। असन्तोषी है। गाढ़ निद्रा में सोया हुआ है। उसे अपने आत्मीय कर्तव्यों का ध्यान नहीं है। स्वामी के साथ छल करता है। प्राणघातक भी बन जाता है। मालिक पर विपत्ति आने पर धोखा देता है। अपनी स्वामी-भक्ती को चिल्ला कर कहता है, किन्तु अन्तरंग कुछ और ही है। यह बात उस गधे को पीठ पर कुत्ते के रूप में सम्बोधित किया है।

जिस प्रकार से कुत्ता कुतिया के पीछे विषयों के लिये दौड़ता है भटकता फिरता है, उसी प्रकार से मानव विषयलोलुपता के कारण विषयसुन्दरी के पीछे फिरता है। इसलिये भैराया होने से घर घर भटकने से भैरों का वाहन कुत्ता सांकेतिक रूप से बताया है। इसका विवरण विदिशा वैभव" पृष्ठ २८६ में पढ़िये। विषय लोलुपता एक महान भयंकर रोग है।

बिल्ली—कुत्ते की पीठ पर बिल्ली खड़ी है।

तिया भोग परतिय जुआ, भोजन खुजली रार।
मद पौरुष वा नींद नव, सेवें बढ़ें अपार॥

असंयमीपने से विषयभोग, परस्त्री सेवन करना, जुआ खेलना, असंयमित भोजन करना, बारंबार खुजाना, कलह, मद्य पीना, घमंड करना, शक्ति का दुरुपयोग करना, आलसयुक्त गाढ़ निद्रा में सोना। यह नौ असंयमित दशा मे सेवन करने से बढ़ते हैं।

भोजन दान विवेक धन, स्वाभिमान सन्मान।
कामी ये सब खोय अरु, खो देता निज ज्ञान॥

कामी पुरुष कुत्ते की तरह अपना भोजन, दान, विवेक, धनसंपत्ति, स्वाभिमान सम्मान सभी कुछ खो देता है।

कुत्ता और बिल्ली का आपस मे बैर है। कामी पुरुष कुत्ते के मानिन्द है। और बिल्ली का स्वभाव दुष्ट है। जिस प्रकार से बिल्ली चूहे के शिकार में स्वभाव से चतुर है, वह क्रोध के आवेश में अपने बच्चे को भी मार कर डाल देता है, उसी प्रकार से नारी भी—

तिय के दुष्ट विचार पर, ध्यान न दीजे यार।
पर से क्या वह निज शिशू, देय क्रोध में मार॥
तीव्र वायु के वेग को, कोई रोक न पाय।
तैसे चंचल नारि को, कोई न वश कर पाय॥

कुत्ते के तो एक ही मुख है किन्तु क्रूर नारि के तो स्वभाव में क्रूरता और क्रोध है। बिल्ली अपने बचाव के लिये कुत्ते पर झपटना है दो मुखो है। जो व्यक्ति अपना क्रूर स्वभावी और क्रोधी हैं वह बिल्ली के रूप में है वह दिन रात का दो चूहे जाकि आयु की डाल को

काट रहे हैं, समय को निकाल देते हैं। आत्मज्ञानी उसका सदुपयोग करते हैं और मूर्ख जो गधे पर सवार हैं वह कामी हैं, अपने ज्ञान का दुरुपयोग करते हैं। उन्हें—

बिल्ली की पीठ पर खड़ा मुर्गा चार बातें (शिक्षायें) सिखाता है।

उठनो लड़नो बन्धु जन, बाँट करन व्योहार।
हमलो करि के खावनो, यह गुण कुक्कुट चार॥

प्रात:काल उठना, उचित समय पर जागना, युद्ध-करना, बन्धुओं के भाग का बाँटना, आक्रमण करके स्वयं खा जाना। यह चार गुण और दोष मुर्गे से सीखना चाहिये।

जो मानव उत्तम हैं वह उद्योगकर अपनी दरिद्रता को दूर करते हैं। जो आत्मचिंतन में संलग्न रहते हैं वह अपने पापों का क्षय करते हैं। जो अश्लील शब्दों का प्रयोग नहीं करते और लड़ाई झगड़े के समय मौन धारण कर लेते हैं, जो सदैव काम क्रोध, लोभ मोहादि आत्म गुण के चराने वाले हैं जागते रहते हैं। वही अपने ज्ञान धन को इन चोरों से बचा सकते हैं।

योगी कामी स्वान की, न्यारि न्यारि पहिचान।
मृतक कामिनी मांस पुनि, एकहि वस्तु प्रधान॥

तीन प्रकार के प्राणी, एक ही स्त्री को तीन प्रकार से देखते हैं। योगी पुरुष स्त्री को मुर्दे के रूप में, कामी पुरुष कामिनी के रूप में, कुत्ता उसे मांसपिंड के रूप में देखते हैं। इसलिये—

खल संगति को त्याग कर, साधु सुसंगति सेव।
निश दिन संग्रह पुण्य कर, सदा पूजिये देव॥

दुष्ट पुरुष, कुत्ता और बिल्ली इनकी संगति को त्याग कर सदैव साधु पुरुषों की संगति में रहना उचित है। दिन रात पुण्यों का संग्रह करना उत्तम है। सदैव भगवत् स्मरण करने से अशुभ कर्मों का नाश होता है।

बकरी अपने पालक से क्या कहती है? बकरी अपने पालक से कहती है कि हे पालक! जो योगी पुरुष होते हैं जोकि चित्र नं० १ में बताया है कि वह सदैव आत्मचिंतन में रत रहते हैं।

बकरी पाती खात है ताको खींचो खाल।
जो नर बकरी खात हैं, तिनको कौन हवाल॥

जब अपना उदर पत्ती और घास खाकर भरती हूँ और तुम्हें उत्तम स्वादिष्ट दूध देती हूँ। दूध से अनेक प्रकार के व्यंजन दही, घी, मठा, मावा, मिठाइयां आदि बनती हैं। मैं उपकार ही करती हूँ। और यह मिष्ठान्न देवताओं को प्रसाद के रूप में भोग लगाया जाता है। इस उपकार का बदला खाल खींच कर लिया जाता है।

शीष कटे बोटी बिके, चालन मढ़े नगाड़ ।
तऊ पाप बांकी रह्यो, परे खाल पर मार ॥

और सिर काटा जाता है, मेरे माँस की बोटी बेची जाती है; चमड़े का बाजा बनाया जाता है। जिसमें से अनेक प्रकार की ध्वनियाँ निकलती हैं। उसमें हे पालक ! तुम आनन्द मानते हो उस मरे हुये चमड़े पर भी मार पड़ती है। तो बताओ कि अब कौनसा पाप शेष रह गया है ? और आप इतने निर्दयी बन गये। उपकार को भूल जाने वाला क्या कृतघ्नी नहीं होता है ?

यह देश दयावानों, विद्वानों, बुद्धिवादियों, कलाकारों, पुरुषार्थियों और वीर पुरुषों का है। इसकी सूचक यह तीनों माण्यूमेंट्स हैं जिसके अन्दर ऐसी उत्तम शिक्षा अनुपम ज्ञान छिपा भरा पड़ा है।

✸

यह अहिंसात्मक शिक्षा को जैनाचार्य जो वीतरागी पुरुष हैं अहिंसावादी हैं उन्हीं की सूझ बूझ है जिन्होंने इस प्रकार के भावों को इन पाषाण की मूर्तियों में निहित कर धर्म और संस्कृति को अजर अमर बना दिया है। साहित्यकार और लेखक हमारे देश के विद्वान पूर्वाचार्य ही रहे हैं। उनकी यह अनूठी प्रतिक्रिया शिक्षाप्रद है जिसको ऐतिहासिक विद्वान शोध कार्य करने में असमर्थ रहे हैं। यह है कलाओं में वास्तविकता।

卐

निवेदन है कि हमें आप किसी भी देश की किसी भी स्थान की किसी भी प्रकार की कलामय मूर्तियाँ शोध कार्य के लिये दीजिये। उनमें कौनसा भाव छिपा है। आपके समक्ष अपनी तुच्छ बुद्धि के अनुसार बिना किसी भेद भाव के बिनामूल्य सेवा दी जावेगी।